तेतिरीय ब्राह्मणम्

Colophon

This document was typeset using $X_{\underline{i}} = X_{\underline{i}}$, and uses the Siddhanta font extensively. It also uses several $X_{\underline{i}} = X_{\underline{i}}$ macros designed by $X_{\underline{i}} = X_{\underline{i}}$. Practically all the encoding was done with the help of Ajit Krishnan's mudgala IME (http://www.aupasana.com/).

Acknowledgements

The initial ITRANS encodings of some of these texts were obtained from http://sanskritdocuments.org/ and https://sa.wikisource.org/. Thanks are also due to Ulrich Stiehl (http://sanskritweb.de/) for hosting a wonderful resource for Yajur Veda, and also generously sharing the original Kathaka texts edited by Subramania Sarma.

See also http://stotrasamhita.github.io/about/

FOR PERSONAL USE ONLY
NOT FOR COMMERCIAL PRINTING/DISTRIBUTION

अनुऋमणिका

अनुऋमणिका

| अष्टकम् १ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
|------------------|----|---|----|----|---|----|--|--|---|---|---|--|--|---|---|---|---|---|---|--|-----|
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 1 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 23 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 37 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 55 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 74 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 92 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 113 |
| अष्टमः प्रश्नः | • | | | | • | | | | • | • | • | | | | • | • | | • | • | | 132 |
| अष्टकम् २ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 143 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 143 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 159 |
| ਰੂਨੀਧੂ: प्रश्न: | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 179 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 194 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 216 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 230 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | • | | | | | | | | | | | | | | | | • | | 259 |
| अष्टमः प्रश्नः | • | | | • | • | | | | | • | • | | | • | • | | • | • | | | 279 |
| अष्टकम् ३ | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 303 |
| प्रथमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 303 |
| द्वितीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 323 |
| तृतीयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 347 |
| चतुर्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 369 |
| पञ्चमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 374 |
| षष्ठमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 384 |
| सप्तमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 398 |
| अष्टमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 434 |
| नवमः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | 462 |
| तैत्तिरीय आ | ξŪ | य | वि | ₹. | Ŧ | | | | | | | | | | | | | | | | 489 |
| प्रथमः प्रश्नः - | | | | | ` | [: | | | | | | | | | | | | | | | 489 |
| | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | | |

अनुऋमणिका

| द्वित | गियः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | 525 |
|--------|--------------|-----|----|------------|----------|--------------|----|----|----|-----------|---|--|--|--|--|--|--|--|-----|
| तृर्त | ोयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 540 |
| चतु | र्थः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 555 |
| | मः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 582 |
| | ः प्रश्नः . | | | | | | | | | | | | | | | | | | 613 |
| सप्त | मः प्रश्नः | _ | शी | क्षाव | ह्यी | • | | | | | | | | | | | | | 627 |
| | मः प्रश्नः | | | | | - | | | | | | | | | | | | | 633 |
| | मः प्रश्नः | | | • | | | | | | | | | | | | | | | 638 |
| दश | मः प्रश्नः | _ | मह | ्राना | राय | णोप | नि | षर | Ţ | | • | | | | | | | | 643 |
| | ~ ~ | ١ | 7 | \ (| ^ | | | | | | | | | | | | | | |
| कृष्णर | गजुर्वेर्द | ाय | ता | त्तर | ए | [<u>-</u> q | ना | ठ | ħ. | म् | | | | | | | | | 683 |
| प्रथ | मः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 683 |
| द्वित | गियः प्रश्न | : . | | | | | | | | | | | | | | | | | 696 |
| तर्त | ोयः प्रश्नः | | | | | | | | | | | | | | | | | | 712 |

॥ अष्टकम् १॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

ब्रह्म सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। क्षत्र सन्धंत्तं तन्में जिन्वतम्। इष् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। ऊर्ज् सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृष्टि सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृजा सन्धंत्तं तां में जिन्वतम्। पृश्रून्थ्सन्धंत्तं तान्में जिन्वतम्। स्तुतोऽसि जनधाः। देवास्त्वां शुक्रपाः प्रणयन्तु॥१॥

सुवीराः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। शुक्रः शुक्रशोविषा। स्तुतोऽसि जनधाः। देवास्त्वां मन्थिपाः प्रणयन्तु। सुप्रजाः प्रजाः प्रजनयन्परीहि। मन्थी मन्थिशोविषा। सञ्जग्मानौ दिव आपृथिव्यायुः। सन्धंत्तं तन्मे जिन्वतम्। प्राण सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्। अपान सन्धंत्तं तं मे जिन्वतम्॥२॥

व्यान सम्यंत्तं तं में जिन्वतम्। चक्षुः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। श्रोत्र सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। मनः सन्यंत्तं तन्में जिन्वतम्। वाच् सन्यंत्तं तां में जिन्वतम्। आयुंः स्थ आयुंर्मे धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञायं धत्तम्। आयुंर्य्ज्ञपंतये धत्तम्। प्राणः स्थः प्राणं में धत्तम्। प्राणं युज्ञायं धत्तम्॥३॥

प्राणं यज्ञपंतये धत्तम्। चक्षुंः स्थश्चक्षुंर्मे धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञायं धत्तम्। चक्षुंर्यज्ञपंतये धत्तम्। श्रोत्रङ्ं स्थः श्रोत्रंं मे धत्तम्। श्रोत्रंं युज्ञायं धत्तम्। श्रोत्रं युज्ञपंतये धत्तम्। तौ देवौ शुक्रामन्थिनौ। कुल्पयंतुं दैवीर्विशंः। कुल्पयंतुं मानुषीः॥४॥

इष्मूर्जम्मासुं धत्तम्। प्राणान्पशुषुं। प्रजां मियं च् यजंमाने च। निरंस्तः शण्डंः। निरंस्तो मर्कः। अपंनुतौ शण्डामर्कौ सहामुनाँ। शुक्रस्यं समिदंसि। मृन्थिनंः समिदंसि। स प्रंथमः सङ्कृतिर्विश्वकंमा। स प्रंथमो मित्रो वर्रुणो अग्निः। स प्रंथमो बृह्स्पितिश्चिकत्वान्। तस्मा इन्द्रांय सुतमा जुंहोमि॥५॥

कृत्तिकास्वग्निमार्दधीत। एतद्वा अग्नेर्नक्षेत्रम्। यत्कृत्तिकाः। स्वायांमैवैनं देवतायामाधाय। ब्रह्मवर्चसी भवति। मुखं वा एतन्नक्षेत्राणाम्। यत्कृत्तिकाः। यः कृत्तिकास्वग्निमांधृत्ते। मुख्यं एव भवति। अथो खलुं॥६॥

अग्निन्क्ष्त्रमित्यपंचायन्ति। गृहान् ह् दाहुंको भवति। प्रजापंती रोहिण्यामग्निमंसृजत। तं देवा रोहिण्यामादंधत। ततो वै ते सर्वान्नोहांनरोहन्। तद्रोहिण्यै रोहिणित्वम्। यो रोहिण्यामग्निमाधत्ते। ऋभ्नोत्येव। सर्वान्नोहांन्नोहति। देवा वै भुद्राः सन्तोऽग्निमाधिथ्सन्त॥७॥ तेषामनांहितोऽग्निरासींत्। अथैंभ्यो वामं वस्वपांकामत्। ते पुनर्वस्वोरादंधता ततो वै तान् वामं वसूपावंर्तता यः पुराऽभद्रः सन्पापीयान्थस्यात्। स पुनर्वस्वोर्ग्निमादंधीता पुनर्वेवनं वामं वसूपावंर्तते। भुद्रो भंवति। यः कामयेत् दानकांमा मे प्रजाः स्युरितिं। स पूर्वयोः फल्गुंन्योरग्निमादंधीत॥८॥

अर्यम्णो वा एतन्नक्षंत्रम्। यत्पूर्वे फल्गुंनी। अर्यमेति तमांहुर्यो ददांति। दानंकामा अस्मै प्रजा भंवन्ति। यः कामयेत भगी स्यामितिं। स उत्तंरयोः फल्गुंन्योर्ग्निमादंधीत। भगस्य वा एतन्नक्षंत्रम्। यदुत्तंरे फल्गुंनी। भृग्येव भंवति। कालकञ्जा वै नामासुंरा आसन्॥९॥

ते सुंवर्गायं लोकायाग्निमंचिन्वतः। पुरुष इष्टंकामुपांदधात्-पुरुष इष्टंकाम्। स इन्द्रौं ब्राह्मणो ब्रुवांण इष्टंकामुपांधत्तः। एषा में चित्रा नामेतिं। ते सुंवर्गं लोकमा प्रारोहन्। स इन्द्र इष्टंकामावृंहत्। तेऽवांकीर्यन्तः। येऽवाकीर्यन्तः। त ऊर्णावभंयोऽभवन्। द्वावुदंपतताम्॥१०॥

तौ दिव्यौ श्वानांवभवताम्। यो भ्रातृंव्यवान्थ्स्यात्। स चित्रायांमुग्निमादंधीत। अवकीर्यैव भ्रातृंव्यान्। ओजो बलंमिन्द्रियं वीर्यमात्मन्धंत्ते। वसन्तौ ब्राह्मणौऽग्निमादंधीत। वसन्तो व ब्रौह्मणस्युर्तुः। स्व पुवैनंमृतावाधायं। ब्रह्मवर्चसी भंवति। मुखं वा एतदंतूनाम्॥११॥

यद्वंसन्तः। यो वसन्ताऽग्निमांधत्ते। मुख्यं एव भंवति। अथो योनिमन्तमेवैनं प्रजातमाधत्ते। ग्रीष्मे रांजन्यं आदंधीत। ग्रीष्मो वै रांजन्यंस्युर्तुः। स्व एवैनंमृतावाधायं। इन्द्रियावी भंवति। शुरदि वैश्य आदंधीत। शुरद्वे वैश्यंस्युर्तुः॥१२॥

स्व पुवैनंमृतावाधायं। पुशुमान्भंवति। न पूर्वयोः फल्गुंन्योर्गिमादंधीत। पुषा वै जघन्यां रात्रिः संवथ्सरस्यं। यत्पूर्वे फल्गुंनी। पृष्टित एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। पापीयान्भवति। उत्तरयोरा दंधीत। पुषा वै प्रंथमा रात्रिः संवथ्सरस्यं। यद्त्तरे फल्गुंनी। मुख्त एव संवथ्सरस्याग्निमाधायं। वसीयान्भवति। अथो खलुं। यदैवैनं यज्ञ उपनमेत्। अथादंधीत। सैवास्यर्द्धिः॥१३॥

खल्वाधिथ्सन्तु फल्गुन्योर्ग्निमादंधीतासन्नपततामृतूनां वैश्यंस्युर्तुरुत्तेरे फल्गुनी पद्गाः

उद्धंन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। अपोऽवौक्षिति शान्त्यै। सिकंता निवंपति। एतद्वा अग्नेवैश्वान्रस्यं रूपम्। रूपेणैव वैश्वान्रमवं रुन्धे। ऊषां निवंपति। पृष्टि्वा एषा प्रजननम्। यदूषाः॥१४॥

पुष्ट्यांमेव प्रजनेनेऽग्निमाधंत्ते। अथों संज्ञानं एव। संज्ञान् इं ह्येतत्पंशूनाम्। यदूषाः। द्यावांपृथिवी सहास्ताम्। ते वियती अंब्रूताम्। अस्त्वेव नौ सह यज्ञियमितिं। यदमुष्यां युज्ञियमासींत्। तद्स्यामंदधात्। त ऊषां अभवन्॥१५॥

यदस्या यज्ञियमासीत्। तदमुष्यांमदधात्। तददश्चन्द्रमंसि कृष्णम्। ऊषांन्निवपंत्रदो ध्यांयेत्। द्यावांपृथिव्योरेव यज्ञिये-ऽग्निमाधंत्ते। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। आखू रूपं कृत्वा। स पृथिवीं प्राविंशत्। स ऊतीः कुर्वाणः पृथिवीमन् समंचरत्। तदांखुकरीषमंभवत्॥१६॥

यदांखुकरीष संम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे। ऊर्जुं वा एत रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति। यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवं रुन्थे। अथो श्रोत्रमेव। श्रोत्र इ ह्यंतत्पृथिव्याः। यद्वल्मीकं:॥१७॥

अबंधिरो भवति। य एवं वेदं। प्रजापंतिः प्रजा अं-सृजत। तासामत्रमुपाँक्षीयत। ताभ्यः सूदमुपुप्राभिनत्। ततो वै तासामत्रुं नाक्षीयत। यस्य सूदंः सम्भारो भवंति। नास्यं गृहेऽत्रंं क्षीयते। आपो वा इदमग्रं सिल्लमांसीत्। तेनं प्रजापंतिरश्राम्यत्॥१८॥

कथिमदि स्यादितिं। सोऽपश्यत्पुष्करपूर्णं तिष्ठंत्। सोऽमन्यत। अस्ति वै तत्। यस्मिन्निदमिष् तिष्ठतीतिं। स वंराहो रूपं कृत्वोप न्यंमञ्जत्। स पृथिवीम्ध आँर्च्छत्। तस्यां उपहत्योदंमञ्जत्। तत्पुष्करपूर्णेंऽप्रथयत्। यदप्रथयत्॥१९॥ तत्पृंथिव्ये पृंथिवित्वम्। अभूद्वा इदिमितिं। तद्भूम्यें भूमित्वम्। तां दिशोऽनु वातः समंवहत्। ताः शर्कराभिरदृश्हत्। शं वै नोंऽभूदितिं। तच्छर्कराणाः शर्कर्त्वम्। यद्वंराहिवंहतः सम्भारो भवंति। अस्यामेवा- छंम्बद्वारमग्निमाधंते। शर्करा भवन्ति धृत्यैं॥२०॥

अथो शन्त्वायं। सरेता अग्निराधेय इत्यांहुः। आपो वरुंणस्य पत्नंय आसन्। ता अग्निर्भ्यंध्यायत्। ताः समंभवत्। तस्य रेतः परांऽपतत्। तिद्धरंण्यमभवत्। यिद्धरंण्यमुपास्यंति। सरेतसमेवाग्निमाधंत्ते। पुरुंष् इन्नै स्वाद्रेतंसो बीभथ्सत् इत्यांहुः॥२१॥

उत्तर्त उपाँस्यत्यबींभथ्सायै। अति प्रयंच्छति। आर्तिमेवाति प्रयंच्छति। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। अश्वो रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्सरमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थः सम्भारो भवंति। यदेवास्य तत्र न्यंक्तम्। तदेवावं रुन्थे॥२२॥

देवा वा ऊर्जुं व्यंभजन्त। ततं उदुम्बर् उदंतिष्ठत्। ऊर्ग्वा उदुम्बरंः। यदौदुंम्बरः सम्भारो भवंति। ऊर्जमेवावं रुन्थे। तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयुत्र्याऽहंरत्। तस्यं पूर्णमंच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णृत्वम्॥२३॥

यस्यं पर्णमयः सम्भारो भवति। सोमुपीथमेवावं रुन्धे।

देवा वै ब्रह्मंत्रवदन्त। तत्पूर्ण उपांशृणोत्। सुश्रवा वै नामं। यत्पंण्मयंः सम्भारो भवंति। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। प्रजापंतिर्श्निमंसृजत। सोंऽबिभेत्प्र मां धक्ष्यतीतिं। त॰ शम्यांऽशमयत्॥२४॥

तच्छुम्यै शमित्वम्। यच्छंमीमयः सम्भारो भवंति। शान्त्या अप्रदाहाय। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छंत्। यद्वैकंङ्कतः सम्भारो भवंति। भा एवावं रुन्धे। सहंदयो-ऽग्निराधेय इत्यंहः। मुरुतोऽद्भिरग्निमंतमयन्। तस्यं तान्तस्य हदंयमाच्छंन्दन्। साऽशनिरभवत्। यद्शनिहतस्य वृक्षस्यं सम्भारो भवंति। सहंदयमेवाग्निमा धंत्ते॥२५॥

ऊपां अभवन्नभवद्वुल्मीकौंऽश्राम्युदप्रंथयुद्धृत्यै वीभथ्सत् इत्यांहू रुन्धे पर्णृत्वमंशमयदच्छिन्दुङ्क्षीणि च॥======[3]

द्वादशसुं विकामेष्वग्निमा दंधीत। द्वादेश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेवैनंमवरुद्धा धंत्ते। यद्वांदशसुं विकामेष्वा दधीत। परिमित्मवं रुन्धीत। चक्षुंनिमित् आदंधीत। इयद्वादंश विकामा(३) इति। परिमितं चैवापंरिमितं चावं रुन्धे। अनृतं वै वाचा वंदति। अनृतं मनसा ध्यायति॥२६॥

चक्षुर्वे स्त्यम्। अद्रा(३)गित्यांह। अदंर्श्मितिं। तथ्सत्यम्। यश्वक्षुंर्निमितेऽग्निमांधत्ते। सत्य पुवैन्मा धंत्ते। तस्मादाहिताग्निर्नानृतं वदेत्। नास्यं ब्राह्मणोऽनांश्वान्गृहे वंसेत्। सत्ये ह्यंस्याग्निराहितः। आग्नेयी वै रात्रिः॥२७॥

आग्नेयाः पुशर्वः। ऐन्द्रमहंः। नक्तं गार्हंपत्यमा दंधाति।

पृश्नेवावं रुन्धे। दिवांऽऽहवनीयम्। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। अधींदिते सूर्यं आहवनीयमा दंधाति। एतस्मिन्वे लोके प्रजा-पंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। अथों भूतं चैव भविष्यचावं रुन्धे॥२८॥

इडा वै मान्वी यंज्ञानूकाशिन्यांसीत्। साऽशृंणोत्। असुंरा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। त आंहवनीयमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथान्वाहार्यपचनम्। साऽब्रंवीत्। प्रतीच्येषाङ् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा परां भविष्युन्तीतिं॥२९॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्रतीच्यंस्य श्रीरंति। भ्रद्रो भूत्वा परांभवति। साऽश्वेणोत्। देवा अग्निमादंधत् इतिं। तदंगच्छत्। तेंऽन्वाहार्यपचंनमग्र आदंधत। अथ् गार्हंपत्यम्। अथांऽऽहवनीयम्। साऽब्रंवीत्॥३०॥

प्राच्येषाड् श्रीरंगात्। भुद्रा भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंष्यन्ति। प्रजां तु न वेंष्यन्तु इति। यस्यैवमुग्निराधीयतें। प्राच्यंस्य श्रीरंति। भुद्रो भूत्वा सुंवर्गं लोकमेंति। प्रजां तु न विन्दते। साऽब्रंवीदिडा मनुम्। तथा वा अहं तवाग्निमाधांस्यामि। यथा प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जनिष्यसें॥३१॥

प्रत्यस्मिँ होके स्थास्यसिं। अभि सुंवर्गं होकं जेष्यसीतिं। गार्हंपत्यमग्र आदंधात्। गार्हंपत्यं वा अनुं प्रजाः पृशवः प्रजायन्ते। गार्हंपत्येनैवास्मैं प्रजां पृशून्प्राजनयत्। अथौन्वाहार्यपर्चनम्। तिर्यिङ्किंव वा अयं होकः। अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रत्यंतिष्ठत्। अथांऽऽहव्नीयम्। तेनैव सुंवृगं लोकमभ्यंजयत्॥३२॥

यस्यैवम् ग्निरांधीयतें। प्र प्रजयां पृश्भिं मिथुनैर्जायते। प्रत्यस्मिं होके तिष्ठति। अभि सुंवर्गं लोकं जयति। यस्य वा अयंथादेवतम् ग्निरांधीयतें। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यस्यं यथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति॥ ३३॥

भृगूंणां त्वाऽङ्गिरसां व्रतपते व्रतेनादंधामीतिं भृग्वङ्गिरसा-मादंध्यात्। आदित्यानां त्वा देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामी-त्यन्यासां ब्राह्मणीनां प्रजानांम्। वरुणस्य त्वा राज्ञां व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञंः। इन्द्रस्य त्वेन्द्रियेणं व्रतपते व्रतेनादंधामीति राज्ञन्यंस्य। मनौस्त्वा ग्राम्ण्यों व्रतपते व्रतेनादंधामीति वैश्यंस्य। ऋभूणां त्वां देवानां व्रतपते व्रतेनादंधामीति रथकारस्यं। यथादेवतमग्रिराधीयते। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति॥३४॥

ध्यायति वे रात्रिश्चावं रुन्धे भविष्युन्तीत्यंब्रवीज्ञनिष्यसेंऽजयद्वसीयान्भवित् नवं च॥—————[४]

प्रजापंतिर्वाचः स्त्यमंपश्यत्। तेनाग्निमाधंत्त। तेन् वै स आंभ्रोत्। भूर्भुवः सुविरित्यांह। एतद्वै वाचः स्त्यम्। य एतेनाग्निमाध्ते। ऋभ्रोत्येव। अथो स्त्यप्रांशूरेव भंवति। अथो य एवं विद्वानंभिचरंति। स्तृणुत एवैनम्॥३५॥

भूरित्यांह। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। भुव इत्यांह।

अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। सुव्रित्यांह। सुव्रग एव लोके प्रति तिष्ठति। त्रिभिरक्षरैर्गार्हंपत्यमा दंधाति। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्माधंत्ते। सर्वैः पश्चभिराहवनीयम्॥३६॥

सुवर्गाय वा एष लोकायाधीयते। यदांहवनीयः। सुवर्ग एवास्मै लोके वाचः सत्यः सर्वमाप्नोति। त्रिभिर्गार्हंपत्यमा दंधाति। पश्चभिराहवनीयम्। अष्टौ सम्पंद्यन्ते। अष्टाक्षरा गायत्री। गायत्रौंऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तमाधंत्ते॥३७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्मृष्टाः परांचीरायन्। ताभ्यो ज्योतिरुदंगृह्णात्। तं ज्योतिः पश्यन्तीः प्रजा अभि स्मावर्तन्त। उपरीवाग्निमुद्गृह्णीयादुद्धरन्। ज्योतिरेव पश्यन्तीः प्रजा यजमानम्भि स्मावर्तन्ते। प्रजापंतेरक्ष्यंश्वयत्। तत्परां-ऽपतत्। तदश्वोऽभवत्। तदश्वंस्याश्वत्वम्॥३८॥

पुष वै प्रजापंतिः। यद्ग्निः। प्राजापत्योऽश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। स्वमेव चक्षुः पश्यंन्य्रजापंतिरनूदेति। वृज्री वा पृषः। यदश्वः। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। जातानेव भातृंव्यान्त्रणुंदते। पुन्रा वंर्तयति॥३९॥

ज्निष्यमांणानेव प्रतिनुदते। न्यांहवनीयो गार्हंपत्य-मकामयत। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। तौ विभाजं नाशंक्रोत्। सोऽश्वंः पूर्ववाङ्गत्वा। प्राश्चं पूर्वमुदंवहत्। तत्पूर्ववाहंः पूर्ववाद्मम्। यदश्वं पुरस्तान्नयंति। विभंक्ति-रेवैनयोः सा। अथो नानांवीर्यावेवैनौ कुरुते॥४०॥

यदुपर्युपरि शिरो हरेंत्। प्राणान् विच्छिन्द्यात्। अधोऽधः शिरो हरति। प्राणानां गोपीथायं। इयत्यग्रें हरति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेंवैनं लोकेषु प्रतिष्ठित्मार्थत्ते। प्रजापंतिरग्निमंसृजत। सोऽबिभेत्प्र मा धक्ष्यतीतिं॥४१॥

तस्यं त्रेधा मंहिमानं व्यौहत्। शान्त्या अप्रंदाहाय। यत्रेधाऽग्निराधीयतें। महिमानंमेवास्य तद्यूहित। शान्त्या अप्रंदाहाय। पुन्रा वंर्तयति। महिमानंमेवास्य सन्दंधाति। पृशुर्वा पुषः। यदर्थः। पुष रुद्रः॥४२॥

यद्गिः। यदश्वंस्य प्रेंडिग्निमांद्ध्यात्। रुद्रायं पृश्निपिदध्यात्। अपृशुर्यजमानः स्यात्। यन्नाकृमयेत्। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। पृश्वंत आक्रमयेत्। यथाऽऽहितस्याग्नेरङ्गारा अभ्यव्वर्तेरन्। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवंन्ति। न रुद्रायापिदधाति॥४३॥

त्रीणि ह्वी १ षि निर्वपति। विराजं एव विक्रांन्तं यजंमानोऽनु विक्रमते। अग्नये पर्वमानाय। अग्नये पावकायं। अग्नये शुचये। यद्ग्नये पर्वमानाय निर्वपति। पुनात्येवैनम्। यद्ग्नये पावकायं। पूत एवास्मिन्नन्नाद्यं दधाति।

यद्ग्रये शुचंये। ब्रह्मवर्चसमेवास्मिन्नुपरिष्टाद्दधाति॥४४॥ पुन्माहुवनीयं धत्तेऽश्वत्वं वंतंयित कुरुत् इति रुद्रो दंधाति यद्ग्रये शुचंय एकं च॥————[५]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नौ वामं वसु सं न्यंदधत। इदमुं नो भविष्यति। यदिं नो जेष्यन्तीतिं। तद्ग्निर्नोथ्सहंमशक्नोत्। तत् त्रेधा विन्यंदधात्। पृशुषु तृतीयम्। अपसु तृतीयम्। आदित्ये तृतीयम्॥४५॥

तद्देवा विजित्यं। पुन्रवांरुरुथ्सन्त। तेंऽग्नये पर्वमानाय पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निर्वपन्। पृशवो वा अग्निः पर्वमानः। यदेव पृशुष्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धत। तेंऽग्नये पावकायं। आपो वा अग्निः पावकः। यदेवापस्वासीत्। तत्तेनावांरुन्धत॥४६॥

तैंऽग्नये शुचंये। असौ वा आंदित्यौंऽग्निः शुचिः। यदेवाऽऽदित्य आसींत्। तत्तेनावांरुन्धत। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। तनुवो वावैता अंग्र्याधेयंस्य। आग्नेयो वा अष्टा-कंपालोऽग्र्याधेयमितिं। यत्तं निर्वपेंत्। नैतानिं। यथाऽऽत्मा स्यात्॥४७॥

नाङ्गांनि। ताहगेव तत्। यदेतानि निर्वपंत्। न तम्। यथाऽङ्गांनि स्युः। नाऽऽत्मा। ताहगेव तत्। उभयांनि सह निरुप्यांणि। यज्ञस्यं सात्मत्वायं। उभयं वा एतस्येन्द्रियं वीर्यमाप्यते॥४८॥

यौंऽग्निमांधृत्ते। ऐन्द्राग्नमेकांदशकपालुमनु निर्वपेत्।

आदित्यं च्रम्। इन्द्राग्नी वै देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयातयाम्नी। ताभ्यामेवास्मां इन्द्रियं वीर्यमवं रुन्थे। आदित्यो भवति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। धेन्वै वा एतद्रेतः॥४९॥

यदाज्यम्। अनुडुह्रस्तण्डुलाः। मिथुनमेवावं रुन्धे। घृते भंवति। युज्ञस्यालूक्षान्तत्वाय। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। पृशवो वा एतानि ह्वी॰षि। एष रुद्रः। यदग्निः॥५०॥

यथ्सद्य एतानि ह्वी १ वि निर्वि ते। रुद्रायं पृश्नि पि दध्यात्। अपृश्र्यजंमानः स्यात्। यन्नानुंनिर्वि ते। अनंबरुद्धा अस्य पृश्वंः स्युः। द्वादृशसु रात्रीष्वनु निर्वि पेत्। संवथ्सरप्रतिमा व द्वादंश रात्रयः। संवथ्सरणेवासमें रुद्र १ शमियत्वा। पृश्नवं रुन्थे। यदेकंमेकमेतानि ह्वी १ वि निर्वि त्॥ ५१॥

यथा त्रीण्यावपंनानि पूर्यंत्। तादक्तत्। न प्रजनंनमुच्छि १ षेत्। एकं निरुप्यं। उत्तरे समस्येत्। तृतीयंमेवास्मै
लोकमुच्छि १ षति प्रजनंनाय। तं प्रजयां पृशुभिरनु
प्रजायते। अथो य्ज्ञस्यैवैषाऽभिक्रांन्तिः। रृथ्चकं प्रवंतियति।
मनुष्यर्थेनैव देवर्थं प्रत्यवंरोहति॥५२॥

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्राँ(३) न होत्व्या(३)

मितिं। यद्यजुंषा जुहुयात्। अयंथापूर्वमाहंती जुहुयात्। यत्र जुंहुयात्। अग्निः परां भवेत्। तूष्णीमेव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहंती जुहोतिं। नाग्निः परांभवति। अग्नीधं ददाति॥५३॥

अग्निम्ंखानेवर्त्न्प्रीणाति। उपबर्हणं ददाति। रूपाणामवं-रुद्धे। अश्वं ब्रह्मणें। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। धेनु १ होत्रें। आशिषं प्वावं रुन्धे। अनुङ्गाहंमध्वर्यवें। वह्निर्वा अनुङ्गान्। वह्निरध्वर्युः॥५४॥

वहिंनेव वहिं युज्ञस्यावं रुन्धे। मिथुनौ गावौं ददाति। मिथुनस्यावंरुद्धौ। वासों ददाति। सुर्वदेवत्यं वै वासंः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। आ द्वांदशभ्यों ददाति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति। कामंमूर्ध्वं देयम्। अपंरिमितस्यावंरुद्धौ॥५५॥

आदित्ये तृतींयमुफ्स्वासीतत्तेनावांरुन्यत् स्यादांप्यते रेतोऽग्निरेकंमेकमेतानि हुवीर्शि निविपेतप्रत्यवरोहति ददात्यध्वर्युर्देयमकं

च॥**—————[६**]

घर्मः शिर्स्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृशुभिर्भुवत्। छुर्दिस्तोकाय तनंयाय यच्छ। वातंः प्राणस्तद्यम्गिः। सिम्प्रंयः पृशुभिर्भुवत्। स्वदितं तोकाय तनंयाय पितुं पंच। प्राचीमनुं प्रदिशं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो विभांहि। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे

चतुंष्पदे॥५६॥

अर्कश्चक्षुस्तद्सौ सूर्यस्तद्यम्गिः। सिम्प्रियः पृश्भिर्भुवत्। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तृनः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन् त्वाऽऽदंधे। अग्निनांऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे। ये ते अग्ने शिवे तृनुवौं। विरार्द्व स्वरार्द्व। ते माविशतां ते मां जिन्वताम्॥५७॥

ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। सम्राद्वांभिभूश्चं। ते माविंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। विभूश्चं परिभूश्चं। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। ये तें अग्ने शिवे तनुवौं। प्रभ्वी च प्रभूतिश्च। ते मा विंशतां ते मां जिन्वताम्। यास्तें अग्ने शिवास्तनुवंः। ताभिस्त्वाऽऽदंधे। यास्तें अग्ने घोरास्तनुवंः। ताभिरमुं गंच्छ॥५८॥

ड्मे वा एते लोका अग्नयंः। ते यदव्यांवृत्ता आधीयेरन्। शोचयंयुर्यजमानम्। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमा दंधाति। वातंः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्। तेनैवैनान्व्यावंतियति। तथा न शोचयन्ति यजमानम्। रथन्तरम्भिगांयते गार्हंपत्य आधीयमांने। राथंन्तरो वा अयं लोकः॥५९॥

अस्मिन्नेवैनं लोके प्रतिष्ठितमा धंत्ते। वामुदेव्यम्भिगांयत

उद्धियमाणे। अन्तरिक्षं वै वांमदेव्यम्। अन्तरिक्षं एवैन् प्रतिष्ठितमार्थत्ते। अथो शान्तिर्वे वांमदेव्यम्। शान्तमेवैनं पश्व्यंमुद्धंरते। बृहद्भिगांयत आहवनीयं आधीयमाने। बार्हतो वा असौ लोकः। अमुष्मिन्नेवैनं लोके प्रति-ष्ठितमार्थत्ते। प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत॥६०॥

सोऽश्वोऽवारों भूत्वा परांङेत्। तं वांरवन्तीयंनावारयत। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। श्यैतेनं श्येती अंकुरुत। तच्छौतस्यं श्यैतृत्वम्। यद्वांरवन्तीयंमिभ् गायंते। वार्यित्वैवनं प्रतिष्ठितमा धंत्ते। श्यैतेनं श्येती कुंरुते। घर्मः शिर् इति गार्हंपत्यमादंधाति। सशींर्षाणमेवैनमा धंत्ते॥६१॥

उपैन्मुत्तरो युज्ञो नंमित। रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। स आधीयमान ईश्वरो यजमानस्य पृशून् हिश्सितोः। सम्प्रियः पृशुभिभुविदित्याह। पृशुभिरेवैन्श् सम्प्रियं करोति। पृशूनामहिश्सायै। छुर्दिस्तोकाय् तनयाय युच्छेत्याह। आमेवैतामा शास्ते। वातः प्राण इत्यंन्वाहार्यपर्चनम्॥६२॥

सप्राणमेवैनमा धेत्ते। स्वदितं तोकाय तनयाय पितुं प्रचेत्यांह। अन्नमेवास्मैं स्वदयति। प्राचीमनं प्रदिशं प्रेहिं विद्वानित्यांह। विभिक्तिरेवैनयोः सा। अथो नानावीयविवैनौं कुरुते। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पद इत्यांह। आ-मेवैतामा शांस्ते। अर्कश्चक्षुरित्यांहवनीयम्ं। अर्को वै

देवानामन्नम्॥६३॥

अन्नमेवावं रुन्धे। तेनं मे दीदिहीत्यांह। सिमंन्ध एवैनम्ं। आनुशे व्यांनश् इति त्रिरुदिङ्गयित। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेवेनं लोकेषु प्रतिष्ठितमा धंत्ते। तत्तथा न कार्यम्ं। वीङ्गित्मप्रतिष्ठितमा दंधीत। उद्धृत्येवाधायांभिमन्त्रियंः। अवीङ्गितमेवेनं प्रतिष्ठितमाधंत्ते। विराद्वं स्वराद्व यास्ते अग्ने शिवास्तनुवस्ताभिस्त्वाऽऽदंध इत्यांह। एता वा अग्नेः शिवास्तनुवंः। ताभिरवेन् समर्धयित। यास्ते अग्ने घोरास्तनुवस्ताभिरमुं गुच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। ताभिरवेनं पर्गभावयित॥६४॥

लोकोंऽसृजतैनुमार्धत्तेऽन्वाहार्युपर्चनं देवानामश्रमेनुं प्रतिष्ठितुमार्धत्ते पश्चं च॥—————[८]

श्मीगुर्भाद्गिं मंन्थति। एषा वा अग्नेर्यज्ञियां तृनूः। तामेवास्में जनयति। अदिंतिः पुत्रकांमा। साध्येभ्यों देवेभ्यों ब्रह्मोदनमंपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्यें धाता चाँर्यमा चांजायेताम्। सा द्वितीयंमपचत्॥६५॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्ये मित्रश्च वरुणश्चाजायेताम्। सा तृतीयंमपचत्। तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्नांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या अश्शंश्च भगंश्चाजायेताम्। सा चंतुर्थमंपचत्॥६६॥

तस्यां उच्छेषंणमददुः। तत्प्राश्ञांत्। सा रेतोंऽधत्त। तस्या

इन्द्रेश्च विवेस्वाङ्श्चाजायेताम्। ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति। प्राश्चंन्ति ब्राह्मणा ओंद्नम्। यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तेनं स्मिधोऽभ्यज्या दंधाति। उच्छेषंणाद्वा अदिती रेतों-ऽधत्त॥६७॥

उच्छेषंणादेव तद्रेतों धत्ते। अस्थि वा एतत्। यथ्समिधंः। एतद्रेतंः। यदाज्यम्। यदाज्यंन समिधोऽभ्यज्यादधांति। अस्थ्येव तद्रेतंसि दधाति। तिस्र आदंधाति मिथुन्त्वायं। इयंतीर्भवन्ति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताः॥६८॥

इयंतीर्भवन्ति। युज्ञपुरुषा सम्मिताः। इयंतीर्भवन्ति। एताबुद्दै पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मिताः। आर्द्रा भंवन्ति। आर्द्रमिव हि रेतः सिच्यते। चित्रियस्याश्वत्थस्यादंधाति। चित्रमेव भंवति। घृतवंतीभिरा दंधाति॥६९॥

पुतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यद्घृतम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। अथो तेजंसा। गायत्रीभिर्न्नाह्मणस्यादंध्यात्। गायत्रछंन्दा वै ब्राह्मणः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त्रिष्टुग्भी राजन्यंस्य। त्रिष्टुप्छंन्दा वै राजन्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययनस्त्वायं॥७०॥

जगंतीभिर्वेश्यंस्य। जगंतीछन्दा वै वैश्यंः। स्वस्य छन्दंसः प्रत्ययन्स्त्वायं। त॰ संवथ्सरं गोंपायेत्। संवथ्सर॰ हि रेतों हितं वर्धते। यद्यंन॰ संवथ्सरे नोपनमैंत्। स्मिधः पुन्रादेध्यात्। रेतं पुव तिद्धतं वर्धमानमेति। न मार्समम्ब्जीयात्। न स्त्रियमुपेयात्॥७१॥

यन्मा १ समंश्जीयात्। यिश्वयं मुप्यात्। निर्वीर्यः स्यात्। नैनं मृग्निरुपं नमेत्। श्व आंधास्यमानो ब्रह्मौद्नं पंचति। आदित्या वा इत उत्तमाः सुंवर्गं लोकमायन्। ते वा इतो यन्तं प्रतिनुदन्ते। एते खलु वावाऽऽदित्याः। यद्ग्रौह्मणाः। तैरेव सन्त्वं गंच्छति॥७२॥

नैनं प्रतिनुदन्ते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। क्वां सः। अग्निः कार्यः। यौऽस्मै प्रजां पृशून्प्रंजनयतीति। शल्केस्ता १रात्रिंमग्निमिन्धीत। तस्मिन्नुपव्युषम्रणी निष्टंपेत्। यथंर्षभायं वाशिता न्यांविच्छायति। तादगेव तत्। अपोदूह्य भस्माग्निं मन्थति॥७३॥

सैव साऽग्नेः सन्तंतिः। तं मंथित्वा प्राश्चमुद्धंरित।
संवथ्सरमेव तद्रेतों हितं प्रजनयित। अनांहित्स्तस्याग्निरित्यांहुः। यः समिधोऽनांधायाग्निमांधृत्त इतिं। ताः
संवथ्सरे पुरस्तादादंध्यात्। संवथ्सरादेवैनंमव्रुध्याधंत्ते।
यदि संवथ्सरेऽनाद्ध्यात्। द्वाद्श्यां पुरस्तादादंध्यात्।
संवथ्सरप्रंतिमा व द्वादंश रात्रंयः। संवथ्सरमेवास्याऽऽहिंता
भवन्ति। यदि द्वाद्श्यां नाद्ध्यात्। त्र्यहे पुरस्तादादंध्यात्।
आहिंता एवास्यं भवन्ति॥७४॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। स रिरिचानोंऽमन्यत। स तपोंऽतप्यत। स आत्मन्वीर्यमपश्यत्। तदंवर्धत। तदंस्माथ्सहंसोर्ध्वमंसृज्यत। सा विराडंभवत्। तां देवासुरा व्यंगृह्णत। सोंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। मम वा एषा॥७५॥

दोहां एव युष्माक्मितिं। सा ततः प्राच्युदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अर्थवं पितुं में गोपायेतिं। सा द्वितीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। नर्य प्रजां में गोपायेतिं। सा तृतीयमुदंक्रामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। शक्स्यं पृशून्में गोपायेतिं॥७६॥

सा चंतुर्थमुदंकामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। सप्रंथ स्भां में गोपायेति। सा पश्चममुदंकामत्। तत्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अहं बुध्निय मत्रं मे गोपायेति। अग्नीन् वाव सा तान्व्यंक्रमत। तान्प्रजापंतिः पर्यगृह्णात्। अथो पङ्किमेव। पङ्किर्वा एषा ब्राह्मणे प्रविष्टा॥७७॥

तामात्मनोऽधि निर्मिमीते। यद्ग्निरांधीयतें। तस्मांदेतावंन्तो-ऽग्नय आधीयन्ते। पाङ्कं वा इद॰ सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्कः स्पृणोति। अर्थवं पितुं में गोपायेत्यांह। अन्नमेवैतेनं स्पृणोति। नर्यं प्रजां में गोपायेत्यांह। प्रजामेवैतेनं स्पृणोति।

शङ्स्यं पशून्मं गोपायेत्याह॥७८॥

पुशूनेवैतेनं स्पृणोति। सप्रंथ स्मां में गोपायेत्यांह। स्मामेवेतेनंन्द्रिय स्पृणोति। अहं बुध्रिय मर्त्रं मे गोपायेत्यांह। मत्रंमेवेतेन श्रिय स्पृणोति। यदंन्वाहार्यपचंने- उन्वाहार्यं पचंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदार्हंपत्य आज्यंमिध्श्रयंन्ति सम्पत्नीं यांज्यंन्ति। तेन सौं उस्याभीष्टंः प्रीतः। यदार्हंपत्य प्रीतः। यदाहवनीये जुह्नंति॥७९॥

तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यथ्मभायां विजयंन्ते।
तेन सौंऽस्याभीष्टः प्रीतः। यदांवस्थेऽन्न् हरंन्ति। तेन्
सौंऽस्याभीष्टंः प्रीतः। तथांऽस्य सर्वे प्रीता अभीष्टा
आधींयन्ते। प्रवस्थमेष्यन्नेवमुपंतिष्ठेतैकंमेकम्। यथां
ब्राह्मणायं गृहेवासिने परिदायं गृहानेतिं। ताद्दगेव तत्।
पुनरागत्योपंतिष्ठते। सा भांगेयमेवेषां तत्। सा ततं
ऊर्ध्वारोहत्। सा रोहिण्यंभवत्। तद्रोहिण्ये रोहिणित्वम्।
रोहिण्यामुग्निमादंधीत। स्व एवेनं योनौ प्रतिष्ठितमाधंत्ते।
ऋधोत्येनेन॥८०॥

एषा पुशून्में गोपायेति प्रविष्टा पुशून्में गोपायेत्यांहु जुह्वंति तिष्ठते सप्त चं॥————[१०]

ब्रह्म सन्धंत्तं कृत्तिकामुद्धन्ति द्वाद्शसुं प्रजापंतिर्वाचो देवासुरास्तद्ग्निर्नोद्धर्मः शिरं ड्वमे वै शंमीगुर्भात्प्रजापंतिः स रिरिचानः स तपः स आत्मन्वीर्यं दशं॥१०॥

ब्रह्म सन्धंत्तुं तौ दिव्यावर्थो शन्त्वाय प्राच्येषां यदुपर्युपरि यथ्सद्यः सोऽश्वोऽवारों भूत्वा जगंतीभिरशींतिः॥८०॥

ब्रह्म सन्धंत्तमृध्नोत्येनेन॥

22

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

उद्धन्यमानम्स्या अंमेध्यम्। अपं पाप्मानं यर्जमानस्य हन्तु। शिवा नः सन्तु प्रदिश्श्वतंस्रः। शं नों माता पृथिवी तोकसाता। शं नों देवीर्भिष्टये। आपों भवन्तु पीतयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। वैश्वान्रस्यं रूपम्। पृथिव्यां परिस्रसां। स्योनमा विंशन्तु नः॥१॥

यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। सञ्जज्ञाने रोदंसी सम्बभूवतुः। ऊषाँन्कृष्णमंवतु कृष्णमूषाँः। इहोभयोंर्यज्ञिय-मार्गमिष्ठाः। ऊतीः कुंर्वाणो यत्पृथिवीमचंरः। गुहाकारंमाखुरूपं प्रतीत्यं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जं पृथिव्या रसमाभरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः पुरूचीः॥२॥

वृम्गीभिरनुंवित्तं गुहांसु। श्रोत्रं त उर्व्यवंधिरा भवामः। प्रजापंतिसृष्टानां प्रजानांम्। क्षुधोऽपंहत्ये सुवितं नों अस्तु। उप प्रभिन्नमिष्मूर्जं प्रजाभ्यः। सूदं गृहेभ्यो रसमाभंरामि। यस्यं रूपं विभ्रदिमामविंन्दत्। गुह्य प्रविष्टा सिर्रस्य मध्यें। तस्येदं विहंतमाभरंन्तः। अर्छम्बद्धारमस्यां विधेम॥३॥

यत्पर्यपंश्यथ्सरि्रस्य मध्यै। उर्वीमपंश्यञ्जगंतः प्रतिष्ठाम्। तत्पुष्कंरस्याऽऽयतंनाद्धि जातम्। पुणं पृथिव्याः प्रथंन १ हरामि। याभिरह १ हु अर्गतः प्रतिष्ठाम्। उर्वीमिमां विश्वजनस्ये भूत्रीम्। ता नेः शिवाः शर्कराः सन्तु सर्वाः। अग्ने रेतंश्चन्द्र १ हिरंण्यम्। अन्द्यः सम्भूतम्मृतं प्रजास्। तथ्सम्भरंत्रुत्तर्तो निधायं॥४॥

अतिप्रयच्छं दुरितिं तरेयम्। अश्वों रूपं कृत्वा यदेश्वत्थे-ऽतिष्ठः। संवथ्सरं देवेभ्यों निलायं। तत्ते न्यंक्तमिह सम्भरंन्तः। शृतं जीवेम श्ररदः सवीराः। ऊर्जः पृथिव्या अध्युत्थितोऽसि। वर्नस्पते शृतवंल्शो विरोह। त्वयां व्यमिष्मूर्जं मदेन्तः। रायस्पोषेण समिषा मंदेम। गायत्रिया ह्रियमाणस्य यत्तै॥५॥

पूर्णमपंतत्तृतीयंस्यै दिवोऽिधं। सोंऽयं पूर्णः सोंमपूर्णाद्धि जातः। ततो हरामि सोमपीथस्यावंरुद्धौ। देवानां ब्रह्मवादं वदंतां यत्। उपार्श्वणोः सुश्रवा वै श्रुतोऽिस। ततो मामाविंशतु ब्रह्मवर्चसम्। तथ्सम्भर्ङ्स्तदवंरुन्धीय साक्षात्। ययां ते सृष्टस्याग्नेः। हेतिमशंमयत्प्रजापंतिः। तामिमामप्रदाहाय॥६॥

श्मी १ शान्त्ये हराम्यहम्। यत्ते सृष्टस्यं यतः। विकेङ्कत्ं भा आँच्छं ज्ञातवेदः। तयां भासा सम्मितः। उरं नो लोकमनु प्रभाहि। यत्ते तान्तस्य हृदंयमाच्छिन्दञ्जातवेदः। मुरुतोऽद्भिस्तंमयित्वा। एतत्ते तदंशनेः सम्भेरामि। सात्मां अग्ने सहृंदयो भवेह। चित्रियादश्वत्थाथ्सम्भृंता बृहृत्यः॥७॥

शरीरम्भि सङ्स्कृताः स्थ। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन्

सम्मिताः। तिस्रस्त्रिवृद्धिर्मिथुनाः प्रजाँत्यै। अश्वत्थार्द्धेव्य-वाहाद्धि जाताम्। अग्नेस्तनूं यज्ञिया् सम्भेरामि। शान्तयोनि शमीग्र्भम्। अग्नये प्रजनयितवे। यो अश्वत्थः शमीगर्भः। आरुरोह त्वे सर्चा। तं ते हरामि ब्रह्मणा॥८॥

य्जियैं केतुभिं सह। यं त्वां समभंरञ्जातवेदः। यथाशरीरं भूतेषु न्यंक्तम्। स सम्भृंतः सीद शिवः प्रजाभ्यः। उरुं नों लोकमनुंनेषि विद्वान्। प्रवेधसे क्वये मेध्याय। वची वन्दारं वृष्भाय वृष्णें। यतो भ्यमभंयं तन्नो अस्तु। अवं देवान् यंजे हेड्यान्। समिधाऽग्निं दुंवस्यत॥९॥

॥ घृत-सूक्तम्॥

घृतैर्बोधयतातिथिम्। आऽस्मिन् ह्व्या जुंहोतन। उपं त्वाऽग्ने ह्विष्मितीः। घृताचीर्यन्तु हर्यत। जुषस्वं स्मिधो ममं। तं त्वां स्मिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोचा यविष्ठ्य। स्मिध्यमानः प्रथमो नु धर्मः। समृक्तुभिरज्यते विश्ववारः॥१०॥

शोचिष्केंशो घृतिनिर्णिक्पाव्कः। सुयज्ञो अग्निर्यज्ञथांय देवान्। घृतप्रंतीको घृतयोनिर्ग्निः। घृतैः सिर्मेद्धो घृतम्स्यान्नम्। घृतप्रुषंस्त्वा स्रितों वहन्ति। घृतं पिबंन्थ्स्यजां यक्षि देवान्। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणः। घृतप्रंतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु

गव्यम्। पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्॥११॥



त्वामंग्ने समिधानं यंविष्ठ। देवा दूतं चंकिरे हव्यवाहम्ँ। उरुज्रयंसं घृतयोनिमाहुंतम्। त्वेषं चक्षुंदिधिरे चोदयन्वंति। त्वामंग्ने प्रदिव आहुंतं घृतेनं। सुम्नायवंः सुष्मिधा समीधिरे। स वांवृधान ओषंधीभिरुक्षितः। उरु ज्रयारंसि पार्थिवा वितिष्ठसे। घृतप्रंतीकं व ऋतस्यं धूर्षदम्ं। अग्निं मित्रं न संमिधान ऋंअते॥१२॥

इन्धांनो अको विदर्थेषु दीद्यंत्। शुक्रवंणामुद्धं नो यश्सते थियम्। प्रजा अंग्रे संवांसय। आशांश्च प्रशुभिः सह। राष्ट्राण्यंस्मा आधेहि। यान्यासंन्थ्सिवतुः स्वे। मही विश्पत्नी सदंने ऋतस्यं। अर्वाची एतं धरुणे रयीणाम्। अन्तर्वत्नी जन्यं जातवेदसम्। अध्वराणां जनयथः पुरोगाम्॥१३॥

आरोहतं दशत् शक्तं रामंग ऋतेनां य आयुंषा वर्चसा सह। ज्योग्जीवन्त उत्तरामृत्तरा समाम। दर्शमहं पूर्णमां सं यज्ञं यथा यजैं। ऋत्वियवती स्थो अग्निरंतसौ। गर्भं दधाथां ते वामहं देदे। तथ्सत्यं यद्वीरं बिभृथः। वीरं जनिय्ध्यर्थः। ते मत्प्रातः प्रजीनिष्येथे। ते मा प्रजाते प्रजनिय्ध्यर्थः॥१४॥

प्रजयां पृशुभिंब्रह्मवर्चसेनं सुवर्गे लोके। अनृंताथ्सत्य-मुपैमि। मानुषाद्दैव्यमुपैंमि। दैवीं वार्चं यच्छामि। शल्कैर्ग्निमिन्धानः। उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर् ऋध्वा। अति मृत्युं तराम्यहम्। जात्वेदो भुवनस्य रेतः। इह सिश्च तपंसो यज्जनिष्यते॥१५॥

अग्निमंश्वत्थादिधं हव्यवाहम्। श्मीग्रमाञ्चनयन् यो मंयोभूः। अयं ते योनिर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथा नो वर्धया रियम्। अपेत वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अदांदिदं यमोऽवसानं पृथिव्याः। अर्न्नन्निमं पितरो लोकमंस्मै॥१६॥

अग्नेर्भस्मांस्यग्नेः पुरीषमिस। संज्ञानंमिस काम्धरंणम्। मियं ते काम्धरंणं भूयात्। संवंः सृजािम् हृदंयािन। स॰सृष्टं मनों अस्तु वः। स॰सृष्टः प्राणो अस्तु वः। सं या वंः प्रियास्तुन्वंः। सं प्रिया हृदंयािन वः। आत्मा वो अस्तु सिम्प्रियः। सिम्प्रियास्तुनुवो ममं॥१७॥

कल्पंतां द्यावांपृथिवी। कल्पंन्तामाप् ओषंधीः। कल्पंन्तामग्रयः पृथंक्। मम् ज्यैष्ठ्यांय सन्नताः। येंऽग्रयः समंनसः। अन्तरा द्यावांपृथिवी। वासंन्तिकावृत् अभि कल्पंमानाः। इन्द्रंमिव देवा अभि सं विंशन्तु। दिवस्त्वां वीर्येण। पृथिव्ये मंहिम्रा॥१८॥

अन्तरिक्षस्य पोषेण। सर्वपंशुमादंधे। अजीजनत्रमृतं मर्त्यासः। अस्रेमाणं तरणिं वीडुजंम्भम्। दश् स्वसारो अग्रुवंः समीचीः। पुमार्सं जातम्भि सर्रभन्ताम्। प्रजापंतेस्त्वा प्राणेनाभि प्राणिमि। पूष्णः पोषेणु मह्यम्। दीर्घायुत्वायं शतशारदाय। शतर शरद्य आयुंषे वर्चसे॥१९॥

जीवात्वै पुण्यांय। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव् योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोककृञ्जांतवेदः। प्राणे त्वाऽमृतमादंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। सुगार्हपत्यो विदहन्नरातीः। उषसः श्रेयंसीः श्रेयसीर्दधंत्॥२०॥

अग्नें स्पत्नारं अप बाधंमानः। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्सासुं धेहि। इमा उ मामुपंतिष्ठन्तु रायः। आभिः प्रजाभिरिह संवंसेय। इहो इडां तिष्ठतु विश्वरूपी। मध्ये वसौदीदिहि जातवेदः। ओजंसे बलांय त्वोद्यंच्छे। वृषंणे शुष्मायायुंषे वर्चसे। स्पत्नतूरंसि वृत्रतूः। यस्ते देवेषुं महिमा सुंवर्गः॥२१॥

यस्तं आत्मा पृशुषु प्रविष्टः। पृष्टिर्या ते मनुष्येषु पप्रथे। तयां नो अग्ने जुषमांण एहिं। दिवः पृथिव्याः पर्यन्तिरक्षात्। वातांत्पृशुभ्यो अध्योषंधीभ्यः। यत्रं यत्र जातवेदः सम्बभूथं। ततों नो अग्ने जुषमांण एहिं। प्राचीमनुं प्रदिशुं प्रेहिं विद्वान्। अग्नेरंग्ने पुरो अग्निर्भवेह। विश्वा आशा दीद्यांनो वि भाहि॥२२॥

ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अन्वृग्निरुषसामग्रंमख्यत्।

अन्वहांनि प्रथमो जातवेदाः। अनु सूर्यस्य पुरुत्रा चे रश्मीन्। अनु द्यावांपृथिवी आतंतान। विक्रंमस्व महाश् असि। वेदिषन्मानुषेभ्यः। त्रिषु लोकेषुं जागृहि। यदिदं दिवो यददः पृथिव्याः। संविदाने रोदंसी सं बभूवतुंः॥२३॥

तयोः पृष्ठे सींदतु जातवेदाः। शुम्भूः प्रजाभ्यंस्तुनुवै स्योनः। प्राणं त्वाऽमृत् आ दंधामि। अन्नादमन्नाद्यांय। गोप्तारं गुप्त्यै। यत्ते शुक्र शुक्रं वर्चः शुक्रा तुनूः। शुक्रं ज्योतिरजंस्रम्। तेनं मे दीदिह् तेन त्वाऽऽदंधे। अग्निनाऽग्ने ब्रह्मणा। आनुशे व्यानशे सर्वमायुर्व्यानशे॥२४॥

नर्य प्रजां में गोपाय। अमृतत्वायं जीवसैं। जातां जीन्ष्यमाणां च। अमृते सत्ये प्रतिष्ठिताम्। अथवं पितुं में गोपाय। रसमन्नंमिहायुंषे। अदंब्यायोऽशींततनो। अविषन्नः पितुं कृणा। शङ्स्यं पृशून्में गोपाय। द्विपादो ये चतुंष्यदः॥२५॥

अष्टाशंफाश्च य इहाग्नें। ये चैकंशफा आशुगाः। सप्रंथ सभां में गोपाय। ये च सभ्याः सभासदः। तानिन्द्रियावंतः कुरु। सर्वमायुरुपांसताम्। अहं बुध्निय मन्नं मे गोपाय। यमृषंयस्नेविदा विदुः। ऋचः सामानि यजूरंषि। सा हि श्रीरुमृतां सताम्॥२६॥

चतुंः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य

मध्यै। मुर्मृज्यमाना महृते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। इहैव सन्तत्रं सतो वो अग्नयः। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्। ज्योतिषा वो वैश्वानरेणोपंतिष्ठे। पुश्चधाऽग्नीन्व्यंक्रामत्। विराद्थ्सृष्टा प्रजापंतेः। ऊर्ध्वाऽऽरोहद्रोहिणी। योनिर्ग्नेः प्रतिष्ठितिः॥२७॥

विशुन्तु नः पुरूचीर्विधेम निधाय यत्तेऽप्रंदाहाय बृहुत्यौँ ब्रह्मणा दुवस्यत विश्ववार ड्मम्ंअते पुरोगां प्रजनिय्वयथौं जिन्यतैंऽस्मै ममं महिम्रा वर्षमें दर्थथ्सुवर्गों भाहि सम्बभृवतुरायुर्व्यानशे चतुंष्यदः सृतां प्रजापंतेर्द्वे चं॥———[१]

नवैतान्यहांनि भवन्ति। नव वै सुंवर्गा लोकाः। यदेतान्यहाँन्यपयन्ति। नवस्वेव तथ्सुंवर्गेषुं लोकेषुं स्त्रिणंः प्रतितिष्ठंन्तो यन्ति। अग्निष्टोमाः परंः सामानः कार्या इत्यांहुः। अग्निष्टोमसंम्मितः सुवर्गो लोक इति। द्वादंशाग्निष्टोमस्यं स्तोत्राणि। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। तत्तन्न सूर्क्यम्ं। उक्थ्यां एव संप्तद्शाः परंः सामानः कार्याः॥२८॥

प्शवो वा उक्थानि। पृश्नामवंरुद्धौ। विश्वजिद्भिजितां-विग्निष्टोमौ। उक्थ्याः सप्तद्शाः परंः सामानः। ते सङ्स्तुंता विराजम्भि सम्पंद्यन्ते। द्वे चर्चावतिंरिच्येते। एकया गौरतिंरिक्तः। एक्याऽऽयुंरूनः। सुवर्गो वै लोको ज्योतिंः। ऊर्ग्विराट्॥२९॥

सुवर्गमेव तेनं लोकम्भि जंयन्ति। यत्पर् राथंन्तरम्। तत्प्रंथमेऽहंन्कार्यम्। बृहद्वितीये। वैरूपं तृतीये। वैराजं चंतुर्थे। शाकुरं पंश्रमे। रैवत र षष्ठे। तदुं पृष्ठेभ्यो नयंन्ति। सन्तनंय

एते ग्रहां गृह्यन्ते॥३०॥

अतिग्राह्याः परंः सामस्। इमानेवैतैर्लोकान्थ्सन्तंन्वन्ति। मिथुना एते ग्रहां गृह्यन्ते। अतिग्राह्याः परंः सामस्। मिथुनमेव तैर्यजमाना अवंरुन्थते। बृहत्पृष्ठं भेवति। बृहद्वै सुंवर्गो लोकः। बृह्तैव सुंवर्गं लोकं यन्ति। त्रयस्त्रिष्शि नाम् सामं। माध्यं दिने पवंमाने भवति॥३१॥

त्रयंस्त्रिश्शहे देवताः। देवतां पृवावंरुन्धते। ये वा इतः परांश्वश् संवथ्सरमृपयन्ति। न हैंनं ते स्वस्ति समंश्जुवते। अथ येऽमृतोऽर्वाश्चमुपयन्ति। ते हैनश् स्वस्ति समंश्जुवते। पृतद्वा अमुतोऽर्वाश्चमुपंयन्ति। यदेवम्। यो ह् खलु वाव प्रजापंतिः। स उवेवेन्द्रः। तदुं देवेभ्यो नयंन्ति॥३२॥

सन्तंतिर्वा एते ग्रहाँः। यत्परंः सामानः। विषूवान्दिंवा-कीर्त्यम्। यथा शालांयै पक्षंसी। एवः संवथ्सरस्य पक्षंसी। यदेतेन गृह्येरन्। विषूची संवथ्सरस्य पक्षंसी व्यवंस्रः सेयाताम्। आर्तिमार्च्छंयः। यदेते गृह्यन्तें। यथा शालांयै पक्षंसी मध्यमं वर्शम्भि संमायच्छंति॥३३॥

पुवः संवथ्सरस्य पक्षंसी दिवाकीत्यंमिभ सं तंन्वन्ति। नार्तिमार्च्छंन्ति। एकविश्शमहंभविति। शुक्राग्रा ग्रहां गृह्यन्ते। प्रत्युत्तंब्य्ये सयत्वायं। सौर्यं पुतदहंः पृशुरालंभ्यते। सौर्यो- ऽतिग्राह्यो गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बुलिर्ह्हियते। सुप्तैतदहंरतिग्राह्यां गृह्यन्ते॥३४॥

स्प्त वै शीर्ष्णयाः प्राणाः। असावादित्यः शिरः प्रजानाम्। शीर्षत्रेव प्रजानां प्राणान्देधाति। तस्माध्सप्त शीर्षन्प्राणाः। इन्द्रो वृत्र हत्वा। असुरान्पराभाव्यं। स इमाँ ह्योकान्भ्यं जयत्। तस्यासौ लोको उनिभिजित आसीत्। तं विश्वकंमा भूत्वा उभ्यं जयत्। यद्वैश्वकर्मणो गृह्यते॥ ३५॥

सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। प्रवा एतें उस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये वैश्वकर्मणं गृह्वतें। आदित्यः श्वो गृह्यते। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रति तिष्ठन्ति। अन्योन्यो गृह्यते। विश्वान्येवान्येव कर्माणि कुर्वाणा यंन्ति। अस्यामन्येव प्रति तिष्ठन्ति। तावाऽपंरार्थाथ्यंवथ्यरस्यान्योन्यो गृह्यते। तावुभौ सह मंहाव्रते गृह्यते। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। उभयोर्लोकयोः प्रति तिष्ठन्ति। अर्क्यमुक्थं भंवति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै॥३६॥

सुमायच्छंत्यतिग्राह्यां गृह्यन्ते गृह्यते संवथ्सुरस्यान्यौन्यो गृह्येते पश्चं च॥—————[3]

पुक्रविष्श एष भंवति। एतेन् वै देवा एंकविष्शेनं। आदित्यमित उत्तमक सुंवर्गं लोकमारोहयन्। स वा एष इत एंकविष्शः। तस्य दशावस्तादहांनि। दर्श प्रस्तात्। स वा एष विराज्यंभ्यतः प्रतिष्ठितः। विराजि हि वा एष उभयतः प्रतिष्ठितः। तस्मादन्तरेमौ लोकौ यन्। सर्वेषु सुवर्गेषुं

लोकेष्वंभितपंत्रेति॥३७॥

देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। परांचो-ऽतिपादादंबिभयुः। तं छन्दोभिरदृश्हं धृत्यैं। देवा वा आंदित्यस्यं सुवर्गस्यं लोकस्यं। अवाचोऽवपादादंबिभयुः। तं पृश्चभी रृश्मिभिरुदंवयन्। तस्मादेकविश्शेऽहृन्पश्चं दिवाकीत्यांनि क्रियन्ते। रृश्मयो वै दिवाकीत्यांनि। ये गांयत्रे। ते गांयत्रीषूत्तंरयोः पर्वमानयोः॥३८॥

महादिवाकीर्त्यक् होतुंः पृष्ठम्। विकर्णं ब्रह्मसामम्। भासौंऽग्निष्टोमः। अथैतानि पर्राणि। परै्वे देवा आंदित्यक् सुवर्णं लोकमपारयन्। यदपारयन्। तत्पराणां पर्त्वम्। पारयन्त्येनं पर्राणि। य एवं वेदं। अथैतानि स्पराणि। स्परै्वे देवा आंदित्यक् सुवर्णं लोकमस्पारयन्। यदस्पारयन्। तथ्स्पराणाक् स्पर्त्वम्। स्पारयन्त्येनुक् स्पराणि। य एवं वेदं॥३९॥

अप्रतिष्ठां वा पृते गंच्छन्ति। येषा रं संवथ्सरेऽनाप्तेऽर्थ। पृकाद्शिन्याप्यतें। वैष्णवं वांमनमालंभन्ते। युज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञमेवालंभन्ते प्रतिष्ठित्ये। ऐन्द्राग्नमालंभन्ते। इन्द्राग्नी वे देवानामयातयामानौ। ये एव देवते अयांतयाम्नी। ते एवाऽऽलंभन्ते॥४०॥

वैश्वदेवमालंभन्ते। देवतां एवावंरुन्धते। द्यावापृथिव्यां

धेनुमालंभन्ते। द्यावांपृथिव्योरेव प्रतिं तिष्ठन्ति। वायव्यं वथ्समालंभन्ते। वायुरेवैभ्यों यथाऽऽयत्नाद्देवता अवं रुन्धे। आदित्यामविं वशामालंभन्ते। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति। मैत्रावरुणीमालंभन्ते॥४१॥

मित्रेणैव यज्ञस्य स्विष्टश् शमयन्ति। वर्रणेन दुरिष्टम्। प्राजापत्यं तूपरं महाव्रत आलंभन्ते। प्राजापत्योऽतिग्राह्यों गृह्यते। अहंरेव रूपेण समर्धयन्ति। अथो अहं एवैष बिलर्हिंयते। आग्नेयमा लंभन्ते प्रति प्रज्ञांत्ये। अज्ञपेत्वान् वा एते पूर्वेर्मासैरवं रुन्थते। यदेते गृव्याः पृशवं आल्भ्यन्तें। उभयेषां पशूनामवंरुद्धौ॥४२॥

यदतिरिक्तामेकाद्शिनीमालभेरन्। अप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यति-रिच्येत। यद्दौ द्वौ पृशू समस्येयुः। कनीय आयुः कुर्वीरन्। यदेते ब्राह्मणवन्तः पृशवं आलुभ्यन्तै। नाप्रियं भ्रातृंव्यम्भ्यतिरिच्यंते। न कनीय आयुः कुर्वते॥४३॥

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा वृत्तोऽशयत्। तं देवा भूतानाः रसं तेजः सम्भृत्यं। तेनैनमभिषज्यन्। महानंववर्तीति। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। महद्भृतमिति। तन्मंहाव्रतस्यं महाव्रत्त्वम्। महद्भृतमिति। तन्मंहाव्रत्त्वम्। पश्चविश्शः स्तोमो भवति॥४४॥

चतुंर्वि १ शत्यर्धमासः संवथ्सरः। यद्वा पुतस्मिन्थ्संवथ्सरेऽधि

प्राजांयत। तदन्नं पञ्चिव् श्रमंभवत्। मध्यतः क्रियते। मध्यतो ह्यन्नंमिश्तितं धिनोति। अथों मध्यत एव प्रजानामूर्ग्धीयते। अथ् यद्वा इदमंन्ततः क्रियतें। तस्मादुदन्ते प्रजाः समेधन्ते। अन्ततः क्रियते प्रजनंनायैव। त्रिवृच्छिरों भवति॥४५॥

त्रेधाविहित १ हि शिरंः। लोमं छ्वीरस्थिं। परांचा स्तुवन्ति। तस्मात्तथ्मदृगेव। न मेद्यतोऽनुं मेद्यति। न कृश्यतोऽनुं कृश्यति। पृश्रुदृशौंऽन्यः पृक्षो भंवति। सृप्तदृशौं-ऽन्यः। तस्माद्वया १ स्यन्यत्रमूर्धम्भि पूर्यावर्तन्ते। अन्यत्रतो हि तद्गरीयः क्रियते॥ ४६॥

पृश्चिविष्श आत्मा भेवति। तस्माँनमध्यतः पृशवो वरिष्ठाः। पृक्विष्शं पुच्छम्ँ। द्विपदांसु स्तुवन्ति प्रतिष्ठित्यै। सर्वेण सह स्तुवन्ति। सर्वेण ह्याँत्मनाँऽऽत्मन्वी। सहोत्पतंन्ति। एकैकामुच्छिर्षपन्ति। आत्मन्न ह्यङ्गांनि बद्धानि। न वा एतेन सर्वः पुरुषः॥४७॥

यदित इंतो लोमांनि द्तो न्खान्। परिमादंः त्रियन्ते। तान्येव तेन् प्रत्युंप्यन्ते। औदुंम्बर्स्तल्पों भवति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। यस्यं तल्प्सद्यमनंभिजित् स्यात्। स देवाना सम्यक्षे। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमारुद्धोद्गायेत्। तल्प्सद्यम्भिजयानीति तल्पंमारुद्धोद्गायेत्। तल्प्सद्यम्वाभि जयित॥४८॥

यस्यं तल्प्सद्यंमभिजित् स्यात्। स देवाना स् साम्यंक्षे। तल्प्सद्यं मा परांजेषीति तल्पंमारुह्योद्गायेत्। न तंल्प्सद्यं परांजयते। प्रेङ्के शर्सति। महो वे प्रेङ्कः। महंस प्वान्नाद्यस्यावं रुद्धे। देवासुराः संयंत्ता आसन्। त आंदित्ये व्यायंच्छन्त। तं देवाः समजयन्॥४९॥

ब्राह्मणश्चं शूद्रश्चं चर्मकर्ते व्यायंच्छेते। दैव्यो वै वर्णों ब्राह्मणः। असुर्यः शूद्रः। इमें ऽराथ्सिर्मे सुंभूतमंक्रित्रित्यंन्यत्रो ब्रूयात्। इम उद्वासीकारिणं इमे दुर्भूतमंक्रित्रित्यंन्यत्रः। यदेवैषां सुकृतं या राद्धिः। तदंन्यत्रोंऽभि श्रीणाति। यदेवैषां दुष्कृतं याऽरांद्धिः। तदंन्यत्रोऽपं हन्ति। ब्राह्मणः सं जंयति। अमुमेवाऽऽदित्यं भ्रातृंव्यस्य संविन्दन्ते॥५०॥

भुवृति भुवृति क्रियते पुर्रुषो जयत्यजयश्चयृत्येकं च॥lacksquare

उद्धन्यमान् नवैतानि सन्तंतिरेकविश्ष पृषोऽप्रंतिष्ठां प्रजापंतिर्वृत्तः षद॥६॥
उद्धन्यमानः शोचिष्केशोऽग्नें सुपन्नांनतिग्राह्यां वैश्वदेवमालंभन्ते पश्चाशत्॥५०॥
उद्धन्यमानुश् संविन्दन्ते॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंप्यन्तः। अग्नीषोमयोस्तेजस्विनींस्तुनः सन्न्यंदधत। इदम् नो भविष्यति। यदि नो जेष्यन्तीति। तेनाग्नीषोमावपांकामताम्। ते देवा विजित्यं। अग्नीषोमावन्वैंच्छन्। तेंऽग्निमन्वं-विन्दत्रृतुषूथ्मंत्रम्। तस्य विभंक्तीभिस्तेजस्विनींस्तुन्-रवांरुन्धत॥१॥

ते सोम्मन्वंविन्दन्। तमंघ्रन्। तस्यं यथाऽभिज्ञायं तनूर्व्यगृह्णत्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृहीताः। नानांऽऽग्नेयं पुनर्धिये कुर्यात्। यदनांग्नेयं पुनर्धिये कुर्यात्। व्यृद्धमेव तत्॥२॥

अनाँग्नेयं वा एतिक्रियते। यथ्मिमध्स्तनूनपांतिमिडो बर्हिर्यजिति। उभावाँग्नेयावाज्यंभागौ स्याताम्। अनाँज्यभागौ भवत् इत्यांहुः। यदुभावाँग्नेयावन्वश्चाविति। अग्नये पर्वमानायोत्तरः स्यात्। यत्पर्वमानाय। तेनाऽऽज्यंभागः। तेनं सौम्यः। बुधंन्वत्याग्नेयस्याऽऽज्यंभागस्य पुरोऽनुवाक्यां भवति॥३॥

यथां सुप्तं बोधयंति। ताहगेव तत्। अग्निन्यंक्ताः

पत्नीसंयाजानामृचंः स्युः। तेनाँऽऽग्नेय सर्वं भवति। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। प्रजनंनं वा अग्निः। प्रजनंनमेवोपैतीतिं। कृतयंजुः सम्मृतसम्भार इत्यांहुः॥४॥

न सम्भृत्याः सम्भाराः। न यजुः कार्यमिति। अथो खर्लु। सम्भृत्यां एव संम्भाराः। कार्यं यजुः। पुन्राधेयंस्य समृद्धै। तेनोपा १ श्रु प्रचरित। एष्यं इव वा एषः। यत्पुनराधेयः। यथोपा १ श्रु नृष्टमिच्छति॥ ५॥

ताहगेव तत्। उचैः स्विष्टकृतमुथ्मृंजिति। यथां नृष्टं वित्त्वा प्राह्यमितिं। ताहगेव तत्। एक्धा तेजस्विनीं देवतामुपैतीत्यांहुः। सैनंमीश्वरा प्रदह् इतिं। तत्तथा नोपैति। प्रयाजानूयाजेष्वेव विभेक्तीः कुर्यात्। यथापूर्वमाज्यंभागौ स्यातांम्। एवं पंत्रीसंयाजाः॥६॥

तद्वैश्वान् रवंत्र्यजनंनवत्तर्मुपैतीतिं। तदांहुः। व्यृंद्धं वा एतत्, अनांग्नेयं वा एतिक्रियत् इतिं। नेतिं ब्रूयात्। अग्निं प्रथमं विभक्तीनां यजित। अग्निम्तिमं पंत्रीसंयाजानाम्। तेना उग्नेयम्। तेन समृद्धं क्रियत् इतिं॥७॥

अ्कृन्धतेव तद्भवित सम्भृंतसम्भार् इत्यांहृरिच्छतिं पत्नीसंयाजा नवं च॥———[१

देवा वै यथादर्शं यज्ञानाहंरन्त। योंऽग्निष्टोमम्। य उक्थ्यम्। योऽतिरात्रम्। ते सहैव सर्वे वाजुपेयंमपश्यन्। ते। अन्यों ऽन्यस्मै नातिष्ठन्त। अहम्नेनं यजा इति। तें ऽब्रुवन्। आजिमस्य धांवामेति॥८॥

तस्मिन्नाजिमधावन्। तं बृह्स्पित्रिरुदंजयत्। तेनायजत। स स्वाराज्यमगच्छत्। तिमन्द्रौंऽब्रवीत्। माम्नेनं याज्येतिं। तेनेन्द्रमयाजयत्। सोऽग्रं देवतानां पर्येत्। अगच्छथ्स्वाराज्यम्। अतिष्ठन्तास्मै ज्यैष्ठ्याय॥९॥

य एवं विद्वान् वांजिपेयेन् यजंते। गच्छेति स्वारांज्यम्। अग्रर्थं समानानां पर्येति। तिष्ठंन्तेऽस्मै ज्यैष्ठ्यांय। स वा एष ब्राह्मणस्यं चैव रांजिन्यंस्य च यज्ञः। तं वा एतं वांजिपेय इत्यांहुः। वाजाप्यो वा एषः। वाजि हे ह्येतेनं देवा ऐफ्सन्। सोमो वै वांजिपेयः। यो वै सोमं वाजपेयं वेदं॥१०॥

वाज्येवैनं पीत्वा भविति। आऽस्यं वाजी जांयते। अत्रं वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्यन्नम्। आऽस्यानादो जांयते। ब्रह्म वै वाज्येयः। य एवं वेदं। अत्ति ब्रह्मणाऽन्नम्। आऽस्यं ब्रह्मा जांयते॥११॥

वाग्वै वार्जस्य प्रस्वः। य एवं वेदं। क्रोतिं वाचा वीर्यम्ं। ऐनं वाचा गंच्छति। अपिवतीं वाचं वदति। प्रजापितिर्देवेभ्यों यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्वांज्येपयंमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यद्वांज्येयः॥१२॥

अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं पुता उन्नितीः प्रायंच्छत्। ता

वा एता उन्नितयो व्याख्यांयन्ते। यज्ञस्यं सर्वृत्वायं। देवतांनामनिर्भागाय। देवा वै ब्रह्मण्श्वान्नस्य च् शर्मलुमपांघ्रन्। यद्वह्मणः शर्मलुमासीत्। सा गाथां नाराशुङ्स्यंभवत्। यदन्नस्य। सा सुरां॥१३॥

तस्माद्गायंतश्च मृत्तस्यं च न प्रंतिगृह्यम्ं। यत्प्रंतिगृह्णीयात्। शमंलं प्रतिगृह्णीयात्। सर्वा वा एतस्य वाचोऽवंरुद्धाः। यो वांजपेययाजी। या पृथिव्यां याऽग्रौ या रंथन्तरे। याऽन्तरिक्षे या वायौ या वांमदेव्ये। या दिवि याऽऽदित्ये या बृंह्ति। याऽपस् यौषंधीषु या वनस्पतिषु। तस्माद्धाजपेययाज्यार्त्विजीनः। सर्वा ह्यंस्य वाचो-ऽवंरुद्धाः॥१४॥

धाुवामेति ज्येष्ठ्याय वेदं ब्रह्मा जायते वाजुपेयः सुराऽऽर्त्विजीन एकं च॥————[२]

देवा वै यद्न्यैर्ग्रहैंय्जस्य नावारंन्थत। तदंतिग्राह्यैरति-गृह्यावांरुन्थत। तदंतिग्राह्यांणामतिग्राह्यत्वम्। यदंतिग्राह्यां गृह्यन्तें। यदेवान्यैर्ग्रहैंय्जस्य नावं रुन्थे। तदेव तैरंतिगृह्यावं रुन्थे। पश्चं गृह्यन्ते। पाङ्कों यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तमास्वाऽवं रुन्थे॥१५॥

सर्व ऐन्द्रा भेवन्ति। एक्धैव यजमान इन्द्रियं देधित। सप्तदंश प्राजापत्या ग्रहां गृह्यन्ते। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धैव यजमाने वीर्यं दधाति। सोमग्रहाङ्श्चं सुराग्रहाङ्श्चं गृह्णाति। एतद्वै देवानां

पर्ममन्नम्। यथ्सोमं:॥१६॥

पुतन्मंनुष्यांणाम्। यथ्सुराँ। पुरमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंर-मन्नाद्यमवं रुन्धे। सोमग्रहान्गृंह्णाति। ब्रह्मणो वा पुतत्तेजः। यथ्सोमः। ब्रह्मण एव तेजंसा तेजो यजंमाने दधाति। सुराग्रहान्गृंह्णाति। अन्नंस्य वा पुतच्छमंलम्। यथ्सुराँ॥१७॥

अन्नस्यैव शमेलेन् शमेलं यर्जमानादपंहन्ति। सोम्ग्रहा इश्चं सुराग्रहा इश्चं गृह्णाति। पुमान् वे सोमंः। स्त्री सुराँ। तन्मिंथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे कंरोति प्रजनंनाय। आत्मानंमेव सोमग्रहेः स्पृंणोति। जाया १ सुंराग्रहेः। तस्माद्वाजपेयया ज्यंमुष्मिं ह्योके स्त्रिय १ सम्भंवति। वाजपेयांभिजित इद्यंस्य॥१८॥

पूर्वे सोमग्रहा गृंह्यन्ते। अपेरे सुराग्रहाः। पुरोऽक्षरं सोमग्रहान्थ्सांदयित। पृश्चाद्क्षरं सुराग्रहान्। पाप्वस्यसस्य विधृंत्यै। एष वै यजंमानः। यथ्सोमः। अन्नर् सुरां। सोमग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं सुराग्रहाइश्चं व्यतिषजिति। अन्नाद्येनैवैनं व्यतिषजित॥१९॥

सम्पृचेः स्थ सं मां भृद्रेणं पृङ्केत्यांह। अत्रुं वै भृद्रम्। अन्नाद्येनैवैन् स स्मृंजिति। अन्नस्य वा एतच्छमेलम्। यथ्सुरां। पाप्मेव खलु वै शर्मलम्। पाप्मना वा एनमेतच्छमेलेन व्यतिषजिति। यथ्सोमग्रहा इश्चे सुराग्रहा इश्चे व्यतिषजंति। विपृचंः स्थ् वि मां पाप्मनां पृङ्केत्यांह। पाप्मनैवैन् शमेलेन व्यावर्तयति॥२०॥

तस्मौद्वाजपेययाजी पूतो मेध्यो दक्षिण्यः। प्राङुद्वंवित सोमग्रहेः। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रत्यङ्ख्सुंराग्रहेः। इममेव तैर्लोकम्भिजंयित। प्रतिष्ठन्ति सोमग्रहेः। यावंदेव सत्यम्। तेनं सूयते। वाज्रसृद्धः सुराग्रहान् हंरन्ति। अनृंतेनैव विश् स् सर्मृंजित। हिर्ण्यपात्रं मधौः पूर्णं दंदाित। मध्य्यो-ऽसानीितं। एकधा ब्रह्मण् उपं हरित। एकधेव यर्जमान् आयुस्तेजो दधाित॥२१॥

आ्राबाऽवं रुन्धे सोमः शर्मलं यथ्सुरा ह्यस्यैनं व्यतिपजित व्यावितयित सुजित चुत्वारि च॥————[3]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। नाग्निष्टोमो नोक्थ्यः। न षोंड्शी नातिरात्रः। अथ कस्माँद्वाज्पेये सर्वे यज्ञऋतवोऽवंरुध्यन्त् इति। पृशुभिरितिं ब्रूयात्। आग्नेयं पृशुमालंभते। अग्निष्टोममेव तेनावं रुन्थे। ऐन्द्राग्नेनोक्थ्यम्। ऐन्द्रेणं षोड्शिनः स्तोत्रम्। सारस्वत्याऽतिरात्रम्॥२२॥

मा्रुत्या बृंह्तः स्तोत्रम्। एतावंन्तो वै यंज्ञऋतवंः। तान्पश्मिरेवावं रुन्थे। आत्मानंमेव स्पृंणोत्यग्निष्टोमेनं। प्राणापानावुक्थ्येन। वीर्यर् षोड्शिनंः स्तोत्रेणं। वार्चमितरात्रेणं। प्रजां बृंह्तः स्तोत्रेणं। इममेव लोकम्भिजंयत्यग्निष्टोमेनं। अन्तरिक्षमुक्थ्येन॥२३॥

सुवर्गं लोक १ षोंडशिनं स्तोत्रेणं। देवयानांनेव पृथ

आरोहत्यतिरात्रेणं। नाक रे रोहति बृह्तः स्तोत्रेणं। तेजं प्वाऽऽत्मन्धंत्त आग्नेयेनं पृश्वनां। ओजो बलंमैन्द्राग्नेनं। इन्द्रियमैन्द्रेणं। वाच रे सारस्वत्या। उभावेव देवलोकं चं मनुष्यलोकं चाभिजंयित मारुत्या वृशयां। सप्तदंश प्राजापत्यान्पशूनालंभते। सप्तदशः प्रजापंतिः॥२४॥

प्रजापंतेरास्यै। श्यामा एकंरूपा भवन्ति। एविमेव् हि प्रजापंतिः समृद्धे। तान्पर्यग्निकृतानुथ्मृंजिति। मुरुतों यज्ञमंजिघा स्मन्य्रजापंतेः। तेभ्यं एतां मारुतीं वृशामालंभत। तयैवैनानशमयत्। मारुत्या प्रचर्य। एतान्थ्यंज्ञंपयेत्। मुरुतं एव शंमियत्वा॥२५॥

पुतेः प्रचंरित। यज्ञस्याघांताय। पुक्धा व्पा जुंहोति। पुक्देव्त्यां हि। पुते। अथों पुक्धेव यजमाने वीर्यं दधाति। नैवारेणं सप्तदंशशरावेणैतर्हि प्रचंरित। पुतत्पुंरोडाशा ह्यंते। अथों पशूनामेव छिद्रमिपंदधाति। सार्स्वत्योत्तमया प्रचंरित। वाग्वै सर्रस्वती। तस्मांत्प्राणानां वागुंत्तमा। अथौं प्रजापंतावेव यज्ञं प्रतिष्ठापयति। प्रजापंतिर्हि वाक्। अपंत्रदती भवति। तस्मांन्मनुष्याः सर्वां वाचं वदन्ति॥२६॥

सावित्रं जुंहोति कर्मणः कर्मणः पुरस्तात्। कस्तद्वेदेत्यांहुः। यद्वांजपेयंस्य पूर्वं यदपंरमितिं। सवितृप्रंसूत एव यंथापूर्वं कर्माणि करोति। सर्वनेसवने जुहोति। आक्रमणमेव तथ्सेतुं यजमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समण्ट्यै। वाचस्पतिर्वाचम्पद्य स्वदाति न इत्याह। वाग्वै देवानां पुराऽन्नमासीत्। वाचमेवास्मा अन्नई स्वदयति॥२७॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरित विजित्यै। वाजंस्य नु प्रंसवे मातरं महीमित्यांह। यच्चैवेयम्। यच्चास्यामिधं। तदेवावं रुन्धे। अथो तस्मिन्नेवोभयेऽभि-विच्यते। अपस्वंन्तर्मृतंमपसु भेषजिमित्यश्वांन्यल्पूलयित। अपसु वा अश्वंस्य तृतीयं प्रविष्टम्। तदंनुवेन्न्ववंष्लवते। यद्पसु पंल्पूलयंति॥२८॥

यदेवास्यापसु प्रविष्टम्। तदेवावं रुन्धे। बहु वा अश्वोऽमेध्यमुपंगच्छति। यद्पसु पंल्पूलयंति। मेध्यांनेवैनांन्करोति। वायुर्वां त्वा मनुंर्वा त्वेत्यांह। पृता वा पृतं देवता
अग्रे अश्वंमयुञ्जन्। ताभिरेवैनान् युनिक्त। स्वस्योज्ञित्यै।
यजुषा युनिक्त व्यावृत्त्यै॥२९॥

अपाँत्रपादाशुहेम्त्रिति सम्माँष्टिं। मेध्यांनेवैनाँन्करोति। अथो स्तौत्येवैनांनाजि संरिष्यतः। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्लोकान्भिजंयति। वैश्वदेवो वै रथंः। अङ्को न्यङ्काव्भितो रथं यावित्यांह। या एव देवता रथे प्रविष्टाः। ताभ्यं एव नमंस्करोति। आत्मनोऽनाँत्ये। अशंमरथं

भावुकोऽस्य रथों भवति। य पुवं वेदं॥३०॥

देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वाजं जेषिमत्याह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वाज्मु यंति। देवस्याहर संवितुः प्रंस्वे बृह्स्पतिना वाज्जिता वर्षिष्ठं नाकर्र रुहेयमित्यांह। स्वितृप्रंसूत एव ब्रह्मणा वर्षिष्ठं नाकर्र रोहित। चात्वांले रथच्कं निर्मितर रोहित। अतो वा अङ्गिरस उत्तमाः स्वां लोकमायन्। साक्षादेव यजंमानः सुव्गं लोकमेति। आवेष्टयित। वज्रो वे रथंः। वज्रेणैव दिशोऽभिजंयित॥३१॥

वाजिना समामं गायते। अत्रं वै वार्जः। अत्रंमेवावं रुन्थे। वाचो वर्ष्म देवेभ्योऽपाँकामत्। तद्वनस्पतीन्प्राविंशत्। सैषा वाग्वनस्पतिंषु वदति। या दुन्दुभौ। तस्माँ दुन्दुभिः सर्वा वाचो-ऽतिंवदति। दुन्दुभीन्थ्समाघ्नंन्ति। पुरमा वा पुषा वाक्॥३२॥

या दुन्दुभौ। प्रमयैव वाचाऽवरां वाचमंव रुन्थे। अथों वाच एव वर्ष्म् यजंमानोऽवं रुन्थे। इन्द्रांय वाचं वद्तेन्द्रं वाजं जापयतेन्द्रो वाजंमजियदित्यांह। एष वा एतर्हीन्द्रं। यो यजंते। यजंमान एव वाज्मुजंयति। सप्तदंश प्रव्याधानाजिं धांवन्ति। सप्तदंश स्तोत्रं भंवति। सप्तदंशसप्तदश दीयन्ते॥३३॥

स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापतेरास्यै। अवांऽसि सप्तिंरसि वाज्यंसीत्यांह। अग्निर्वा अर्वां। वायुः सप्तिः। आदित्यो वाजी। एताभिरेवास्मै देवतांभिर्देवर्थं युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वै देवर्थः। देवर्थमेवास्मै युनक्ति॥३४॥

वार्जिनो वार्ज धावत काष्ठाँ गच्छतेत्यांह। सुवर्गी वै लोकः काष्ठाँ। सुवर्गमेव लोकं यन्ति। सुवर्गं वा एते लोकं यन्ति। य आजिं धावन्ति। प्राश्चो धावन्ति। प्राङिव हि सुवर्गो लोकः। चत्रसृभिरन् मन्नयते। चत्वारि छन्दा स्मि। छन्दोभिरेवैनान्थ्सुवर्गं लोकं गमयति॥३५॥

प्र वा एतें ऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। य आजिं धावंन्ति। उदं च आवंर्तन्ते। अस्मादेव तेनं लोकान्नयंन्ति। रथविमोचनीयं जुहोति प्रतिष्ठित्ये। आ मा वार्जस्य प्रस्वो जंगम्यादित्यांह। अन्नं वै वार्जः। अन्नमेवावं रुन्थे। यथालोकं वा एत उन्नंयन्ति। य आजिं धावंन्ति॥३६॥

कृष्णलं कृष्णलं वाज्यसृद्धः प्रयंच्छति। यमेव ते वाजं लोकमुञ्जयंन्ति। तं पंरिक्रीयावं रुन्धे। एक्धा ब्रह्मण् उपंहरति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता बृह्स्पति्रुदंजयत्। स नीवाराित्रिरंवृणीत। तन्नीवारांणां नीवार्त्वम्। नैवारश्चरुमंवति॥३७॥

पुतद्वै देवानां पर्ममन्नम्। यन्नीवाराः। प्रमेणैवास्मां अन्नाद्येनावंरम्नाद्यमवं रुन्थे। सप्तदंशशरावो भवति। स्प्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्ये। क्षीरे भंवति। रुचमेवास्मिन्दधाति। सपिष्वान्भवति मेध्यत्वायं। बार्हस्पत्यो वा पृष देवतंया॥३८॥

यो वांज्येयेन् यजंते। बार्हस्पत्य एष च्रः। अश्वांन्थ्सरिष्यतः समुष्श्वावं घ्रापयति। यमेव ते वाजं लोकमुज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे। अजींजिपत वनस्पतय इन्द्रं वाजं विम्च्यध्वमितिं दुन्दुभीन् विम्श्वति। यमेव ते वाजं लोकमिन्द्रियं दुन्दुभयं उज्जयंन्ति। तमेवावं रुन्धे॥३९॥

अभिजंयित् वा एषा वार्ग्दीयन्तेऽस्मै युनिक्त गमयित् य आर्जि धार्वन्ति भवित देवतंया्ऽष्टौ चं॥lacksquare

तार्प्यं यजमानं परिधापयति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनैवैन् समर्धयति। दुर्भमयं परिधापयति। प्वित्रं वै दुर्भाः। पुनात्येवैनम्। वाजं वा एषोऽवंरुरुसते। यो वाज्येयेन् यजते। ओषंधयः खलु वै वाजः। यद्देर्भमयं परिधापयति॥४०॥

वाज्स्यावंरुख्यै। जाय् एिह् सुवो रोह्यवेत्यांह। पित्रंया एवेष यज्ञस्यांन्वार्म्भोऽनंवच्छित्त्यै। सप्तदंशारित्वर्यूपो भवति। सप्तद्शः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। तूपरश्चतुरिश्चर्भविति। गौधूमं चुषालम्। न वा एते ब्रीहयो न यवाः। यद्गोधूमाः॥४१॥ पुविमेव हि प्रजापितः समृद्धै। अथो अमुमेवास्मैं लोकमन्नंवन्तं करोति। वासोभिर्वेष्टयति। पुष वै यर्जमानः। यद्यूपंः। सुर्वेदेवृत्यं वासंः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिः समर्धयति। अथो आक्रमणमेव तथ्सेतुं यर्जमानः कुरुते। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टियै। द्वादंश वाजप्रसवीयांनि जुहोति॥४२॥

द्वादेश मासाः संवथ्यरः। संवथ्यरमेव प्रीणाति। अथो संवथ्यरमेवास्मा उपदधाति। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्यै। दशिमः कल्पं रोहति। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दशमी। प्राणानेव यथास्थानं कल्पयित्वा। सुवर्गं लोकमेति। एतावृद्वै पुरुषस्य स्वम्॥४३॥

यावंत्र्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तेनं सह सुंवर्गं लोकमेति। सुवंदेवा अग्नित्यांह। सुवर्गमेव लोकमेति। अमृतां अभूमेत्यांह। अमृतिमिव हि सुंवर्गो लोकः। प्रजापंतेः प्रजा अभूमेत्यांह। प्राजापत्यो वा अयं लोकः। अस्मादेव तेनं लोकान्नैतिं॥४४॥

सम्हं प्रजया सं मयां प्रजेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। आसपुटैर्घन्ति। अत्रं वा इयम्। अन्नाद्येनैवेन् समर्धयन्ति। ऊषैर्घन्ति। एते हि साक्षादन्नम्। यदूषाः। साक्षादेवेनंमन्नाद्येन् समर्धयन्ति। पुरस्तात्प्रत्यश्चं घ्रन्ति॥४५॥

पुरस्ताद्धि प्रंतीचीन्मन्नंमुद्यतें। शीर्षतो घ्रंन्ति।

शीर्षतो ह्यन्नंम् द्यते। दिग्भ्यो घ्रन्ति। दिग्भ्य एवास्मां अन्नाद्यमवंरुन्थते। ईश्वरो वा एष पराङ्कृदघः। यो यूप्र्रे रोहंति। हिरंण्यम्ध्यवंरोहति। अमृतं वै हिरंण्यम्। अमृतः सुवर्गो लोकः॥४६॥

अमृतं एव सुंवर्गे लोके प्रतिं तिष्ठति। श्तमांनं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। पुष्ट्ये वा एतद्रूपम्। यद्जा। त्रिः संवथ्सरस्यान्यान्पशून्परि प्रजायते। बस्ताजिनमध्यवं रोहति। पुष्ट्यांमेव प्रजनेने प्रतिं तिष्ठति॥४७॥

पुरिधापर्यंति गोधूमां जुहोति स्वं नैतिं प्रत्यश्रं प्रन्ति लोको नवं च॥lacktriangle

स्प्तान्नहोमाञ्जेहोति। स्प्त वा अन्नानि। यावंन्त्येवान्नानि। तान्येवावं रुन्थे। स्प्त ग्राम्या ओषंधयः। स्प्तार्ण्याः। उभयीषामवंरुद्धे। अन्नस्यान्नस्य जुहोति। अन्नस्यान्नस्या-वंरुद्धे। यद्वांजपेययाज्यनंवरुद्धस्याश्जीयात्॥४८॥

अवंरुद्धेन् व्यृंद्धोत। सर्वस्य समवदायं जुहोति। अनंवरुद्धस्यावंरुद्धौ। औदुंम्बरेण स्रुवेणं जुहोति। ऊर्ग्वा अन्नमुदुम्बरंः। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धौ। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एवेनं ब्रह्मणा देवतांभिर्भिषिश्चति। अन्नंस्यान्नस्याभिषिश्चति। अन्नंस्यान्नस्यावंरुद्धौ॥४९॥

शीर्षतोऽभिषिश्चित। शीर्षतो ह्यन्नम् द्यते। आ मुखांद्नवर्व-स्रावयति। मुख्त एवास्मां अन्नाद्यं दधाति। अग्नेस्त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। एष वा अग्नेः स्वः। तेनैवैनंम्भिषिश्चिति। इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिश्चामी-त्यांह॥५०॥

इन्द्रियमेवास्मिन्नेतेनं दधाति। बृह्स्पतेंस्त्वा साम्रांज्येनाभि-षिश्चामीत्याह। ब्रह्म वे देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवेनंमभि-षिश्चति। सोमग्रहा श्वांवदानीयानि चर्त्विग्भ्य उपहरन्ति। अमुमेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। सुराग्रहा श्वांनवदानीयानि च वाज्यस्त्र्यः। इममेव तैर्लोकमन्नंवन्तं करोति। अथो उभयीष्वेवाभिषिंच्यते। विमाथं कुर्वते वाज्यसृतः॥५१॥

इन्द्रियस्यावंरुद्धै। अनिंरुक्ताभिः प्रातः सवने स्तुंवते। अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यैं। वाजंवतीभिर्माध्यं दिने। अत्रुं वै वाजंः। अन्नमेवावं रुन्धे। शिपिविष्ट-वंतीभिस्तृतीयसवने। युज्ञो वै विष्णुंः। पृशवः शिपिः। युज्ञ एव पृशुषु प्रतिं तिष्ठति। बृहदन्त्यं भवति। अन्तंमेवैन ई श्रियै गंमयति॥५२॥

अुषजीयादत्रंस्यात्रस्यावंरुद्धाः इन्द्रंस्य त्वा साम्रांज्येनाभिषिञ्चामीत्यांह वाजसृतः शिपिस्रीणि च॥————[[

नृषदं त्वेत्यांह। प्रजा वै नॄन्। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। द्रुषद्मित्यांह। वनस्पतंयो वै द्रु। वनस्पतींनामेवेतेनं सूयते। भुवनसद्मित्यांह। यदा वै वसींयान्भवंति। भुवनमगन्निति वै

तमांहुः। भुवंनमेवेतेनं गच्छति॥५३॥

अपसुषदं त्वा घृत्सद्मित्यांह। अपामेवैतेनं घृतस्यं सूयते। व्योमसद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। व्योमागृन्निति वै तमांहुः। व्योमैवैतेनं गच्छति। पृथिविषदं त्वाऽन्तिरक्षसद्मित्यांह। पृषामेवैतेनं लोकानार् सूयते। तस्मांद्वाजपेययाजी न कश्चन प्रत्यवंरोहति। अपीव हि देवतांनार सूयतें॥५४॥

नाक्सद्मित्यांह। यदा वै वसीयान्भवंति। नाकंमगन्नित् वै तमांहुः। नाकंमेवेतेनं गच्छति। ये ग्रहाः पश्चज्ञनीना इत्यांह। पश्चज्ञनानांमेवेतेनं सूयते। अपार रस्मुद्धंयस्मि-त्यांह। अपामेवेतेन् रसंस्य सूयते। सूर्यरिभिर स्मार्भृतमित्यांह सशुक्रत्वायं॥५५॥

गुच्छुति सूयते नवं च॥

[9]

इन्द्रों वृत्र हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। सोंऽमावास्यां प्रत्यागंच्छत्। ते पितरंः पूर्वेद्युरागंच्छन्। पितृन् यज्ञां-ऽगच्छत्। तं देवाः पुनंरयाचन्त। तमेंभ्यो न पुनंरददुः। तेंऽब्रुवन्वरं वृणामहै। अथं वः पुनंदिस्यामः। अस्मभ्यंमेव पूर्वेद्यः क्रियाता इति॥५६॥

तमें भ्यः पुनंरददुः। तस्मौत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रियते। यत्पितृभ्यः पूर्वेद्यः क्रोतिं। पितृभ्यं एव तद्यज्ञं निष्क्रीय यर्जमानः प्रतंनुते। सोमाय पितृपीताय स्वधा नम् इत्यांह। पितुरेवाधिं सोमपीथमवं रुन्धे। न हि पिता प्रमीयमाण आहैष सोमपीथ इति। इन्द्रियं वै सोमपीथः। इन्द्रियमेव सोमपीथमवं रुन्धे। तेनैन्द्रियेणं द्वितीयाँ जायामभ्यंश्जुते॥५७॥

पृतद्वै ब्राह्मणं पुरा वांजवश्रवसा विदामंत्रन्। तस्मात्ते द्वेद्वे जाये अभ्याक्षत। य पृवं वेदे। अभि द्वितीयां जायामंश्जते। अग्नये कव्यवाहंनाय स्वधा नम् इत्याह। य पृव पितृणाम्गिः। तं प्रीणाति। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। तूष्णीं मेक्षंणमादंधाति। अस्तिं वा हि षष्ठ ऋतुर्न वाँ। देवान् वै पितृन्त्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिंपते। तिस्र आहुंतीर्जुहोति। त्रिर्निदंधाति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥५९॥

ऋतवः खलु वै देवाः पितरंः। ऋतूनेव देवान्पितॄन्ग्रीणाति। तान्ग्रीतान्। मनुष्याः पितरोऽनु प्रपिपते। सकृदाच्छिन्नं बर्हिर्भवति। सकृदिव हि पितरंः। त्रिर्निदंधाति। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। पराङावंति॥६०॥

ह्रीका हि पितरंः। ओष्मणौं व्यावृत् उपौस्ते। ऊष्मभांगा हि पितरंः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्राश्या (३) न्न प्राश्या (३) मितिं। यत्प्रांश्ञीयात्। जन्यमन्नमद्यात्। प्रमायुंकः स्यात्। यन्न प्रांश्ञीयात्। अहंविः स्यात्॥६१॥

पितृभ्य आवृश्च्येत। अवघ्रेयमेव। तन्नेव प्राशितं नेवाप्रांशितम्। वीरं वा वै पितरंः प्रयन्तो हरन्ति। वीरं वा ददति। दशां छिनत्ति। हरणभागा हि पितरंः। पितृनेव निरवंदयते। उत्तंर आयुंषि लोमं छिन्दीत। पितृणाः ह्यंतर्हि नेदीयः॥६२॥

नमंस्करोति। नुमुस्कारो हि पिंतृणाम्। नमों वः पितरो रसाय। नमों वः पितरः शुष्माय। नमों वः पितरो जीवाय। नमों वः पितरः स्वधायै। नमों वः पितरो मुन्यवे। नमों वः पितरो घोरायं। पितरो नमों वः। य पुतस्मिं ह्योके स्थ॥६३॥

युष्मा इस्ते ऽन्। ये ऽस्मिँ ह्यो के। मां ते ऽन्। य एतस्मिँ ह्यो के स्थ। यूयं तेषां विसेष्ठा भूयास्त। ये ऽस्मिँ ह्यो के। अहं तेषां विसेष्ठा भूयास्ति। ये एवं विद्वान्यितृभ्यः कुरोति। एष वै मनुष्याणां युज्ञः॥६४॥

देवानां वा इतंरे युज्ञाः। तेन वा एतत्पिंतृलोके चंरति। यत्पितृभ्यः करोतिं। स ईंश्वरः प्रमेतोः। प्राजापत्ययुर्चा पुन्रेतिं। युज्ञो वै प्रजापितः। युज्ञेनैव सह पुन्रेतिं। न प्रमायुंको भवति। पितृलोके वा एतद्यजमानश्चरति। यत्पितृभ्यः करोतिं। स ईंश्वर आर्तिमार्तौः। प्रजापित्स्त्वावैनं तत् उन्नेतुमर्ह्तीत्यांहुः। यत्प्रांजापृत्ययुर्चा पुन्रेति।
प्रजापंतिरेवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥६५॥
इत्यंश्वते पद्यन्ते पद्मने पद्मने पद्मने क्तावे वर्त्तेऽहंविः स्यान्नेदीयः स्थ युज्ञो यजमानश्चरति यत्प्रिकृत्यः करोति पर्व

देवासुरा अग्नीषोमंयोर्देवा वै यथादर्शं देवा वे यदन्येग्रेहेंब्रह्मवादिनो नाग्निष्टोमो न सांवित्रं देवस्याहं ताप्यंश् सप्तान्नेहोमान्नृषदं त्वेन्द्रीं वृत्रश् हृत्वा दर्शा॥१०॥ देवासुरा वाज्येवेनं तस्माँद्वाजपेययाजी देवस्याहं वाजस्यावंश्रद्धा इन्द्रियमेवास्मिन् ह्वीका हि पितरः पश्चंपष्टिः॥६५॥ देवासुरा यजमानः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

उभये वा एते प्रजापंतेरध्यंसृज्यन्त। देवाश्चासुंराश्च। तान्न व्यंजानात्। इमें ऽन्य इमें ऽन्य इतिं। स देवान् १ शूनंकरोत्। तान्भ्यंषुणोत्। तान्पवित्रंणापुनात्। तान्परस्तांत्पवित्रंस्य व्यंगृह्णात्। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रहत्वम्॥१॥

देवता वा एता यर्जमानस्य गृहे गृह्यन्ते। यद्ग्रहाः। विदुर्गनं देवाः। यस्यैवं विदुषं एते ग्रहां गृह्यन्तें। एषा वै सोम्स्याऽऽहुंतिः। यदुंपार्शः। सोमेन देवाङ्स्तंपयाणीति खलु वै सोमेन यजते। यदुंपार्शुं जुहोतिं। सोमेनैव तद्देवाङ्स्तंपयति। यद्गहां जुहोतिं॥२॥

देवा एव तद्देवान्गंच्छन्ति। यर्चम्सां जुहोतिं। तेनैवानुंरूपेण यजंमानः सुवृगं लोकमेंति। किं न्वेंतदग्रं आसीदित्यांहुः। यत्पात्राणीतिं। इयं वा एतदग्रं आसीत्। मृन्मयांनि वा एतान्यांसन्। तैर्देवा न व्यावृतंमगच्छन्। त एतानिं दारुमयांणि पात्रांण्यपश्यन्। तान्यंकुर्वत॥३॥

तैर्वे ते व्यावृतंमगच्छन्। यद्दांरुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। व्यावृतंमेव तैर्यजंमानो गच्छति। यानि दारुमयांणि पात्रांणि भवंन्ति। अमुमेव तैर्लोकम्भिजंयति। यानि मृन्मयांनि। इममेव तैर्लोकम्भिजंयति। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। काश्चतंस्रः स्थालीर्वाययाः सोमुग्रहंणीरिति। देवा वै पृश्ञिंमदुह्रन्॥४॥

तस्यां एते स्तनां आसन्। इयं वै पृश्विः। तामांदित्या आंदित्यस्थाल्या चतुंष्पदः पृशूनंदुह्नन्। यदांदित्यस्थाली भवंति। चतुंष्पद एव तयां पृशून् यजंमान इमां दुंहे। तामिन्द्रं उक्थ्यस्थाल्येन्द्रियमंदुहत्। यदुंक्थ्यस्थाली भवंति। इन्द्रियमेव तया यजंमान इमां दुंहे। तां विश्वे देवा आंग्रयणस्थाल्योर्जमदुह्नन्। यदांग्रयणस्थाली भवंति॥५॥

ऊर्जमेव तया यजमान इमां दुंहे। तां मंनुष्यौ ध्रुवस्थाल्याऽऽयुंरदुह्नन्। यद्भुंवस्थाली भवंति। आयुंरेव तया यजमान इमां दुंहे। स्थाल्या गृह्णाति। वाय्व्येन जुहोति। तस्मांदुन्येन पात्रेण प्शून्दुहन्ति। अन्येन प्रतिगृह्णन्ति। अथौ व्यावृतमेव तद्यजमानो गच्छति॥६॥

युव स्रामंमिश्वना। नम्चावासुरे सर्चा। विपिपाना शुंभस्पती। इन्द्रं कर्मं स्वावतम्। पुत्रिमंव पितरांविश्वनोभा। इन्द्रावंतं कर्मणा दृश्सनांभिः। यथ्सुरामं व्यपिंबः शचींभिः। सरंस्वती त्वा मघवन्नभीष्णात्। अहाँव्यग्ने ह्विरास्येंते। सुचीवं घृतं चमू इंव सोमंः॥७॥

वाज्यसिन १ रियमस्मे सुवीरम्। प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम्। यस्मिन्नश्वांस ऋषभासं उक्षणंः। वशा मेषा अंवसृष्टास् आहुंताः। कीलालपे सोमंपृष्टाय वेधसें। हृदा मृतिं जनय चारुंम्ययें। नाना हि वां देवहिंत्र सदों मितम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हिरसीः स्वां योनिंमाविशन्॥८॥

यदत्रं शिष्ट रिसनंः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदस्य मनसा शिवेन। सोम् राजानिम्ह भंक्षयामि। द्वे स्नुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। ताभ्यांमिदं विश्वं भुवंन् समेति। अन्तरा पूर्वमपंरं च केतुम्। यस्ते देव वरुण गायत्रछंन्दाः पाशंः। तं तं पृतेनावं यजे॥९॥

यस्ते देव वरुण त्रिष्टुप्छंन्दाः पार्शः। तं ते पृतेनावं यजे। यस्ते देव वरुण जगतीछन्दाः पार्शः। तं ते पृतेनावं यजे। सोमो वा पृतस्यं राज्यमादत्ते। यो राजा सत्राज्यो वा सोमेन यजेते। देवसुवामेतानि ह्वी १ वि भवन्ति। पृतावंन्तो वे देवाना एतावंन्तो स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एनं पुनः सुवन्ते राज्यायं। देवसू राजां भवति॥१०॥

सोमं आविशन् यंजे राज्यायैकं च॥=_____[2]

उदंस्थाद्देव्यदितिर्विश्वरूपी। आयुंर्यज्ञपंतावधात्। इन्द्रांय कृण्वती भागम्। मित्राय वर्रुणाय च। इयं वा अग्निहोत्री। इयं वा एतस्य निषीदति। यस्याग्निहोत्री निषीदंति। तामुत्थांपयेत्। उदंस्थाद्देव्यदितिरिति। इयं वै देव्यदितिः॥११॥ ड्मामेवास्मा उत्थापयित। आयुर्य्ज्ञपंतावधादित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। इन्द्रांय कृण्वती भागं मित्राय वर्रुणाय चेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अवंतिं वा एषेतस्य पाप्मानं प्रतिख्याय निषीदित। यस्यांग्निहोत्र्युपंसृष्टा निषीदित। तां दुग्ध्वा ब्रांह्मणायं दद्यात्। यस्यात्रं नाद्यात्। अवंतिमेवास्मिन्पाप्मानं प्रतिमुश्चति॥१२॥

दुग्धा दंदाति। न ह्यदंष्टा दक्षिणा दीयतें। पृथिवीं वा एतस्य पयः प्रविंशति। यस्यांग्निहोत्रं दुह्यमांनु स्कन्दंति। यद्द्य दुग्धं पृथिवीमसंक्त। यदोषंधीरप्यसंर्द्यदापंः। पयो गृहेषु पयो अघ्नियासुं। पयो वृथ्सेषु पयो अस्तु तन्मयीत्यांह। पयं एवाऽऽत्मन्गृहेषुं पृशुषुं धत्ते। अप उपंसृजति॥१३॥

अद्भिरेवैनंदाप्नोति। यो वै य्ज्ञस्यार्ते नानांति स् सरमुजति। उभे वै ते तर्ह्यार्च्छंतः। आर्च्छंति खलु वा एतदंग्निहोत्रम्। यद्दुह्यमान् इं स्कन्दंति। यदंभिदुह्यात्। आर्ते नानांति य्ज्ञस्य सरम्जेत्। तदेव यादकीदक्रं होत्व्यम्। अथान्यां दुग्धा पुनंरहोत्व्यम्। अनांतिनेवार्तं यज्ञस्य निष्कंरोति॥१४॥

यद्युद्गुंतस्य स्कन्दैंत्। यत्ततोऽहुंत्वा पुनेरेयात्। य्ज्ञं विच्छिंन्द्यात्। यत्र स्कन्दैंत्। तित्रृषद्य पुनेर्गृह्णीयात्। यत्रैव स्कन्दंति। ततं पुवैनृत्पुनेर्गृह्णाति। तदेव यादक्षीदक्षं होत्व्यम्ं। अथान्यां दुग्ध्वा पुनेरहोत्व्यम्। अनार्तेनैवार्तं

यज्ञस्य निष्कंरोति॥१५॥

वि वा एतस्यं यज्ञश्छिंद्यते। यस्यांग्निहोत्रेऽधिश्चिते श्वा-ऽन्तरा धावंति। रुद्रः खलु वा एषः। यद्ग्निः। यद्गमंन्वत्या वर्तयात्। रुद्रायं प्शूनिपं दध्यात्। अपशुर्यजंमानः स्यात्। यद्पांऽन्वतिषिश्चेत्। अनाद्यमग्नेरापंः। अनाद्यमांभ्यामिपं दध्यात्। गार्हंपत्याद्भस्मादायं। इदं विष्णुर्विचंक्रम् इतिं वैष्णव्यर्चाऽऽहंवनीयांद्ध्वश्सयन्नद्रवेत्। यज्ञो वे विष्णुंः। यज्ञेनैव यज्ञश् सन्तंनोति। भस्मंना पदमिपं वपति शान्त्यां॥१६॥

वै देव्यर्दितिर्मुञ्चति सृजित करोति करोत्याभ्यामपिं दथ्यात् पश्चं च॥lacksquare

नि वा पुतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। निगार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्नोचंति। दुर्भेण हिरंण्यं प्रबद्धं पुरस्तांद्धरेत्। अथाग्निम्। अथाग्निहोत्रम्। यद्धिरंण्यं पुरस्ताद्धरंति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवेनं पश्यन्नुद्धंरति। यद्ग्निं पूर्व्क् हरत्यथांग्निहोत्रम्॥१७॥

भागधेयेंनैवैनं प्रणंयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धेरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः। सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरति। अग्निहोत्रम्प्याद्यातमितोरासीत। ब्रतमेव हृतमन् प्रियते। अन्तं वा एष आत्मनो गच्छति। यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभि

निम्रोचंति॥१८॥

पुनः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। वरुणो वा एतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभि निम्रोचंति। वारुणं चरुं निर्वपेत्। तेनैव यज्ञं निष्क्रीणीते। नि वा एतस्यांऽऽहवनीयो गार्हंपत्यं कामयते। नि गार्हंपत्य आहवनीयम्। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्युंदेति। चतुर्गृहीतमाज्यं पुरस्तौद्धरेत्॥१९॥

अथाग्निम्। अथाँग्निहोत्रम्। यदाज्यं पुरस्ताद्धरंति। एतद्वा अग्नेः प्रियं धामं। यदाज्यम्। प्रियेणैवैनं धाम्ना समर्धयति। यद्ग्निं पूर्वे १ हर्त्यथाँग्निहोत्रम्। भागधेयेनैवैनं प्रणयति। ब्राह्मण आर्षेय उद्धरेत्। ब्राह्मणो वै सर्वा देवताः॥२०॥

सर्वाभिरेवैनं देवतांभिरुद्धंरित। परांची वा एतस्मैं व्युच्छन्ती व्युंच्छिति। यस्याग्निमनुंद्धृत् सूर्योऽभ्यंदेतिं। उषाः केतुनां जुषताम्। यज्ञं देवेभिरिन्वितम्। देवेभ्यो मधुंमत्तम् स्वाहेतिं प्रत्यिङ्कषद्याज्येन जुहुयात्। प्रतीचीमेवास्मै विवासयित। अग्निहोत्रमुंप्साद्यातिमितोरासीत। व्रतमेव हतमनुं म्रियते। अन्तं वा एष आत्मनां गच्छिति॥२१॥

यस्ताम्यंति। अन्तंमेष यज्ञस्यं गच्छति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। पुनंः समन्यं जुहोति। अन्तेनैवान्तं यज्ञस्य निष्कंरोति। मित्रो वा पुतस्यं यज्ञं गृह्णाति। यस्याग्निमनुंद्धृत्र् सूर्योऽभ्युंदेतिं। मैत्रं चुरुं निर्वपत्। तेनैव युज्ञं निष्क्रीणीते। यस्याऽऽहवनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्य उद्वायेत्॥२२॥

यदांहवनीयमनुंद्वाप्य गार्हंपत्यं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। यद्वै यज्ञस्यं वास्त्व्यं क्रियतें। तदनुं रुद्रोऽवंचरित। यत्पूर्वमन्ववस्येत्। वास्त्व्यंमग्निमुपांसीत। रुद्रोंऽस्य पृशून्यातुंकः स्यात्। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यं मन्थेत्॥२३॥

इतः प्रथमं जंज्ञे अग्निः। स्वाद्योनेरिधं जातवेदाः। स गांयत्रिया त्रिष्टुभा जगंत्या। देवेभ्यों हृव्यं वंहतु प्रजानन्नितिं। छन्दोभिरेवैन्ड् स्वाद्योनेः प्रजनयति। गार्हंपत्यं मन्थति। गार्हंपत्यं वा अन्वाहिताग्नेः पृशव उपं तिष्ठन्ते। स यदुद्वायंति। तदनुं पृशवोऽपं क्रामन्ति। इषे रय्यै रंमस्व॥२४॥

सहंसे द्युम्नायं। ऊर्जेऽपत्यायेत्यांह। प्रावो वै र्यिः। प्रार्वेवास्मै रमयित। सार्स्वतौ त्वोथ्सौ सिमिन्धातामित्यांह। ऋख्सामे वै सारस्वतावुथ्सौं। ऋख्सामाभ्यांमेवेन् समिन्धे। सम्राडंसि विराडसीत्यांह। रथन्त्रं वै सम्राट। बृहद्विराट्॥२५॥

ताभ्यांमेवेन् सिनंभे। वज्रो वै चुक्रम्। वज्रो वा एतस्यं यज्ञं विच्छिनत्ति। यस्यानों वा रथों वाऽन्त्रराऽग्री यातिं। आहुवनीयंमुद्वाप्यं। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यदंग्ने पूर्वं प्रभृंतं प्दश् हि तें। सूर्यंस्य र्श्मीनन्वांतृतानं। तत्रं रियष्टामनु सं भंरैतम्। सं नंः सृज सुमृत्या वाजंवत्येतिं॥२६॥

पूर्वेणैवास्यं युज्ञेनं युज्ञमनु सन्तंनोति। त्वमंग्ने सप्रथां असीत्यांह। अग्निः सर्वां देवताः। देवतांभिरेव युज्ञः सन्तंनोति। अग्नयं पथिकृतं पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निर्वपत्। अग्निमेव पंथिकृत् स्वेनं भाग्धेयेनोपंधावति। स एवैनं यज्ञियं पन्थामपि नयति। अनुङ्वान्दक्षिणा। वृही ह्येष समृद्धे॥२७॥

हर्त्यथाँग्निहोत्रं निम्रोचंति हरेद्देवतां गच्छत्युद्वार्थंन्मन्थेद्रमस्य बृहिंद्वराडिति नवं च (नि वै पूर्वं त्रीणि निम्नोचंति दुर्भेण यिद्धरंण्यमग्निहोत्रं पुनुर्वरुणो वारुणं नि वा एतस्याभ्युंदेतिं चतुर्गृहीतमाज्यं यदाज्यं पराँच्युषाः पुनीर्मेत्रो मैत्रं यस्यांऽऽहवुनीयेऽनुंद्वाते गार्हंपत्यो यद्वे मंन्थेदुद्धरेत्॥)॥———
[४]

यस्यं प्रातः सवने सोमोंऽतिरिच्यंते। माध्यं दिन् सवंनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौधंयति मुरुतामिति धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। हिनस्ति वै सुन्ध्यधीतम्। सुन्धीव खलु वा एतत्। यथ्सवंनस्यातिरिच्यंते। यद्धयंद्वतीषु कुर्वन्ति। सुन्धेः शान्त्यै। गायुत्र सामं भवति पश्चद्शः स्तोमंः। तेनैव प्रांतः सवनान्नयंन्ति॥२८॥

मुरुत्वंतीषु कुर्वन्ति। तेनैव माध्यं दिनाथ्सवंनान्नयंन्ति। होतुंश्चमुसमनून्नयन्ते। होताऽनुं शश्सिति। मुध्यत एव युज्ञश समादंधाति। यस्य माध्यं दिने सर्वने सोमोंऽतिरिच्यंते। आदित्यं तृतीयसवनं कामयंमानोऽभ्यतिरिच्यते। गौरिवीतः सामं भवति। अतिरिक्तं वै गौरिवीतम्। अतिरिक्तं यथ्सवनस्यातिरिच्यंते॥२९॥

अतिंरिक्तस्य शान्त्यैं। बण्महा असि सूर्येतिं कुर्वन्ति। यस्येवाऽऽदित्यस्य सर्वनस्य कामेनातिरिच्यंते। तेनैवेनं कामेन समर्धयन्ति। गौरिवीत साम भवति। तेनैव मार्ध्यं दिनाथ्सवनान्नयंन्ति। सप्तद्शः स्तोमंः। तेनैव तृंतीयसवनान्नयंन्ति। होत्रंश्चमसमनून्नंयन्ते। होताऽनं श स्ति॥३०॥

मध्यत एव यज्ञ समाद्धाति। यस्यं तृतीयसव्ने सोमोऽतिरिच्यंत। उक्थ्यं कुर्वीत। यस्योक्थ्यंऽतिरिच्यंत। अतिरात्रं कुर्वीत। यस्यांतिरात्रंऽतिरिच्यंत। तत्त्वे दुष्प्रज्ञानम्। यजमानं वा एतत्प्शवं आसाह्यंयन्ति। बृहथ्सामं भवति। बृहद्वा इमाँ ह्योकान्दांधार। बार्ह्ताः पृशवंः। बृह्तैवास्मं पृश्न्दांधार। शिपिविष्टवंतीषु कुर्वन्ति। शिपिविष्टो वे देवानां पृष्टम्। पृष्टचैवेन् समर्धयन्ति। होत्ंश्चमसमनूत्रंयन्ते। होताऽनुंश स्सति। मध्यत एव यज्ञ समादंधाति॥३१॥

युन्ति सर्वनस्यातिृरिच्यंते शश्सित दाधाराष्ट्रौ चं॥————[५]

एकैको वै जनतायामिन्द्रेः। एकं वा पुताविन्द्रेम्भि सर्भुनुतः। यौ द्वौ सर्भसुनुतः। प्रजापितिर्वा एष वितायते। यद्यज्ञः। तस्य ग्रावाणो दन्ताः। अन्यत्रं वा एते सर्भसुन्वतोर्निर्वप्सति। पूर्वेणोपसृत्यां देवता इत्यांहुः। पूर्वोपसृतस्य वै श्रेयांन्भवति। एतिंवन्त्याज्यांनि भवन्त्यभिजित्ये॥३२॥

म्रुत्वंतीः प्रतिपदंः। म्रुतो वै देवानामपंराजितमायतंनम्। देवानांमेवापंराजित आयतंने यतते। उभे बृहद्रथन्तरे भंवतः। इयं वाव रंथन्तरम्। असौ बृहत्। आभ्यामेवेनम्नतरंति। वाचश्च मनसश्च। प्राणाचापानाचं। दिवश्चं पृथिव्याश्चं॥३३॥

सर्वस्माद्वित्ताद्वेद्यांत्। अभिवर्तो ब्रह्मसामं भेवति। सुवर्गस्यं लोकस्याभिवृत्त्यै। अभिजिद्भवित। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै। विश्वजिद्भवित। विश्वस्य जित्यै। यस्य भूयार्श्सो यज्ञकृतव इत्यांहुः। स देवतां वृङ्क इति। यद्यंग्निष्टोमः सोमः परस्ताथ्स्यात्॥३४॥

उक्थ्यं कुर्वीत। यद्युक्थंः स्यात्। अतिरात्रं कुर्वीत। यज्ञकतुभिरेवास्यं देवतां वृङ्के। यो वै छन्दोभिरभिभवंति। स सर्भ्मन्वतोर्भिभवति। संवेशायं त्वोपवेशाय त्वेत्यांह। छन्दार्भसे वै संवेश उपवेशः। छन्दोभिरेवास्य छन्दार्भस्यभिभवति। इष्टर्गो वा ऋत्विजांमध्वर्युः॥३५॥

इष्टर्गः खलु वै पूर्वोऽर्षुः क्षीयते। प्राणांपानौ मृत्योमां पातुमित्यांह। प्राणापानयोरेव श्रंयते। प्राणांपानौ मा मां हासिष्टमित्यांह। नैनं पुराऽऽयुंषः प्राणापानौ जंहितः। आर्तिं वा एते नियंन्ति। येषां दीक्षितानां प्रमीयंते। तं यदंववर्जेयुः। कूर्कृतांमिवैषां लोकः स्यात्। आहेर दहेतिं ब्रूयात्॥३६॥

तं देक्षिणतो वेद्यै निधाये। सूर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंयुः। इयं वै सर्पतो राज्ञीं। अस्या एवेनं परिंददित। व्यृंद्धं तिदत्यांहुः। यथ्स्तुतमनंनुशस्तिमितिं। होतां प्रथमः प्रांचीनावीती मार्जालीयं परींयात्। यामीरंनुब्रुवन्। सूर्पराज्ञीनां कीर्तयेत्। उभयोर्वेनं लोकयोः परिंददित॥३७॥

अथों धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मैं हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यों धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अग्र आयूर्षि पवस् इति प्रतिपदं कुर्वीरन्। रथन्त्रसांमेषार् सोमः स्यात्। आयुरेवाऽऽत्मन्दंधते। अथों पाप्मानंमेव विजहंतो यन्ति॥३८॥

अभिजित्यै पृथिव्याश्च स्यादेष्व्युर्धूयाञ्चोकयोः परिददित कुर्वीपुङ्क्षीणि च॥——————————[६]

असुर्यं वा एतस्माद्वर्णं कृत्वा। पृशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। यस्य यूपों विरोहंति। त्वाष्ट्रं बंहुरूपमालंभेत। त्वष्टा वै रूपाणांमीशे। य एव रूपाणामीशें। सोंऽस्मिन्पशून् वीर्यं यच्छति। नास्मांत्पशवों वीर्यमपं क्रामन्ति। आर्तिं वा एते

नियंन्ति। येषां दीक्षितानांमग्निरुद्वायंति॥३९॥

यदांहवनीयं उद्घायेंत्। यत्तं मन्थेंत्। विच्छिंन्द्यात्। भातृंव्यमस्मै जनयेत्। यदांहवनीयं उद्घायेंत्। आग्नींद्धादुद्धं-रेत्। यदाग्नींद्ध उद्घायेंत्। गार्हंपत्यादुद्धंरेत्। यद्गार्हंपत्य उद्घायेंत्। अतं एव पुनंर्मन्थेत्॥४०॥

अत्र वाव स निर्लयते। यत्र खलु वै निर्लीनमृत्तमं पश्यंन्ति। तदेनमिच्छन्ति। यस्माद्दारोकुद्वार्यंत्। तस्यारणीं कुर्यात्। कुर्मुकमिपं कुर्यात्। एषा वा अग्नेः प्रिया तन्ः। यत्क्रुंमुकः। प्रिययैवैनं तनुवा समर्धयति। गार्हंपत्यं मन्थति॥४१॥

गार्हंपत्यो वा अग्नेर्योनिः। स्वादेवैनं योनैर्जनयति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। यस्य सोमं उपदस्यैत्। सुवर्ण् हिरंण्यं द्वेधा विच्छिद्यं। ऋजी्षेऽन्यदांधूनुयात्। जुहुयादन्यत्। सोमंमेवाभिषुणोतिं। सोमं जुहोति। सोमंस्य वा अभिष्यमाणस्य प्रिया तुनूरुदंक्रामत्॥४२॥

तथ्सुवर्ण् हरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण् हरंण्यं कुर्वन्ति। प्रिययैवैनं तनुवा समंध्यन्ति। यस्याक्रीत् सोमंमपहरंयुः। क्रीणीयादेव। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यस्यं क्रीतमंपहरंयुः। आदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुंणुयात्। गायत्री यस्सोममाहंरत्। तस्य योऽरंशः प्राऽपंतत्॥४३॥

त आंदारा अंभवन्। इन्द्रों वृत्तर्महन्। तस्यं वृत्कः परां-ऽपतत्। तानिं फाल्गुनान्यंभवन्। पृशवो वै फाल्गुनानिं। पृशवः सोमो राजां। यदांदाराङ्श्चं फाल्गुनानिं चाभिषुणोतिं। सोममेव राजांनम्भिषुंणोति। शृतेनं प्रातः सवने श्रींणीयात्। दभ्ना मध्यं दिने॥४४॥

नीतिमिश्रेणं तृतीयसवने। अग्निष्टोमः सोमः स्याद्रथन्तर-सामा। य पुवर्त्विजों वृताः स्यः। त एंनं याजयेयः। एकां गां दक्षिणां दद्यात्तेभ्यं एव। पुनः सोमं क्रीणीयात्। यज्ञेनैव तद्यज्ञमिंच्छति। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। सर्वाभ्यो वा एष देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मान्मागुरते। यः स्त्रायांगुरते। एतावान्खलु व पुरुषः। यावंदस्य वित्तम्। सर्ववेदसेनं यजेत। सर्वपृष्ठोऽस्य सोमः स्यात्। सर्वाभ्यः एव देवताभ्यः सर्वेभ्यः पृष्ठेभ्यं आत्मानं निष्क्रीणीते॥४५॥

उद्घार्यति मन्थेन्मन्थत्यकामत्पराऽपंतन्मुध्यन्दिन आगुरते पश्चं च॥===========[9]

पर्वमानः सुवर्जनंः। प्वित्रेण विचंर्षणिः। यः पोता स पुंनातु मा। पुनन्तुं मा देवज्नाः। पुनन्तु मनंवो धिया। पुनन्तु विश्वं आयवंः। जातंवेदः प्वित्रंवत्। प्वित्रंण पुनाहि मा। शुक्रेणं देव दीद्यंत्। अग्ने कत्वा कतूर् रनुं॥४६॥

यत्ते प्वित्रंमुर्चिषिं। अग्ने वितंतमन्त्रा। ब्रह्म तेनं पुनीमहे। उभाभ्यां देव सवितः। पुवित्रंण सुवेनं च। इदं ब्रह्मं पुनीमहे। वैश्वदेवी पुंनती देव्यागाँत्। यस्यैं बह्वीस्तुनुवों वीतपृष्ठाः। तया मदंन्तः सधमाद्येषु। वयः स्यांम् पतंयो रयीणाम्॥४७॥

वैश्वानरो रिष्मिर्मिम् पुनातु। वार्तः प्राणेनेषिरो मंयोभूः। द्यावापृथिवी पर्यसा पर्योभिः। ऋतावरी यिज्ञिये मा पुनीताम्। बृहद्भिः सवित्स्तृभिः। वर्षिष्ठैर्देव मन्मंभिः। अग्ने दक्षैः पुनाहि मा। येनं देवा अपुनत। येनाऽऽपो दिव्यं कर्शः। तेनं दिव्येन् ब्रह्मणा॥४८॥

इदं ब्रह्मं पुनीमहे। यः पांवमानीर्ध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृत् रसम्। सर्व् स पूतमंश्वाति। स्वदितं मांतरिश्वना। पावमानीर्यो अध्येतिं। ऋषिभिः सम्भृत् रसम्। तस्मै सर्रस्वती दुहे। क्षीर् स्पर्पर्मध्वस्ययंनीः॥४९॥

सुद्धा हि पर्यस्वतीः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः। ब्राह्मणेष्वमृत १ हितम्। पावमानीर्दिशन्तु नः। इमं लोकमथीं अमुम्। कामान्थ्समध्यन्तु नः। देवीर्देवैः समाभृताः। पावमानीः स्वस्त्ययंनीः। सुद्धा हि घृंतश्चतंः। ऋषिभिः सम्भृतो रसंः॥५०॥

ब्राह्मणेष्वमृतर्थं हितम्। येनं देवाः प्वित्रेण। आत्मानं पुनते सदाँ। तेनं सहस्रंधारेण। पावमान्यः पुनन्तु मा। प्राजापत्यं प्वित्रम्ं। श्तोद्यांमर्थं हिर्ण्मयम्। तेनं ब्रह्मविदों वयम्। पूतं ब्रह्मं पुनीमहे। इन्द्रंः सुनीती सह मां पुनातु। सोमंः स्वस्त्या वर्रणः समीच्यां। यमो राजां प्रमृणाभिः पुनातु मा। जातवेदा मोर्जयंन्त्या पुनातु॥५१॥

अर्नु रयीणां ब्रह्मणा स्वस्त्ययंनीः सुद्धा हि घृंतुश्चृत् ऋषिंभिः सम्भृंतो रसः पुनातु त्रीणि च॥======[८]

प्रजा वै स्त्रमांसत् तप्स्तप्यंमाना अर्जुह्नतीः। देवा अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमं- जुहवुः। तेनाधमास अर्जुमवांरुन्धतः। तस्मांदर्धमासे देवा इंज्यन्ते। पितरोऽपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं मास्यूर्जुमवांरुन्धतः। तस्मांन्मासि पितृभ्यः क्रियते। मनुष्यां अपश्यश्चमसं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५२॥

तम्पोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं द्व्यीमूर्ज्मवांरुन्थत। तस्माद्विरह्नां मनुष्येंभ्य उपंह्रियते। प्रातश्चं सायं चं। पृशवोऽपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्। तमुपोदंतिष्ठन्त-मंजुहवुः। तेनं त्र्यीमूर्ज्मवारुन्थत। तस्मात्रिरह्नंः पृशवः प्रेरंते। प्रातः संङ्गवे सायम्। असुंरा अपश्यश्चम्सं घृतस्यं पूर्णं स्वधाम्॥५३॥

तमुपोदंतिष्ठन्तमंजुहवुः। तेनं संवथ्सर ऊर्ज्मवांरुन्थत। ते देवा अंमन्यन्त। अमी वा इदमंभूवन्। यद्वयः स्म इतिं। त एतानिं चातुर्मास्यान्यंपश्यन्। तानि निरंवपन्। तैरेवैषां तामूर्जमवृञ्जत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥५४॥

यद्यजंते। यामेव देवा ऊर्जम्वारुन्थत। तान्तेनावं

रुन्थे। यत्पितृभ्यंः क्रोतिं। यामेव पितर् ऊर्जम्वारंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यदांवस्थेऽत्रृष्ट् हरंन्ति। यामेव मंनुष्यां ऊर्जमवारंन्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यद्दक्षिणां ददांति॥५५॥

यामेव प्राव ऊर्जम्वारुम्थत। तान्तेनावं रुन्थे। यचांतुर्मास्यैर्यजंते। यामेवासंरा ऊर्जम्वारुम्थत। तान्तेनावं रुन्थे। भवंत्यात्मनां। परांस्य भ्रातृंव्यो भवति। विराजो वा एषा विक्रांन्तिः। यचांतुर्मास्यानिं। वैश्वदेवेनास्मिं श्लोके प्रत्यंतिष्ठत्। व्रुणप्रघासेर्न्तिरक्षे। साक्रमेथेरमुष्मिं श्लोके। एष ह त्वावैतथ्सर्वं भवति। य एवं विद्वाङ्श्चांतुर्मास्यैर्यजंते॥५६॥ मनुष्यं अपश्यश्रम् पृतस्यं पूर्णंः स्वधामसंग अपश्यश्रम् पृतस्यं पूर्णंः स्वधामसंग विद्वाङ्ग्वारि च। [९]

अग्निर्वाव संवथ्सरः। आदित्यः पंरिवथ्सरः। चन्द्रमां इदावथ्सरः। वायुरंनुवथ्सरः। यद्वैश्वदेवेन यजंते। अग्निमेव तथ्संवथ्सरमांप्रोति। तस्मांद्वैश्वदेवेन यजंमानः। संवथ्सरीणाई स्वस्तिमा शांस्त इत्याशांसीत। यद्वंरुण-प्रघासैर्यजंते। आदित्यमेव तत्पंरिवथ्सरमांप्रोति॥५७॥

तस्मौद्धरुणप्रघासैर्यजमानः। परिवृथ्सरीणाई स्वस्तिमा शौस्त इत्याशांसीत। यथ्सांकमेधेर्यजंते। चन्द्रमंसमेव तिदंदावथ्सरमौप्नोति। तस्मौथ्साकमेधेर्यजमानः। इदा-वृथ्सरीणाई स्वस्तिमा शौस्त इत्याशांसीत। यत्पितृयज्ञेन यजंते। देवानेव तदन्ववंस्यति। अथवा अस्य वायुश्चांनु- वथ्सरश्चाप्रीतावुच्छिंष्येते। यच्छुंनासीरीयेंण् यजंते॥५८॥

वायुमेव तदंनुवथ्मरमाँप्रोति। तस्माँच्छुनासीरीयेण् यजमानः। अनुवथ्मरीणाई स्वस्तिमा शाँस्त इत्याशांसीत। संवथ्मरं वा एष ईफ्मतीत्यांहः। यश्चांतुर्मास्यैर्यजंत इति। एष ह त्वै संवथ्मरमाँप्रोति। य एवं विद्वाइश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। विश्वं देवाः समयजन्त। तैंऽग्निमेवायंजन्त। त एतं लोकमंजयन्॥५९॥

यस्मिन्नग्निः। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नग्निः। अग्नेरेव सायुंज्यमुपैति। यदा वैश्वदेवेन् यजंते। अर्थ संवथ्मरस्यं गृहपंतिमाप्नोति। यदा संवथ्मरस्यं गृहपंतिमाप्नोतिं। अर्थ सहस्रयाजिनमाप्नोति। यदा सहस्रयाजिनमाप्नोतिं॥६०॥

अर्थ गृहमेधिनंमाप्नोति। यदा गृहमेधिनंमाप्नोति। अथाग्निर्भवति। यदाग्निर्भवंति। अथ गौर्भवति। एषा वै वैश्वदेवस्य मात्राँ। एतद्वा एतेषांमवमम्। अतोतो वा उत्तराणि श्रेया १सि भवन्ति। यद्विश्वं देवाः स्मयंजन्त। तद्वैश्वदेवस्यं वैश्वदेवत्वम्॥६१॥

अथांऽऽदित्यो वर्रुण् राजानं वरुणप्रघासैरयजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्नादित्यः। यद्वरुणप्रघासैर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्नादित्यः। आदित्यस्यैव सायुंज्यमुपैति। यदांदित्यो वर्रुण् राजांनं वरुणप्रघासे-रयंजत। तद्वंरुणप्रघासानां वरुणप्रघासत्वम्। अथ सोमो राजा छन्दार्सस साकमेधैर्यजत॥६२॥

स एतं लोकमंजयत्। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। यथ्मांकमेधेर्यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिईश्चन्द्रमां विभाति। चन्द्रमंस एव सायुंज्यमुपैति। सोमो वै चन्द्रमाः। एष ह् त्वै साक्षाथ्सोमं भक्षयति। य एवं विद्वान्थ्सांकमेधेर्यजंते। यथ्सोमंश्च राजा छन्दाईसि च समैधंन्त॥६३॥

तथ्सांकमेधाना स्माकमेधत्वम्। अथुर्तवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायजन्त। त एतं लोकमंजयन्। यस्मिन्नृतवंः। यत्पितृयज्ञेन यजंते। एतमेव लोकं जयित। यस्मिन्नृतवंः। ऋतूनामेव सायुंज्यमुपैति। यद्दतवंः पितरंः प्रजापंतिं पितरं पितृयज्ञेनायंजन्त। तत्पितृयज्ञस्यं पितृयज्ञत्वम्॥६४॥

अथौषंधय इमं देवं त्र्यंम्बकैरयजन्त प्रथेमहीतिं। ततो वै ता अप्रथन्त। य एवं विद्वाङ्ख्र्यंम्बकैर्यजंते। प्रथंते प्रजयां पशुभिः। अथं वायुः परमेष्ठिन र् शुनासीरीयेणायजत। स एतं लोकमंजयत्। यस्मिन्वायुः। यच्छुंनासीरीयेण यजंते। एतमेव लोकं जंयति। यस्मिन्वायुः॥६५॥

वायोरेव सायुंज्यमुपैंति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। प्र

चांतुर्मास्ययाजी मींयता (३) न प्रमींयता (३) इतिं। जीवन्वा एष ऋतूनप्येति। यदिं वसन्तां प्रमीयते। वसन्तो भंवति। यदिं ग्रीष्मे ग्रीष्मः। यदिं वर्षासुं वर्षाः। यदिं शरिं शरत्। यदि हेमंन् हेमन्तः। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमप्येति। संवथ्सरः प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥६६॥

पृरिवृथ्युरमाँप्रोति शुनासी्रीयेण यजंतेऽजयन्थ्सहस्रयाजिनंमाप्रोति वैश्वदेवृत्वः सांकमेथेरयजत समेथेन्त पितृयज्ञ्तवं जंयति

यस्मिन्वायुर्हेमृन्तस्रीणि च॥

[१०]

उभयें युवः सुरामुमुदंस्थान्नि वै यस्यं प्रातः सबुन एकेंकोऽसुर्यं पर्वमानः प्रजा वे सुत्रमांसताग्निर्वाव संवथ्सरो दर्शा।१०॥

उभये वा उदस्थाथ्सर्वाभिर्मध्यतोऽत्र वाव ब्राह्मणेष्वथं गृहमेपिनुर् पदर्थ्यष्टिः॥६६॥ उभये वा वैषः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

अग्नेः कृत्तिकाः। शुक्रं प्रस्ताञ्च्योतिर्वस्तांत्। प्रजापंते रोहिणी। आपः प्रस्तादोषंधयोऽवस्तांत्। सोमंस्येन्वका विततानि। प्रस्ताद्वयंन्तोऽवस्तांत्। रुद्रस्यं बाहू। मृग्यवंः प्रस्तांद्विक्षारोऽवस्तांत्। अदित्ये पुनर्वसू। वातः परस्तांदाईमवस्तांत्॥१॥

बृह्स्पतेंस्तिष्यः। जुह्नंतः प्रस्ताद्यज्ञंमाना अवस्तांत्। सपाणांमाश्रेषाः। अभ्यागच्छंन्तः प्रस्तांदभ्यानृत्यंन्तो-ऽवस्तांत्। पितृणां मघाः। रुदन्तः प्रस्तांदपश्रश्शोऽवस्तांत्। अर्यम्णः पूर्वे फल्गुंनी। जाया प्रस्तांदषभोऽवस्तांत्। भगस्योत्तरे। बृह्तवंः प्रस्ताद्वहंमाना अवस्तांत्॥२॥

देवस्यं सिवतुर्हस्तंः। प्रस्तवः प्रस्तांथ्यनिर्वस्तांत्। इन्द्रंस्य चित्रा। ऋतं प्रस्तांथ्यत्यम्वस्तांत्। वायोर्निष्ट्यां व्रतिः। प्रस्तादसिद्धिर्वस्तांत्। इन्द्राग्नियोर्विशांखे। युगानिं प्रस्तांत्कृषमांणा अवस्तांत्। मित्रस्यांनूराधाः। अभ्यारोहंत्प्रस्तांदभ्यारूढम्वस्तांत्॥३॥

इन्द्रंस्य रोहिणी। शृणत्प्रस्तौत्प्रतिशृणद्वस्तौत्। निर्ऋंत्यै मूल्वर्हणी। प्रतिभुञ्जन्तेः प्रस्तौत्प्रतिशृणन्तो-ऽवस्तौत्। अपां पूर्वा अषाढाः। वर्चः प्रस्ताथ्समितिर्वस्तौत्। विश्वेषां देवानामुत्तंराः। अभिजयंत्प्रस्तांद्भिजिंतम्वस्तौत्। विष्णोः श्रोणा पुच्छमानाः। पुरस्तात्पन्थां अवस्तांत्॥४॥

वसूना्ड् श्रविष्ठाः। भूतं प्रस्ताद्भृतिर्वस्तात्। इन्द्रंस्य श्तिभिषक्। विश्वव्यंचाः प्रस्तांद्विश्वक्षितिर्वस्तांत्। अजस्यैकंपदः पूर्वे प्रोष्ठपदाः। वैश्वान्तरं प्रस्तांद्वश्वावस्वम्-वस्तात्। अहाँर्बुध्नियस्योत्तरे। अभिष्ठिश्चन्तः प्रस्तांदिभिष्णवन्तोऽवस्तात्। पूष्णो रेवतीं। गावंः प्रस्तांद्वध्सा अवस्तात्। अश्विनोरश्वयुजौं। ग्रामंः प्रस्ताध्सेनाऽवस्तात्। यमस्योपभरंणीः। अपकर्षन्तः प्रस्तांदप्वहंन्तोऽवस्तात्। पूर्णा पृश्चाद्यत्ते देवा अदेधुः॥५॥

आर्द्रम्वस्ताद्वहंमाना अवस्तांद्भ्यारूढम्वस्तात्पन्थां अवस्तांद्वथ्सा अवस्तात्पश्चं च॥—————[१]

यत्पुण्यं नक्षंत्रम्। तद्बद्वंवीतोपव्युषम्। यदा वै सूर्यं उदेतिं। अथ नक्षंत्रं नैतिं। यावंति तत्र सूर्यो गच्छेत्। यत्रं जघन्यं पश्येत्। तावंति कुर्वीत यत्कारी स्यात्। पुण्याह एव कुरुते। एव॰ ह वै यज्ञेषुं च शतद्यंम्नं च माथ्स्यो निरवसाय्यां चंकार॥६॥

यो वै नेक्ष्रत्रियं प्रजापंतिं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः। हस्तं एवास्य हस्तः। चित्रा शिरः। निष्ट्या हृदयम्। ऊरू विशाखे। प्रतिष्ठाऽनूराधाः। एष वै नेक्ष्रत्रियः प्रजापंतिः। य एवं वेदं। उभयोरेनं लोकयौर्विदुः॥७॥

अस्मि श्रामुष्मि ईश्व। यां कामर्येत दुहितरं प्रिया

स्यादितिं। तां निष्ट्यांयां दद्यात्। प्रियेव भंवति। नेव तु पुन्रागंच्छति। अभिजिन्नाम् नक्षंत्रम्। उपरिष्टादषाढानांम्। अवस्तांच्छ्रोणायें। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवास्तस्मिन्नक्षंत्रेऽभ्यंजयन्॥८॥

यद्भ्यजंयन्। तदंभिजितों ऽभिजित्त्वम्। यं कामयेतानप-ज्ययं जंयेदितिं। तमेतस्मिन्नक्षंत्रे यातयेत्। अनुपज्ययमेव जंयति। पापपंराजितमिव तु। प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। ते नक्षंत्रं नक्षत्रमुपांतिष्ठन्त। ते समावन्त पृवाभंवन्। ते रेवतीमुपांतिष्ठन्त॥९॥

ते रेवत्यां प्राभवन्। तस्माँद्रेवत्यां पशूनां कुंवीत। यत्किं चाँर्वाचीन् सोमाँत्। प्रैव भवन्ति। स्िललं वा इदमन्त्रासीँत्। यदत्रंरन्। तत्तारंकाणां तारकृत्वम्। यो वा इह यजेते। अमु स लोकं नक्षते। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्॥१०॥

देवगृहा वै नक्षंत्राणि। य एवं वेदं। गृह्यंव भंवति। यानि वा इमानि पृथिव्याश्चित्राणि। तानि नक्षंत्राणि। तस्मादश्चीलनाम इश्चित्रे। नावंस्येन्न यंजेत। यथां पापाहे कुरुते। तादगेव तत्। देवनुक्षत्राणि वा अन्यानि॥११॥

यम्नक्षत्राण्यन्यानि। कृत्तिंकाः प्रथमम्। विशांखे उत्तमम्। तानि देवनक्षत्राणि। अनूराधाः प्रथमम्। अपुभरंणीरुत्तमम्। तानि यमनक्षत्राणि। यानि देवनक्षत्राणि। तानि दक्षिणेन्

परियन्ति। यानि यमनक्षत्राणि॥१२॥

तान्युत्तंरेण। अन्वेषामराथ्स्मेतिं। तदंनूराधाः। ज्येष्ठमेषामवधिष्मेतिं। तज्ञ्येष्ठघ्नी। मूलंमेषामवृक्षामेतिं। तन्मूंलवर्हंणी। यन्नासंहन्त। तदंषाुढाः। यदश्लोणत्॥१३॥

तच्छ्रोणा। यदर्श्वणोत्। तच्छ्रविष्ठाः। यच्छ्तमभिषज्यन्। तच्छ्रतभिषक्। प्रोष्ठपदेषूदंयच्छन्त। रेवत्यांमरवन्त। अश्वयुजोरयुञ्जत। अपभरणीष्वपांवहन्। तानि वा एतानि यमनक्ष्त्राणि। यान्येव देवनक्षत्राणि। तेषुं कुर्वीत यत्का्री स्यात्। पुण्याह एव कुंरुते॥१४॥

चुकार्रैवं वेदोभयोरेनं लोकयौर्विदुरजयत्रेवतीमुपातिष्ठन्त नक्षत्रत्वमृन्यानि यानि यमनक्षत्राण्यश्लोणद्यमनक्षत्राणि त्रीणि च॥ २

देवस्यं सिवतुः प्रातः प्रंस्वः प्राणः। वरुणस्य सायमांस्वो-ऽपानः। यत्प्रंतीचीनं प्रात्स्तनात्। प्राचीनर् सङ्गवात्। ततो देवा अग्निष्टोमं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। मित्रस्यं सङ्गवः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि पृशवंः समायंन्ति। यत्प्रंतीचीनर् सङ्गवात्॥१५॥

प्राचीनं मध्यं दिनात्। ततो देवा उक्थ्यं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः। बृह्स्पतेंर्मध्यं दिनः। तत्पुण्यं तेज्रस्व्यहंः। तस्मात्तर्ह् तेक्ष्णिष्ठं तपित। यत्प्रंतीचीनं मध्यं दिनात्। प्राचीनंमपराह्णात्। ततो देवाः षोड्शिनं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीयं निर्मार्गः॥१६॥ भगंस्यापराह्नः। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मांदपराह्ने कुंमार्यो भगंमिच्छमांनाश्चरन्ति। यत्प्रंतीचीनंमपराह्नात्। प्राचीन सायात्। ततो देवा अंतिरात्रं निरंमिमत। तत्तदात्तंवीर्यं निर्मार्गः। वरुणस्य सायम्। तत्पुण्यं तेज्ञस्व्यहंः। तस्मात्तर्हि नानृतं वदेत्॥१७॥

ब्राह्मणो वा अष्टाविष्शो नक्षेत्राणाम्। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानिं। तानि नवं। यच्च प्रस्तान्नक्षेत्राणां यच्चावस्तांत्। तान्येकांदश। ब्राह्मणो द्वांद्वः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरंति। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति। समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षेत्राणि। चत्वार्यश्चीलानिं। तानि नवं। आग्नेयी रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। तान्येकांदश। आदित्यो द्वांद्वाः। य एवं विद्वान्थ्यंवथ्यरं व्रतं चरंति। संवथ्यरेणैवास्यं व्रतं गुप्तं भवति॥१८॥

सङ्गवाथ्योंड्शिन्ं निर्रमिमत् तत्तदात्तंवीर्यं निर्मागों वंदेद्भवति समानस्याहुः पश्च पुण्यांनि नक्षंत्राण्यष्टौ चं॥———[३]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कित् पात्रांणि युज्ञं वंहुन्तीतिं। त्रयोदशेतिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कस्तानि निरंमिमीतेतिं। प्रजापंतिरितिं ब्रूयात्। स यद्भूयात्। कुत्स्तानि निरंमिमीतेतिं। आत्मन् इतिं। प्राणापानाभ्यांमेवोपाई-श्वन्तर्यामौ निरंमिमीत॥१९॥

व्यानादुंपा १ शुसर्वनम्। वाच ऐन्द्रवायवम्। दुक्षुऋतुभ्याः

मैत्रावरुणम्। श्रोत्रांदाश्चिनम्। चक्षुंषः शुक्रामृन्थिनौं। आत्मनं आग्रयणम्। अङ्गंभ्य उक्थ्यम्। आयुंषो ध्रुवम्। प्रतिष्ठायां ऋतुपात्रे। यृज्ञं वाव तं प्रजापंतिर्निरंमिमीत। स निर्मितो नाद्धियत् समंब्लीयत। स पृतान्प्रजापंतिरिपवापानंपश्यत्। तां निरंवपत्। तैर्वे स यृज्ञमप्यंवपत्। यदंपिवापा भवंन्ति। यृज्ञस्य धृत्या असंब्लयाय॥२०॥

उपारश्चन्तर्यामौ निरंमिमीतामिमीत् षद्वं॥

[8]

ऋतमेव पंरमेष्ठि। ऋतं नात्येति किश्चन। ऋते संमुद्र आहितः। ऋते भूमिरियङ्श्रिता। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमुष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंतिये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शुग्मेनांस्याभि वंतिये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२१॥

यद्घर्मः पूर्यवंर्तयत्। अन्तांन्पृथिव्या दिवः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वरुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्भिः सखिंभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंर्तये। सत्येन् परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्रुग्मेनांस्याभि वंर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२२॥

यो अस्याः पृंथिव्यास्त्वचि। निवर्तयत्योषंधीः। अग्निरीशांन् ओजंसा। वर्रुणो धीतिभिः सह। इन्द्रों मुरुद्धिः सर्खिभिः सह। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप आक्रांन्तमुष्णिहां। शिर्स्तपस्याहितम्। वैश्वान्रस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वर्तये। सत्येन् परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। शग्मेनांस्याभि वर्तये। तद्दतं तथ्सत्यम्। तद्दतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२३॥

एकं मास्मुदंसृजत्। प्रमेष्ठी प्रजाभ्यः। तेनाभयो मह् आवंहत्। अमृतं मर्त्याभ्यः। प्रजामनु प्र जांयसे। तदं ते मर्त्यामृतम्। येन मासां अर्धमासाः। ऋतवंः परिवथ्सराः। येन ते ते प्रजापते। ईजानस्य न्यवंत्यन्। तेनाहमस्य ब्रह्मणा। निवंत्यामि जीवसें। अग्निस्तिग्मेनं शोचिषां। तप् आक्रान्तमृष्णिहां। शिर्स्तप्स्याहितम्। वैश्वानरस्य तेजंसा। ऋतेनांस्य नि वंत्ये। सत्येन परि वर्तये। तपंसाऽस्यानुं वर्तये। शिवेनास्योपं वर्तये। श्रग्मेनांस्याभि वंत्ये। तट्तं तथ्सत्यम्। तद्वतं तच्छंकेयम्। तेनं शकेयं तेनं राध्यासम्॥२४॥

परिंवर्तये सुहाभिवर्तय उष्णिहां राध्यासुं न्यवर्तयृत्रुपंवर्तये चृत्वारिं च। (ऋतमेव पोर्डश। यद्घुर्मो यो अस्याः सप्तदंशसप्तदश। एकुं मासुं चतुर्वि १शितः)॥————[५]

देवा वै यद्यज्ञेऽकुर्वत। तदसुरा अकुर्वत। तेऽसुरा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्यो नापंश्यन्। ते केशानग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रूणि। अथोपपृक्षौ। तत्स्तेऽवाश्च आयन्। परांऽभवन्। यस्यैवं वपंन्ति। अवांङेति॥२५॥

अथो परैव भेवति। अथं देवा ऊर्ध्वं पृष्ठेभ्योऽपश्यन्। त उपपृक्षावग्रेऽवपन्त। अथ् श्मश्रृंणि। अथ् केशान्। तत्स्तें-ऽभवन्। सुवर्गं लोकमायन्। यस्यैवं वपन्ति। भवंत्यात्मनां। अथो सुवर्गं लोकमेति॥२६॥

अथैतन्मनुंर्वित्रे मिथुनमंपश्यत्। स श्मश्रूण्यग्रेऽवपतः। अथोपपक्षौः। अथ् केशान्। ततो वै स प्राजायत प्रजयां पृश्भिः। यस्यैवं वपंन्ति। प्र प्रजयां पृश्भिर्मिथुनैर्जायते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते संवथ्सरे व्यायंच्छन्तः। तान्देवाश्चांतुर्मास्यैरेवाभि प्रायुंञ्जत॥२७॥

वैश्वदेवनं चतुरों मासोऽवृञ्जतेन्द्रंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। वरुणप्रघासेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत् वर्रणराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। साक्रमेधेश्चतुरों मासोऽवृञ्जत सोमंराजानः। ताञ्छीर्षं नि चावर्तयन्त परि च। या संवथ्सर उंपजीवाऽऽसीत्। तामेषामवृञ्जत। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः॥२८॥

य एवं विद्वा इश्चांतुर्मास्यैर्यजंते। भ्रातृंव्यस्यैव मासो वृक्ता। शीर्षं नि चं वर्तयंते परिं च। यैषा संंवथ्सर उंपजीवा। वृक्के तां भ्रातृंव्यस्य। क्षुधाऽस्य भ्रातृंव्यः परां भवति। लोहितायसेन नि वंर्तयते। यद्वा इमामग्निर्ऋतावागंते निवर्तयति। एतदेवैना र्र्ष्ट्र कृत्वा निवर्तयति। सा ततः श्वश्वो भूयंसी भवन्त्येति॥२९॥

प्र जांयते। य एवं विद्वाँ होहितायसेनं निवर्तयंते। एतदेव रूपं कृत्वा नि वर्तयते। स ततः श्वश्वो भूयान्भवन्नेति। प्रैव जांयते। त्रेण्या शंलुल्या नि वर्तयेत। त्रीणि त्रीणि वै देवानां मृद्धानि। त्रीणि छन्दा रेसि। त्रीणि सर्वनानि। त्रयं इमे लोकाः॥३०॥

ऋध्यामेव तद्वीर्यं एषु लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। यचांतुर्मास्य-याज्यांत्मनो नावद्येत्। देवेभ्य आवृंश्च्येत। चृतृषु चंतृषु मासेषु नि वंतियेत। प्रोक्षंमेव तद्देवेभ्यं आत्मनोऽवंद्यत्यनांत्रस्काय। देवानां वा एष आनीतः। यश्चांतुर्मास्ययाजी। य एवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च। देवतां एवाप्येति। नास्यं रुद्रः प्रजां पश्चिम मन्यते॥३१॥

पृत्येत्ययुञ्जतासुंरा एति लोका मन्यते॥■

[٤]

आयुंषः प्राणक्ष सन्तंनु। प्राणादंपानक्ष सन्तंनु। अपानाद्यानक्ष सन्तंनु। व्यानाच्चक्षुः सन्तंनु। चक्षुंषः श्रोत्रक्ष् सन्तंनु। श्रोत्रान्मनः सन्तंनु। मनसो वाच्क्ष् सन्तंनु। वाच् आत्मान्क्ष् सन्तंनु। आत्मनः पृथिवीक्ष सन्तंनु। पृथिव्या अन्तरिक्षक्ष सन्तंनु। अन्तरिक्षाद्विवक्ष सन्तंनु। दिवः सुवः सन्तंनु॥३२॥ अन्तरिक्ष्⊻ सन्तंनु द्वे चं॥━─────ि्]

इन्द्रों दधीचो अस्थिभिः। वृत्राण्यप्रंतिष्कुतः। ज्ञ्घानं नवतीर्नवं। इच्छन्नश्वंस्य यच्छिरंः। पर्वतेष्वपंश्रितम्। तिद्वंदच्छर्यणावंति। अत्राह् गोरमंन्वत। नाम् त्वष्टुंरपीच्यम्। इत्था चन्द्रमंसो गृहे। इन्द्रमिद्गाथिनों बृहत्॥३३॥

इन्द्रंमकेभिर्किणंः। इन्द्रं वाणीरनूषत। इन्द्रं इद्धर्योः सचाँ। सम्मिश्च आवंचो युजाँ। इन्द्रों वृज्जी हिर्ण्ययंः। इन्द्रों दीर्घाय चक्षंसे। आ सूर्यर् रोहयद्दिव। वि गोभिरद्रिंमैरयत्। इन्द्रं वाजेषु नो अव। सहस्रंप्रधनेषु च॥३४॥

उग्र उग्राभिंक्तिभिंः। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तेवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। इन्द्रः स दामने कृतः। ओजिंष्ट्रः स बलें हितः। द्युम्नी श्लोकी स सौम्यः। गिरा वज्रो न सम्भृतः। सबंलो अनंपच्युतः। वृवृक्षुरुग्रो अस्तृंतः॥३५॥

बृह्चास्तुंतः॥————[८

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स प्रजापंतिरिन्हं ज्येष्ठं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनमसुरा बलीया श्सोऽहन् न्नितिं। प्रह्लादों हु वै कायाध्वः। विरोचन् श्रू स्वं पुत्रमप् न्यंधत्त। नेदेनं देवा अंहन् न्नितिं। ते देवाः प्रजापंतिमुपस् मेत्यों चुः। नाराजकंस्य युद्धमस्ति। इन्द्रमन्विंच्छामेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैंच्छन्॥३६॥

तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दन्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छन्।

तिमिष्टिंभिरन्वंविन्दन्। तिदिष्टींनािमिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव् हि देवाः। तस्मां एतमांग्नावैष्ण्वमेकांदशकपालं दीक्षणीयं निरंवपन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तान्पंत्रीसंयाजान्त उपानयन्॥३७॥

ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। ते प्रांयणीयंम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। ताञ्छ्य्य्वंन्त उपांनयन्। ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। त आंतिथ्यम्भि स्मारोहन्। तदंपद्रुत्यांतन्वत। तानिडान्त उपांनयन्। ते तदंन्तम्व कृत्वोदंद्रवन्। तस्मादेता पृतदंन्ता इष्टंयः सन्तिष्ठन्ते॥३८॥

पुव हे देवा अर्कुर्वत। इति देवा अंकुर्वत। इत्यु वै मंनुष्याः कुर्वते। ते देवा ऊंचुः। यद्वा इदमुचैर्यज्ञेन चराम। तन्नोऽसुराः पाप्माऽनुविन्दन्ति। उपार्शूप्सदां चराम। तथा नोऽसुराः पाप्मा नानुवेथ्स्यन्तीति। त उपार्शूप्सदंमतन्वत। तिस्र एव सांमिधेनीरनूच्यं॥३९॥

स्रुवेणांघारमाघार्यं। तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांप्सदं जुह्वां चंकुः। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधीक् स्वाहेतिं। अशन्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरंहत्यं च त्वेषं वचः। एतः ह् वाव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं देवा अपंजिष्ठिरे। तथो एवैतदेवंविद्यजंमानः। तिस्र

पुव सांमिधेनीर्नूच्यं। सुवेणांघारमाघार्यं॥४०॥

तिस्रः परांचीराहुंतीर्हुत्वा। स्रुवेणांपसदं जुहोति। उग्रं वचो अपांवधीन्त्वेषं वचो अपांवधी्र् स्वाहेतिं। अश्नम्यापिपासे ह् वा उग्रं वचः। एनंश्च वैरहत्यं च त्वेषं वचः। एतमेव तचंतुर्धाविहितं पाप्मानं यजंमानोऽपं हते। तेऽिमनीयैवाहंः पृशुमाऽलंभन्त। अहं एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे। तेनांिभनीयेव रात्रेः प्राचंरन्। रात्रिया एव तद्देवा अवंतिं पाप्मानं मृत्युमपंजिघ्नरे॥ ४१॥

तस्मांदिभिनीयैवाहंः पृशुमा लंभेत। अहं एव तद्यजंमानो-ऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। तेनांभिनीयेव रात्रेः प्रचंरेत्। रात्रिया एव तद्यजंमानोऽवंर्तिं पाप्मानं भ्रातृंव्यानपं नुदते। स एष उंपवस्थीयेऽहं द्विदेवृत्यः पृशुरा लंभ्यते। द्वयं वा अस्मिँ ह्लोके यर्जमानः। अस्थि च मा ५ सं चं। अस्थि चैव तेनं मा ५ सं च यर्जमानः स ६ स्कुंरुते। ता वा एताः पश्च देवताः। अग्नीषोमांवग्निर्मित्रावरुंणौ॥४२॥

पृश्चपृश्ची वै यजंमानः। त्वङ्गार्सः स्नावाऽस्थिं मृज्ञा। पृतमेव तत्पंश्चधाविहितमात्मानं वरुणपाशान्मंश्चिति। भेषजतांये निर्वरुणत्वायं। तर सप्तिभृश्छन्दोभिः प्रातरंह्वयन्। तस्मांथ्सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दारंसि प्रातरनुवाकेऽनूंच्यन्ते। तमेतयोपसमेत्योपांसीदन्। उपांस्मै गायता नर् इतिं।

तस्मदितयां बहिष्यवमान उपसर्घः॥४३॥

षुच्छुत्रन्युः स्तिष्ठन्ते ऽनूच्यानूच्यं स्रुवेणांघारमाघार्यं रात्रिया एव तद्देवा अर्वितै पाप्मानं मृत्युमपंजिन्नरे मित्रावरुणौ नवं च (देवा यर्जमानो देवा देवा यर्जमानो यर्जमानुः प्राचेर् प्रचेरेदालंभुन्तालंभेत मृत्युमपंजिन्नरे आतृंच्यान्॥॥**———[९**]

स संमुद्र उत्तर्तः प्राज्वेलद्भूम्यन्तेनं। एष वाव स संमुद्रः। यच्चात्वांलः। एष उवेव स भूम्यन्तः। यद्वेद्यन्तः। तदेतित्रिंशलं त्रिंपूरुषम्। तस्मात्तं त्रिंवितस्तं खेनन्ति। स सुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिंगृहीत आसीत्। तं यद्स्या अध्यजनंयन्। तस्मादादित्यः॥४४॥

अथ् यथ्मुंवर्णरज्ञताभ्यां कुशीभ्यां परिगृहीत् आसीत्। साऽस्यं कौशिकतां। तं त्रिवृताऽभि प्रास्तुंवत। तं त्रिवृताऽदंदत। तं त्रिवृताऽहंरन्। यावंती त्रिवृतो मात्रां। तं पंश्रद्शेनाभि प्रास्तुंवत। तं पंश्रद्शेनादंदत। तं पंश्रदशेनाहंरन्। यावंती पश्चदशस्य मात्रां॥४५॥

त १ संप्तद्शेनाभि प्रास्तुंवत। त १ संप्तद्शेनादंदत। त १ संप्तद्शेनाहं रन्। यावंती सप्तद्शस्य मात्रां। तस्यं सप्तद्शेनं हियमांणस्य तेजो हरों ऽपतत्। तमें कि वि १ शेनाभि प्रास्तुंवत। तमें कि वि १ शेनाहं रन्। यावंत्येकि वि १ शस्य मात्रां। ते यित्रवृतां स्तुवतं॥ ४६॥

त्रिवृतैव तद्यजंमान्मादंदते। तं त्रिवृतैव हंरन्ति। यावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्निर्वे त्रिवृत्। यावद्वा अग्नेदंहंतो धूम उदेत्यानु व्येतिं। तावंती त्रिवृतो मात्रां। अग्नेरेवैनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतां गमयन्ति। अथ यत्पंश्चद्शेनं स्तुवते। पृश्चद्शेनेव तद्यजंमानुमादंदते॥४७॥

तं पंश्चद्रशेनेव हंरन्ति। यावंती पश्चद्रशस्य मात्रां। चन्द्रमा वै पंश्चद्रशः। एष हि पंश्चद्रयामंपक्षीयतें। पृश्चद्रयामांपूर्यतें। चन्द्रमंस एवेनं तत्। मात्रा सायुंज्य सलोकतांं गमयन्ति। अथ् यथ्संप्तद्रशेनं स्तुवतें। स्प्तद्रशेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तर् संप्तद्रशेनेव हंरन्ति॥४८॥

यावंती सप्तद्रशस्य मात्रां। प्रजापंतिर्वे संप्तद्रशः। प्रजापंतिरेवेनं तत्। मात्रार् सायुंज्यर सलोकतां गमयन्ति। अथ यदंकिविर्शेनं स्तुवतें। एकविर्शेनेव तद्यजंमान्मादंदते। तमंकिविर्शेनेव हंरन्ति। यावंत्येक-विर्शस्य मात्रां। असो वा आंदित्य एंकिविर्शः। आदित्यस्यैवेनं तत्॥४९॥

मात्रा सायंज्य सलोकतां गमयन्ति। ते कुश्यौं। व्यंप्रन्। ते अंहोरात्रे अंभवताम्। अहंरेव सुवर्णाऽभवत्। रज्ता रात्रिः। स यदांदित्य उदेतिं। एतामेव तथ्सुवर्णां कुशीमनु समेति। अथ यदंस्तमेतिं। एतामेव तद्रजतां कुशीमनुसंविंशति। प्रह्लादों ह् वे कांयाध्वः। विरोचन् इं स्वं पुत्रमुदांस्यत्। स प्रंदरोंऽभवत्। तस्मांत्प्रद्रादुंदकं नाचांमेत्॥५०॥

ये वै चृत्वारः स्तोमाः। कृतं तत्। अथ् ये पश्चं। किलः सः। तस्माचतुंष्टोमः। तचतुंष्टोमस्य चतुष्टोमृत्वम्। तदांहुः। कृतमानि तानि ज्योती १षि। य एतस्य स्तोमा इतिं। त्रिवृत्पंश्चदशः संप्तदश एंकवि १शः॥५१॥

पुतानि वाव तानि ज्योती १षि। य पुतस्य स्तोमाः। सौंऽब्रवीत्। सप्तद्शेनं ह्रियमांणो व्यंलेशिषि। भिषज्यंत मेतिं। तमुश्विनौ धानाभिरभिषज्यताम्। पूषा कंरुम्भेणं। भारती परिवापेणं। मित्रावरुंणौ पयस्यंया। तदांहुः॥५२॥

यदिश्वभ्यां धानाः। पूष्णः कंरम्भः। भारंत्ये परिवापः। मित्रावर्रुणयोः पयस्याऽथे। कस्मादेतेषा हिवषामिन्द्रमेव यंजन्तीति। एता ह्यंनं देवता इति ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भि-रिमषज्य इस्तस्मादिति। तं वसंवोऽष्टाकंपालेन प्रातः सवने-ऽभिषज्यन्। रुद्रा एकांदशकपालेन् मार्ध्यं दिने सर्वने। विश्वं देवा द्वादंशकपालेन तृतीयसवने॥५३॥

स यद्ष्टाकंपालान्प्रातः सव्ने कुर्यात्। एकांदश-कपालान्माध्यं दिने सर्वने। द्वादंशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने। विलोम् तद्यज्ञस्यं क्रियेत। एकांदशकपालानेव प्रांतः सव्ने कुर्यात्। एकांदशकपालान्माध्यं दिने सर्वने। एकांदशकपालाङ्स्तृतीयसव्ने। युज्ञस्यं सलोमृत्वायं। तदांहुः। यद्वसूंनां प्रातः सव्नम्। रुद्राणां माध्यं दिन् र सर्वनम्। विश्वेषां देवानां तृतीयसव्नम्। अथ् कस्मादेतेषा र ह्विषामिन्द्रंमेव यंजन्तीतिं। एता ह्येनं देवता इतिं ब्रूयात्। एतैर्ह्विर्भिरभिषज्य इस्तस्मादितिं॥५४॥

पुकृषि्र्श आंहुस्तृतीयसव्ने प्रांतः सव्नं पश्चं च॥————[११]

तस्यावांचोऽवपादादंबिभयुः। तम्तेषुं सप्तसु छन्दंः स्वश्रयन्। यदश्रंयन्। तच्छ्रांयन्तीयंस्य श्रायन्तीयृत्वम्। यदवांरयन्। तद्वांरवन्तीयंस्य वारवन्तीयृत्वम्। तस्यावांच प्वावंपादादंबिभयुः। तस्मां पृतानिं सप्त चंतुरुत्तराणि छन्दाङ्स्युपांदधुः। तेषामित् त्रीण्यंरिच्यन्त। न त्रीण्युदं-भवन्॥५५॥

स बृह्तीमेवास्पृंशत्। द्वाभ्यांमक्षरांभ्याम्। अहोरात्राभ्यांमेव। तदांहुः। कृतमा सा देवाक्षंरा बृह्ती। यस्यान्तत्प्रत्यतिंष्ठत्। द्वादंश पौर्णमास्यः। द्वादशाष्टंकाः। द्वादंशामावास्याः। एषा वाव सा देवाक्षंरा बृहती॥५६॥

यस्यां तत्प्रत्यतिष्ठिदितिं। यानिं च छन्दा ईस्यत्यरिच्यन्त। यानिं च नोदर्भवन्। तानि निर्वीर्याणि हीनान्यंमन्यन्त। साऽब्रंबीद्वृहृती। मामेव भूत्वा। मामुप सङ्श्रंयतेतिं। चतुर्भिरक्षरैरनुष्टुग्बृंहृतीं नोदंभवत्। चतुर्भिरक्षरैंः पङ्किःबृंहृती-मत्यरिच्यत। तस्यांमेतानिं चत्वार्यक्षराण्यपच्छिद्यां-दधात्॥५७॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। अष्टाभि-रक्षरैरुष्णिग्बृंह्तीं नोदंभवत्। अष्टाभिरक्षरैष्ग्रिष्टुग्बृंह्तीमत्यं-रिच्यत। तस्यांमेतान्यष्टावृक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्। ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। द्वाद्शभिरक्षरैर्गायत्री बृंह्तीं नोदंभवत्। द्वाद्शभिरक्षरैर्जगंती बृह्तीमत्यंरिच्यत। तस्यांमेतानि द्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधात्॥५८॥

ते बृंह्ती एव भूत्वा। बृह्तीमुप् समंश्रयताम्। सौंऽब्रवीत्प्रजापंतिः। छन्दारंसि रथों मे भवत। युष्माभिर्हमेतमध्यांनमनु सश्चराणीतिं। तस्यं गायत्री च जगंती च पृक्षावंभवताम्। उष्णिक्नं त्रिष्टुष्च प्रष्ट्यौं। अनुष्टुष्यं पृङ्किश्च ध्रयौं। बृह्त्येवोद्धिरंभवत्। स एतं छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्यानमनु समंचरत्। एतर ह् वै छन्दोर्थमास्थायं। एतमध्यानमनु सश्चरित। येनैष एतथ्सश्चरित। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥५९॥

अभ्वन्वाव सा वेवाक्षरा बृहुत्यंदधाह्वादंशाक्षराण्यपच्छिद्यांदधादास्थाय पद्वं॥————[१२]

अुग्नेः कृत्तिंका यत्पुण्यं देवस्यं सिवृतुर्ब्रह्मवादिनः कत्यृतमेव देवा वा आयुंपः प्राणिमन्द्रां दधीचो देवासुराः स प्रजापंतिः स संमुद्रो ये वै चृत्वार्स्तस्यावांचो द्वादंश॥१२॥

अग्नेः कृत्तिंका देवगृहा ऋतमेवर्ध्यामेव तिम्रः परांचीर्धे वै चृत्वारो नवंपश्चाशत्॥५९॥ अग्नेः कृत्तिंका य उं चैनमेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥

पञ्चमः प्रश्नः 91

॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अनुंमत्यै पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपिति। ये प्रत्यश्चः शम्याया अवशीयंन्ते। तन्नैर्ऋतमेकंकपालम्। इयं वा अनुंमितिः। इयं निर्ऋतिः। नैर्ऋतेन पूर्वेण प्रचंरित। पाप्मानंमेव निर्ऋतिं पूर्वां निरवंदयते। एकंकपालो भवति। एक्थेव निर्ऋतिं निरवंदयते। यदहुंत्वा गार्हंपत्य ईयुः॥१॥

रुद्रो भूत्वाऽग्निरंनूत्थायं। अध्वर्यं च यजंमानं च हन्यात्। वीहि स्वाहाऽऽहुंतिं जुषाण इत्याह। आहुंत्यैवेन रं शमयति। नार्तिमार्च्छंत्यध्वर्युर्न यजंमानः। एकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध निर्ऋत्यै भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै निर्ऋत्यै दिक्। स्वायांमेव दिशि निर्ऋतिं निरवंदयते॥२॥

स्वकृत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै निर्ऋंत्या आयतंनम्। स्व एवायतंने निर्ऋंतिं निरवंदयते। एष ते निर्ऋते भाग इत्यांह। निर्दिशत्येवैनांम्। भूतें ह्विष्मंत्यसीत्यांह। भूतिंमे्वोपावंतिते। मुश्चेमम॰हंस् इत्यांह। अ॰हंस एवैनंं मुश्चति। अङ्गुष्ठाभ्यां जुहोति॥३॥

अन्तत एव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णं वासंः कृष्णतूंषं दक्षिणा। एतद्वै निर्ऋत्यै रूपम्। रूपेणैव निर्ऋतिं निरवंदयते। अप्रतिक्षमायंन्ति। निर्ऋत्या अन्तर्हित्यै। स्वाहा नमो य इदं चकारेति पुन्रेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। आहुंत्यैव नंमस्यन्तो गार्हंपत्यमुपावर्तन्ते। आनुमृतेन प्रचरित। इयं वा अनुमितिः॥४॥

इयमेवास्मै राज्यमन् मन्यते। धेनुर्दक्षिणा। इमामेव धेनुं कुंरुते। आदित्यं चुरुं निर्वपति। उभयीष्वेव प्रजास्वभिषिंच्यते। दैवीषु च मानुषीषु च। वरो दक्षिणा। वरो हि राज्य समृद्धै। आग्नावैष्णवमेकादशकपालं निर्वपति। अग्निः सर्वा देवताः॥५॥

विष्णुंर्यज्ञः। देवतांश्चेव यज्ञं चार्व रुन्थे। वामनो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनांऽऽग्नेयः। यद्वांमनः। तेनं वैष्णवः समृंद्धे। अग्नीषोमीयमेकांदशकपालं निर्वपति। अग्नीषोमांभ्यां वा इन्द्रों वृत्रमहन्नितिं। यदंग्नीषोमीयमेकां-दशकपालं निर्वपंति॥६॥

वार्त्रघ्रमेव विजित्यै। हिरंण्यं दक्षिणा समृद्धौ। इन्द्रों वृत्र श्रह्तवा। देवतांभिश्चेन्द्रियेणं च व्याध्यता स एतमैन्द्राग्रमेकां-दशकपालमपश्यत्। तिन्रिरंवपत्। तेन् वै स देवतांश्चेन्द्रियं चावांरुन्थ। यदैन्द्राग्रमेकांदशकपालं निर्वपंति। देवतांश्चेव तेनैन्द्रियं च यजमानोऽवं रुन्थे। ऋष्मो वही दक्षिणा॥७॥

यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंष्भः। तेनै्न्द्रः समृंद्धै। आग्नेयमृष्टाकंपालुं निर्वपति। ऐन्द्रं दिधं। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निर्वे यंज्ञमुखम्। युज्ञमुखमेवर्द्धिं पुरस्ताँद्धत्ते। यदैन्द्रं दिधं॥८॥

इन्द्रियमेवावं रुन्धे। ऋष्भो वृही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंष्भः। तेनैन्द्रः समृद्धे। यावंतीर्वे प्रजा ओषंधीनामहुंतानामाश्जन्। ताः परांऽभवन्। आग्रयणं भंवति हुताद्यांय। यजंमानुस्यापंराभावाय॥९॥

देवा वा ओषंधीष्वाजिमंयुः। ता इंन्द्राग्नी उदंजयताम्। तावेतमैंन्द्राग्नं द्वादंशकपालं निरंवृणाताम्। यदैंन्द्राग्नो भवत्युज्जित्ये। द्वादंशकपालो भवति। द्वादंश् मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। वैश्वदेव-श्वरुर्भवति। वैश्वदेवं वा अन्नम्ं। अन्नमेवास्मैं स्वदयति॥१०॥

प्रथम्जो वृथ्सो दक्षिणा समृद्धे। सौम्य श्यांमाकं च्रं निर्वपित। सोमो वा अंकृष्टपच्यस्य राजां। अकृष्टपच्यमेवास्में स्वदयित। वासो दक्षिणा। सौम्य हि देवत्या वासः समृद्धे। सरंस्वत्ये च्रं निर्वपित। सरंस्वते च्रम्। मिथुनमेवावं रुन्थे। मिथुनौ गावौ दिक्षिणा समृद्धे। एति वा एष यंज्ञमुखादध्याः। योंऽग्नेर्देवतांया एति। अष्टावेतानि ह्वी १षि भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रोंऽग्निः। तेनैव यंज्ञमुखादध्यां अग्नेर्देवतांयै नैति॥११॥

र्ड्डयुर्निरवंदयतेऽङ्गुष्ठाभ्यां जुहोत्यनुंमतिर्देवतां निर्वर्पति वही दक्षिणा यदैन्द्रं दथ्यपराभावाय स्वदयति गावौ दक्षिणा समृद्धौ

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टा न प्राजायन्त। सौंऽग्निरंकामयत। अहमिमाः प्रजंनयेयमितिं। स प्रजापंतये शुचंमदधात्। सोंऽशोचत्प्रजामिच्छमानः। तस्माद्यं चं प्रजा भुनक्ति यं च न। तावुभौ शोंचतः प्रजामिच्छमानौ। तास्वग्निमप्यंसृजत्। ता अग्निरध्यैत्॥१२॥

सोमो रेतोंऽदधात्। स्विता प्राजंनयत्। सरंस्वती वाचंमदधात्। पूषाऽपोंषयत्। ते वा एते त्रिः संवथ्सरस्य प्रयंज्यन्ते। ये देवाः पृष्टिंपतयः। स्वथ्सरो वै प्रजापितः। स्वथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्राजंनयत्। ताः प्रजा जाता म्रुतौंऽघ्नन्। अस्मानिष् न प्रायुंक्षतितिं॥१३॥

स पृतं प्रजापंतिर्मारुतः सप्तकंपालमपश्यत्। तन्निरंवपत्। ततो वै प्रजाभ्योऽकल्पत। यन्मांरुतो निरुप्यतें। युज्ञस्य क्रुप्त्यें। प्रजानामघाताय। सप्तकंपालो भवति। सप्तगंणा वै मुरुतः। गुणुश पुवास्मै विशं कल्पयति। स प्रजापंतिरशोचत्॥१४॥

याः पूर्वाः प्रजा असृक्षि। मुरुत्स्ता अंवधिषुः। कथमपंराः सृजेयेति। तस्य शुष्मे आण्डं भूतं निरंवर्तत। तद्धादंहरत्। तदंपोषयत्। तत्प्राजांयत। आण्डस्य वा एतद्रूपम्। यदामिक्षाः। यद्धाद्धरंति॥१५॥

प्रजा एव तद्यजंमानः पोषयति। वैश्वदेव्यांमिक्षां

भवति। वैश्वदेव्यों वै प्रजाः। प्रजा एवास्मै प्रजंनयित। वार्जिन्मानयिति। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतों दधाति। द्यावापृथिव्यं एकंकपालो भवति। प्रजा एव प्रजांता द्यावापृथिवीभ्यांमुभ्यतः परि गृह्णाति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्॥१६॥

मामग्रे यजत। मया मुखेनासुंराञ्जेष्यथेति। मां द्वितीयमिति सोमौंऽब्रवीत्। मया राज्ञां जेष्यथेति। मां तृतीयमिति सविता। मया प्रसूता जेष्यथेति। मां चंतुर्थीमिति सर्रस्वती। इन्द्रियं वोऽहं धौस्यामीति। मां पंश्वममिति पूषा। मयौ प्रतिष्ठयां जेष्यथेति॥१७॥

तें'ऽग्निना मुखेनासुंरानजयन्। सोमेन राज्ञां। स्वित्रा प्रसूंताः। सरंस्वतीन्द्रियमंदधात्। पूषा प्रंतिष्ठाऽऽसींत्। ततो व देवा व्यंजयन्त। यदेतानिं ह्वी १षिं निरुप्यन्ते विजित्यै। नोत्तरवेदिमुपंवपति। पृशवो वा उंत्तरवेदिः। अजांता इव ह्यंतर्हिं पृशवंः॥१८॥

ऐदित्यंशोचद्युद्धरंत्यब्रवीत्प्रतिष्ठयां जेष्युथेत्येतर्रहिं पुशर्वः॥

-[२]

त्रिवृद्धर्हिर्भविति। माता पिता पुत्रः। तदेव तन्मिथुनम्। उल्बं गर्भो जरायुं। तदेव तन्मिथुनम्। त्रेधा बर्हिः सन्नेद्धं भवित। त्रयं इमे लोकाः। पृष्वेव लोकेषु प्रति तिष्ठति। पृक्धा पुनः सन्नेद्धं भवित। एकं इवृ ह्यंयं लोकः॥१९॥ अस्मिन्नेव तेनं लोके प्रति तिष्ठति। प्रस्वो भवन्ति। प्रथमजामेव पृष्टिमवं रुन्धे। प्रथमजो वथ्सो दक्षिणा समृद्धै। पृषदाज्यं गृह्णाति। पृशवो वै पृषदाज्यम्। पृश्नवेवावं रुन्धे। पृश्चगृहीतं भवति। पाङ्का हि पृशवः। बहुरूपं भवति॥२०॥

बहुरूपा हि प्शवः समृद्धै। अग्निं मन्थन्ति। अग्निमुंखा वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यद्ग्निं मन्थन्ति। अग्निमुंखा एव तत्प्रजा यजंमानः सृजते। नवं प्रयाजा इंज्यन्ते। नवांनूयाजाः। अष्टौ ह्वी॰िषं। द्वावांघारौ। द्वावाज्यंभागौ॥२१॥

त्रिष्शथ्सम्पंद्यन्ते। त्रिष्शदंक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। यजंमानो वा एकंकपालः। तेज् आज्यम्। यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव तेजंसा समर्धयति। यजंमानो वा एकंकपालः। पृशव आज्यम्॥२२॥

यदेकंकपाल आज्यंमानयंति। यजंमानमेव पृशुभिः समर्थयति। यदल्पंमानयंत्। अल्पां एनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठेरन्। यद्घह्वांनयंत्। बहवं एनं पृशवोऽभुंअन्त उपंतिष्ठेरन्। बह्वांनीयाविः पृष्ठं कुर्यात्। बहवं एवेनं पृशवों भुअन्त उपंतिष्ठन्ते। यजंमानो वा एकंकपालः। यदेकंकपालस्यावद्येत्॥२३॥

यजंमानुस्यावंद्येत्। उद्घा माद्येद्यजंमानः। प्र वां मीयेत। स्कृदेव होत्व्यः। स्कृदिव हि सुवर्गो लोकः। हुत्वाऽभि जुंहोति। यजमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयित्वा। तेजसा समर्थयति। यजमानो वा एकंकपालः। सुवर्गो लोक आहवनीयः॥२४॥

यदेकंकपालमाहवनीयें जुहोतिं। यजंमानमेव सुंवर्गं लोकं गंमयति। यद्धस्तेन जुहुयात्। सुवर्गाल्लोकाद्यजंमानमवं-विध्येत्। स्रुचा जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यै। यत्प्राङ्घवा। देवलोकम्भिजंयेत्। यद्देक्षिणा पिंतृलोकम्। यत्प्रत्यक्॥२५॥

रक्षा रेसि युज्ञ र हेन्युः। यदुदङ्कं। मृनुष्युलोकम्भिजंयेत्। प्रतिष्ठितो होत्व्यः। एकंकपालं वे प्रतितिष्ठंन्तं द्यावांपृथिवी अनु प्रतिं तिष्ठतः। द्यावांपृथिवी ऋतवः। ऋतून् युज्ञः। युज्ञं यजमानः। यजमानं प्रजाः। तस्मात्प्रतिष्ठितो होत्व्यः॥२६॥

वाजिनों यजित। अग्निर्वायुः सूर्यः। ते वै वाजिनंः। तानेव तद्यंजिति। अथो खल्वांहुः। छन्दा १ सि वै वाजिन इतिं। तान्येव तद्यंजिति। ऋख्सामे वा इन्द्रंस्य हरी सोम्पानौं। तयौंः परिधयं आधानम्। वाजिनं भागधेयम्॥२७॥

यदप्रहत्य परिधीं जुंहुयात्। अन्तराधानाभ्यां घासं प्रयंच्छेत्। प्रहत्यं परिधीं जुंहोति। निराधानाभ्यामेव घासं प्रयंच्छति। बर्हिषं विषिश्चन्वाजिनमा नयिति। प्रजा वै बर्हिः। रेतो वाजिनम्। प्रजास्वेव रेतो दधाति। समुपहूर्यं

भक्षयन्ति। पृतथ्सोमपीथा ह्येते। अथो आत्मन्नेव रेतो दधते। यजमान उत्तमो भक्षयति। पृशवो वै वार्जिनम्। यजमान एव पृश्नम्प्रतिष्ठापयन्ति॥२८॥

लोको बंहुरूपं भंवत्याज्यंभागौ पुशव आज्यंमवृद्येदांहवृनीयः प्रत्यक्तस्मात्प्रतिष्ठितो होतुव्यो भागुधेयंमेते चत्वारि च॥ [३]

प्रजापंतिः सिवता भूत्वा प्रजा अंसृजत। ता एंन्मत्यंमन्यन्त। ता अंस्मादपाँक्रामन्। ता वर्रुणो भूत्वा प्रजा वर्रुणेनाग्राहयत्। ताः प्रजा वर्रुणगृहीताः। प्रजापंतिं पुन्रुपांधावन्नाथिम्च्छमानाः। स एतान्य्रजापंतिर्वरुण-प्रघासानपश्यत्। तां निर्वपत्। तैर्वे स प्रजा वर्रुणपाशादंमुञ्चत्। यद्वरुणप्रघासा निरुप्यन्ते॥२९॥

प्रजानामवंरुणग्राहाय। तासां दक्षिणो बाहुर्न्यंक्र आसींत्। सव्यः प्रसृतः। स एतां द्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुदंहन्। ततो वे स प्रजानां दक्षिणं बाहुं प्रासारयत्। यद्वितीयां दक्षिणतो वेदिमुद्धन्ति। प्रजानांमेव तद्यजंमानो दक्षिणं बाहुं प्रसारयित। तस्मांचातुर्मास्ययाज्यंमुष्मिं ल्लोक उभ्याबांहुः। यज्ञाभिंजित्ड् ह्यस्य। पृथमात्राद्वेदी असंम्भिन्ने भवतः॥३०॥

तस्मौत्पृथमात्रं व्यश्सौं। उत्तरस्यां वेद्यांमुत्तरवेदिमुपं वपति। पृशवो वा उत्तरवेदिः। पृशूनेवावं रुन्धे। अथों यज्ञपुरुषोऽनंन्तरित्यै। पृतद्वौह्मणान्येव पश्चं हुवीश्षिं। अथैष ऐन्द्राग्नो भंवति। प्राणापानौ वा पृतौ देवानौम्। यदिन्द्राग्नी।

यदैन्द्राग्नो भवंति॥३१॥

प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा पृतौ देवानांम्। यदिन्द्राग्नी। यदैन्द्राग्नो भवंति। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। मारुत्यांमिक्षां भवति। वारुण्यांमिक्षां। मेषी चं मेषश्चं भवतः। मिथुना एव प्रजा वंरुणपाशान्मंश्चति। लोमशौ भंवतो मेध्यत्वायं॥३२॥

श्मीपूर्णान्युपं वपति। घासमेवाभ्यामपिं यच्छति। प्रजापंतिमृत्राद्यं नोपानमत्। स एतेनं श्तेध्मेन हृविषा-ऽन्नाद्यमवारुम्य। यत्परः श्तानिं शमीपूर्णानि भवंन्ति। अन्नाद्यस्यावरुद्धे। सौम्यानि वै क्रीरांणि। सौम्या खलु वा आहुंतिर्दिवो वृष्टिं च्यावयति। यत्क्रीरांणि भवंन्ति। सौम्ययैवाहुंत्या दिवो वृष्टिमवं रुन्थे। काय एकंकपालो भवति। प्रजानां कन्त्वायं। प्रतिपूरुषं कंरम्भपात्राणि भवन्ति। जाता एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति। एक्मितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा वंरुणपाशान्मुंश्चति॥३३॥

उत्तरस्यां वेद्यांमन्यानि ह्वी १ षि सादयति। दक्षिणायां मारुतीम्। अपधुरमेवैनां युनक्ति। अथो ओजं एवासामवं हरति। तस्माद्धह्मणश्च क्षत्राच्च विशो उन्यतो उपकृमिणीः। मारुत्या पूर्वया प्रचरित। अनृतमेवावं यजते। वारुण्योत्तरया। अन्तत एव वरुणमवं यजते। यदेवाध्वर्युः करोतिं॥ ३४॥ तत्प्रंतिप्रस्थाता कंरोति। तस्माद्यच्छ्रेयाँन्क्रोतिं। तत्पापीं-यान्करोति। पत्नीं वाचयति। मेध्यांमेवैनां करोति। अथो तपं एवैनामुपं नयति। यज्ञार सन्तन्न प्रंब्रूयात्। प्रियं ज्ञाति र रुन्ध्यात्। असौ में जार इति निर्दिशेत्। निर्दिश्यैवैनं वरुणपाशेनं ग्राहयति॥३५॥

प्रघास्यान् हवामह् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। यत्पत्नी पुरोनुवाक्यांमनुब्रूयात्। निर्वीर्यो यजंमानः स्यात्। यजंमानोऽन्वांह। आत्मन्नेव वीर्यं धत्ते। उभौ याज्यार्थं सवीर्यत्वायं। यद्गामे यदरंण्य इत्यांह। यथोदितमेव वर्रणमवं यजते। यजमानदेवत्यों वा आहवनीयः॥३६॥

भ्रातृव्यदेवत्यो दक्षिणः। यदांहवनीयं जुहुयात्। यजंमानं वरुणपाशेनं ग्राहयेत्। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। भ्रातृंव्यमेव वरुणपाशेनं ग्राहयति। शूर्पेण जुहोति। अन्यंमेव वरुणमवं यजते। शीर्षत्रंधि निधायं जुहोति। शीर्षत एव वरुणमवं यजते। प्रत्यिङ्गिष्ठं जुहोति॥३७॥

प्रत्यङ्केव वंरुणपाशान्निर्मुच्यते। अऋन्कर्म कर्मकृत् इत्याह। देवाऽनृणं निरवदायं। अनृणा गृहानुप प्रेतेति वावैतदाह। वरुणगृहीतं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्यजुंषा गृहीतस्यांतिरिच्यंते। तुषांश्च निष्कासश्चं। तुषैश्च निष्कासेनं चावभृथमवैति। वरुणगृहीतेनैव वरुणमवंयजते। अपों-

ऽवभृथमवैति॥३८॥

अपसु वै वर्रुणः। साक्षादेव वर्रुण्मवयजते। प्रति-युतो वर्रुणस्य पाश इत्यांह। वरुण्पाशादेव निर्मुच्यते। अप्रतिक्षमा यन्ति। वर्रुणस्यान्तर्हित्यै। एधौं उस्येधिषीमही-त्यांह। समिधैवाग्निं नमस्यन्तं उपायन्ति। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहीत्यांह। तेजं पुवाऽऽत्मन्धंत्ते॥३९॥

क्रोतिं ग्राहयत्याह्वनीयृस्तिष्ठं जुहोत्यूपोंऽवभृथमवैति धत्ते॥lacktriangle

देवासुराः संयंत्ता आसन्। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममेयमनीक-वती तुन्। तां प्रीणीत। अथासुरानुभि भविष्यथेति। ते देवा अग्नयेऽनीकवते पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। सौंऽग्निरनीकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनीकान्य-जनयत। ततों देवा अभवन्। पराऽसुराः॥४०॥

यद्ग्रयेऽनीकवते पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निर्वपंति। अग्निमेवानीकवन्त्र स्वेनं भाग्धेयेन प्रीणाति। सौंऽग्निरनीकवान्थ्स्वेनं भाग्धेयेन प्रीतः। चतुर्धाऽनीकानि जनयते। असौ वा आंदित्योंऽग्निरनीकवान्। तस्यं रृश्मयो-ऽनीकानि। साकर सूर्यणोद्यता निर्वपति। साक्षादेवास्मा अनीकानि जनयति। तेऽसुराः परांजिता यन्तः। द्यावापृथिवी उपांश्रयन्॥४१॥

ते देवा मुरुद्धाः सान्तपुनेभ्यंश्चरं निरंवपन्।

तान्द्यावांपृथिवीभ्यांमेवोभ्यतः समंतपन्। यन्म्रुद्धः सान्तपनेभ्यंश्चरुं निर्वपंति। द्यावांपृथिवीभ्यांमेव तदुंभ्यतो यजमानो भ्रातृंव्यान्थ्यन्तंपति। मध्यन्दिने निर्वपति। तर्हि हि तेक्ष्णिष्टं तपंति। चुरुर्भवति। सर्वतं पृवेनान्थ्यन्तंपति। ते देवाः श्वोविज्यिनः सन्तंः। सर्वासां दुग्धे गृहमेधीयं चुरुं निर्वपन्॥४२॥

आशिता एवाद्योपंवसाम। कस्य वाऽहेदम्। कस्यं वा श्वो भवितेति। स शृतोंऽभवत्। तस्याहुंतस्य नाश्जन्ं। न हि देवा अहुंतस्याश्जन्ति। तेंंऽब्रुवन्। कस्मां इम॰ होंष्याम् इति। मुरुद्धों गृहमेधिभ्य इत्यंब्रुवन्। तं मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों-ऽजुहवुः॥४३॥

ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यस्यैवं विदुषों मुरुद्धों गृहमेधिभ्यों गृहे जुह्वंति। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंब्यो भवति। यद्वै यज्ञस्यं पाकत्रा क्रियतें। पृश्वव्यं तत्। पाकत्रा वा पृतिक्रंयते। यन्नेध्माब्रहिर्भवंति। न सांमिधेनीर्न्वाहं॥४४॥

न प्रयाजा इज्यन्तै। नानूयाजाः। य एवं वेदे। पृशुमान्भवित। आज्यंभागौ यजित। यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरेति। मुरुतों गृहमे्धिनों यजित। भाग्धेयेंनैवैनान्थ्समंधियित। अग्निइस्विष्टकृतं यजित प्रतिष्ठित्यै। इडाँन्तो भवित। पृशवो वा इडाँ। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥४५॥

यत्पत्नीं गृहमेधीयंस्याश्जीयात्। गृहुमेध्येव स्यांत्। वि त्वंस्य युज्ञ ऋध्येत। यन्नाश्जीयात्। अगृहमेधी स्यात्। नास्यं युज्ञो व्यृंद्धोत। प्रतिवेशं पचेयुः। तस्यांश्जीयात्। गृहुमेध्येव भेवति। नास्यं यज्ञो व्यृंद्धाते॥४६॥

ते देवा गृंहमेधीयेनेष्ट्वा। आशिता अभवन्। आश्चेताभ्यंश्चत। अनुं वृथ्सानंवासयन्। तेभ्योऽसुंगः क्षुधं प्राहिण्वन्। सा देवेषुं लोकमवित्वा। असुंग्न्युनंरगच्छत्। गृह्मेधीयेनेष्ट्वा। आशिता भवन्ति। आश्चेतेऽभ्यंश्चते॥४७॥

अनुं वृथ्सान् वांसयन्ति। भ्रातृंव्यायैव तद्यजंमानः क्षुधं प्रहिंणोति। ते देवा गृंहमेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं न्यंदधुः। अस्मानेव श्व इन्द्रो निहिंतभाग उपावर्तितेति। तानिन्द्रो निहिंतभाग उपावंतित। गृहमेधीयेंनेष्ट्वा। इन्द्रांय निष्कासं निदंध्यात्। इन्द्रं एवैनं निहिंतभाग उपावंतित। गार्हंपत्ये जुहोति॥४८॥

भागधेयेनेवेन् समर्धयित। ऋषभमाह्वयित। वृषद्भार एवास्य सः। अथों इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यजंमानो भातृव्यंस्य वृङ्के। इन्द्रों वृत्र हत्वा। पर्गं परावतंमगच्छत्। अपाराधमिति मन्यंमानः। सौंऽब्रवीत्। क इदं वेदिष्यतीतिं। तैंऽब्रुवन्मरुतो वरं वृणामहै॥४९॥ अर्थ व्यं वेदाम। अस्मभ्यंमेव प्रंथम हिवर्निरुप्याता इतिं। त एंन्मध्यंक्रीडन्। तत्क्रीडिनां क्रीडित्वम्। यन्मुरुद्धाः क्रीडिभ्यः प्रथम हिवर्निरुप्यते विजित्यै। साक सूर्येणोद्यता निर्वपति। एतस्मिन्वै लोक इन्द्रों वृत्रमंहुन्थ्समृंद्धौ। एतद्वाँह्मणान्येव पश्चं हुवी १ षिं। एतद्वाँह्मण ऐन्द्राग्नः। अथेष ऐन्द्रश्चरुर्भवति॥५०॥

उद्धारं वा एतमिन्द्र उदंहरत। वृत्र॰ हृत्वा। अन्यासुं देवतास्विधे। यदेष ऐन्द्रश्चरुर्भवंति। उद्धारमेव तं यजंमान् उद्धरते। अन्यासुं प्रजास्विधे। वैश्वकुर्मण एकंकपालो भवति। विश्वान्येव तेन कर्माण् यजंमानोऽवं रुन्धे॥५१॥

वैश्वदेवेन वै प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता वंरुण-प्रघासैर्वरुणपाशादंमुश्चत्। साक्रमेधेः प्रत्यंस्थापयत्। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवादयत। पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकमंगमयत्। यद्वैश्वदेवेन् यजंते। प्रजा एव तद्यजंमानः सृजते। ता वंरुणप्रघासैर्वरुणपाशान्मुंश्चति। साक्रमेधेः प्रतिष्ठापयति। त्र्यंम्बकै रुद्रं निरवंदयते॥५२॥

पितृयज्ञेनं सुवर्गं लोकं गंमयति। दक्षिणतः प्रांचीनावीती निर्वपति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। अनांदत्य तत्। उत्तर्त एवोपवीय निर्वपत्। उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तैं। अथो यदेव दंक्षिणार्धेऽधि श्रयंति। तेनं दक्षिणावृंत्। सोमांय पितृमतें पुरोडाशु षद्भंपालुं निर्वपति। संवथ्सरो वै सोमेः पितृमान्॥५३॥

संव्थ्यरमेव प्रीणाति। पितृभ्यों बर्हिषद्भों धानाः। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासानेव प्रीणाति। यस्मिन्वा ऋतौ पुरुषः प्रमीयंते। सौंऽस्यामुष्मिं ह्लोके भंवति। बहुरूपा धाना भंवन्ति। अहोरात्राणांमभिजिंत्यै। पितृभ्योंऽग्निष्वात्तेभ्यों मन्थम्। अर्धमासा वै पितरौंऽग्निष्वात्ताः॥५४॥

अर्धमासानेव प्रीणाति। अभिवान्यांयै दुग्धे भंवति। सा हि पितृदेवत्यं दुहे। यत्पूर्णम्। तन्मंनुष्यांणाम्। उपर्यर्धो देवानांम्। अर्धः पितृणाम्। अर्ध उपमन्थति। अर्धो हि पितृणाम्। एकयोपंमन्थति॥५५॥

एका हि पिंतृणाम्। दक्षिणोपंमन्थति। दक्षिणावृद्धि पिंतृणाम्। अनारभ्योपंमन्थति। तद्धि पितृन्गच्छंति। इमान्दिशं वेदिमुद्धंन्ति। उभये हि देवाश्चं पितरश्चेज्यन्तैं। चतुंः स्रक्तिर्भवति। सर्वा ह्यनु दिशंः पितरंः। अखांता भवति॥५६॥

खाता हि देवानांम्। मुध्यतों'ऽग्निराधीयते। अन्ततो हि देवानांमाधीयतें। वर्षीयानिध्म इध्माद्भवित व्यावृत्त्यै। परिश्रयति। अन्तर्रहितो हि पितृलोको मंनुष्यलोकात्। यत्पर्रुषि दिनम्। तद्देवानाम्। यदंन्तुरा। तन्मंनुष्याणाम्॥५७॥

यथ्समूंलम्। तत्पितृणाम्। समूंलं ब्र्हिभंवति व्यावृत्त्यै। दक्षिणा स्तृंणाति। दक्षिणावृद्धि पितृणाम्। त्रिः पर्येति। तृतीये वा इतो लोके पितर्रः। तानेव प्रींणाति। त्रिः पुनः पर्येति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५८॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। यत्प्रंस्त्रं यज्ञंषा गृह्णीयात्। प्रमायंको यजंमानः स्यात्। यन्न गृह्णीयात्। अनायतनः स्यात्। तूष्णीमेव न्यंस्येत्। न प्रमायंको भवंति। नानायतनः। यत्रीन्यंरिधीन्यंरिद्ध्यात्॥५९॥

मृत्युना यजंमानं परिगृह्णीयात्। यन्न परिद्ध्यात्। रक्षां स्मि यज्ञं हंन्युः। द्वौ पंरिधी परिद्धाति। रक्षंसामपंहत्ये। अथो मृत्योरेव यजंमान्मुथ्सृंजित। यत्रीणि त्रीणि ह्वी इंप्युंदाहरेयुः। त्रयंस्रय एषा साकं प्रमीयेरन्। एकैकमनूचीनां न्युदाहंरिन्तः। एकैक पृवेषां मृत्वश्चः प्रमीयते। कृशिपुं किशप्र्यांय। उपबर्हणम्पबर्हण्यांय। आञ्जनमाञ्चन्यांय। अभ्यञ्जनमभ्यञ्चन्यांय। यथाभागमे-वैनां न्त्रीणाति॥६०॥

निरवंदयते पितृमानिग्निष्वात्ता एक्योपं मन्युत्यखांता भवति मनुष्यांणां पद्यन्ते परिद्ध्यान्मीयते पश्चं च॥———[८]

अग्नयें देवेभ्यः पितृभ्यः सिम्ध्यमानायानुं ब्रूहीत्याह।

उभये हि देवाश्चं पितरंश्चेज्यन्तें। एकामन्वांह। एका हि पितृणाम्। त्रिरन्वांह। त्रिर्हि देवानांम्। आघारावाघांरयति। यज्ञपुरुषोरनंन्तरित्यै। नार्षेयं वृणीते। न होतांरम्॥६१॥

यदार्षेयं वृंणीत। यद्धोतारम्। प्रमायंको यजंमानः स्यात्। प्रमायंको होतां। तस्मान्न वृंणीते। यजंमानस्य होतुंर्गोपीथायं। अपं बर्हिषः प्रयाजान् यंजति। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। आज्यंभागौ यजति॥६२॥

यज्ञस्यैव चक्षुंषी नान्तरंति। प्राचीनावीती सोमं यजित। पितृदेवत्यां हि। एषाऽऽहुंतिः। पश्चकृत्वोऽवं द्यति। पश्च ह्यंता देवताः। द्वे पुरोऽनुवाक्ये। याज्यां देवतां वषद्वारः। ता एव प्रीणाति। सन्तंतमवं द्यति॥६३॥

ऋतूना सन्तंत्यै। प्रैवैभ्यः पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽऽह। प्रणंयति द्वितीयंया। गुमयंति याज्यंया। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। अहं पुवैनान्पूर्वया पुरोऽनुवाक्यंयाऽत्यानंयति। रात्रिये द्वितीयंया। ऐवैनान् याज्यंया गमयति। दक्षिणतों-ऽवदायं। उद्दुःतिं क्रामित् व्यावृत्त्ये॥६४॥

आ स्वधेत्याश्रांवयित। अस्तुं स्वधितिं प्रत्याश्रांवयित। स्वधा नम् इति वषंद्वरोति। स्वधाकारो हि पितृणाम्। सोम्मग्रं यजित। सोमंप्रयाजा हि पितरंः। सोमं पितृमन्तं यजित। सुंवथ्सरो वै सोमंः पितृमान्। सुंवथ्सरमेव

तद्यंजित। पितृन्बंहिषदों यजित॥६५॥

ये वै यज्वांनः। ते पितरों बर्हिषदः। तानेव तद्यंजित। पितृनंग्निष्वात्तान् यंजित। ये वा अयंज्वानो गृहमेधिनः। ते पितरौंऽग्निष्वात्ताः। तानेव तद्यंजिति। अग्निं कंव्यवाहंनं यजित। य एव पितृणाम्गिः। तमेव तद्यंजिति॥६६॥

अथो यथाऽग्निः स्विष्टकृतं यजिति। तादगेव तत्। एतते तत् ये च त्वामन्वितिं तिसृषुं स्रक्तीषु निदंधाति। तस्मादा तृतीयात्पुरुषान्नाम् न गृह्णन्ति। एतावन्तो हीज्यन्तें। अत्रं पितरो यथाभागं मन्दध्वमित्यांह। ह्लीका हि पितरंः। उदंश्चो निष्क्रांमन्ति। एषा वै मनुष्यांणां दिक्। स्वामेव तिदृशमनु निष्क्रांमन्ति॥६७॥

आह्वनीयमुपंतिष्ठन्ते। न्यंवास्मै तद्भंवते। यथ्मत्यांहवनीयैं। अथान्यत्र चरंन्ति। आतिमंतोरुपंतिष्ठन्ते। अग्निमेवोपंद्रष्टारं कृत्वा। पितृन्निरवंदयन्ते। अन्तं वा एते प्राणानां गच्छन्ति। य आतिमंतोरुप तिष्ठंन्ते। सुसन्दर्शं त्वा व्यमित्यांह॥६८॥

प्राणो वै सुंस्-हक्। प्राणमेवाऽऽत्मन्दंधते। योजा न्विंन्द्र ते हरी इत्याह। प्राणमेव पुनरयुक्त। अक्षन्नमींमदन्त हीति गार्हंपत्यमुपंतिष्ठन्ते। अक्षन्नमींमदन्ताथ त्वोपंतिष्ठामह् इति वावैतदांह। अमींमदन्त पितरंः सोम्या इत्यभि प्रपंद्यन्ते। अमींमदन्त पितरोऽथं त्वाऽभि प्रपंद्यामह् इति वावैतदांह। अपः परिषिश्रति। मार्जयंत्येवैनान्ं॥६९॥ अथों तर्पयंत्येव। तृप्यंति प्रजयां पृश्निः। य एवं वेदं। अपं बर्हिषावन्याजौ यंजति। प्रजा वे बर्हिः। प्रजा एव मृत्योरुथ्मृंजति। चतुरंः प्रयाजान् यंजति। द्वावंन्याजौ। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। न पत्यन्वांस्ते। न संयांजयन्ति। यत्पत्यन्वासीत। यथ्संयाजयेयुः। प्रमायुंका स्यात्। तस्मान्नान्वांस्ते। न संयांजयन्ति। पत्निये गोपीथायं॥७०॥

होतांरुमाज्यंभागौ यजति सन्तंतमवंद्यति व्यावृत्त्यै बर्हिषदीं यजति तमेव तद्यंज्ञत्यनु निष्क्रांमन्त्याहैनानृतवो नवं

[8]

प्रतिपूरुषमेकंकपालां निर्वपिति। जाता पुव प्रजा रुद्रान्निरवदयते। एकमितिरिक्तम्। जनिष्यमाणा एव प्रजा रुद्रान्निरवदयते। एकंकपाला भवन्ति। एक्धैव रुद्रं निरवदयते। नाभिघारयति। यदंभिघारयैत्। अन्तर्वचारिणर्श् रुद्रं कुर्यात्। एकोल्मुकेनं यन्ति॥७१॥

ति रुद्रस्यं भाग्धेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्रो वा अपृशुकाया आहुंत्ये नातिष्ठत। असौ ते पृशुरिति निर्दिशेद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तमंस्मै पृशुं निर्दिशति। यदि न द्विष्यात्। आखुस्ते पृशुरिति ब्रूयात्॥७२॥

न ग्राम्यान्पशून् हिनस्तिं। नार्ण्यान्। चृतुष्पथे जुंहोति।

एष वा अंग्रीनां पड्वींशो नामं। अग्निवत्येव जुंहोति। मध्यमेनं पूर्णेनं जुहोति। सुग्ध्येषा। अथो खलुं। अन्तमेनैव होत्व्यम्। अन्तत एव रुद्रं निरवंदयते॥७३॥

पृष ते रुद्र भागः सह स्वस्नाऽम्बिक्येत्यांह। श्ररद्वा अस्याम्बिका स्वसां। तया वा पृष हिंनस्ति। य हिनस्ति। तयैवैन सह शंमयति। भेषजङ्गव इत्यांह। यावंन्त पृव ग्राम्याः पृशवंः। तेभ्यों भेषुजं कंरोति। अवाम्ब रुद्रमंदिमृहीत्यांह। आमेवैतामा शास्ते॥७४॥

त्र्यंम्बकं यजामह् इत्यांह। मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतादिति वावैतदांह। उत्किरन्ति। भगस्य लीफ्सन्ते। मूर्तेकृत्वा-ऽऽसंजन्ति। यथा जनं यतेऽवसं करोति। तादृगेव तत्। एष ते रुद्र भाग इत्यांह निरवंत्त्ये। अप्रंतीक्षमा यंन्ति। अपः परिषिश्चति। रुद्रस्यान्तर्हित्ये। प्र वा पृतेंऽस्माल्लोकाच्यंवन्ते। ये त्र्यंम्बकैश्चरंन्ति। आदित्यं चुरुं पुन्रेत्य निर्वपति। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥७५॥

अर्नुमत्ये वैश्वदेवेन ताः सृष्टाञ्चिवृत्र्युजापंतिः सिव्तोत्तंरस्यान्देवासुराः सौंऽग्निर्यत्पत्नी वैश्वदेवेन ता वंरुणप्रधासैर्ग्नयं देवेभ्यः प्रतिपूरुषं दर्शा॥१०॥

अर्नुमत्ये प्रथम्जो वृथ्सो बंहुरूपा हि पुशवुस्तस्मौत्पृथमात्रं यद्ग्रयेऽनीकवत उद्धारं वा अग्नयें देवेभ्यः प्रतिपूरुषं पर्श्वसप्ततिः॥७५॥

अनुंमत्यै प्रतिं तिष्ठन्ति॥

112 षष्ठमः प्रश्नः

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

पुराद्वाँह्मणान्येव पश्चं ह्वी १ षिं। अथेन्द्रांय शुनासीरांय पुराेडाशं द्वादंशकपालं निर्वपिति। संवथ्सरो वा इन्द्राशुनासीरंः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्थे। वायव्यं पयो भवति। वायुर्वे वृष्ट्यै प्रदापियता। स पुवास्मे वृष्टिं प्रदांपयति। साौर्यं एकंकपालो भवति। सूर्येण वा अमुष्मिं ल्लोके वृष्टिर्धृता। स पुवास्मे वृष्टिं निर्यंच्छिति॥१॥

द्वादशगव सीरं दक्षिणा समृद्धै। देवासुराः संयंता आसन्। ते देवा अग्निमंब्रुवन्। त्वयां वीरेणासुरान्भिभंवामेति। सौंऽब्रवीत्। त्रेधाऽहमात्मानं विकेरिष्य इति। स त्रेधा-ऽऽत्मानं व्यंकुरुत। अग्निं तृतीयम्। रुद्रं तृतीयम्। वर्रणं तृतीयम्॥२॥

सों ऽब्रवीत्। क इदं तुरीयमितिं। अहमितीन्द्रों-ऽब्रवीत्। सन्तु सृंजावहा इतिं। तौ समंसृजेताम्। स इन्द्रंस्तुरीयंमभवत्। यदिन्द्रंस्तुरीयमभंवत्। तदिंन्द्र-तुरीयस्येंन्द्रतुरीयृत्वम्। ततो वै देवा व्यंजयन्त। यदिंन्द्रतुरीयं निरुप्यते विजित्यै॥३॥

वृहिनीं धेनुर्दक्षिणा। यद्घहिनीं। तेनांऽऽग्नेयी। यद्गोः। तेनं रौद्री। यद्धेनुः। तेनैन्द्री। यथ्स्री स्ती दान्ता। तेनं वारुणी

समृद्धै। प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत॥४॥

त १ सृष्ट १ रक्षा ईस्यजिघा १ सन् एताः प्रजापंतिरात्मनों देवता निरंमिमीत। ताभिवें स दिग्भ्यो रक्षा ईसि प्राणुंदत। यत्पंश्चावृत्तीयं जुहोति। दिग्भ्य एव तद्यजंमानो रक्षा ईसि प्रणुंदते। समूंढ १ रक्षः सन्दंग्ध १ रक्ष इत्यांह। रक्षा ईस्येव सन्दंहित। अग्नयं रक्षोघ्ने स्वाहेत्यांह। देवतांभ्य एव विजिग्यानाभ्यों भाग्धेयं करोति। प्रष्टिवाही रथो दिक्षंणा समृंद्धौ॥५॥

इन्द्रों वृत्र १ हत्वा। असुंरान्पराभाव्यं। नमुंचिमासुरं नार्लभत। त श्रच्यांऽगृह्णात्। तौ समेलभेताम्। सौंऽस्माद्भिशुंनतरोऽभवत्। सौंऽब्रवीत्। सुन्धा श् सन्दंधावहै। अथु त्वाऽवं स्रक्ष्यामि। न मा शुष्केण् नार्द्रेणं हनः॥६॥

न दिवा न नक्तमिति। स एतम्पां फेर्नमिसिश्चत्। न वा एष शुष्को नार्द्रो व्युष्टाऽऽसीत्। अनुंदितः सूर्यः। न वा एतद्दिवा न नक्तम्। तस्यैतस्मिं लोके। अपां फेर्नेन् शिर् उदंवर्तयत्। तदेनमन्वंवर्तत। मित्रंद्रुगिति॥७॥

स पुतानंपामार्गानंजनयत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स रक्षाड्स्यपाहत। यदंपामार्गहोमो भवंति। रक्षंसामपंहत्यै। पुकोल्मुकेनं यन्ति। तिद्ध रक्षंसां भागुधेयम्। इमान्दिशं यन्ति। एषा वै रक्षंसां दिक्। स्वायांमेव दिशि रक्षा रेसि हन्ति॥८॥

स्वकृंत इरिणे जुहोति प्रदरे वाँ। एतद्वै रक्षंसामायतनंम्। स्व एवायतंने रक्षा रेसि हन्ति। पूर्णमयेन स्रुवेणं जुहोति। ब्रह्म वै पूर्णः। ब्रह्मंणैव रक्षा रेसि हन्ति। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्व इत्यांह। स्वितृप्रंसूत एव रक्षा रेसि हन्ति। हृत रक्षो-ऽवंधिष्म रक्ष इत्यांह। रक्षंसा स्रुव्ते यद्वस्ते तद्दक्षिणा निरवंत्ये। अप्रतिक्षमायंन्ति। रक्षंसाम्नतर्हित्ये॥९॥

युच्छुति वरुंणं तृतींयं विजिंत्या अस्जत् समृंद्धै हनो मित्रंद्वुगितिं हन्ति स्तृत्यै त्रीणिं च॥lacksquare

धात्रे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपिति। संवथ्सरो वै धाता। संवथ्सरेणैवास्मैं प्रजाः प्रजनयित। अन्वेवास्मा अनुमितिर्मन्यते। राते राका। प्र सिनीवाली जनयित। प्रजास्वेव प्रजातासु कुह्वां वाचं दधाति। मिथुनौ गावौ दक्षिणा समृद्धौ। आग्नावैष्णवमेकांदशकपालं निर्वपित। ऐन्द्रावैष्णवमेकांदशकपालम्॥१०॥

वैष्ण्वं त्रिंकपालम्। वीर्यं वा अग्निः। वीर्यंमिन्द्रंः। वीर्यं विष्णुंः। प्रजा एव प्रजाता वीर्ये प्रतिष्ठापयति। तस्मात्प्रजा वीर्यावतीः। वाम्न ऋष्मो वही दक्षिणा। यद्वही। तेनाँऽऽग्नेयः। यदंष्मः॥११॥

तेनैन्द्रः। यद्वांमुनः। तेनं वैष्णुवः समृद्धौ। अग्नीषोमीयमेकां-

दशकपालुं निर्वपति। इन्द्रासोमीयमेकांदशकपालम्। सौम्यं चरुम्। सोमो वै रेतोधाः। अग्निः प्रजानां प्रजनयिता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति॥१२॥

अग्निः प्रजां प्रजनयति। वृद्धामिन्द्रः प्रयंच्छति। ब्रुदेक्षिणा समृद्धै। सोमापौष्णं च्रुं निर्वपति। ऐन्द्रापौष्णं च्रुम्। सोमो वै रेतोधाः। पूषा पंशूनां प्रजनियता। वृद्धानामिन्द्रः प्रदापयिता। सोमं एवास्मै रेतो दर्धाति। पूषा पश्नप्रजनयति॥१३॥

वृद्धानिन्द्रः प्रयंच्छति। पौष्णश्चरुर्भविति। इयं वै पूषा। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। श्यामो दक्षिणा समृद्धौ। बहु वै पुरुषो मेध्यमुपंगच्छति। वैश्वान्रं द्वादंशकपालं निर्वपति। संवथ्सरो वा अग्निर्वैश्वान्रः। संवथ्सरेणैवैन ई स्वदयति। हिरंण्यं दक्षिणा॥१४॥

प्वित्रं वै हिरंण्यम्। पुनात्येवेनम्। बहु वै राजन्योऽनृतं करोति। उपं जाम्ये हरंते। जिनातिं ब्राह्मणम्। वदत्यनृतम्। अनृते खलु वै क्रियमांणे वरुणो गृह्णाति। वारुणं यंवमयं चरुं निर्वपति। वरुणपाशादेवेनं मुश्रति। अश्वो दक्षिणा। वारुणो हि देवत्याऽश्वः समृद्धौ॥१५॥

पुन्त्रावेष्णुवमेकांदशकपालं यहंपुभो दर्थाति पूषा प्रयूच्यजनयति हिरंण्यं दक्षिणा दक्षिणेकं च॥———[२] रुतिनामेतानि हवी १षि भवन्ति। एते वै राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। पृतेऽपादातारंः। य पुव राष्ट्रस्यं प्रदातारंः। येऽपादातारंः। त पुवास्मै राष्ट्रं प्रयंच्छन्ति। राष्ट्रमेव भवति। यथ्संमाहृत्यं निर्वपेत्। अरंबिनः स्युः। यथायथं निर्वपति रिवृत्वायं॥१६॥

यथ्सद्यो निर्वपेत्। यावंतीमकेन ह्विषाऽऽशिषंमव रुन्धे। तावंतीमवंरुन्धीत। अन्वहन्निर्वंपति। भूयंसीमेवाशिषमवं रुन्धे। भूयंसो यज्ञऋतूनुपैति। बार्हस्पत्यं च्रं निर्वंपति ब्रह्मणो गृहे। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रमन्वारंम्भयति। शितिपृष्ठो दक्षिणा समृद्धौ॥१७॥

ऐन्द्रमेकांदशकपाल राज्न्यंस्य गृहे। इन्द्रियमेवावं रुन्थे। ऋष्मो दक्षिणा समृद्धे। आदित्यं च्रुं महिष्ये गृहे। इयं वा अदितिः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। धेनुर्दक्षिणा समृद्धे। भगांय च्रुं वावातांये गृहे। भगंमेवास्मिन्दधाति। विचित्तगर्भा पष्ठौही दक्षिणा समृद्धे॥१८॥

नैर्ऋतं चुरुं परिवृत्त्यै गृहे कृष्णानां व्रीहीणां नखिनिर्भित्रम्। पाप्मानमेव निर्ऋतिं निरवंदयते। कृष्णा कृटा दक्षिणा समृद्धौ। आग्नेयमृष्टाकंपाल सेनान्यो गृहे। सेनामेवास्य सङ्श्यंति। हिर्ण्यं दक्षिणा समृद्धौ। वारुणं दर्शकपाल स्तूतस्यं गृहे। वरुणसवमेवावं रुन्थे। महानिरष्टो दक्षिणा समृद्धौ। मारुत स्तरकंपालं ग्रामुण्यो गृहे॥१९॥

अन्नं वै मुरुतंः। अन्नमेवावं रुन्धे। पृश्ञिदक्षिणा समृद्धै।

सावित्रं द्वादंशकपालं क्षत्तुर्गृहे प्रसूँत्यै। उपध्वस्तो दक्षिणा समृद्धे। आश्विनं द्विकपालः संङ्ग्रहीतुर्गृहे। अश्विनौ वै देवानां भिषजौ। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं करोति। स्वात्यौ दक्षिणा समृद्धे। पौष्णं चरुं भांगदुघस्यं गृहे॥२०॥

अत्रं वै पूषा। अत्रंमेवावं रुन्धे। श्यामो दक्षिणा समृद्धै। रौद्रं गांवीधुकं चुरुमंक्षावापस्यं गृहे। अन्तृत एव रुद्रं निरवंदयते। शुबल उद्वारो दक्षिणा समृद्धै। द्वादंशैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्में राष्ट्रमवं रुन्धे। राष्ट्रमेव भवति॥२१॥

यन्न प्रंति निर्वपेत्। रित्ननं आशिषोऽवंरुन्धीरन्। प्रितिनिर्वपिति। इन्द्रांय सुत्राम्णं पुरोडाशमेकांदशकपालम्। इन्द्रांया होमुचें। आशिषं एवावं रुन्धे। अयं नो राजां वृत्रहा राजां भूत्वा वृत्रं वंध्यादित्यांह। आमेवैतामा शास्ते। मैत्राबार्हस्पत्यं भविति। श्वेतायैं श्वेतवंथ्सायै दुग्धे॥२२॥

बार्ह्स्पत्ये मैत्रमपिं दधाति। ब्रह्मं चैवास्मैं क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रं प्रतिष्ठापयति। बार्ह्स्पत्येन् पूर्वेण प्रचंरति। मुख्त एवास्मै ब्रह्म सङ्श्यंति। अथो ब्रह्मंत्रेव क्षत्रम्न्वारंम्भयति। स्वयं कृता वेदिर्भवति। स्वयं दिनं बर्हिः। स्वयं कृत इध्मः। अनंभिजितस्याभिजित्यै। तस्माद्राज्ञामरंण्यम्भिजितम्। सैव श्वेता श्वेतवंथ्सा दक्षिणा

समृंद्धौ॥२३॥

र्तिबृत्वाय समृद्धौ पष्ठौही दक्षिणा समृद्धौ ग्रामुण्यों गृहे भांगदुघस्यं गृहे भविति दुग्धेऽभिजित्यै द्वे चं॥===[3]

देवसुवामेतानि ह्वी १ षि भवन्ति। पृतावंन्तो वै देवाना १ स्वाः। त पृवास्मै स्वान्प्रयंच्छन्ति। त एंन १ स्वन्ते। अग्निरेवैनं गृहपंतीना १ स्वते। सोमो वन्स्पतीनाम्। रुद्रः पंशूनाम्। बृह्स्पतिर्वाचाम्। इन्द्रौ ज्येष्ठानौम्। मित्रः सत्यानौम्॥ २४॥

वर्रणो धर्मपतीनाम्। एतदेव सर्वं भवति। स्विता त्वा प्रस्वानारं सुवतामिति हस्तं गृह्णाति प्रसूत्यै। ये देवा देवः सुवः स्थेत्याह। यथायजुरेवैतत्। महते क्षत्रायं महत आधिपत्याय महते जानराज्यायेत्याह। आमेवैतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणानाः राजेत्यांह। तस्माथ्सोमराजानो ब्राह्मणाः। प्रति त्यन्नामं राज्यमंधायीत्यांह॥२५॥

राज्यमेवास्मिन्प्रतिद्धाति। स्वां तनुवं वर्रणो अशिश्रेदित्यांह। वरुणस्वमेवावं रुन्धे। शुचैर्मित्रस्य व्रत्यां अभूमेत्यांह। शुचिमेवैनं व्रत्यं करोति। अमन्मिह महुत ऋतस्य नामेत्यांह। मनुत एवैनम्। सर्वे व्राता वर्रणस्याभूवन्नित्यांह। सर्वव्रातमेवैनं करोति। वि मित्र एवैररांतिमतारीदित्यांह॥२६॥

अरांतिमैवैनं तारयति। असूंषुदन्त युज्ञियां ऋतेनेत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। व्यं त्रितो जरिमाणं न आन्डित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। द्वाभ्यां विमृष्टे। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्ये। अग्नीषोमीयंस्य चैकांदशकपालस्य देवसुवां चं ह्विषांमग्रयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। विष्णुऋमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्लोकान्भि-जंयति॥२७॥

स्त्यानांमधायीत्यांहातारीदित्यांह क्रमत् एकं च॥

[٤]

अर्थेतः स्थेतिं जुहोति। आहुंत्यैवैनां निष्क्रीयं गृह्णाति। अथो ह्विष्कृंतानामेवाभिघृंतानां गृह्णाति। वहुंन्तीनां गृह्णाति। एता वा अपा॰ राष्ट्रम्। राष्ट्रमेवास्में गृह्णाति। अथो श्रियंमेवैनंमभिवंहन्ति। अपां पतिंर्सीत्यांह। मिथुनमेवाकंः। वृषांऽस्यूर्मिरित्यांह॥२८॥

ऊर्मिमन्तंमेवैनं करोति। वृष्सेनोंऽसीत्यांह। सेनांमेवास्य सङ्श्यंति। व्रज्ञक्षितः स्थेत्यांह। एता वा अपां विशंः। विशंमेवास्मै पर्यूहति। मुरुतामोजः स्थेत्यांह। अन्नं वै मरुतंः। अन्नमेवावं रुन्थे। सूर्यवर्चसः स्थेत्यांह॥२९॥

राष्ट्रमेव वंर्चस्व्यंकः। सूर्यंत्वचसः स्थेत्यांह। सृत्यं वा एतत्। यद्वर्षति। अनृतं यदातपंति वर्षति। सृत्यानृते एवावं रुन्थे। नैन र्स्र सत्यानृते उंदिते हिर्इस्तः। य एवं वेदं। मान्दाः

स्थेत्याह। राष्ट्रमेव ब्रह्मवर्चस्यंकः॥३०॥

वाशाः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। शक्वंरीः स्थेत्यांह। पृशवो वै शक्वंरीः। पृशूनेवावं रुन्धे। विश्वभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेव पंयुस्वयंकः। जनभृतः स्थेत्यांह। राष्ट्रमेवन्द्रियाव्यंकः। अग्नेस्तेजस्याः स्थेत्यांह॥३१॥

राष्ट्रमेव तेंज्स्व्यंकः। अपामोषंधीनाः रसः स्थेत्यांह।
राष्ट्रमेव मंध्व्यंमकः। सार्स्वतं ग्रहं गृह्णाति। एषा
वा अपां पृष्ठम्। यथ्सरंस्वती। पृष्ठमेवैनः समानानां
करोति। षोड्शभिंगृह्णाति। षोडंशकलो वै पुरुषः।
यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। षोड्शभिंर्जुहोतिं
षोड्शभिंगृह्णाति। द्वात्रिःश्राथ्सम्पंद्यन्ते। द्वात्रिःशदक्षराऽनुष्टुक्। वागंनुष्टुफ्सर्वाणि छन्दाः सि। वाचैवेनः
सर्वेभिश्छन्दोंभिर्भिषिंश्रति॥३२॥

 $_{3}$ र्जिमिरित्यांह् स्र्यंवर्चस्ः स्थेत्यांह् ब्रह्मवर्चस्यंकस्तेजुस्याः स्थेत्यांहे्व पुरुष्ः पद चं॥ $_{1}$

देवीरापः सं मधुंमतीर्मधुंमतीभिः सृज्यध्वमित्यांह। ब्रह्मणैवैनाः स॰सृंजति। अनाधृष्टाः सीद्तेत्यांह। ब्रह्मणैवैनाः सादयति। अन्तरा होतुंश्च धिष्णियं ब्राह्मणाच्छु॰सिनश्च सादयति। आग्नेयो वै होतां। ऐन्द्रो ब्राह्मणाच्छु॰सी। तेजंसा चैवेन्द्रियेणं चोभ्यतां राष्ट्रं परिंगृह्णाति। हिरंण्येनोत्पुंनाति। आहुंत्ये हि प्वित्रांभ्यामृत्पुनन्ति व्यावृंत्त्ये॥३३॥

श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति। अनिभृष्टम्सीत्याह। अनिभृष्ट्र् ह्येतत्। वाचो बन्धुरित्याह। वाचो ह्येष बन्धुः। तुपोजा इत्याह। तुपोजा ह्येतत्। सोमस्य दात्रम्सीत्याह॥३४॥

सोमंस्य ह्यंतद्दात्रम्। शुक्रा वंः शुक्रेणोत्पुंनामीत्यांह। शुक्रा ह्यापंः। शुक्र हरंण्यम्। चन्द्राश्चन्द्रेणेत्यांह। चन्द्रा ह्यापंः। चन्द्र हरंण्यम्। अमृतां अमृत्नेनेत्यांह। अमृता ह्यापंः। अमृत्र हिरंण्यम्॥३५॥

स्वाहां राज्सूयायेत्यांह। राज्सूयांय ह्यंना उत्पुनाति।
स्थमादौँ द्युम्निनीरूर्ज एता इति वारुण्यर्चा गृह्णाति।
वरुणस्वमेवावं रुन्थे। एकंया गृह्णाति। एक्थेव यजंमाने
वीर्यं दथाति। क्षुत्रस्योल्बंमिस क्षुत्रस्य योनिर्सीति ताप्यं
चोष्णीषं च प्रयंच्छति सयोनित्वायं। एकंशतेन दर्भपुञ्जीलैः
पंवयति। शृतायुर्वे पुरुषः शृतवीर्यः। आत्मैकंशृतः॥३६॥

यावांनेव पुरुषः। तस्मिन्वीर्यं दधाति। दध्यांशयति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। उदुम्बरमाशयति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। शष्पांण्याशयति। सुरांबिलमेवेनं करोति। आविदं एता भंवन्ति। आविदंमेवेनं गमयन्ति॥३७॥

अग्निरेवैनं गार्हंपत्येनावति। इन्द्रं इन्द्रियेणं। पूषा पृश्निः। मित्रावरुंणौ प्राणापानाभ्यांम्। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स दिवंमिलिखत्। सौंऽर्यम्णः पन्थां अभवत्। स आविंत्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति द्यावांपृथिवी उपांधावत्। स आभ्यामेव प्रसूत इन्द्रों वृत्राय वज्रं प्राहंरत्। आविंत्रे द्यावांपृथिवी धृतव्रंते इति यदाहं॥३८॥

आभ्यामेव प्रसूतो यर्जमानो वज्रं भ्रातृंव्याय प्रहंरति। आविन्ना देव्यदितिर्विश्वरूपीत्याह। इयं वे देव्यदितिर्विश्वरूपी। अस्यामेव प्रति तिष्ठति। आविन्नोऽयम्सावांमुष्यायणौऽस्यां विश्यंस्मिन्नाष्ट्र इत्यांह। विशेवेन रे राष्ट्रेण् समर्धयति। महुते क्षुत्रायं महुत आधिपत्याय महुते जानराज्यायेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। एष वो भरता राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना राजेत्यांह। तस्माथ्सोमराजानो ब्राह्मणाः॥३९॥

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति धनुः प्रयंच्छति विजित्यै। श्रृत्रुबाधनाः स्थेतीषून्। श्रृत्रुनेवास्यं बाधन्ते। पात माँ प्रत्यश्चं पात मां तिर्यश्चंमन्वश्चं मा पातेत्यांह। तिस्रो व शंर्व्याः। प्रतीची तिरश्च्यनूचीं। ताभ्यं पृवैनं पान्ति। दिग्भ्यो मां पातेत्यांह। दिग्भ्य पृवैनं पान्ति। विश्वाभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह। अपंरिमितादेवेनं पान्ति। हिरंण्यवर्णावुषसां विशेक इति त्रिष्टुभां बाहू उद्गृह्णति। इन्द्रियं व वीर्यं त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव वीर्यमुपरिष्टादात्मन्धंत्ते॥४०॥

व्यावृत्त्ये दात्रमुसीत्यांहामृतुष् हिरंण्यमेकशृतो गंमयुन्त्याहं ब्राह्मणा नाष्ट्राभ्यः पातेत्यांह चत्वारिं च॥———[६]

दिशो व्यास्थांपयति। दिशाम्भिजित्त्यै। यदंनु प्रक्रामेंत्। अभि दिशों जयेत्। उत्तु माँद्येत्। मन्साऽनु प्रक्रांमित। अभि दिशों जयित। नोन्माँद्यति। स्मिध्मा तिष्ठेत्यांह। तेजं एवावं रुन्थे॥४१॥

उग्रामा तिष्ठेत्यांह। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। विराजमातिष्ठेत्यांह। अन्नाद्यंमेवावं रुन्धे। उदीचीमा तिष्ठेत्यांह। पृश्नेवावं रुन्धे। ऊर्ध्वामातिष्ठेत्यांह। सुवर्गमेव लोकम्भिजंयति। अनून्निंहीते। सुवर्गस्यं लोकस्य समण्ट्यै॥४२॥

मारुत एष भेवति। अत्रं वै मुरुतः। अन्नमेवावं रुन्धे। एकंवि शतिकपालो भवति प्रतिष्ठित्यै। योऽरण्येऽनुवाक्यो गणः। तं मध्यत उपंदधाति। ग्राम्यैरेव पृशुभिरार्ण्यान्पृशून्परि गृह्णाति। तस्माँद्राम्यैः पृशुभिरार्ण्याः पृशवः परिगृहीताः। पृथिर्वैन्यः। अभ्यषिच्यत॥४३॥

स राष्ट्रं नाभेवत्। स एतानि पार्थान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स राष्ट्रमंभवत्। यत्पार्थानि जुहोतिं। राष्ट्रमेव भंवति। बार्ह्स्पृत्यं पूर्वेषामुत्तमं भंवति। ऐन्द्रमुत्तंरेषां प्रथमम्। ब्रह्मं चैवास्मै क्षत्रं चं समीचीं दधाति। अथो ब्रह्मंन्नेव क्षत्रं प्रति-ष्ठापयति॥४४॥

षद्गुरस्तांदभिषेकस्यं जुहोति। षडुपरिष्टात्। द्वादंश्

सम्पंद्यन्ते। द्वादंश् मासाः संवध्सरः। संवध्सरः खलु वै देवानां पूः। देवानांमेव पुरं मध्यतो व्यवंसपिति। तस्य न कुतंश्चनोपांव्याधो भविति। भूतानामवेष्टीर्जुहोति। अत्रात्र वै मृत्युर्जायते। यत्रयत्रैव मृत्युर्जायते। ततं पृवैन्मवंयजते। तस्मांद्राज्सूयेनेजानो नाभिचंरित्वै। प्रत्यगेनमभिचारः स्तृंणुते॥४५॥

रुन्धे समंष्ट्या असिच्यत स्थापयित जायेते पश्चं च॥lacktriangle

सोमंस्य त्विषिरसि तवेव मे त्विषिर्भयादितिं शार्दूल-चर्मोपंस्तृणाति। यैव सोमे त्विषिः। या शाँदूले। तामेवावं रुन्थे। मृत्योर्वा एष वर्णः। यच्छाँदूलः। अमृत्र हिरंण्यम्। अमृतंमिस मृत्योर्मा पाहीति हिरंण्यमुपाँस्यति। अमृतंमेव मृत्योर्न्तर्थत्ते। शृतमानं भवति॥४६॥

शृतायुः पुर्रुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दिद्योन्मां पाहीत्युपरिष्टादिष्ये निद्धाति। उभ्यतं एवास्मै शर्म दधाति। अवेष्टा दन्दश्का इतिं क्रीब॰ सीसेन विध्यति। दन्दश्कांनेवावयजते। तस्मौत्क्रीबं देन्दश्का द॰शुंकाः। निर्रस्तं नमुंचेः शिर् इतिं लोहितायसं निर्रस्यति। पाप्मानमेव नमुंचिं निरवंदयते। प्राणा आत्मनः पूर्वेऽभिषिच्या इत्यांहुः॥४७॥

सोमो राजा वर्रणः। देवा धर्मसुवश्च ये। ते ते वाचर्

सुवन्तां ते ते प्राण स्रंवन्तामित्यांह। प्राणानेवाऽऽत्मनः पूर्वानिभिषिश्चिति। यद्भूयात्। अग्नेस्त्वा तेर्जसाऽभिषिश्चामीति। तेज्रस्त्येव स्यात्। दुश्चर्मा तु भवेत्। सोमंस्य त्वा द्युम्नेनाभिषिश्चामीत्यांह। सौम्यो वै देवतंया पुरुषः॥४८॥

स्वयैवैनं देवतंयाऽभिषिश्चिति। अग्नेस्तेज्सेत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। सूर्यस्य वर्चसेत्यांह। वर्च एवास्मिन्दधाति। इन्द्रंस्येन्द्रियेणेत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। मित्रावर्रुण-योवीर्येणेत्यांह। वीर्यमेवास्मिन्दधाति। मुरुतामोज्सेत्यांह॥४९॥

ओर्ज पुवास्मिन्दधाति। क्षत्राणां क्षत्रपंतिर्सीत्यांह। क्षत्राणांमेवैनं क्षत्रपंतिं करोति। अति दिवस्पाहीत्यांह। अत्यन्यान्पाहीति वावैतदांह। समावंवृत्रन्नध्रागुदीचीरित्यांह। राष्ट्रमेवास्मिन्ध्रुवमंकः। उच्छेषंणेन जुहोति। उच्छेषंणभागो व रुद्रः। भागधेयेंनैव रुद्रं निरवंदयते॥५०॥

उदं ब्रुरेत्याग्नीं द्धे जुहोति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायां मेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। रुद्र यत्ते ऋयी परं नामेत्यां ह। यद्वा अस्य ऋयी परं नामे। तेन वा एष हिनस्ति। यश हिनस्ति। तेनैवैन सह शंमयति। तस्मैं हुतमंसि यमेष्टं मुसीत्यां ह। यमादेवास्यं मृत्युमवंयजते॥५१॥

प्रजांपते न त्वदेतान्यन्य इति तस्यैं गृहे जुंहुयात्। यां कामयेत राष्ट्रमंस्यै प्रजा स्यादितिं। राष्ट्रमेवास्यै प्रजा भंवति। पूर्णमयंनाध्वर्युर्भिषिश्चिति। ब्रह्मवर्चसम्वास्मिन्त्विषं दधाति। औदुंम्बरेण राज्ञन्यः। ऊर्जम्वास्मिन्त्रन्नाद्यं दधाति। आश्वंत्थेन् वैश्यः। विश्नम्वास्मिन्पृष्टिं दधाति। नैयंग्रोधेन् जन्यः। मित्राण्येवास्मै कल्पयति। अथो प्रतिष्ठित्यै॥५२॥

भुवत्याहुः पुरुषु ओजुसेत्यांह निरवंदयते यजते जन्यो हे चं॥—————[८]

इन्द्रंस्य वज्रोऽसि वार्त्रघ्न इति रथंमुपावंहरति विजित्यै। मित्रावरुणयोस्त्वा प्रशास्त्रोः प्रशिषां युन्ज्मीत्यांह। ब्रह्मंणैवैनं देवतांभ्यां युनक्ति। प्रष्टिवाहिनं युनक्ति। प्रष्टिवाही वे देवर्थः। देवर्थमेवास्में युनक्ति। त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। द्वौ संव्येष्ठसारथी। षट्थ्सम्पंद्यन्ते॥५३॥

षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं युनक्ति। विष्णुक्रमान्क्रंमते। विष्णुरेव भूत्वेमाँ ह्योकान्भिजंयति। यः क्षित्रियः प्रतिहितः। सौंऽन्वारंभते। राष्ट्रमेव भंवति। त्रिष्टुभाऽन्वारंभते। इन्द्रियं वै त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति॥५४॥

मुरुतां प्रस्वे जेषिमित्यांह। मुरुद्धिरेव प्रसूत उन्नयित। आप्तं मन् इत्यांह। यदेव मन्सैफ्सींत्। तदांपत्। राज्न्यं जिनाति। अनांकान्त एवाक्रमते। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यो राज्न्यं जिनाति। सम्हिमेन्द्रियेणं वीर्येणत्यांह॥५५॥

ड्नियमेव वीर्यमात्मन्धेत्ते। पृशूनां मृन्युरंसि तर्वेव मे मृन्युर्भूयादिति वाराही उपानहावुपं मुश्रते। पृशूनां वा एष मृन्युः। यद्वंराहः। तेनैव पंशूनां मृन्युमात्मन्धेत्ते। अभि वा इय स्पृषवाणं कामयते। तस्यैश्वरेन्द्रियं वीर्यमादातोः। वाराही उपानहावुपंमुश्रते। अस्या पृवान्तर्धत्ते। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यानौत्यै॥५६॥

नमों मात्रे पृंथिव्या इत्याहाहि ईसायै। इयंद्स्यायुंर्स्यायुंर्में धेहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। ऊर्गस्यूर्जं मे धेहीत्यांह। ऊर्जम्वाऽऽत्मन्धंत्ते। युङ्कंसि वर्चोऽसि वर्चो मिये धेहीत्यांह। वर्चे एवाऽऽत्मन्धंत्ते। एकधा ब्रह्मण उपंहरति। एकधेव यर्जमान आयुरूर्जं वर्चो दधाति। रथविमोचनीयां जुहोति प्रतिष्ठित्ये॥५७॥

त्रयोऽश्वां भवन्ति। रथंश्चतुर्थः। तस्मां चतुर्जुहोति। यदुमौ सहावृतिष्ठंताम्। समानं लोकिमंयाताम्। सह संङ्गृहीत्रा रथवाहंने रथमादंधाति। सुवर्गादेवैनं लोकादन्तदंधाति। हु सः श्रुंचिषदित्यादंधाति। ब्रह्मणैवैनंमुपावृहरंति। ब्रह्मणा-ऽऽदंधाति। अतिंच्छन्द्साऽऽदंधाति। अतिंच्छन्दा वै सर्वाणि छन्दा स्मि। सर्वेभिरेवैनं छन्दोंभिरादंधाति। वर्ष्म् वा पृषा छन्दंसाम्। यदतिंच्छन्दाः। यदतिंच्छन्दसा दधांति।

वर्ष्मैवैन र्रं समानानां करोति॥५८॥

पुद्यन्ते दुधाति वीर्येणेत्याहानाँत्यै प्रतिष्ठित्यै ब्रह्मणाऽऽदंधाति सप्त चं॥—————[९]

मित्रोंऽसि वर्रणोऽसीत्यांह। मैत्रं वा अहंः। वारुणी रात्रिः। अहोरात्राभ्यामेवैनंमुपावंहरति। मित्रोंऽसि वर्रणोऽसीत्यांह। मैत्रो वै दक्षिणः। वारुणः सृव्यः। वैश्वदेव्यांमिक्षां। स्वमेवैनौं भागधेयंमुपावंहरति। समहं विश्वैदिवेरित्यांह॥५९॥

वैश्वदेव्यों वे प्रजाः। ता एवाद्याः कुरुते। क्ष्रत्रस्य नाभिरिस क्षत्रस्य योनिर्सीत्यंधीवासमास्तृंणाति सयोनित्वायं। स्योनामा सींद सुषदामा सीदित्यांह। यथायजुरेवैतत्। मा त्वां हिश्सीन्मा मां हिश्सीदित्याहाहिश्सायै। निषंसाद धृतव्रंतो वरुणः पुस्त्यांस्वा साम्रांज्याय सुऋतुरित्यांह। साम्रांज्यमेवैनश् सुऋतुं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्वश् रांजन्ब्रह्माऽसिं सविताऽसिं सृत्यसंव इत्यांह। सवितारंमेवेनश् सृत्यसंवं करोति॥६०॥

ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽसीन्द्रोंऽसि सृत्यौजा इत्यांह। इन्द्रंमेवेन १ सृत्यौजंसं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्माऽिसं मित्रोंऽिस सुशेव इत्यांह। मित्रमेवेन १ सुशेवं करोति। ब्रह्मा(३)न्त्व १ रांजन्ब्रह्मािस वर्रुणोऽिस सृत्यधुर्मेत्यांह। वर्रुणमेवेन १ सृत्यधर्माणं करोति। सृविताऽिसं सृत्यस्व इत्यांह। गायत्रीमेवेतेनांिम व्याहंरित। इन्द्रोंऽिस सृत्यौजा इत्यांह। त्रिष्टुभंमेवेतेनांिम

व्याहंरति॥६१॥

मित्रोंऽसि सुशेव इत्यांह। जगंतीमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यमेता देवताः। सत्यमेतानि छन्दारंसि। सत्यमेवावं रुन्धे। वर्रुणोऽसि सत्यधर्मेत्यांह। अनुष्टुभंमेवैतेनांभि व्याहंरति। सत्यानृते वा अनुष्टुप्। सत्यानृते वर्रुणः। सत्यानृते एवावं रुन्धे॥६२॥

नैन र्रं सत्यानृते उंदिते हि र्रंस्तः। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वज्रोंऽसि वार्त्रघ्न इति स्फ्यं प्रयंच्छति। वज्रो वै स्फ्यः। वज्रेणैवास्मां अवरप्र र्रन्थयित। एव रहि तच्छ्रेयः। यदंस्मा एते रध्येयः। दिशोऽभ्यंय र राजांऽभूदिति पश्चाक्षान्प्रयंच्छति। एते वै सर्वेऽयाः। अपंराजायिनमेवैनं करोति॥६३॥

ओदनमुद्भुंबते। प्रमेष्ठी वा एषः। यदोंदनः। प्रमामेवैन्ड्ं श्रियंं गमयित। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)-नित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। शौनः शेपमाख्यांपयते। वरुणपाशादेवेनं मुश्रित। प्रः शतं भंवति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। मारुतस्य चैकंविश्शितकपालस्य वैश्वदेव्ये चामिक्षांया अग्नयें स्विष्टकृतें समवंद्यति। देवतांभिरेवैनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। अपान्नश्रे स्वाहोर्जो नश्रे स्वाहाऽग्नयें गृहपंतये स्वाहेतिं तिस्र आहंतीर्जुहोति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वेव लोकेषु प्रतिं तिष्ठित॥६४॥

सप्तमः प्रश्नः 131

देवैरित्यांह सत्यसंवं करोति त्रिष्टुर्भमेवैतेनांभि व्याहरित सत्यानृते एवावं रुन्थे करोति शतेन्द्रियः पट चं॥■[१०]

एतद्वाँह्मणानि धात्रे रुनिनाँन्देवसुवामुर्थेतो देवीर्दिशः सोमुस्येन्द्रंस्य मित्रो दर्शा॥१०॥

पृतद्वाँह्मणानि वैष्ण्वं त्रिंकपालमन्नं वै पूषा वाशाः स्थेत्यांहु दिशो व्यास्थांपयृत्युदंङ्गुरेत्यु ब्रह्मा(३)न्त्व॰ रांजुञ्चतुंष्यष्टिः॥६४॥ पृतद्वाँह्मणानि प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

वर्रणस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। तथ्स्र सृद्धिरन् समंसर्पत्। तथ्स्र सृपारं सरसृत्वम्। अग्निनां देवेन प्रथमेऽह्न्ननु प्रायुङ्कः। सरस्वत्या वाचा द्वितीर्यं। स्वित्रा प्रंस्वेनं तृतीर्यं। पूष्णा पृश्भिश्चतुर्थे। बृह्स्पतिना ब्रह्मणा पश्चमे। इन्द्रेण देवेनं षृष्ठे। वर्रुणेन् स्वयां देवत्या सप्तमे॥१॥

सोमेन राज्ञां ऽष्ट्रमे। त्वष्ट्रां रूपेणं नव्मे। विष्णुंना यज्ञेनां ऽऽप्रोत्। यथ्स् १ सृपो भवंन्ति। इन्द्रियमेव तद्वीर्यं यज्ञंमान आप्रोति। पूर्वापूर्वा वेदिर्भवति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावं रुद्धे। पुरस्तां दुप्सदा १ सौम्येन प्रचंरति। सोमो वै रेतोधाः। रेतं एव तद्दंधाति। अन्तरा त्वाष्ट्रेणं। रेतं एव हितं त्वष्टां रूपाणि विकंरोति। उपरिष्टाद्वैष्ण्वेनं। यज्ञो वै विष्णुंः। यज्ञ एवान्ततः प्रतिं तिष्ठति॥२॥

स्प्रमे दंधाति पश्चं च॥

[8]

जािम वा एतत्कुंर्वन्ति। यथ्सद्यो दीक्षयंन्ति सद्यः सोमं क्रीणन्ति। पुण्डिरिस्रजां प्रयंच्छत्यजािमत्वाय। अङ्गिरसः सुवर्गं लोकं यन्तिः। अपसु दीक्षातपसी प्रावेशयन्। तत्पुण्डरीकमभवत्। यत्पुण्डिरिस्रजां प्रयच्छंति। साक्षादेव दींक्षात्पसी अवं रुन्धे। दुशभिवंथ्सत्रैः सोमं क्रीणाति। दशांक्षरा विराट्॥३॥

अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। मुष्करा भविन्ति सेन्द्रत्वायं। दृश्पेयों भवित। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। शृतं ब्राँह्मणाः पिंबन्ति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रितिं तिष्ठति। सप्तदशः स्तोत्रं भविति। सप्तदशः प्रजापंतिः॥४॥

प्रजापंतेरास्यै। प्राकाशावंध्वर्यवे ददाति। प्रकाशमेवेनं गमयति। स्रजंमुद्गात्रे। व्येवास्मै वासयति। रुकार होत्रै। आदित्यमेवास्मा उन्नयति। अश्वं प्रस्तोतृप्रतिहुर्तृभ्यौम्। प्राजापत्यो वा अश्वं। प्रजापंतेरास्यै॥५॥

द्वादंश पष्टौहीर्ब्रह्मणें। आयुरेवावं रुन्थे। वृशां मैंत्रावरुणायं। राष्ट्रमेव वृश्यंकः। ऋष्मं ब्राह्मणाच्छुर्सिनें। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। वासंसी नेष्टापोतृभ्यांम्। प्वित्रें प्वास्यैते। स्थूरिं यवाचितमंच्छावाकायं। अन्त्त एव वर्रणमवं यजते॥६॥

अनुङ्गाहं मुग्नीधं। विहुर्वा अनुङ्गान्। विह्नेरुग्नीत्। विह्नेनेव विह्ने यज्ञस्यावं रुन्धे। इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं त्रेधेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। भृगुस्तृतीयमभवत्। श्रायन्तीयं तृतीयम्। सरंस्वती तृतीयम्। भार्गवो होतां भवति। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भवति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। सार्स्वतीर्पो गृह्णाति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्यावंरुद्धै। श्रायन्तीयं ब्रह्मसामं भंवति। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं श्रयति। वार्वन्तीयंमग्निष्टोमसामम्। इन्द्रियमेवास्मिन्वीर्यं वारयति॥७॥

र्ड्श्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। दिशामवेष्टयो भवन्ति। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय। पश्चं देवतां यजित। पश्च दिशः। दिश्वेव प्रतिं तिष्ठति। हिवषोहिवष इष्ट्वा बांर्हस्पृत्यम्भिघांरयित। यज्ञमानदेवत्यों वै बृह्स्पितिः। यज्ञमानमेव तेजंसा समर्थयित॥८॥

आदित्यां मृल्हां गुर्भिणीमा लंभते। मारुतीं पृश्जिं पष्ठौहीम्। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आदित्यया पूर्वया प्रचंरति। मारुत्योत्तंरया। राष्ट्र एव विश्वमनुंबध्नाति। उचैरादित्याया आश्रावयति। उपार्श मारुत्यै। तस्माँद्राष्ट्रं विशमतिंवदति। गर्भिण्यांदित्या भवति॥९॥

इन्द्रियं वै गर्भः। राष्ट्रमेवेन्द्रियाव्यंकः। अगर्भा मांरुती। विश्वे मुरुतः। विश्वमेव निरिन्द्रियामकः। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा अश्विनौः पूषन्वाचः सत्य संन्निधायं। अनृतेनासुरान्भ्यंभवन्। तैंऽश्विभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादंशकपालं निर्वपन्। ततो वै ते वाचः

सत्यमवांरुन्धत॥१०॥

यदिश्वभ्यां पूष्णे पुरोडाशं द्वादेशकपालं निर्वपिति। अनृंतेनैव भ्रातृंव्यानिभूयं। वाचः सत्यमवं रुन्धे। सरंस्वते सत्यवाचे चरुम्। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। सिवृत्रे सत्यप्रंसवाय पुरोडाशं द्वादेशकपालं प्रसूत्यै। दूतान्प्रहिणोति। आविदं एता भवन्ति। आविदंमेवैनं गमयन्ति। अथो दूतेभ्यं एव न छिंद्यते। तिसृधन्वश् शुंष्कदृतिदक्षिंणा समृंद्धौ॥११॥

अर्ध्यति भवत्यरुन्धत गुमयन्ति द्वे चं॥

[8]

आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपिति। तस्माच्छिशिरे कुरुपश्चालाः प्राश्चो यान्ति। सौम्यं चुरुम्। तस्मौद्धस्नन्तं व्यंवसायांदयन्ति। सावित्रं द्वादंशकपालम्। तस्मौत्पुरस्ताद्यवांनाः सवित्रा विरुन्थते। बार्हुस्पत्यं चुरुम्। सवित्रेव विरुध्यं। ब्रह्मणा यवानादंधते। त्वाष्ट्रमृष्टाकंपालम्॥१२॥

रूपाण्येव तेनं कुर्वते। वैश्वान्तरं द्वादंशकपालम्। तस्मां अघन्यं नैदांघे प्रत्यश्चंः कुरुपश्चाला याँन्ति। सार्स्वतं चरुं निर्वपति। तस्मां त्प्रावृष्ट्वि सर्वा वाचो वदन्ति। पौष्णेन् व्यवस्यन्ति। मैत्रेणं कृषन्ते। वारुणेन् विधृंता आसते। क्षेत्रपत्येनं पाचयन्ते। आदित्येनादंधते॥१३॥

मासिमाँस्येतानिं हुवी १ विं निरुप्याणीत्यांहुः।

-[8]

तेनैवर्त्नप्रयंङ्क् इतिं। अथो खल्वांहुः। कः संवथ्सरं जीविष्यतीतिं। षडेव पूर्वेद्युर्निरुप्यांणि। षडुंत्तरेद्युः। तेनैवर्त्नप्रयंङ्के। दक्षिणो रथवाहनवाहः पूर्वेषां दक्षिणा। उत्तर् उत्तरेषाम्। संवथ्सरस्यैवान्तौ युनिक्तः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टियै॥१४॥

इन्द्रंस्य सुषुवाणस्यं दश्धेन्द्रियं वीर्यं परांऽपतत्। स यत्प्रंथमं निरष्ठीवत्। तत्कंलमभवत्। यद्वितीयम्। तद्वदंरम्। यत्तृतीयम्। तत्कर्कन्धुं। यत्रस्तः। स सिन्द्रः। यदक्ष्यौः॥१५॥

स शाँदूंलः। यत्कर्णयोः। स वृक्तः। य ऊर्ध्वः। स सोर्मः। याऽवांची। सा सुराँ। त्रयाः सक्तंवो भवन्ति। इन्द्रियस्यावंरुख्यै। त्रयाणि लोमांनि॥१६॥

त्विषिमेवावं रुन्धे। त्रयो ग्रहाः। वीर्यमेवावं रुन्धे। नाम्नां दश्मी। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिर्दश्मी। प्राणा इंन्द्रियं वीर्यम्। प्राणानेवेन्द्रियं वीर्यं यजमान आत्मन्धेत्ते। सीसेन क्रीबाच्छष्पांणि क्रीणाति। न वा एतदयो न हिरंण्यम्॥१७॥

यथ्सीसम्। न स्त्री न पुमान्। यत्क्रीबः। न सोमो न सुराँ। यथ्सौत्रामणी समृंद्धौ। स्वाद्धीं त्वाँ स्वादुनेत्यांह। सोमंमेवैनाँ करोति। सोमोंऽस्यश्विभ्याँ पच्यस्व सरंस्वत्यै पच्यस्वेन्द्रांय सुत्राम्णे पच्यस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पच्यंते। तिस्रः स १ सृष्टा वसति॥१८॥

तिस्रो हि रात्रीं क्रीतः सोमो वसंति। पुनातुं ते परिस्रुत्मिति यजुंषा पुनाति व्यावृंत्त्यै। प्वित्रेण पुनाति। प्वित्रेण हि सोमं पुनन्ति। वारेण शश्वंता तनेत्यांह। वारेण हि सोमं पुनन्ति। वायुः पूतः प्वित्रेणेति नैतयां पुनीयात्। व्यृंद्धा ह्यंषा। अतिप्वितस्यैतयां पुनीयात्। कुविद्ङ्गेत्यनिंरुक्तया प्राजाप्त्ययां गृह्णाति॥१९॥

अनिंरुक्तः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। एकंयुर्चा गृह्णाति। एक्धेव यजंमाने वीर्यं दधाति। आश्विनं धूम्रमालंभते। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्मे भेषजं कंरोति। सारुस्वतं मेषम्। वाग्वे सरंस्वती। वाचैवैनं भिषज्यति। ऐन्द्रमृष्भ सेन्द्रत्वायं॥२०॥

अक्ष्योर्लोमांनि हिरंण्यं वसित गृह्णाति भिषज्यत्येर्कं च॥——————[५]

यित्रषु यूपेष्वालभेत। बिहुर्धाऽस्मादिन्द्रियं वीर्यं दध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एक्यूप आलंभते। एक्षेवास्मिन्निन्द्रियं वीर्यं दधाति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। नैतेषां पशूनां पुरोडाशां भवन्ति। ग्रहंपुरोडाशां ह्येते। युवश् सुरामंमिश्वनेतिं सर्वदेवत्यं याज्यानुवाक्यं भवतः। सर्वां एव देवताः प्रीणाति॥२१॥

ब्राह्मणं परिक्रीणीयादुच्छेषंणस्य पातारम्। ब्राह्मणो ह्याहुंत्या उच्छेषंणस्य पाता। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। वृत्मीक्वपायामवं नयेत्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यद्वै सौत्रामण्ये व्यृद्धम्। तदंस्यै समृद्धम्। नानादेवत्याः पृशवंश्च पुरोडाशांश्च भवन्ति समृद्धौ। ऐन्द्रः पंशूनामृत्तमो भवति। ऐन्द्रः पुरोडाशांनां प्रथमः॥२२॥

इन्द्रिये प्वास्मैं स्मीचीं दधाति। पुरस्तांदन्याजानां पुरोडाशैः प्रचरित। पृशवो वै पुरोडाशौः। पृश्नेवावं रुन्धे। पेन्द्रमेकांदशकपालुं निर्वपिति। इन्द्रियमेवावं रुन्धे। सावित्रं द्वादंशकपालुं प्रस्त्ये। वारुणं दशकपालम्। अन्तृत एव वर्रणमवं यजते। वर्डबा दक्षिणा॥२३॥

उत वा एषाऽश्वर्थं सूते। उताऽश्वंतरम्। उत सोमं उत सुराँ। यथ्सौँत्रामणी समृद्धौ। बार्ह्स्पत्यं पृशुं चंतुर्थमंतिपवितस्या लंभते। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैव यज्ञस्य व्यृद्धमिपं वपति। पुरोडाशंवानेष पृशुर्भवित। न ह्यंतस्य ग्रहं गृह्णन्ति। सोमंप्रतीकाः पितरस्तृण्णुतेतिं शतातृण्णायारं समवंनयित॥२४॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। दक्षिणेऽग्नौ जुंहोति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। हिरंण्यमन्त्रा धारयति। पूतामेवैनां जुहोति। श्तमानं भवति। श्तायुः पुरुषः श्वेतिन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। यत्रैव शंतातृण्णां धारयंति॥२५॥

तिन्नदंधाति प्रतिष्ठित्यै। पितृन् वा एतस्यैन्द्रियं वीर्यं गच्छति। य सोमोऽति पवते। पितृणां यौज्यानुवाक्यांभिरुपं तिष्ठते। यदेवास्यं पितृनिन्द्रियं वीर्यं गच्छति। तदेवावं रुन्थे। तिस्भिरुपं तिष्ठते। तृतीये वा इतो लोके पितरंः। तानेव प्रीणाति। अथो त्रीणि वै यज्ञस्यैन्द्रियाणि। अध्वर्युर्होतौ ब्रह्मा। त उपंतिष्ठन्ते। यान्येव यज्ञस्यैन्द्रियाणि। तैरेवास्मै भेषजं करोति॥२६॥

प्रीणाति प्रथमो दक्षिणा समर्वनयति धारयंतीन्द्रियाणि चुत्वारिं च॥lacksquare

अग्निष्टोममग्र आहंरति। यज्ञमुखं वा अग्निष्टोमः। यज्ञमुखमेवारभ्यं स्वमा क्रंमते। अथैषोऽभिषेचनीयंश्चतु-स्त्रिष्शपंवमानो भवति। त्रयंस्त्रिष्शृद्धे देवताः। ता एवाऽऽप्नोति। प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्शः। तमेवाऽऽप्नोति। स्थार एष स्तोमानामयंथापूर्वम्। यद्विषंमाः स्तोमाः॥२७॥

पुतावान् वै यज्ञः। यावान्पविमानाः। अन्तः श्लेषेणं त्वा अन्यत्। यथ्समाः पर्वमानाः। तेनाऽसर्श्वारः। तेनं यथापूर्वम्। आत्मनैवाग्निष्टोमेनुर्ज्ञोतिं। आत्मना पुण्यों भवति। प्रजा वा उक्थानिं। पृशवं उक्थानिं। यदुक्थ्यों भवत्यनु सन्तंत्त्यै॥२८॥

स्तोमाः पुशवं उक्थान्येकं च॥

उपं त्वा जामयो गिर् इतिं प्रतिपद्भवित। वाग्वै वायुः। वाच एवैषोऽभिषेकः। सर्वासामेव प्रजाना र सूयते। सर्वा एनं प्रजा राजेतिं वदन्ति। एतम् त्यन्दश् क्षिप् इत्यांह। आदित्या वै प्रजाः। प्रजानांमेवेतेनं सूयते। यन्ति वा एते यंज्ञमुखात्। ये संम्भार्या अक्रन्॥२९॥

यदाह् पर्वस्व वाचो अग्निय इति। तेनैव यंज्ञमुखान्नयंन्ति। अनुष्टुक्प्रथमा भवति। अनुष्टुगुंत्तमा। वाग्वा अनुष्टुक्। वाचैव प्रयन्ति। वाचोद्यंन्ति। उद्वंतीर्भवन्ति। उद्वद्वा अनुष्टुभों रूपम्। आनुष्टुभो राजन्यः॥३०॥

तस्मादुद्वंतीर्भवन्ति। सौर्यनुष्टुगुंत्तमा भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। यो वै स्वादेतिं। नैनर्ं स्व उपनमित। यः सामंभ्य एतिं। पापींयान्थ्सुषुवाणो भंवति। पृतानि खलु वै सामानि। यत्पृष्ठानिं। यत्पृष्ठानि भवन्ति॥३१॥

तैर्व स्वान्नैतिं। यानिं देवराजाना् सामानि। तैर्मुष्मिं ह्लोक ऋंध्रोति। यानिं मनुष्यराजाना् सामानि। तैर्स्मिँ ह्लोक ऋंध्रोति। उभयोर्व लोकयोर् ऋध्रोति। देवलोके चं मनुष्यलोके चं। एकविश्शों ऽभिषेचनीयंस्योत्तमो भवति। एकविश्शः केशवपनीयंस्य प्रथमः। सप्तद्शो दंशपेयः॥३२॥

विड्वा एंकवि १ शः। राष्ट्र १ संप्तद्शः। विशं एवैतन्मध्यतीं-ऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशां प्रियः। विशो हि मध्यतोऽभिषिच्यतें। यद्वा एनम्दो दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति। तथ्मुंवर्गं लोकम्भ्या रोहिति। यदिमं लोकं न प्रत्यवरोहेंत्। अतिज्ञनं वेयात्। उद्वां माद्येत्। यदेष प्रतीचीनः स्तोमो भवंति। इममेव तेनं लोकं प्रत्यवंरोहित। अथो अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठत्यनुंन्मादाय॥३३॥

अक्रंत्राजुन्यों भवंन्ति दशुपेयों माद्येत्रीणिं च॥

·[2]

ड्यं वै रंज्ता। असौ हरिणी। यद्रुक्मौ भवंतः। आभ्यामेवेनंमुभ्यतः परिं गृह्णाति। वरुणस्य वा अभिष्च्यमानस्याऽऽपः। इन्द्रियं वीर्यं निरंप्रन्। तथ्सुवर्ण्ष् हिरंण्यमभवत्। यद्रुक्ममंन्तर्दधांति। इन्द्रियस्यं वीर्यस्या-निर्घाताय। शतमानो भवति शतक्षेरः। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। आयुर्वे हिरंण्यम्। आयुष्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। तेजो वे हिरंण्यम्। तेजस्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। तेजस्यां एवेनंमुभ्यतिं क्षरन्ति। वर्चो वे हिरंण्यम्। वर्चस्यां एवेनंमभ्यतिं क्षरन्ति॥३४॥

शृतक्षंरोऽष्टौ चं॥∎

-[9]

अप्रीतिष्ठितो वा एष इत्यांहुः। यो रांज्यसूर्येन यजंत इतिं। यदा वा एष एतेनं द्विरात्रेण यजंते। अर्थ प्रतिष्ठा। अर्थ संवथ्सरमाप्रोति। यावंन्ति संवथ्सरस्यांहोरात्राणि। तावंतीरेतस्यं स्तोत्रीयाः। अहोरात्रेष्वेव प्रतिं तिष्ठति। अग्निष्टोमः पूर्वमहंर्भवति। अतिरात्र उत्तरम्॥३५॥ नानैवाहोरात्रयोः प्रति तिष्ठति। पौर्णमास्यां पूर्वमहंभीवति। व्यष्टकायामुत्तरम्। नानैवार्धमासयोः प्रति तिष्ठति। अमावास्यायां पूर्वमहंभीवति। उद्दृष्ट उत्तरम्। नानैव मासयोः प्रति तिष्ठति। अथो खलुं। ये एव संमानपक्षे पुण्याहे स्याताम्। तयोः कार्यं प्रतिष्ठित्यै॥३६॥

अपुश्व्यो हिरात्र इत्यांहुः। हे ह्येते छन्दंसी।
गायत्रं च त्रेष्ट्रंभं च। जगंतीमुन्तर्यन्ति। न तेन जगंती
कृतत्यांहुः। यदंनान्तृतीयसवने कुर्वन्तीतिं। यदा वा
पृषाऽहीनस्याहुर्भजंते। साह्रस्यं वा सवनम्। अथैव जगंती
कृता। अथं पश्व्यः। व्यंष्ट्रवी पृष हिरात्रः। य पृवं
विद्वान्द्विरात्रेण यजंते। व्यंवास्मां उच्छति। अथो तमं पृवापं
हते। अग्निष्टोममंन्तृत आ हंरति। अग्निः सर्वा देवताः।
देवतांस्वेव प्रति तिष्ठति॥३७॥

उत्तरं प्रतिष्ठित्यै पशुब्दः सप्त चं॥————————————————[१०]

वर्रणस्य जामि वा ईंश्वर आँग्नेयमिन्द्रंस्य यिष्ठिष्वंग्निष्टोममुपं त्वेयं वे रंजुताऽप्रतिष्ठितो दशं॥१०॥ वर्रणस्य यद्श्विभ्यां यिष्ठेषु तस्मादुर्द्वतीः सुप्तत्रिरंशत्॥३७॥ वर्रणस्य प्रतिं तिष्ठति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे प्रथमाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् २॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अङ्गिरसो वै स्त्रमांसत। तेषां पृश्जिर्धर्मधुगांसीत्। सर्जीषेणांजीवत्। तेंंऽब्रुवन्। कस्मै नु स्त्रमांस्महे। येंंऽस्या ओषधीर्म जनयांम् इतिं। ते दिवो वृष्टिंमसृजन्त। यावंन्तः स्तोका अवापंद्यन्त। तावंतीरोषंधयोऽजायन्त। ता जाताः पितरों विषेणांलिम्पन्॥१॥

तासाँ जुग्ध्वा रुप्यन्त्यैत्। तैंऽब्रुवन्। क इदिमृत्थमंक्रितिं। वयं भागधेयंमिच्छमाना इतिं पितरोंऽब्रुवन्। किं वों भागधेयमितिं। अग्निहोत्र एव नोऽप्यस्त्वित्यंब्रुवन्। तेभ्यं एतद्भागधेयं प्रायंच्छन्। यद्भुत्वा निमार्ष्टिं। ततो वै त ओषंधीरस्वदयन्। य एवं वेदं॥२॥

स्वदंन्तेऽस्मा ओषंधयः। ते वृथ्समुपावांसृजन्। इदं नों हृव्यं प्रदांप्येतिं। सोंऽब्रवीद्वरं वृणे। दशं मा रात्रींर्जातं न दोहन्। आसङ्गवं मात्रा सह चंराणीतिं। तस्मांद्वथ्सं जातं दश रात्रीर्न दुहन्ति। आसङ्गवं मात्रा सह चंरति। वारेवृत्र् ह्यंस्य। तस्मांद्वथ्स संस्पृष्टध्य रुद्रो घातुंकः। अति हि सन्धान्धयंति॥३॥

प्रजापंतिर्ग्निमंसृजत। तं प्रजा अन्वंसृज्यन्त। तमंभाग उपास्त। सोंऽस्य प्रजाभिरपांकामत्। तमंव्रुरुंध्समानो-उन्वैत्। तमंव्रुधं नाशंक्रोत्। स तपोऽतप्यत। सोंऽग्निरुपांरम्तातांपि वे स्य प्रजापंतिरितिं। स रराटादुदंमृष्ट॥४॥

तद्घृतमंभवत्। तस्माद्यस्यं दक्षिणतः केशा उन्मृंष्टाः। ताञ्येष्ठलक्ष्मी प्रांजापत्येत्यांहुः। यद्रराटांदुदमृष्ट। तस्मांद्रराट्टे केशा न संन्ति। तद्ग्री प्रागृह्णात्। तद्यंचिकिथ्सत्। जुहवानी(३) मा हौषा(३)मितिं। तद्विंचिकिथ्सायै जन्मं। य पृवं विद्वान् विचिकिथ्संति॥५॥

वसीय एव चेतयते। तं वाग्भ्यंवदञ्जुहुधीतिं। सौंऽब्रवीत्। कस्त्वम्सीतिं। स्वैव ते वागित्यंब्रवीत्। सोंऽजुहोथ्स्वाहेतिं। तथ्स्वांहाकारस्य जन्मं। य एवङ्स्वांहाकारस्य जन्म वेदं। क्रोतिं स्वाहाकारेणं वीर्यम्। यस्यैवं विदुषंः स्वाहाकारेण जुह्वंति॥६॥

भोगांयैवास्यं हुतं भंवति। तस्या आहंत्यै पुरुषमसृजत। द्वितीयंमजुहोत्। सोऽश्वंमसृजत। तृतीयंमजुहोत्। स गामं-सृजत। चृतुर्थमंजुहोत्। सोऽविंमसृजत। पृश्र्ममंजुहोत्। सोऽजामंसृजत॥७॥

सौंऽग्निरंबिभेत्। आहुंतीभिवें मांऽऽप्नोतीतिं। स प्रजापंतिं पुनः प्राविंशत्। तं प्रजापंतिरब्रवीत्। जायुस्वेतिं। सौंऽब्रवीत्। किं भांग्धेयंम्भि जंनिष्य इतिं। तुभ्यंमेवेद हूंयाता इत्यंब्रवीत्। स एतद्भांगधेयंमभ्यंजायत। यदंग्निहोत्रम्॥८॥

तस्मादिग्नहोत्रमुंच्यते। तद्धूयमानमादित्यौं ऽब्रवीत्। मा हौषीः। उभयोर्वे नांवेतिदितिं। सौं ऽग्निरंब्रवीत्। कथं नौं होष्यन्तीतिं। सायमेव तुभ्यंं जुहवन्ं। प्रातर्मह्यमित्यंब्रवीत्। तस्मादग्नयें साय १ ह्यते। सूर्याय प्रातः॥९॥

आ्रमेयी वै रात्रिः। ऐन्द्रमहंः। यदनुंदिते सूर्ये प्रातर्जुहुयात्। उभयंमेवाग्नेय स्यात्। उदिते सूर्ये प्रातर्जुहोति। तथाऽग्नयं साय हूंयते। सूर्याय प्रातः। रात्रिं वा अनुं प्रजाः प्र जांयन्ते। अहा प्रतिं तिष्ठन्ति। यथ्सायं जुहोतिं॥१०॥

प्रैव तेनं जायते। उदिते सूर्यें प्रातर्जुहोति। प्रत्येव तेनं तिष्ठति। प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविते। स एतदिग्निहोत्रं मिथुनमंपश्यत्। तदुदिते सूर्येऽजुहोत्। यजुंषाऽन्यत्। तूष्णीम्न्यत्। ततो वै स प्राजायत। यस्यैवं विदुष् उदिते सूर्येऽग्निहोत्रं जुह्वंति॥११॥

प्रैव जांयते। अथो यथा दिवाँ प्रजानन्नेतिं। ताहगेव तत्। अथो खल्वांहुः। यस्य वै द्वौ पुण्यौ गृहे वसंतः। यस्तयोर्न्यश् राधयंत्यन्यं न। उभौ वाव स तावृच्छ्तीतिं। अग्निं वावा-ऽऽदित्यः सायं प्र विंशति। तस्मांद्ग्निर्द्रान्नक्तंं दहशे। उभे

हि तेजंसी सम्पद्यंते॥१२॥

उद्यन्तं वावाऽऽदित्यम्ग्निरन् स्मारोहित। तस्माँखूम पृवाग्नेर्दिवां दहशे। यद्ग्रयें सायं जुंहुयात्। आ सूर्याय वृश्चेत। यथ्सूर्याय प्रातर्जुहुयात्। आऽग्नयें वृश्चेत। देवतांभ्यः स्मदं दध्यात्। अग्निज्योंतिज्योंतिः सूर्यः स्वाहेत्येव सायश् होत्व्यम्। सूर्यो ज्योतिज्योंतिरिग्नः स्वाहेतिं प्रातः। तथोभाभ्यार् सायर ह्यते॥१३॥

उभाभ्यां प्रातः। न देवतांभ्यः समदं दधाति। अग्निर्ज्योति-रित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। प्रजा ज्योतिरित्यांह। प्रजा एवास्मै प्र जंनयति। सूर्यो ज्योतिरित्यांह। प्रजास्वेव प्रजांतासु रेतो दधाति। ज्योतिंरग्निः स्वाहेत्यांह। प्रजा एव प्रजांता अस्यां प्रतिष्ठापयति॥१४॥

तूष्णीमृत्तंरामाहंतिं जुहोति। मिथुन्त्वाय् प्रजांत्यै। यद्दिते सूर्ये प्रांतर्जुहुयात्। यथाऽतिंथये प्रद्वंताय शून्यायांवस्थायांहार्य हर्रन्ति। ताहगेव तत्। क्वाऽऽह् तत्स्तद्भवतीत्यांहुः। यथ्म न वेदं। यस्मै तद्धर्न्तीतिं। तस्माद्यदौष्मं जुहोतिं। तदेव संम्प्रति। अथो यथा प्रार्थमौषसं पंरिवेवेष्टि। ताहगेव तत्॥१५॥

अमृष्ट विचिकिथ्सति जुह्वत्यजामंसृजताग्निहोत्रर सूर्याय प्रातर्जुहोति जुह्वति सम्पर्धते हृयते स्थापयति सम्प्रति द्वे

ਚਂ⊪**___**__

रुद्रो वा एषः। यद्ग्निः। पर्ली स्थाली। यन्मध्ये-ऽग्नेरिधेश्रयेत्। रुद्राय पत्नीमपि दध्यात्। प्रमायुंका स्यात्। उदीचोऽङ्गारान्निरूह्याधि श्रयति। पत्निये गोपीथाये। व्यन्तान्करोति। तथा पत्यप्रमायुका भवति॥१६॥

घुर्मो वा एषोऽशाँन्तः। अहंरहः प्र वृंज्यते। यदंग्निहोत्रम्। प्रतिषिश्चेत्पृशुकांमस्य। शान्तिमिव हि पंश्वय्यम्। न प्रति-षिश्चेद्वह्मवर्च्सकांमस्य। समिद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो खलुं। प्रतिषिच्यंमेव। यत्प्रतिषिश्चति॥१७॥

तत्पंश्व्यम्। यञ्जुहोति। तद्वंह्मवर्चसि। उभयंमेवाकः। प्रच्युंतं वा एतद्स्माल्लोकात्। अगंतं देवलोकम्। यच्छृतः ह्विरनंभिघारितम्। अभि द्योतयति। अभ्येवैनंद्घारयति। अथो देवत्रैवैनंद्गयति॥१८॥

पर्यमि करोति। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पर्यमि करोति। त्र्यांवृद्धि यज्ञः। अथौं मेध्यत्वायं। यत्प्राचीनंमुद्वासयैत्। यजमान शुचाऽपंयेत्। यद्देक्षिणा। पितृदेवत्य स्यात्। यत्प्रत्यक्॥१९॥

पत्नी १ शुचा ऽपंयेत्। उदीची नुमुद्वां सयित। एषा वै देवमनुष्याणा १ शान्ता दिक्। तामे वैनुदनूद्वां सयित शान्त्यैं। वर्त्मं करोति। युज्ञस्य सन्तंत्यै। निष्टंपति। उपैव तथ्स्तृंणाति। चतुरुन्नंयित। चतुंष्पादः पृशवंः॥२०॥

पृश्नेवावं रुन्धे। सर्वांन्पूर्णानुन्नंयित। सर्वे हि पुण्यां राद्धाः। अनूच उन्नंयित। प्रजायां अनूचीनृत्वायं। अनूच्येवास्यं प्रजा-ऽर्धुका भवति। सम्मृंशित् व्यावृत्त्यै। नाहोंष्युनुपं सादयेत्। यदहोंष्यनुपसादयेंत्। यथाऽन्यस्मां उपनिधायं॥२१॥

अन्यस्मैं प्रयच्छंति। ताहगेव तत्। आऽस्मैं वृश्चेत। यदेव गार्हंपत्येऽधि श्रयंति। तेन गार्हंपत्यं प्रीणाति। अग्निरंबिभेत्। आहुंतयो माऽत्येष्यन्तीतिं। स एता स्मिधंमपश्यत्। तामाऽधंत्त। ततो वा अग्नावाहुंतयो-ऽधियन्त॥२२॥

यदेंन १ समयंच्छत्। तथ्समिधंः सिम्त्वम्। सिमध्मा दंधाति। समेवेनं यच्छति। आहंतीनां धृत्यैं। अथों अग्निहोत्रमेवेध्मवंत्करोति। आहंतीनां प्रतिष्ठित्यै। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदेका १ सिमधंमाधाय द्वे आहंती जुहोतिं। अथ कस्या १ सिमिधं द्वितीयामाहंतिं जुहोतीतिं॥२३॥

यद्वे स्मिधांवा द्ध्यात्। भ्रातृंव्यमस्मै जनयेत्। एका र स्मिधंमाधायं। यजुंषाऽन्यामाहुंतिं जुहोति। उभे एव स्मिद्वंती आहुंती जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयति। आदींप्तायां जुहोति। समिंद्धमिव हि ब्रह्मवर्च्सम्। अथो यथाऽतिंथिं ज्योतिंष्कृत्वा पंरि वेवेष्टि। ताहगेव तत्। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। तस्मौद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति॥२४॥ भ्वृति प्रतिषिञ्जति गमयति प्रत्यक्पृशवं उपनिधार्यांप्रियन्तेति तच्वत्वारिं च॥————[३]

उत्तरावंतीं वै देवा आहंतिमजुंहवुः। अवांचीमसुंराः। ततों देवा अभवन्। पराऽसुंराः। यं कामयेत् वसीयान्थ्स्यादितिं। कनीयस्तस्य पूर्वर्ष हुत्वा। उत्तरं भूयो जुहुयात्। एषा वा उत्तरावृत्याहुंतिः। तान्देवा अंजुहवुः। तत्वस्तेऽभवन्॥२५॥

यस्यैवं जुह्वंति। भवंत्येव। यं कामयेत् पापीयान्थस्यादितिं। भूयस्तस्य पूर्व हुत्वा। उत्तरं कनीयो जुहुयात्। एषा वा अवाच्याहुंतिः। तामसुंरा अजुहवुः। तत्स्ते परांऽभवन्। यस्यैवं जुह्वंति। परै्व भवति॥२६॥

हुत्वोपं सादयत्यजांमित्वाय। अथो व्यावृत्त्यै। गार्हंपत्यं प्रतींक्षते। अनंनुध्यायिनमेवेनं करोति। अग्निहोत्रस्य वे स्थाणुरंस्ति। तं य ऋच्छेत्। यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। एष वा अग्निहोत्रस्यं स्थाणुः। यत्पूर्वाऽऽहुंतिः। तां यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥२७॥

यज्ञस्थाणुमृंच्छेत्। अतिहाय पूर्वामाहुंतिं जुहोति। यज्ञस्थाणुमेव परिं वृणक्ति। अथो भ्रातृंव्यमेवास्वाऽतिं क्रामित। अवाचीन सायमुपंमार्षि। रेतं एव तद्दंधाति। ऊर्ध्वं प्रातः। प्र जनयत्येव तत्। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। चतुरुन्नंयति॥२८॥

द्विर्जुहोति। अथ कं द्वे आहुंती भवत् इतिं। अग्नौ वैश्वान्र

इति ब्रूयात्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्वाँह्मणः। हुत्वा द्विः प्राश्ञांति। अग्नावेव वैश्वान्रे द्वे आहुंती जुहोति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टि। द्विः प्राश्ञांति॥२९॥

षद्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रींणाति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। किं देवत्यंमग्निहोत्रमितिं। वैश्वदेवमितिं ब्र्यात्। यद्यजुंषा जुहोतिं। तदैन्द्राग्नम्। यत्तूष्णीम्। तत्प्रांजापत्यम्॥३०॥

यित्रमार्ष्टिं। तदोषंधीनाम्। यिद्वितीयम्। तत्पितृणाम्। यत्प्राश्ञांति। तद्गर्भाणाम्। तस्माद्गर्भा अनंश्ञन्तो वर्धन्ते। यदाचामंति। तन्मंनुष्यांणाम्। उदंङ्घर्यावृत्याचांमति॥३१॥

आत्मनों गोपीथायं। निर्णेनेक्ति शुद्धौं। निष्टंपति स्वगाकृत्ये। उद्दिशति। स्प्तर्षीनेव प्रीणाति। दक्षिणा पूर्यावंति। स्वमेव वीर्यमन् पूर्यावंति। तस्माद्दक्षिणोऽर्धं आत्मनों वीर्यावत्तरः। अथों आदित्यस्यैवावृत्मन् पूर्यावंति। हुत्वोप समिन्धे॥३२॥

ब्रह्मवर्चसस्य सिमिखी। न बर्हिरनु प्र हेरेत्। असईस्थितो वा एष यज्ञः। यदिग्निहोत्रम्। यदेनु प्रहरेत्। यज्ञं विच्छिन्द्यात्। तस्मान्नानुं प्रहृत्यम्। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अपो नि नंयति। अवभृथस्यैव रूपमंकः॥३३॥ ब्रह्मवादिनों वदन्ति। अग्निहोत्रप्रांयणा यज्ञाः। किं प्रांयणमग्निहोत्रमितिं। वृथ्सो वा अग्निहोत्रस्य प्रायंणम्। अग्निहोत्रं यज्ञानांम्। तस्यं पृथिवी सदंः। अन्तरिक्षमाग्नींद्धम्। द्यौर्हंविर्धानम्। दिव्या आपः प्रोक्षंणयः। ओषंधयो ब्रहः॥३४॥

वन्स्पतंय इध्मः। दिशंः परिधयंः। आदित्यो यूपंः। यजंमानः पृशुः। स्मुद्रोऽवभृथः। संवृथ्सरः स्वंगाकारः। तस्मादाहिताग्रेः सर्वमेव बहिष्यं दत्तं भवति। यथ्सायं जुहोतिं। रात्रिमेव तेनं दक्षिण्यां कुरुते। यत्प्रातः॥३५॥

अहंरेव तेनं दक्षिण्यं कुरुते। यत्ततो ददांति। सा दक्षिणा। यावन्तो वै देवा अहुंतमादन्। ते परांऽभवन्। त एतदिग्निहोत्र श् सर्वस्यैव संमवदायां जुहवुः। तस्मादाहुः। अग्निहोत्रं वै देवा गृहाणां निष्कृंतिमपश्यित्रिति। यथ्मायं जुहोति। रात्रिया एव तद्धुताद्यांय॥३६॥

यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्प्रातः। अहं एव तद्धुताद्यांय। यजंमान्स्यापंराभावाय। यत्ततोऽश्ञातिं। हुतमेव तत्। द्वयोः पर्यसा जुहुयात्पृशुकांमस्य। एतद्वा अग्निहोत्रं मिथुनम्। य एवं वेदं। प्र प्रजयां पृशुभिर्मिथुनैर्जायते॥३७॥

इमामेव पूर्वया दुहे। अमूमुत्तंरया। अधिश्रित्योत्तंरमा

नंयति। योनांवेव तद्रेतः सिश्चति प्रजनंने। आज्येन जुहुयात्तेजंस्कामस्य। तेजो वा आज्यम्। तेजस्येव भंवति। पर्यसा पृशुकांमस्य। एतद्वै पंशूनाः रूपम्। रूपेणैवास्मैं पश्नवं रुन्धे॥३८॥

पृशुमानेव भंवति। द्वेन्द्रियकांमस्य। इन्द्रियं वै दिधे। इन्द्रियाव्येव भंवति। युवाग्वां ग्रामंकामस्योष्धा वै मंनुष्याः। भाग्धेयेनैवास्में सजातानवं रुन्धे। ग्राम्येव भंवति। अयंज्ञो वा एषः। योऽसामा॥३९॥

चृतुरुन्नंयित। चतुंरक्षर रथन्तरम्। रथन्तरस्यैष वर्णः। उपरीव हरति। अन्तरिक्षं वामदेव्यम्। वामदेव्यस्यैष वर्णः। द्विर्जुहोति। द्वांक्षरं बृहत्। बृह्त एष वर्णः। अग्निहोत्रमेव तथ्सामंन्वत्करोति॥४०॥

यो वा अंग्निहोत्रस्योपसदो वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्ं। उन्नीयोपं सादयति। पृथिवीमेव प्रीणाति। होष्यन्नुपंसादयति। अन्तिरक्षिमेव प्रीणाति। हुत्वोपं सादयति। दिवंमेव प्रीणाति। एता वा अंग्निहोत्रस्योपसदं:॥४१॥

य एवं वेदं। उपैनमुप्सदों नमन्ति। विन्दतं उपस्तारम्। यो वा अग्निहोत्रस्याश्रांवितं प्रत्याश्रांवित् होतांरं ब्रह्माणं वषद्बारं वेदं। तस्य त्वेव हुतम्। प्राणो वा अंग्निहोत्रस्याश्रांवितम्। अपानः प्रत्याश्रांवितम्। मनो होतां। चक्षुंर्ब्रह्मा। निमेषो वंषद्वारः॥४२॥

य एवं वेदं। तस्य त्वंव हुतम्। सायं यावांनश्च वै देवाः प्रांत्र्यावांणश्चाग्निहोत्रिणों गृहमागंच्छन्ति। तान् यन्न त्पंयेंत्। प्रजयांऽस्य पृशुभिविं तिष्ठेरन्। यत्त्र्पंयेंत्। तृप्ता एनं प्रजयां पृशुभिंस्तर्पयेयुः। स्जूर्देवैः सायं यावंभिरितिं साय सम्मृंशति। स्जूर्देवैः प्रातर्यावंभिरितिं प्रातः। ये चैव देवाः सायं यावांनो ये चं प्रातर्यावांणः॥४३॥

तानेवोभयाईस्तर्पयति। त एंनं तृप्ताः प्रजयां पृश्वभिस्तर्प-यन्ति। अरुणो हं स्माहौपंवेशिः। अग्निहोत्र एवाह स्मायं प्रांत्वं भ्रातृंव्येभ्यः प्र हंरामि। तस्मान्मत्पापीया सो भ्रातृंव्या इति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। स्मिथ्संप्तमी। सप्तपंदा शक्वंरी। शाक्वरो वर्ज्ञः। अग्निहोत्र एव तथ्सायं प्रांत्वं यं यंनानो भ्रातृंव्याय प्र हंरति। भवंत्यात्मना। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति॥४४॥

बुर्हिः प्रातर्हुताद्यांय जायते रुन्धेऽसामा कंरोत्येता वा अग्निहोत्रस्योपसदों वषद्वारश्चं प्रात्यावांणो् वज्रुस्लीणिं च॥ $\left[oldsymbol{arphi}
ight]$

प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वन्मं जायेतेतिं। सोंऽजुहोत्। तस्यांऽऽत्मन्वदंजायत। अग्निर्वायुरांदित्यः। तेंऽब्रुवन्। प्रजापंतिरहोषीदात्मन्वन्मं जायेतेतिं। तस्यं वयमंजनिष्महि। जायंतान्न आत्मन्वदिति तेंऽजुहवुः। प्राणानांमग्निः। तनुवैं वायुः॥४५॥ चक्षुंष आदित्यः। तेषा हुतादंजायत् गौरेव। तस्यै पर्यसि व्यायंच्छन्त। ममं हुतादंजिन् ममेतिं। ते प्रजापंतिं प्रश्ञमांयन्। स आंदित्यौंऽग्निमंब्रवीत्। यृत्रो नौ जयात्। तन्नौ सहास्दितिं। कस्यै कोऽहौंषीदितिं प्रजापंतिरब्रवीत्कस्यै क इतिं। प्राणानांमहमित्यग्निः॥४६॥

त्नुवां अहमितिं वायः। चक्षुंषोऽहमित्यांदित्यः। य एव प्राणानामहौषीत्। तस्यं हुतादंजनीतिं। अग्नेर्हुतादंजनीतिं। तदंग्निहोत्रस्यांग्निहोत्रत्वम्। गौर्वा अग्निहोत्रम्। य एवं वेद् गौरंग्निहोत्रमितिं। प्राणापानाभ्यांमेवाग्निः समर्धयति। अव्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति॥४७॥

य एवं वेदं। तौ वायुरंब्रवीत्। अनु मा भंजत्मितिं। यदेव गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयंम्भ्युंद्रवान्ं। तेन त्वां प्रीणानित्यंब्र्ताम्। तस्माद्यद्गार्हंपत्येऽधिश्रित्यांहवनीयं-म्भ्युंद्रवंति। वायुमेव तेनं प्रीणाति। प्रजापंतिर्देवताः सृजमानः। अग्निमेव देवतानां प्रथममंसृजत। सौंऽन्यदां-लम्भ्यंमविंत्वा॥४८॥

प्रजापंतिम्भि प्रयावित्ता स मृत्योरंबिभेत्। सोऽमुमांदित्यमात्मनो निरंमिमीत। त॰ हुत्वा परांङ्घ्यवित्त। ततो वै स मृत्युमपांजयत्। अपं मृत्युं जयित। य एवं वेदं। तस्माद्यस्यैवं विदुषंः। उतैकाहमुत द्यहं न जुह्वंति। हुतमेवास्यं भवति। असौ ह्यांदित्योंऽग्निहोत्रम्॥४९॥ तुन्वै वायुर्ग्निर्भवृत्यवित्वा भवृत्येकै च॥=================[&

रौद्रं गविं। वाय्यंमुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। सौम्यं दुग्धम्। वारुणमधिं श्रितम्। वैश्वदेवा भिन्दवंः। पौष्णमुदंन्तम्। सार्स्वतं विष्यन्दंमानम्। मैत्र॰ शरंः। धातुरुद्वांसितम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। स्वितुः प्र क्रांन्तम्। द्यावापृथिव्यई ह्वियमाणम्। ऐन्द्राग्नमुपंसन्नम्। अग्नेः पूर्वा-ऽऽह्तिः। प्रजापंतेरुत्तंरा। ऐन्द्र॰ हुतम्॥५०॥

उद्वांसित॰ सप्त चं॥—————[७]

दक्षिणत उपं सृजित। पितृलोकमेव तेनं जयित। प्राचीमा वर्तयित। देवलोकमेव तेनं जयित। उदींचीमावृत्यं दोग्धि। मृनुष्यलोकमेव तेनं जयित। पूर्वो दुह्याञ्चेष्ठस्यं ज्यैष्ठिनेयस्य। यो वां गृतश्रीः स्यात्। अपंरौ दुह्यात्किनिष्ठस्यं कानिष्ठिनेयस्य। यो वा बुभूषेत्॥५१॥

न सं मृंशति। पापवस्यसस्य व्यावृत्त्यै। वायव्यं वा एतदुपंसृष्टम्। आश्विनं दुह्यमानम्। मैत्रं दुग्धम्। अर्यम्ण उद्वास्यमानम्। त्वाष्ट्रमुंत्रीयमानम्। बृह्स्पतेरुत्रीतम्। सवितुः प्रक्रान्तम्। द्यावापृथिव्यः हियमाणम्॥५२॥

ऐन्द्राग्नमुपं सादितम्। सर्वाभ्यो वा एष देवताभ्यो जुहोति। यौऽग्निहोत्रं जुहोतिं। यथा खलु वै धेनुं तीर्थे तुर्पयंति। एवमंग्निहोत्री यजमानं तर्पयति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। प्र सुंवर्गं लोकं जानाति। पश्यंति पुत्रम्। पश्यंति पौत्रम्ं। प्र प्रजयां प्श्रिमिध्नेर्जायते। यस्यैवं विदुषौँऽग्निहोत्रं जुह्वति। य उं चैनदेवं वेदं॥५३॥

बुभूषेद्धियमाणि आयते द्वे चं॥————[८]

त्रयो वै प्रैयमेधा आंसन्। तेषां त्रिरेकोंऽग्निहोत्रमंजुहोत्। द्विरेकः। स्कृदेकः। तेषां यस्त्रिरजुंहोत्। स ऋचाऽजुंहोत्। यो द्विः। स यजुंषा। यः स्कृत्। स तूष्णीम्॥५४॥

यश्च यजुषाऽजुंहोद्यश्चं तूष्णीम्। तावुभावां र्भुताम्। तस्माद्यजुषाऽऽहुंतिः पूर्वा होत्व्यां। तूष्णीमृत्तंरा। उभे एवधीं अवं रुन्थे। अग्निज्योंतिज्योंतिरग्निः स्वाहेतिं सायं जुंहोति। रेतं एव तद्दंधाति। सूर्यो ज्योतिज्योंतिः सूर्यः स्वाहेतिं प्रातः। रेतं एव हितं प्र जनयित। रेतो वा एतस्यं हितं न प्र जांयते॥५५॥

यस्याँग्निहोत्रमहुंत्र सूर्योऽभ्युंदेतिं। यद्यन्ते स्यात्। उन्नीय् प्राङ्कदाद्रंवेत्। स उपसाद्यातिर्मितोरासीत। स यदा ताम्यौत्। अथ् भूः स्वाहेतिं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे भूतः। तमेवोपांसरत्। स एवेनं तत् उन्नयति। नार्तिमार्च्छति यजमानः॥५६॥

तूर्णीं जांयते यर्जमानः॥ \blacksquare

यद्ग्रिमुद्धरंति। वसंवस्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। वसुंष्वेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। निहिंतो धूपायञ्छेते। रुद्रास्तर्ह्यग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। रुद्रेष्वेवास्याँग्निहोत्र हुतं भेवति। प्रथममिध्ममुर्चिरा लेभते। आदित्यास्तर्ह्यग्निः॥५७॥

तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। आदित्येष्वेवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति। सर्वं एव संवृंश इध्म आदींग्नो भवति। विश्वं देवास्तर्ह्याग्नेः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। विश्वंष्वेवास्यं देवेष्वंग्निहोत्र हुतं भंवति। नित्रामृर्चिरुपावैति लोहिनीकेव भवति। इन्द्रस्तर्ह्याग्नेः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रस्तर्ह्याग्नेः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्वंति। इन्द्रं एवास्यांग्निहोत्र हुतं भंवति॥५८॥

अङ्गारा भवन्ति। तेभ्योऽङ्गारेभ्योऽर्चिरुदेति। प्रजा-पंतिस्तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। प्रजापंतावेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। शरोऽङ्गारा अध्यूहन्ते। ब्रह्म तर्द्धाग्निः। तस्मिन् यस्य तथांविधे जुह्नंति। ब्रह्मंन्नेवास्यांग्निहोत्रः हुतं भवति। वस्षु रुद्रेष्वांदित्येषु विश्वंषु देवेषुं। इन्द्रें प्रजापंतौ ब्रह्मन्। अपंरिवर्गमेवास्यैतासुं देवतांसु हुतं भवति। यस्यैवं विदुषोंऽग्निहोत्रं जुह्नंति। य उं चैनदेवं वेदं॥५९॥

ऋतं त्वां सत्येन परिषिश्चामीतिं सायं परिषिश्चति। सत्यं त्वर्तेन परिषिश्चामीतिं प्रातः। अग्निर्वा ऋतम्। असावांदित्यः सत्यम्। अग्निमेव तदांदित्येनं सायं परिषिश्चति। अग्निनां-ऽऽदित्यं प्रातः सः। यावंदहोरात्रे भवंतः। तावंदस्य लोकस्यं। नार्तिर्न रिष्टिः। नान्तो न पंर्यन्तौऽस्ति। यस्यैवं विदुषौऽग्निहोत्रं जुह्वंति। य उंचैनदेवं वेदं॥६०॥

अस्ति द्वे चं॥**—————————————————**[११]

अङ्गिरसः प्रजापंतिरग्नि रु रुद्र उत्तरावंतीं ब्रह्मवादिनौंऽग्निहोत्रप्रायणा यज्ञाः प्रजापंतिरकामयताऽऽत्मन्वद्रौद्रङ्गविं दक्षिणतस्त्रयो

वै यद्ग्रिमृतं त्वां स्त्येनैकांदश॥११॥

अङ्गिरसः प्रैव तेनं पुशूनेव यन्निमार्ष्ट्रि यो वा अग्निहोत्रस्योंपुसदों दक्षिणुतः पृष्टिः॥६०॥

अङ्गिरसो य उंचैनदेवं वेदं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः सृंजेयेति। स एतं दशहोतारम-पश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बेंऽजुहोत्। ततो वै स प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टा अपाँकामन्। ता ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। यः कामयेत् प्रजांयेयेति। स दशहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यं दर्भस्तम्बे जुंहुयात्। प्रजापंतिर्वे दशहोता॥१॥

प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। मनंसा जुहोति। मनं इव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। पूर्णयां जुहोति। पूर्ण इंव् हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै। न्यूंनया जुहोति। न्यूंनाद्धि प्रजा-पंतिः प्रजा असृंजत। प्रजाना॰ सृष्ट्यै॥२॥

दुर्भस्तम्बे जुंहोति। एतस्माद्वै योनैंः प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। यस्मादेव योनैंः प्रजापंतिः प्रजा असृंजत। तस्मादेव योनेः प्रजायते। ब्राह्मणो दंक्षिणत उपास्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येव प्रजायते। ग्रहों भवति। प्रजानां सृष्टानां धृत्यैं। यं ब्राह्मणं विद्यां विद्वाः स्ं यशो नर्च्छत्॥३॥

सोऽरंण्यं प्रेत्यं। दुर्भस्तम्बमुद्भर्थ्यं। ब्राह्मणं दंक्षिणतो निषाद्यं। चतुर्होतृन्व्याचंक्षीत। एतद्वै देवानां पर्मं गुह्यं ब्रह्मं। यचतुर्होतारः। तदेव प्रंकाशं गंमयति। तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयति। दुर्भस्तम्बमुद्गथ्य व्याचेष्टे॥४॥

अग्निवान् वै देर्भस्तम्बः। अग्निवत्येव व्याचेष्टे। ब्राह्मणो देक्षिणत उपाँस्ते। ब्राह्मणो वै प्रजानांमुपद्रष्टा। उपद्रष्टुमत्येवैनं यशं ऋच्छति। ईश्वरन्तं यशोर्तोरित्यांहुः। यस्यान्ते व्याचष्ट् इतिं। वर्स्तस्मै देयः। यदेवैनं तत्रोपनमंति। तदेवावं रुन्थे॥५॥

अग्निमादधानो दर्शहोत्राऽरणिमवं दध्यात्। प्रजातमेवैनमा धंत्ते। तेनैवोद्गुत्यांग्निहोत्रं जुंहुयात्। प्रजातमेवैनं ज्ञुहोति। ह्विर्निर्वपस्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। प्रजातमेवैनं निर्वपति। सामिधेनीरंनुवक्ष्यं दर्शहोतारं व्याचंक्षीत। सामिधेनीरेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। अथो युज्ञो वै दर्शहोता। युज्ञमेव तंनुते॥६॥

अभिचरं दर्शहोतारं जुहुयात्। नव वै पुरुषे प्राणाः। नाभिद्शमी। सप्राणमेवैनंमभि चरित। एतावृद्धे पुरुषस्य स्वम्। यावंत्प्राणाः। यावंदेवास्यास्ति। तद्भि चरित। स्वकृत् इरिणे जुहोति प्रदरे वा। एतद्वा अस्यै निर्ऋतिगृहीतम्। निर्ऋतिगृहीत एवैनं निर्ऋत्या ग्राहयति। यद्वाचः कूरम्। तेन वषंद्वरोति। वाच एवैनं कूरेण् प्र वृंश्चित। ताजगार्तिमार्च्छंति॥७॥

प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासौ सृंजेयेतिं। स एतं चतुंरहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स दंर्शपूर्णमासावंसृजत। तावंस्माथ्सृष्टावपाँ-कामताम्। तौ ग्रहेंणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रह्त्वम्। दर्शपूर्णमासावालभंमानः। चतुंरहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-हवनीयें जुहुयात्। दर्शपूर्णमासावेव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते॥८॥

ग्रहों भवति। दुर्शपूर्णमासयौंः सृष्टयोर्धृत्यौं। सोंऽकामयत चातुर्मास्यानिं सृजेयेतिं। स एतं पश्चंहोतारमपश्यत्। तं मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स चातुर्मास्यान्यं-सृजत। तान्यंस्माथ्सृष्टान्यपौकामन्। तानि ग्रहेणागृह्णात्। तद्गहंस्य ग्रहुत्वम्। चातुर्मास्यान्यालभंमानः॥९॥

पश्चंहोतार्ं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। चातुर्मास्यान्येव सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्रतंनुते। ग्रहों भवति। चातुर्मास्यानार्थ सृष्टानां धृत्यैं। सोंऽकामयत पशुबन्धर्थ सृंजेयेतिं। स पृतर षह्नोतारमपश्यत्। तं मनंसा-ऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेऽजुहोत्। ततो वै स पंशुबन्धमंसृजत। सोस्माथ्सृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्॥१०॥

तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। पृशुब्न्धेनं युक्ष्यमाणः। षङ्कोतार् मनसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयें जुहुयात्। पृशुब्न्धमेव सृष्ट्वा-ऽऽरभ्य प्रतनुते। ग्रहों भवति। पृशुबन्धस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। सोंऽकामयत सौम्यमंध्वर सृंजेयेतिं। स एत स्माहोतारमपश्यत्। तं मनंसाऽनुद्रुत्यांऽऽहवनीयेंऽजुहोत्। ततो वै स सौम्यमंध्वरमंसृजत॥११॥

सौंऽस्माथ्मृष्टोऽपांकामत्। तं ग्रहेणागृह्णात्। तद्ग्रहंस्य ग्रह्त्वम्। दीक्षिष्यमाणः। सप्तहोतारं मनंसाऽनुद्रुत्यां-ऽऽहवनीयं जुहुयात्। सौम्यमेवाध्वरः सृष्ट्वाऽऽरभ्य प्र तंनुते। ग्रहों भवति। सौम्यस्याध्वरस्यं सृष्टस्य धृत्यैं। देवभ्यो वै युज्ञो न प्राभंवत्। तमेतावृच्छः समंभरन्॥१२॥

यथ्संम्भाराः। ततो वै तेभ्यों युज्ञः प्राभंवत्। यथ्संम्भारा भवंन्ति। युज्ञस्य प्रभूत्ये। आतिथ्यमासाद्य व्याचंष्टे। युज्ञमुखं वा आतिथ्यम्। मुख्त एव युज्ञः सम्भृत्य प्र तंनुते। अयज्ञो वा एषः। योऽप्रत्नीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्नीर्व्याचंष्टे। युज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। उपसथ्सु व्याचंष्टे। एतद्वै पत्नीनामायतंनम्। स्व एवैनां आयत्नेऽवंकल्पयति॥१३॥

तुनुत् आलभंमानोऽगृह्णादसृजताभरआयेरुन्थ्यद्वं॥

[२]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेति। स तपोऽतप्यतः स त्रिवृत् क् स्तोमंमसृजतः। तं पश्चद्शः स्तोमो मध्यतः उदंतृणत्। तौ पूर्वपक्षश्चापरपक्षश्चाभवताम्। पूर्वपक्षं देवा अन्वसृंज्यन्तः। अपरपक्षमन्वसृंराः। ततो देवा अभवन्। पराऽसृंराः। यं कामयेत् वसीयान्थस्यादिति॥१४॥

तं पूर्वपक्षे यांजयेत्। वसीयानेव भवति। यं कामयेंत्

पापीयान्थस्यादिति। तमंपरपृक्षे यांजयेत्। पापीयानेव भंवति। तस्मौत्पूर्वपृक्षोऽपरपृक्षात्करुण्यंतरः। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। चतुंर्होता पश्चंहोता। षङ्कोता सप्तहोता। ऋतवेः संवथ्सरः॥१५॥

प्रजाः प्शवं इमे लोकाः। य एवं प्रजापंतिं बहोर्भूया रेसं वेदं। बहोरेव भूयाँ-भवति। प्रजापंतिर्देवासुरानं सृजत। स इन्द्रमपि नासृजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। सौं ऽब्रवीत्। यथा ऽहं युष्मा इस्तप्सा ऽसृक्षि। एविमन्द्रं जनयध्वमिति॥१६॥

ते तपोऽतप्यन्त। त आत्मिन्निन्द्रंमपश्यन्। तमंब्रुवन्। जायस्वेतिं। सोंऽब्रवीत्। किं भांगुधेयंमुभि जंनिष्य इतिं। ऋतून्थ्यंवथ्यरम्। प्रजाः पृशून्। इमाँ ह्योकानित्यं ब्रुवन्। तं वै माऽऽहुत्या प्र जनयतेत्यं ब्रवीत्॥१७॥

तं चतुंर्होत्रा प्राजंनयन्। यः कामयेत वीरो म् आजांयेतेति। स चतुंर्होतारं जुहुयात्। प्रजापंतिर्वे चतुंर्होता। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजायते। जजन्दिन्द्रंमिन्द्रियाय् स्वाहेति ग्रहेण जुहोति। आऽस्यं वीरो जांयते। वीरश् हि देवा एतयाऽऽहुंत्या प्राजंनयन्। आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकेंऽस्पर्धन्त। व्यं पूर्वे सुवर्गं लोकिमियाम व्यं पूर्व इतिं॥१८॥ त आंदित्या एतं पश्चंहोतारमपश्यन्। तं पुरा प्रांतरन्-वाकादाग्नींध्रेऽजुहवुः। ततो वै ते पूर्वे सुवृगं लोकमांयन्। यः सुवृगंकांमः स्यात्। स पश्चंहोतारं पुरा प्रांतरनुवाकादाग्नींध्रे जुहुयात्। संवृथ्सरो वै पश्चंहोता। संवृथ्सरः सुवृगों लोकः। संवृथ्सर एवर्तुषुं प्रतिष्ठायं। सुवृगं लोकमेति। तेंऽब्रुवृन्निङ्गिरस आदित्यान्॥१९॥

क्वं स्था क्वं वः सुद्धो हुव्यं वंक्ष्याम् इतिं। छुन्दः स्वित्यं ब्रुवन्। गायित्रयां त्रिष्ठुभि जगत्यामितिं। तस्माच्छन्देः सु सुद्धा आदित्येभ्यः। आङ्गीर्सीः प्रजा हृव्यं वंहन्ति। वहंन्त्यस्मे प्रजा बिलम्। ऐन्मप्रतिख्यातं गच्छति। य एवं वेदं। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावांदित्य एंकवि शाः। एतस्मिन्वा एष श्रितः। एतस्मिन्प्रतिष्ठितः। य एवमेत श्रुतं प्रतिष्ठितं वेदं। प्रत्येव तिष्ठित॥२०॥

स्यादितिं संवथ्सरो जनयध्वमितीत्यंब्रवीत्पूर्व इत्यादित्यानृतवः पद्गं॥————[३]

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेविति। स एतं दर्शहोतारमपश्यत्। तेनं दश्धाऽऽत्मानं विधायं। दर्शहोत्राऽतप्यत। तस्य चित्तिः सुगासीत्। चित्तमाज्यम्। तस्यैतावंत्येव वागासीत्। एतावानं यज्ञऋतुः। स चतुंर्होतारमसृजत। सोऽनन्दत्॥२१॥

असृंक्षि वा इमिमितिं। तस्य सोमों ह्विरासींत्। स चतुंर्होत्राऽतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भूरिति व्याहंरत्। स भूमिंमसृजत। अग्निहोत्रं दंर्शपूर्णमासौ यजूर्ंषि। स द्वितीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स भुव इति व्याहंरत्॥२२॥

सौंऽन्तिरेक्षमसृजत। चातुर्मास्यानि सामानि। स तृतीयंमतप्यत। सोंऽताम्यत्। स सुवृरिति व्याहंरत्। स दिवंमसृजत। अग्निष्टोममुक्थ्यंमितरात्रमृचंः। एता वै व्याहंतय इमे लोकाः। इमान्खलु वे लोकानन् प्रजाः प्शवृश्छन्दार्सस् प्राजांयन्त। य एवमेताः प्रजापंतेः प्रथमा व्याहंतीः प्रजांता वेदं॥२३॥

प्र प्रजयां पृश्निर्मिथुनैर्जायते। स पश्चंहोतारम-सृजत। स ह्विर्नाविन्दत। तस्मै सोमंस्तुनुवं प्रायंच्छत्। पृतत्ते ह्विरितिं। स पश्चंहोत्राऽतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्रत्यङ्कंबाधत। सोऽसुंरानसृजत। तद्स्याप्रियमासीत्॥२४॥

तद्दुर्वर्ण् हरेण्यमभवत्। तद्दुर्वर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मे। स द्वितीयंमतप्यत। सोऽताम्यत्। स प्राङंबाधत। स देवाने-सृजत। तदंस्य प्रियमांसीत्। तथ्सुवर्ण् हरेण्यमभवत्। तथ्सुवर्णस्य हिरेण्यस्य जन्मे। य एव॰ सुवर्णस्य हिरेण्यस्य जन्म वेदं॥२५॥

सुवर्ण आत्मनां भवति। दुर्वर्णोंऽस्य भ्रातृं व्यः। तस्मां थ्युवर्ण् १ हिरंण्यं भार्यम्। सुवर्णं एव भवति। ऐनं प्रियं गंच्छति नाप्रियम्। स सप्तहों तारमसृजत। स सप्तहों तेव सुंवर्णं लोकमात्। त्रिण्वेन स्तोमें नैभ्यो लोकभ्यो-

ऽसुंरान्प्राणुंदत। त्रयस्त्रिष्ट्शेन् प्रत्यंतिष्ठत्। एक्विष्ट्शेन् रुचंमधत्त॥२६॥

स्प्तद्शेन प्राजांयत। य एवं विद्वान्थ्सोमेन यजंते। सप्तहोंत्रैव सुंवर्गं लोकमेति। त्रिणवेन स्तोमेनैभ्यो लोकभ्यो भ्रातृंव्यान्प्रणुंदते। त्र्यस्त्रिष्शेन प्रति तिष्ठति। एकविष्शेन रुचं धत्ते। सप्तद्शेन प्र जांयते। तस्मांध्सप्तद्शः स्तोमो न निर्हृत्यः। प्रजापंतिवें सप्तद्शः। प्रजापंतिमेव मध्यतो धत्ते प्रजांत्यै॥२७॥

अनुन्दद्भव इति व्याहंर्द्वेदांसीद्वेदांधत्त प्रजाँत्यै॥=

[8]

देवा वै वर्रणमयाजयन्। स यस्यैयस्यै देवतांयै दक्षिणामनंयत्। तामंब्रीनात्। तेंंऽब्रुवन्। व्यावृत्य प्रतिंगृह्णम। तथां नो दक्षिणा न ब्रेंष्यतीतिं। ते व्यावृत्य प्रत्यंगृह्णन्। ततो वै तान्दक्षिणा नाब्रीनात्। य एवं विद्वान्व्यावृत्य दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। नैनं दक्षिणा ब्रीनाति॥२८॥

राजां त्वा वरुंणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिरंण्यमित्यांह। आग्नेयं वै हिरंण्यम्। स्वयैवेनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। सोमाय वास इत्यांह। सौम्यं वै वासंः। स्वयैवेनंद्देवतंया प्रतिगृह्णाति। रुद्राय गामित्यांह। रौद्री वै गौः। स्वयैवेनां देवतंया प्रतिंग्ह्णाति। गृह्णाति। वरुंणायाश्वमित्यांह॥२९॥

वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिंगृह्णाति। प्रजापंतये पुरुषमित्यांह। प्राजापत्यो वै पुरुषः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। मनंवे तल्पमित्यांह। मान्वो वै तल्पंः। स्वयैवैनं देवतंया प्रतिं गृह्णाति। उत्तानायांङ्गीर्सायान् इत्यांह। इयं वा उत्तान आंङ्गीरसः॥३०॥

अनयैवैन्त्प्रति गृह्णाति। वैश्वानयर्चा रथं प्रति गृह्णाति। वैश्वानरो वै देवतया रथंः। स्वयैवैनं देवतया प्रति गृह्णाति। तेनांमृत्त्वमंश्यामित्यांह। अमृतमेवाऽऽत्मन्धत्ते। वयो दात्र इत्यांह। वयं एवैनं कृत्वा। सुवर्गं लोकं गंमयति। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्र इत्यांह॥३१॥

यद्वै शिवम्। तन्मयंः। आत्मनं एवेषा परींत्तिः। क इदं कस्मां अदादित्यांह। प्रजापंतिर्वे कः। स प्रजापंतये ददाति। कामः कामायेत्यांह। कामेन हि ददांति। कामेन प्रतिगृह्णातिं। कामों दाता कामः प्रतिग्रहीतेत्यांह॥३२॥

कामो हि दाता। कामंः प्रतिग्रहीता। कामरं समुद्रमाविशे-त्यांह। समुद्र इंवृ हि कामंः। नेवृ हि कामस्यान्तोऽस्ति। न संमुद्रस्यं। कामंन त्वा प्रतिगृह्णामीत्यांह। येन कामंन प्रतिगृह्णाति। स एवेनंममुष्मिं ह्लोके काम आगंच्छति। कामैतत्तं एषा ते काम दक्षिणेत्यांह। कामं एव तद्यजंमानो-ऽमुष्मिं ह्लोके दक्षिणामिच्छति। न प्रतिग्रहीतिरं। य एवं विद्वान्दक्षिणां प्रतिगृह्णातिं। अनृणामेवेनां प्रति गृह्णाति॥३३॥

ह्रीनात्यश्वमित्यांहाङ्गीर्सः प्रंतिग्रही्त्र इत्यांह प्रतिग्रही्तेत्यांह् दक्षिणेत्यांह चुत्वारि च॥————[५]

अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। दुश्मे-ऽहंन्थ्सर्पराज्ञियां ऋग्भिः स्तुंवन्ति। यज्ञस्यैवान्तंं गृत्वा। अन्नाद्यमवं रुन्धते। तिसृभिः स्तुवन्ति। त्रयं ड्रमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्योऽन्नाद्यमवं रुन्धते। पृश्चिवतीर्भवन्ति। अन्नं वै पृश्चि॥३४॥

अन्नमेवावं रुन्थते। मनंसा प्रस्तौति। मन्सोद्गायित। मनंसा प्रति हरति। मनं इव हि प्रजापंतिः। प्रजापंतेरात्यै। देवा वै सूर्पाः। तेषांमिय राज्ञी। यथ्संपराज्ञियां ऋग्भिः स्तुवन्ति। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठन्ति॥३५॥

चतुंरहोतृन् होता व्याचेष्टे। स्तुतमनुंशश्सित् शान्त्यैं। अन्तो वा एष यज्ञस्यं। यद्दंशममहंः। एतत्खलु वै देवानां पर्मं गृद्धं ब्रह्मं। यचतुंरहोतारः। दश्मेऽह्ड्श्चतुंर्-होतृन्व्याचेष्टे। यज्ञस्यैवान्तं गृत्वा। प्रमं देवानां गृद्धं ब्रह्मावं रुन्थे। तदेव प्रकाशं गंमयति॥३६॥

तदेनं प्रकाशं गृतम्। प्रकाशं प्रजानां गमयित। वाचं यच्छति। यज्ञस्य धृत्ये। यज्ञमानदेवत्यं वा अहं। भातृव्यदेवत्यां रात्रिः। अहा रात्रिं ध्यायेत्। भातृंव्यस्यैव तल्लोकं वृंङ्के। यद्दिवा वाचं विसृजेत्। अहुर्भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। यन्नक्तं विसृजेत्। रात्रिं भातृंव्यायोच्छि १ षेत्। अधिवृक्षसूर्ये वाचं विसृंजिति। एतावंन्तमेवास्में लोकमुच्छि १ षति। यावंदादित्यों-ऽस्तमेति॥३७॥

पृष्ठिञं तिष्ठन्ति गमयति शि॰पे्त्पश्चं च॥—————[६]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ताः सृष्टाः समंश्लिष्यन्। ता रूपेणानुप्राविंशत्। तस्मांदाहुः। रूपं वे प्रजापंतिरितिं। ता नाम्नाऽनु प्राविंशत्। तस्मांदाहुः। नाम् वे प्रजापंतिरितिं। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयंते॥३८॥

मित्रमेव भंवतः। प्रजापंतिर्देवासुरानंसृजत। स इन्द्रमपि नासृंजत। तं देवा अंब्रुवन्। इन्द्रं नो जन्येति। स आत्मन्निन्द्रंमपश्यत्। तमंसृजत। तं त्रिष्टुर्ग्वीर्यं भूत्वाऽनु प्राविंशत्। तस्य वर्ज्ञः पश्चद्शो हस्त आपंद्यत। तेनोदय्यासुंरानुभ्यंभवत्॥३९॥

य एवं वेदं। अभि भ्रातृंच्यान्भवति। ते देवा असुंरैर्विजित्यं। सुव्गं लोकमायन्। तेंऽमुष्मिं श्लोके व्यक्षध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमृतंः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोंतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्पयेतिं॥४०॥

तस्य वा इयं क्रिप्तिः। यदिदं किं ची य एवं वेदी कर्ल्पतेऽस्मै। स वा अयं मेनुष्येषु युज्ञः सप्तहोता। अमुत्री सुद्धो देवेभ्यो हव्यं वहिति। य एवं वेदी उपैनं युज्ञो नेमिति। सोंऽमन्यत। अभि वा इमेंऽस्माल्लोकादमुं लोकं केमिष्यन्त इति। स वार्चस्पते हृदिति व्याहरत्। तस्मौत्पुत्रो हृदयम्। तस्मोद्स्माल्लोकादमुं लोकं नाभि कामयन्ते। पुत्रो हि हृदयम्॥४१॥

ह्वयंते अभवत्कल्प्येतीतिं चृत्वारिं च॥______

देवा वै चतुंरहोतृभिर्य्ज्ञमंतन्वत। ते वि पाप्मना भ्रातृंव्येणाजंयन्त। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। य एवं विद्वा ॥ श्रुत्तंतृभिर्य्ज्ञं तंनुते। वि पाप्मना भ्रातृंव्येण जयते। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। षड्ढोंत्रा प्रायणीयमा सांदयति। अमुष्मै वे लोकाय षड्ढोंता। प्रन्ति खलु वा एतथ्सोमम्। यदंभिषुण्वन्तिं॥ ४२॥

ऋजुधेवैनंमुमुं लोकं गंमयति। चतुंर्होत्राऽऽतिथ्यम्। यशो व चतुंर्होता। यशं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। पश्चंहोत्रा पशुमुपंसादयति। सुव्ग्यों वै पश्चंहोता। यजंमानः पृशुः। यजंमानमेव सुव्गं लोकं गंमयति। ग्रहानगृहीत्वा सप्तहोतारं जुहोति। इन्द्रियं वे सप्तहोता॥४३॥

ड्रन्द्रियमेवाऽऽत्मन्धंत्ते। यो वै चतुंर्होतॄननुसव्नं तुर्पयंति। तृप्यंति प्रजयां पृशुभिः। उपैन सोमपीथो नमिति। बहिष्प्वमाने दशंहोतारं व्याचंक्षीत। माध्यं दिने पवमाने चतुंर्होतारम्। आर्भवे पवमाने पश्चंहोतारम्। पितृयज्ञे षङ्कोतारम्। यज्ञायज्ञियंस्य स्तोत्रे सप्तहोतारम्।

अनुसुवनमेवैना इंस्तर्पयति॥४४॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नमित। देवा वै चतुरहोतृभिः स्त्रमांसत। ऋद्धिपरिमितं यशंस्कामाः। तैऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषात्रस्तथ्सहास्दितिं। सोम्श्चतुरहोत्रा। अग्निः पश्चंहोत्रा। धाता षड्ढौत्रा॥४५॥

इन्द्रंः सप्तहोत्रा। प्रजापंतिर्दर्शहोत्रा। तेषा् सोम् राजांनं यशं आर्च्छत्। तन्त्र्यंकामयत। तेनापांकामत्। तेनं प्रलायंमचरत्। तं देवाः प्रेषेः प्रैषंमैच्छन्। तत्प्रैषाणां प्रैष्वत्वम्। निविद्धिन्यंवेदयन्। तन्निविद्विन्वम्॥४६॥

आप्रीभिराप्नुवन्। तदाप्रीणांमाप्रित्वम्। तमंघ्नन्। तस्य यशो व्यंगृह्णतः। ते ग्रहां अभवन्। तद्ग्रहांणां ग्रह्त्वम्। यस्यैवं विदुषो ग्रहां गृह्यन्तें। तस्य त्वंव गृंहीताः। तेंऽब्रुवन्। यो वै नः श्रेष्ठो-ऽभूत्॥४७॥

तमंवधिष्म। पुनेरिम १ सुंवामहा इतिं। तं छन्दोभिरसुवन्त। तच्छन्दंसां छन्द्स्त्वम्। साम्रा समानंयन्। तथ्साम्नः सामृत्वम्। उक्थैरुदंस्थापयन्। तदुक्थानांमुक्थृत्वम्। य एवं वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥४८॥

सर्वमायुरिति। सोमो वै यशः। य एवं विद्वान्थ्सोमंमागच्छंति। यशं एवैनंमृच्छति। तस्मादाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। तावुमौ सोम्मार्गच्छतः। सोम्] हि यशंः। तं त्वाऽव यशं ऋच्छुतीत्यांहुः। यः सोम् सोम् प्राहेति। तस्माथ्सोम् सोमः प्रोच्यः। यशं एवैनंमृच्छति॥४९॥

अभिषुण्वन्तिं सप्तहौंता तर्पयित पङ्क्षात्रा निवित्त्वमभूँतिष्ठति प्राहेति द्वे चं॥—————[८]

ड्डदं वा अग्रे नैव किं च नाऽऽसींत्। न द्यौरांसीत्। न पृंथिवी। नान्तरिक्षम्। तदसंदेव सन्मनोऽकुरुत् स्यामितिं। तदंतप्यत। तस्मात्तेपानाद्धूमोऽजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मात्तेपानादग्निरंजायत। तद्भ्योऽतप्यत॥५०॥

तस्मौत्तेपानाञ्चोतिरजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मौत्तेपाना-दर्चिरंजायत। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मौत्तेपानान्मरीचयो-ऽजायन्त। तद्भ्योऽतप्यत। तस्मौत्तेपानादुंदारा अंजायन्त। तद्भ्योऽतप्यत। तद्भ्रमिव समहन्यत। तद्वस्तिमंभिनत्॥५१॥

स संमुद्रोऽभवत्। तस्माँथ्समुद्रस्य न पिंबन्ति। प्रजनेनमिव हि मन्यंन्ते। तस्माँत्पृशोर्जायंमानादापंः पुरस्ताँद्यन्ति। तद्दशंहोताऽन्वंसृज्यत। प्रजापंतिर्वे दशंहोता। य एवं तपंसो वीर्यं विद्वाङ्स्तप्यंते। भवंत्येव। तद्वा इदमापंः सिललमांसीत्। सोऽरोदीत्प्रजापंतिः॥५२॥

स करमां अज्ञि। यद्यस्या अप्रंतिष्ठाया इतिं। यद्पस्वंवापंद्यत। सा पृंथिव्यंभवत्। यद्यमृष्ट। तद्न्तिरंक्षम-भवत्। यदूर्ध्वमुदमृष्ट। सा द्यौरंभवत्। यदरोंदीत्। तद्नयों रोदस्त्वम्॥५३॥ य एवं वेदे। नास्यं गृहे रुंदन्ति। एतद्वा एषां लोकानां जन्मं। य एवमेषां लोकानां जन्म वेदे। नैषु लोकेष्वार्तिमार्च्छति। स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। स इमां प्रतिष्ठां वित्वाऽकांमयत् प्रजांयेयेति। स तपोऽतप्यत। सौऽन्तर्वानभवत्। स जघनादसुंरानसृजत॥५४॥

तेभ्यों मृन्मये पात्रेऽन्नंमदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा तिमस्राऽभवत्। सोऽकामयत् प्रजायेयेति। स तपोऽतप्यत। सोन्तर्वानभवत्। स प्रजननादेव प्रजा अंस्जत। तस्मादिमा भूयिष्ठाः। प्रजननाद्धोना असृंजत॥५५॥

ताभ्यों दारुमये पात्रे पयोंऽदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्। तामपाहत। सा जोथ्स्नांऽभवत्। सोंऽकामयत् प्रजायेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स उंपपक्षाभ्यांमेवर्तूनं-सृजत। तेभ्यों रज्ते पात्रे घृतमंदुहत्। याऽस्य सा तुनूरासींत्॥५६॥

तामपांहत। सोंऽहोरात्रयोः सन्धिरंभवत्। सोंऽकामयत् प्रजांयेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सोंऽन्तर्वानभवत्। स मुखाँद्वानंसृजत। तेभ्यो हरिते पात्रे सोमंमदुहत्। याऽस्य सा तनूरासीत्। तामपांहत। तदहंरभवत्॥५७॥

पुते वै प्रजापंतेर्दोहाँः। य पुवं वेदं। दुह पुव प्रजाः। दिवा वै नोऽभूदितिं। तद्देवानां देवत्वम्। य पुवं देवानां देवत्वं वेदं। देववानेव भवति। एतद्वा अहोरात्राणां जन्मं। य एवमहोरात्राणां जन्म वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छति॥५८॥

अस्तोऽधि मनोंऽसृज्यत। मनंः प्रजापंतिमसृजत। प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। तद्वा इदं मनंस्येव पंर्मं प्रतिष्ठितम्। यदिदं किं चं। तदेतच्छ्वांवस्यसन्नाम् ब्रह्मं। व्युच्छन्तीं व्युच्छन्त्यस्मै वस्यंसीवस्यसी व्युंच्छति। प्रजांयते प्रजयां प्शुभिः। प्र पंरमेष्ठिनो मात्रांमाप्रोति। य एवं वेदं॥५९॥

अभिरंजायत् तद्भूयेंऽतप्यताभिनदरोदीत्यृजापंतीरोद्स्त्वमंसृज्तासृंजत् घृतमंदृह्द्याऽस्य सा तृनूरासी्दहंरभवदच्छित् वेदं (इदं धूमाँऽभिज्यींतिंर्चिर्मरींचय उदारास्तद्श्रः स ज्ञ्यनाथ्सा तिमंस्रा स प्रजनंनाथ्सा जोथ्स्रा स उंपप्क्षाभ्याः सींऽहोरात्रयाः स्थिः स मुखात्तदहंर्देववांनमृन्मये दारुमये रज्ञते हिरंते तेभ्यस्ताभ्यो द्वे तेऽत्रं पर्यो घृतः सोमम्॥॥----[γ]

प्रजापितिरिन्द्रंमसृजतानुजाव्रं देवानांम्। तं प्राहिणोत्। परेंहि। एतेषां देवानामधिपितरेधीतिं। तं देवा अंब्रुवन्। कस्त्वमिसं। व्यं वै त्वच्छ्रेयार्थसः स्मृ इतिं। सोंऽब्रवीत्। कस्त्वमिसं व्यं वै त्वच्छ्रेयार्थसः स्मृ इतिं मा देवा अंवोच्नितिं। अथ् वा इदं तर्हिं प्रजापंतौ हरं आसीत्॥६०॥

यद्स्मिन्नांदित्ये। तदेनमब्रवीत्। एतन्मे प्रयंच्छ। अथाहमेतेषां देवानामधिपतिभीविष्यामीति। कोऽह इ स्यामित्यंब्रवीत्। एतत्प्रदायेति। एतथ्स्या इत्यंब्रवीत्। यदेतद्भवीषीति। को ह वै नामं प्रजापतिः। य एवं वेदं॥६१॥ विदुरेंनं नाम्नां। तदंस्मै रुकां कृत्वा प्रत्यंमुश्चत्। ततो वा इन्द्रों देवानामधिपतिरभवत्। य एवं वेदं। अधिपतिरेव संमानानां भवति। सोऽमन्यत। किं किं वा अंकर्मितिं। स चन्द्रं म् आह्रेति प्रालंपत्। तच्चन्द्रमंसश्चन्द्रम्स्त्वम्। य एवं वेदं॥६२॥

चन्द्रवानेव भवति। तं देवा अंब्रुवन्। सुवीर्यो मर्या यथां गोपायत् इतिं। तथ्सूर्यस्य सूर्यत्वम्। य एवं वेदं। नैनं दभ्नोति। कश्च नास्मिन्वा इदिमिन्द्रियं प्रत्यंस्थादितिं। तदिन्द्रंस्येन्द्रत्वम्। य एवं वेदं। इन्द्रियाव्येंव भवति॥६३॥

अयं वा इदं पर्मोऽभूदितिं। तत्परमेष्ठिनः परमेष्ठित्वम्। य एवं वेदे। प्रमामेव काष्ठां गच्छति। तं देवाः संमन्तं पर्यविशन्। वसंवः पुरस्तात्। रुद्रा देक्षिणतः। आदित्याः पश्चात्। विश्वे देवा उत्तर्तः। अङ्गिरसः प्रत्यश्चम्॥६४॥

साध्याः परांश्चम्। य एवं वेदं। उपेंन समानाः संविशन्ति। स प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा आवंयत्। ता अंस्मै नातिष्ठन्तान्नाद्यांय। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। दक्षिणतः पर्यायन्। स दक्षिणतः पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखं दक्षिणतः॥६५॥

पृश्चात्पर्यायन्। स पृश्चात्पर्यवर्तयत। ता मुखं पुरस्ता-

त्पश्यंन्तीः। मुखंं दक्षिणृतः। मुखंं पृश्चात्। उत्तर्तः पर्यायन्। स उत्तर्तः पर्यवर्तयत। ता मुखंं पुरस्तात्पश्यंन्तीः। मुखंं दक्षिणृतः। मुखंं पृश्चात्॥६६॥

मुखंमुत्तर्तः। ऊर्ध्वा उदांयन्। स उपरिष्टान्त्र्यंवर्तयत। ताः सुर्वतांमुखो भूत्वाऽऽवंयत्। ततो वै तस्मैं प्रजा अतिष्ठन्तान्नाद्यांय। य एवं विद्वान्परि च वृर्तयंते नि चं। प्रजापंतिरेव भूत्वा प्रजा अत्ति। तिष्ठंन्तेऽस्मै प्रजा अन्नाद्यांय। अन्नाद एव भवति॥६७॥

आसीद्वेदं चन्द्रमुस्त्वं य एवं वेदेंन्द्रियाव्येव भविति प्रत्यश्चं मुखं दक्षिणतो मुखं पृक्षात्रवं च॥————[१०]

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं दशंहोतारमपश्यत्। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स दशंहोतारं प्रयुंश्चीत। बहोरेव भूयाँन्भवति। सोऽकामयत वीरो म आजांयेतेतिं। स दशंहोतुश्चतुंरहोतारं निर्रमिमीत। तं प्रायुंङ्कः॥६८॥

तस्य प्रयुक्तीन्द्रोंऽजायत। यः कामयेंत वीरो म् आजायेतेतिं। स चतुर्होतार् प्रयुक्षीत। आऽस्ये वीरो जायते। सोऽकामयत पशुमान्थ्स्यामितिं। स चतुर्होतुः पश्चंहोतार् निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति पशुमानंभवत्। यः कामयेत पशुमान्थ्स्यामितिं। स पश्चहोतार् प्रयुक्षीत॥६९॥ पृशुमानेव भंवति। सोंऽकामयत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स पश्चंहोतुः षड्ढोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंत्त्य्यृतवौं-ऽस्मा अकल्पन्त। यः कामयेत्त्वों मे कल्पेर्न्नितिं। स षड्ढोतारं प्रयुंञ्जीत। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः। सोंऽकामयत सोम्पः सोंमयाजी स्यांम्। आ में सोम्पः सोंमयाजी जांयेतेतिं॥७०॥

स षड्ढोतुः स्प्तहोतारं निरंमिमीत। तं प्रायुंङ्कः। तस्य प्रयुंक्ति सोम्पः सोमयाज्यंभवत्। आऽस्यं सोम्पः सोमयाज्यंजायत। यः कामयेत सोम्पः सोमयाजी स्याम्। आ में सोम्पः सोमयाजी जांयेतेतिं। स स्प्तहोतारं प्रयुंश्चीत। सोम्प एव सोमयाजी भंवति। आऽस्यं सोम्पः सोमयाजी जायते। स वा एष पृशुः पंश्चधा प्रतिं तिष्ठति॥७१॥

पद्भिर्मुखेन। ते देवाः पृशून् वित्वा। सुवर्गं लोकमायन्। तेऽमुष्मिँ श्लोके व्यक्षध्यन्। तेंऽब्रुवन्। अमुतः प्रदानं वा उपंजिजीविमेतिं। ते सप्तहोतारं यज्ञं विधायायास्यम्। आङ्गीर्सं प्राहिण्वन्। एतेनामुत्रं कल्प्येतिं। तस्य वा इयं कृप्तिः॥७२॥

यदिदं किं चं। य एवं वेदं। कर्ल्पतेऽस्मै। स वा अयं मंनुष्येषु यज्ञः सप्तहोता। अमुत्रं सुद्धो देवेभ्यों हृव्यं वहिति। य एवं वेदं। उपैनं यज्ञो नमिति। यो वै चतुंरहोतृणां निदानं वेदं। निदानंवान्भवित। अग्निहोत्रं वै दशंहोतुर्निदानम्। दुर्शपूर्णमासौ चतुर्होतुः। चातुर्मास्यानि पश्चहोतुः। पृशुबन्धः षङ्कोतुः। सौम्यौऽध्वरः सप्तहोतुः। एतद्वै चतुर्होतृणां निदानम्। य पृवं वेदं। निदानवान्भवति॥७३॥ अस्मीत त प्रार्वक्क पश्चेतातं प्र र्वंकीत जायेतिति विष्ठति क्षतिर्वंशहेतुर्निदानरं सम च।——[११]

प्रजापंतिरकामयत प्रजाः स्ंज्येति प्रजापंतिरकामयत दर्शपूर्णमासो स्ंज्येति प्रजापंतिरकामयत् प्रजायेयेति स तपः स त्रिवृतं प्रजापंतिरकामयत् दर्शहोतारं तेनं दश्धाऽऽत्मानं देवा व वर्षण्मन्तो वै प्रजापंतिरकामयत् स्रृष्टाः समेश्चिष्यं देवा वे वर्त्तरहोतृभिरिदं वा अग्रें प्रजापंतिरन्त्रं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयानेकांदश॥११॥
प्रजापंतिस्तद्वहंस्य प्रजापंतिरकामयतानयैवेनृत्तस्य वा ह्यं क्षृष्तिस्तरमांत्तेपानाञ्च्योतिर्यदस्मन्नांदित्ये स पङ्कांतुः सप्तहोंतारं त्रिसंप्तितिः॥७३॥
प्रजापंतिरकामयत निदानंबान्भवति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

ब्रह्मवादिनो वदन्ति। किं चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वमिति। यदेवैषु चतुर्धा होतांरः। तेन चतुंर्होतारः। तस्माचतुंर्होतार उच्यन्ते। तचतुर्रहोतृणां चतुर्होतृत्वम्। सोमो वै चतुंर्होता। अग्निः पश्चंहोता। धाता षड्ढोता। इन्द्रः सप्तहोता॥१॥

प्रजापंतिर्दशंहोता। य एवं चतुरहोतृणामृद्धिं वेदे। ऋभ्रोत्येव। य एषामेवं बन्धुतां वेदे। बन्धुमान्भवति। य एषामेवं कृप्तिं वेदे। कल्पतेऽस्मै। य एषामेवमायतेनं वेदे। आयतेनवान्भवति। य एषामेवं प्रतिष्ठां वेदे॥२॥

प्रत्येव तिष्ठति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। दशहोता चतुंरहोता। पश्चहोता षड्ढोता सप्तहोता। अथ कस्माचतुंरहोतार उच्यन्त इति। इन्द्रो वै चतुंरहोता। इन्द्रः खलु वै श्रेष्ठों देवतांनामुप्-देशंनात्। य एविमन्द्रङ् श्रेष्ठं देवतांनामुप्देशंनाद्वेदं। विसेष्ठः समानानां भवति। तस्माच्छ्रेष्ठंमायन्तं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागनं। अयमवांसादितिं। कीर्तिरंस्य पूर्वाऽऽगंच्छिति जनतांमायतः। अथों एनं प्रथमेनैवानं बुध्यन्ते। अयमागनं। अयमवांसादितिं॥३॥

सप्तहोंता प्रतिष्ठां वेदं बुध्यन्ते षद्धं॥•

·[१

सिनिन्धे। तेजंसे वीर्याय। अथौं प्रजापंतिरेवैनौं भूत्वा प्रतिगृह्णाति। आत्मनोऽनौत्यै। यद्येनमार्त्विज्याद्वृत सन्तें निर्हरेरन्। आग्नीध्रे जुहुयाद्दशंहोतारम्। चुतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पुरस्तौत्प्रत्यिङ्ग्रिष्ठन्। प्रतिलोमं विग्राहम्॥४॥

प्राणानेवास्योपं दासयित। यद्येनं पुनंरुप् शिक्षेयुः। आग्नींप्र एव जुंहयाद्दशंहोतारम्। चतुर्गृहीतेनाऽऽज्येन। पृश्चात्प्राङासीनः। अनुलोममविग्राहम्। प्राणानेवास्में कल्पयित। प्रायंश्चित्ती वाग्घोतेत्यृंतुमुखऋंतुमुखे जुहोति। ऋतूनेवास्में कल्पयित। कल्पंन्तेऽस्मा ऋतवंः॥५॥

कुप्ता अस्मा ऋतव आयंन्ति। षड्ढांता वै भूत्वा प्रजापंतिरिदश् सर्वमसृजत। स मनोंऽसृजत। मन्सोऽधिं गायत्रीमंसृजत। तद्गांयत्रीं यशं आर्च्छत्। तामाऽलंभत। गायत्रिया अधि छन्दाईस्यसृजत। छन्दोभ्योऽधि सामं। तथ्साम यशं आर्च्छत्। तदाऽलंभत॥६॥

साम्रोऽधि यज्र्ंष्यसृजत। यज्भ्योऽधि विष्णुम्। तद्विष्णुं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। विष्णोरध्योषंधीर-सृजत। ओषंधीभ्योऽधि सोमम्। तथ्सोमं यशं आर्च्छत्। तमाऽलंभत। सोमादधि पृशूनंसृजत। पृशुभ्योऽधीन्द्रम्॥७॥

तदिन्द्रं यशं आर्च्छत्। तदेनुन्नाति प्राच्यंवत। इन्द्रं इव यशुस्वी भवति। य एवं वेदं। नैनं यशोऽति प्रच्यंवते। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान प्वाऽऽङ्गिर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वांऽऽङ्गीर्सः प्रतिंगृह्णात्वित्येव प्रतिंगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान
आङ्गीर्सः। अनयैवैन्त्प्रतिंगृह्णाति। नैन हिनस्ति। बर्हिषा
प्रतीयाद्गां वाऽश्वं वा। पृतद्वे पंशूनां प्रियं धामं। प्रियेणैवैनं
धाम्ना प्रत्येति॥८॥

विग्राहंमृतवस्तदाऽलंभतेन्द्रं गृह्णीयाथ्यद्वं॥

-[२]

यो वा अविद्वान्निवर्तयंते। विशीर्षा सपाँप्माऽमुिष्में हो के भेवति। अथ यो विद्वान्निवर्तयंते। सशीर्षा विपाँप्मा-ऽमुिष्में हो के भेवति। देवता वै सप्त पृष्टिकामा न्यंवर्तयन्त। अग्निश्चं पृथिवी चं। वायुश्चान्तरिक्षं च। आदित्यश्च द्यौश्चं चन्द्रमाँः। अग्निर्न्यंवर्तयत। स साहस्रमंपुष्यत्॥९॥

पृथिवी न्यंवर्तयत। सौषंधीभिर्वन्स्पतिंभिरपुष्यत्। वायुर्न्यवर्तयत। स मरींचीभिरपुष्यत्। अन्तरिंक्षुं न्यंवर्तयत। तद्वयोंभिरपुष्यत्। आदित्यो न्यंवर्तयत। स रृश्मिभिरपुष्यत्। द्यौर्न्यवर्तयत। सा नक्षंत्रैरपुष्यत्। चन्द्रमा न्यंवर्तयत। सोऽहोरात्रैर्र्धमासैर्मासैर्त्ऋतुभिः संवथ्सरेणांपुष्यत्। तान्योषांन्पुष्यति। याइस्तेऽपुष्यन्। य पृवं विद्वान्नि चं वर्तयंते परिं च॥१०॥

[३]

तस्य वा अग्नेर्हिरंण्यं प्रतिजग्रहुषंः। अर्धिमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्। तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे सौंऽर्धिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। अर्धिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं
विद्वान् हिरंण्यं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं।
अर्धमंस्थेन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वे सोमंस्य वासंः
प्रतिजग्रहुषंः। तृतीयमिन्द्रियस्यापाँक्रामत्॥११॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स तृतींयिमिन्द्रिय-स्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। तृतींयिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वान् वासंः प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविंद्वान्प्रति-गृह्णातिं। तृतींयमस्येन्द्रियस्यापंक्रामित। तस्य वै रुद्रस्य गां प्रतिजग्रहुषंः। चतुर्थिमिन्द्रियस्यापाकामत्। तामेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै स चतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त॥१२॥

चृतुर्थिमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधेत्ते। य एवं विद्वान्गां प्रितिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। चृतुर्थमंस्येन्द्रिय-स्यापंक्रामित। तस्य वे वर्रुणस्यार्श्वं प्रतिजग्रहुषंः। पश्चमिनद्रियस्यापाकामत्। तमेतेनेव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वे स पश्चमिनद्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। पश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्त। पश्चमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्त। य एवं विद्वानश्वं प्रतिगृह्णातिं॥१३॥

अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। पृश्चममंस्येन्द्रियस्यापं-क्रामित। तस्य वै प्रजापंतेः पुरुषं प्रतिजग्रहुषंः। षृष्ठमिन्द्रियस्यापाँकामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स षृष्ठमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्त। षृष्ठमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वान्पुरुषं प्रतिगृह्णाति। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। षृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंत्रामति॥१४॥

तस्य वै मनोस्तर्ल्पं प्रतिजग्रहुषंः। सप्तमिन्द्रिय-स्यापानामत्। तमेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन वै स सप्तमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपाधंत्त। सप्तमिनद्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपाधंत्ते। य एवं विद्वाङ्स्तर्ल्पं प्रतिगृह्णातिं। अथ् योऽविद्वान्प्रतिगृह्णातिं। सप्तममंस्येन्द्रियस्यापंकामित। तस्य वा उत्तानस्याऽऽङ्गीर्सस्याप्राणत्प्रतिजग्रहुषंः। अष्टमिनद्रियस्यापानामत्॥१५॥

तदेतेनैव प्रत्यंगृह्णात्। तेन् वै सौंऽष्ट्रमिन्द्रियस्या-ऽऽत्मन्नुपार्धत्त। अष्ट्रमिन्द्रियस्याऽऽत्मन्नुपार्धत्ते। य एवं विद्वानप्राणत्प्रतिगृह्णाति। अथ योऽविद्वान्प्रतिगृह्णाति। अष्ट्रम-मंस्येन्द्रियस्यापंत्रामित। यद्वा इदं किं चं। तथ्सर्वमृत्तान एवाऽऽङ्गीर्सः प्रत्यंगृह्णात्। तदेनं प्रतिगृहीतं नाहिनत्। यत्किं चं प्रतिगृह्णीयात्। तथ्सर्वमृत्तानस्त्वाऽऽङ्गीर्सः प्रतिगृह्णात्वित्येव प्रतिगृह्णीयात्। इयं वा उत्तान आँङ्गीर्सः। अनयैवैन्त्प्रतिगृह्णाति। नैन हं हिनस्ति॥१६॥

तृतींयमिन्द्रियस्यापाँकामचतुर्थिमिन्द्रियस्यात्मन्नुपाधृतार्श्वं प्रतिगृह्णातिं पृष्ठमंस्येन्द्रियस्यापंकामत्यष्ट्मिमिन्द्रियस्यापाँकामत्प्रतिगृह्णीयाचृत्वारिं च (तस्य वा अग्रेग्रिहेरण्यु सोमंस्य वास्ततदेतेनं रुद्रस्य गान्तामेतेन वर्रुणस्यार्श्वं प्रजापतेः पुरुषु मनोस्तत्युन्तमेतेनौत्तानस्य तदेतेनाप्राण्यद्वे। अर्थं तृतींयमष्ट्मं तचतुर्थं तां पंश्रमः पृष्ठः संतुमन्तम्। तदेतेन द्वे तामेतेनेकुं तमेतेन त्रीणि

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यद्दशंहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनं प्रजा अंसृजन्तेतिं। प्रजापंतिना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनं प्रजा अंसृजन्त। यचतुंर्होतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनौषंधीरसृजन्तेतिं। सोमंन् वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१७॥

तेनौषंधीरसृजन्त। यत्पश्चंहोतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। केनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। केनैषां पृशूनंवृञ्जतेति। अग्निना वै ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्। तेनैभ्यो लोकभ्योऽसुंरान्प्राणुंदन्त। तेनैषां पृशूनंवृञ्जत। यथ्यङ्कांतारः सृत्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्ध्रुवन्॥१८॥

केन्तूनंकल्पयन्तेति। धात्रा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्भुवन्। तेन्तूनंकल्पयन्त। यथ्सप्तहोतारः स्त्रमासंत। केन् ते गृहपंतिनाऽऽर्भुवन्। केन् सुवंरायन्। केन्माँ श्लोकान्थ्समं-तन्वन्नितिं। अर्यम्णा वै ते गृहपंतिनाऽऽर्भुवन्। तेन् सुवंरायन्। तेन्माँ श्लोकान्थ्समंतन्वन्नितिं॥१९॥

पृते वै देवा गृहपंतयः। तान् य पृवं विद्वान्। अप्यन्यस्यं गार्हपते दीक्षंते। अवान्तरमेव सत्त्रिणांमृभ्नोति। यो वा अर्थमणं वेदं। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। यज्ञो वा अर्थमा। आर्यावस्तिरिति वै तमांहुर्यं प्रश्र संन्ति। आर्यावस्तिर्भवति। य पृवं वेदं॥२०॥

यद्वा इदं किं चे। तथ्सर्वं चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिं यज्ञो निर्मितः। स य एवं विद्वान् विवदेत। अहमेव भूयों वेद। यश्चतुंर्होतृ्न् वेदेतिं। स ह्येव भूयो वेदं। यश्चतुंर्होतृ्न् वेदं। यो वै चतुंर्होतृणा् १ होतृन् वेदं। सर्वांसु प्रजास्वन्नंमत्ति॥२१॥

सर्वा दिशोऽभि जंयति। प्रजापंतिर्वे दर्शहोतृणा् होतां। सोम्श्चतुंरहोतृणा् होतां। अग्निः पश्चंहोतृणा् होतां। धाता षड्ढोतृणा् होतां। अर्यमा सप्तहोतृणा् होतां। एते व चतुंरहोतृणा् होतांरः। तान् य एवं वेदं। सर्वासु प्रजास्वन्नंमत्ति। सर्वा दिशोऽभि जंयति॥२२॥

आर्धुवृत्रार्धुवृत्रित्येवं वेदाँत्ति सर्वा दिशोऽभि जंयति (वै तेनं सुत्रङ्कनं॥)॥lacktriangledown

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा व्यंस्नश्सत। स हृदंयं भूतों-ऽशयत्। आत्मन् हा (३) इत्यह्वंयत्। आपः प्रत्यंश्वण्वन्। ता अग्निहोत्रेणैव यंज्ञकृतुनोपं पूर्यावंतन्त। ताः कुसिन्धमुपौहन्। तस्मादग्निहोत्रस्यं यज्ञकृतोः। एकं ऋत्विक्। चृतुष्कृत्वो-ऽह्वंयत्। अग्निर्वायुरांदित्यश्चन्द्रमाः॥२३॥

ते प्रत्येशृण्वन्। ते देर्शपूर्णमासाभ्यांमेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौहङ्श्चत्वार्यङ्गांनि। तस्माँदर्शपूर्ण-मासयौर्यज्ञऋतोः। चत्वारं ऋत्विजः। पृश्चकृत्वोऽह्वंयत्। पृशवः प्रत्यंशृण्वन्। ते चांतुर्मास्येरेव यंज्ञऋतुनोपं पूर्यावंतन्त। त उपौहुं लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥

तस्मौचातुर्मास्यानां यज्ञऋतोः॥२४॥

पश्चर्तिजंः। षट्कृत्वोऽह्वंयत्। ऋतवः प्रत्यंशृण्वन्। ते पंशुब्न्धेनैव यंज्ञऋतुनोपंपूर्यावंर्तन्त। त उपौह्न्थ्स्तनांवाण्डो शिश्ञमवाश्चं प्राणम्। तस्मात्पशुब्न्धस्यं यज्ञऋतोः। षड्विजंः। स्प्तकृत्वोऽह्वंयत्। होत्राः प्रत्यंशृण्वन्। ताः सौम्येनैवाध्वरेणं यज्ञऋतुनोपंपर्यावंर्तन्त॥२५॥

ता उपौहन्थ्सप्त शीर्षण्यांन्प्राणान्। तस्मांथ्यौम्यस्यांध्वरस्यं यज्ञकृतोः। सप्त होत्राः प्राचीर्वषंद्भुविन्ति। दशकृत्वोऽह्वंयत्। तपः प्रत्यंश्रणोत्। तत्कर्मणैव संवथ्यरेण सर्वैयज्ञकृतुभिरुपं पर्यावर्ततः। तथ्सर्वमात्मान्मपरिवर्गमुपौहत्। तस्मांथ्यंवथ्यरे सर्वे यज्ञकृतवोऽवंरुध्यन्ते। तस्माद्दशंहोता चतुंर्होता। पर्श्वहोता षङ्कोता सप्तहोता। एकहोत्रे बिलिश हंरन्ति। हर्रन्त्यस्मै प्रजा बिलिम्। ऐन्मप्रंतिख्यातं गच्छति। य पृवं वेदं॥२६॥

चुन्द्रमाँश्चातुर्मास्यानां यज्ञकृतोरंष्वरेणं यज्ञकृतुनोपं पुर्यावर्तन्त सप्तहोता चुत्वारिं च॥————[६]

प्रजापंतिः पुरुषमसृजत। सौंऽग्निरंब्रवीत्। ममायमन्नं-मस्त्विति। सोऽबिभेत्। सर्वं वे माऽयं प्र धंक्ष्यतीति। स एता इश्चतुं रहोतृनात्मस्परंणानपश्यत्। तानं जुहोत्। तैर्वे स आत्मानं मस्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकंहोतारमेव तद्यं ज्ञुतुं नात्पा स्पृणोत्। यदंग्निहोत्रं जुहोति। एकंहोतारमेव तद्यं ज्ञुतुं नात्पा स्पृणोत्। स्वां ज्ञुत्वा निष्णे स्वां ज्ञुत्वा निष्णे स्वां ज्ञुत्वा निष्णे स्वां स्वां ज्ञुत्वा निष्णे स्वां स्वां ज्ञुत्वा निष्णे स्वां स्वा

कुसिन्धं चाऽऽत्मनः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। चतुरहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति दर्शपूर्णमासौ। चत्वारि चाऽऽत्मनोऽङ्गानि स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयित। समित्पश्चमी। पश्चहोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति चातुर्मास्यानि। लोमं छुवीं मार्समस्थिं मुज्ञानम्॥२८॥

तानिं चाऽऽत्मनः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति। षङ्कोतारमेव तद्यंज्ञऋतुमाँप्रोति पशुबन्धम्। स्तनांवाण्डौ शिश्ञमवाँश्चं प्राणम्। तानिं चाऽऽत्मनः स्पृणोतिं। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नयति। द्विर्जुहोति॥२९॥

स्मिथ्संप्तमी। स्प्तहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्रोति सौम्यमध्वरम्। सप्त चाऽऽत्मनः शीर्षण्याँन्प्राणान्थस्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति। चतुरुन्नंयति। द्विर्जुहोति। द्विर्निमाँष्टिं। द्विः प्राश्ञांति। दशंहोतारमेव तद्यंज्ञकृतुमाँप्नोति संवथ्मरम्। सर्वं चाऽऽत्मान्मपंरिवर्गः स्पृणोति। आदित्यस्यं च सायुंज्यं गच्छति॥३०॥

अृिष्रहोत्रं मुज्ञानुन्द्विर्जुहोत्यपंरिवर्ग ξ स्पृणोत्येकं च॥lacksquare

प्रजापंतिरकामयत् प्रजाययेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। सौंऽन्तर्वानभवत्। स हरितः श्यावोंऽभवत्। तस्माथ्स्र्यंन्तर्वन्नी। हरिणी सती श्यावा भंवति। स विजायंमानो गर्भेणाताम्यत्। स तान्तः कृष्णः श्यावोऽभवत्। तस्मान्तान्तः कृष्णः श्यावो भंवति। तस्यासुरेवाजीवत्॥३१॥

तेनासुनाऽसुंरानसृजत। तदसुंराणामसुर्त्वम्। य पुवमसुंराणामसुर्त्वं वेदं। असुंमानेव भंवति। नैन्मसुर्जहाति। सोऽसुंरान्थ्सृष्ट्वा पितेवांमन्यत। तदनुं पितॄनंसृजत। तत्पितृणां पितृत्वम्। य एवं पितृणां पितृत्वं वेदं। पितेवैव स्वानां भवति॥३२॥

यन्त्यंस्य पितरो हवमैं। स पितृन्थ्मृष्ट्वाऽऽमंनस्यत्। तदनुं मनुष्यांनसृजता तन्मंनुष्यांणां मनुष्यत्वम्। य एवं मंनुष्यांणां मनुष्यत्वं वेदं। मनुस्त्येव भविति। नैनं मनुंर्जहाति। तस्में मनुष्यांन्थ्ससृजानायं। दिवां देवत्राऽभवत्। तदनुं देवानं-सृजता तद्देवानां देवत्वम्। य एवं देवानां देवत्वं वेदं। दिवां हैवास्यं देवत्रा भविति। तानि वा एतानिं चत्वार्यम्भारंसि। देवा मनुष्याः पितरोऽसुंराः। तेषु सर्वेष्वम्भो नभं इव भवित। य एवं वेदं॥३३॥

अजी्वथ्स्वानां भवति देवानंसृजत सप्त चं॥■

-[८]

ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यो वा इमं विद्यात्। यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुंरियात्। न पुरा-ऽऽयुंषः प्र मीयेत। पृशुमान्थ्स्यात्। विन्देतं प्रजाम्। यो वा इमं वेदं॥३४॥ यतोऽयं पर्वते। यदंभि पर्वते। यदंभि सम्पर्वते। सर्वमायुरिति। न पुराऽऽयुंषः प्र मीयते। पृशुमान्भंवति। विन्दते प्रजाम्। अद्भः पंवते। अपोऽभि पंवते। अपोऽभि सम्पंवते॥३५॥

अस्याः पंवते। इमाम्भि पंवते। इमाम्भि सम्पंवते। अग्नेः पंवते। अग्निम्भि पंवते। अग्निम्भि सम्पंवते। अन्तरिक्षात्पवते। अन्तरिक्षम्भि पंवते। अन्तरिक्षम्भि सम्पंवते। आदित्यात्पंवते॥३६॥

आदित्यम्भि पंवते। आदित्यम्भि सम्पंवते। द्योः पंवते। दिवंम्भि पंवते। दिवंम्भि सम्पंवते। दिग्भ्यः पंवते। दिशोऽभि पंवते। दिशोऽभि सम्पंवते। स यत्पुरस्ताद्वातिं। प्राण एव भूत्वा पुरस्तौद्वाति॥३७॥

तस्मौत्पुरस्ताद्वान्तम्। सर्वाः प्रजाः प्रति नन्दन्ति। प्राणो हि प्रियः प्रजानाम्। प्राण इव प्रियः प्रजानां भवति। य एवं वेदं। स वा एष प्राण एव। अथ् यद्दंक्षिणतो वाति। मात्रिश्वेव भूत्वा दंक्षिणतो वाति। तस्मौद्दक्षिणतो वान्तं विद्यात्। सर्वा दिश आ वाति॥३८॥

सर्वा दिशोऽनु वि वांति। सर्वा दिशोऽनु सं वातीति। स वा एष मांतिरश्वेव। अथु यत्पश्चाद्वाति। पर्वमान एव भूत्वा पृश्चाद्वांति। पूतमंस्मा आहंरन्ति। पूतमुपंहरन्ति। पूतमंश्ञाति। य एवं वेदं। स वा एष पर्वमान एव॥३९॥

अथ् यद्त्तर्तो वाति। स्वितेव भूत्वोत्तर्तो वांति। स्वितेव स्वानां भवति। य एवं वेदे। स वा एष संवितेव। ते य एनं पुरस्तांदायन्तंमुप्वदंन्ति। य एवास्यं पुरस्तांत्पाप्मानंः। ताइस्तेऽपं घ्रन्ति। पुरस्तादितंरान्पाप्मनंः सचन्ते। अथ् य एनं दक्षिण्त आयन्तंमुप्वदंन्ति॥४०॥

य प्वास्यं दक्षिणतः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। दक्षिणत इतंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एंनं पृश्चादायन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यं पृश्चात्पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति। पृश्चादितंरान्पाप्मनः सचन्ते। अथ् य एंनमुत्तर्त आयन्तंमुप् वदंन्ति। य एवास्यौत्तर्तः पाप्मानः। ता इस्तेऽपं घ्रन्ति॥४१॥

उत्तरत इतंरान्याप्मनंः सचन्ते। तस्मदिवं विद्वान्। वीवं नृत्येत्। प्रेवं चलेत्। व्यस्येवाक्ष्यौ भाषेत। मृण्टयेदिव। क्राथयेदिव। शृङ्गायेतेव। उत मोपं वदेयुः। उत में पाप्मान्मपं हन्युरितिं। स यान्दिशः स्निमेष्यन्थ्स्यात्। यदा तान्दिशं वातों वायात्। अथु प्रवेयात्। प्र वां धावयेत्। सातमेव रेदितं व्यूढं गन्धमभि प्रच्यंवते। आऽस्य तं जनपदं पूर्वा कीर्तिर्गच्छिति। दानंकामा अस्मै प्रजा भवन्ति। य एवं वेदं॥४२॥

वेद सम्पंवत आदित्यात्पंवते वात्या वाँत्येष पर्वमान एव दक्षिणत आयन्तंमुप् वदंन्त्युत्तरतः पाप्मानुस्ताः स्तेपं

घ्रन्तीत्यृष्टौ चं॥————

प्रजापंतिः सोम् राजांनमसृजत। तं त्रयो वेदा अन्वसृज्यन्त। तान् हस्तेंऽकुरुत। अथ् ह सीतां सावित्री। सोम् राजांनं चकमे। श्रद्धामु स चंकमे। साऽऽहं पितरंं प्रजापंतिमुपंससार। त॰ होवाच। नमंस्ते अस्तु भगवः। उपं त्वाऽयानि॥४३॥

प्रत्वां पद्ये। सोमं वै राजांनं कामये। श्रद्धामु स कांमयत् इति। तस्यां उ ह स्थांग्रमंलङ्कारं केल्पयित्वा। दशहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंरहोतारं दक्षिणतः। पश्चंहोतारं पश्चात्। षड्ढोतारमुत्तर्तः। सप्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारैश्च पिनिभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं॥४४॥

आऽस्यार्धं वंब्राज। ता रहोदीक्ष्योंवाच। उप मा वंर्तस्वेतिं। त रहोवाच। भोगं तु मृ आचंक्ष्व। एतन्मृ आचंक्ष्व। यत्तें पाणावितिं। तस्यां उह त्रीन् वेदान्प्रदंदौ। तस्मादुहु स्त्रियो भोगुमैव हारयन्ते। स यः कामयेत प्रियः स्यामितिं॥४५॥

यं वां कामयेत प्रियः स्यादितिं। तस्मां एतः स्थांग्रमेलङ्कारं केल्पयित्वा। दर्शहोतारं पुरस्तांद्याख्यायं। चतुंरहोतारं दक्षिण्तः। पश्चंहोतारं पृश्चात्। षङ्कोतारमुत्तरः। स्प्तहोतारमुपरिष्टात्। सम्भारश्च पत्निभिश्च मुखेंऽलङ्कृत्यं। आस्यार्धं व्रजेत्। प्रियो हैव भेवति॥४६॥

-[१०]

ब्रह्मौत्मन्वदंसृजत। तदंकामयत। समात्मनां पद्येयेतिं। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै दश्म १ हूतः प्रत्यंशृणोत्। स दशंहूतोऽभवत्। दशंहूतो हु वै नामैषः। तं वा एतं दशंहूत १ सन्तम्। दशंहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥४७॥

आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं सप्तमः हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स स्प्तहूंतोऽभवत्। स्प्तहूंतो हु वै नामैषः। तं वा पृतः स्प्तहूंतः सन्तम्। स्प्तहोतेत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मैं षष्ठः हूतः प्रत्यंश्रणोत्। स षड्ढूंतोऽभवत्॥४८॥

षडूंतो हु वै नामैषः। तं वा पृतः षडूंतः सन्तम्। पड्ढोतेत्याचंक्षते परोक्षंण। परोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै पश्चमः हूतः प्रत्यंशृणोत्। स पश्चंहूतोऽभवत्। पश्चंहूतो हु वै नामैषः। तं वा पृतं पश्चंहृतः सन्तम्। पश्चंहोतेत्याचंक्षते परोक्षंण॥४९॥

पुरोक्षंप्रिया इव हि देवाः। आत्मन्नात्मन्नित्यामंत्रयत। तस्मै चतुर्थ हूतः प्रत्यंश्वणोत्। स चतुर्ह्तोऽभवत्। चतुर्ह्तो हु वै नामैषः। तं वा पृतं चतुर्ह्तू सन्तम्। चतुर्ह्तित्याचंक्षते प्रोक्षंण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः। तमंत्रवीत्। त्वं वै मे नेदिष्ठ हूतः प्रत्यंश्रोषीः।

त्वयैनानाख्यातार् इतिं। तस्मान्नु हैना्र्श्चतुंर्होतार् इत्याचंक्षते। तस्मांच्छुश्रूषुः पुत्राणा्र् हद्यंतमः। नेदिंष्ठो हद्यंतमः। नेदिष्ठो ब्रह्मणो भवति। य एवं वेदं॥५०॥

देवाः पड्ढूतोऽभवृत्पश्चंहोतेत्याचंक्षते पुरोक्षंणाश्रौषीः पद्वं॥—————[११]

बृह्मवादिनः किं दक्षिणां यो वा अविद्वान्तस्य वै ब्रह्मवादिनो यदशहोतारः प्रजापितिर्व्यंस्रं प्रजापितिः पुरुषं प्रजापितिरकामयत् स तपः सौंऽन्तवाँन्ब्रह्मवादिनो यो वा हुमं विद्यात्प्रजापितिः सोम् राजानं ब्रह्माँत्मन्वदेकांदश॥११॥ ब्रह्मवादिनस्तस्य वा अग्नेर्यद्वा हुदं किं चं प्रजापितिरकामयत् य पुवास्यं दक्षिणतः पंश्वाशत्॥५०॥ ब्रह्मवादिनो य पुवं वेदं॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

जुष्टो दर्मूना अतिथिर्दुरोणे। इमं नों यज्ञमुपं याहि विद्वान्। विश्वां अग्नेऽभियुजों विहत्यं। श्रृत्यूयतामा भरा भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जांस्पृत्य स्पृयम्मा कृणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्रसो। अग्ने यो नोऽभितो जनंः। वृको वारो जिघारंसति॥१॥

ता इस्त्वं वृत्रहं जिहि। वस्वस्मभ्यमा भेर। अग्ने यो नो-ऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। त्विमेन्द्राभिभूरंसि। देवो विज्ञांतवीर्यः। वृत्रहा पुरुचेतंनः। अप प्राचं इन्द्र विश्वार्थं अमित्रान्॥२॥

अपापांचो अभिभूते नुदस्व। अपोदींचो अपंशूराध्रा चं ऊरौ। यथा तव शर्मन्मदेम। तिमन्द्रं वाजयामिस। महे वृत्राय हन्तंवे। स वृषां वृष्भो भुंवत्। युजे रथं गुवेषंण् हरिभ्याम्। उप ब्रह्माणि जुजुषाणमंस्थुः। विबाधिष्टास्य रोदंसी महित्वा। इन्द्रों वृत्राण्यंप्रतीजंघन्वान्॥३॥

ह्व्यवाहंमभिमातिषाहम्। रक्षोहणं पृतंनासु जिष्णुम्। ज्योतिष्मन्तं दीद्यंतं पुरंन्धिम्। अग्निः स्विष्टकृतमा हुवेम। स्विष्टमग्ने अभि तत्पृणाहि। विश्वां देव पृतंना अभि ष्य।

उरुं नः पन्थां प्रदिशन्विभाहि। ज्योतिष्मद्धेह्यजरं न आयुः। त्वामंग्ने हविष्मन्तः। देवं मर्तास ईडते॥४॥

मन्ये त्वा जातवेदसम्। स ह्व्या वंक्ष्यानुषक्। विश्वांनि नो दुर्गहां जातवेदः। सिन्धुं न नावा दुरिताऽतिं पर्षि। अग्नें अत्रिवन्मनंसा गृणानः। अस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पूषा गा अन्वेतु नः। पूषा रक्ष्यत्वर्वतः। पूषा वाजर्रं सनोतु नः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः॥५॥

सो अस्मार अभैयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अघृंणिः सर्ववीरः। अप्रयुच्छन्पुर एंतु प्रजानन्। त्वमंग्ने सप्रथां असि। जुष्टो होता वरेंण्यः। त्वयां यज्ञं वितंन्वते। अग्नी रक्षार्रसि सेधति। शुक्रशोंचिरमंत्र्यः। शुचिः पावक ईड्यः। अग्ने रक्षां णो अर्हसः॥६॥

प्रति ष्म देव रीषंतः। तिपंष्ठेर्जरो दह। अग्ने हश्स् न्यंत्रिणम्। दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत। आ वांत वाहि भेषजम्। वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वश् हि विश्वभेषजः। देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमौ वातौ वातः॥७॥

आ सिन्धोरा पंरावतः। दक्षं मे अन्य आवातुं। परान्यो वांतु यद्रपः। यद्दो वांत ते गृहे। अमृतंस्य निधिर्हितः। ततो नो देहि जीवसें। ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह् आवंह। वात् आवांतु भेषुजम्। शुम्भूर्मयोुभूर्नो हृदे॥८॥

प्रण आयूर्षि तारिषत्। त्वमंग्ने अयासिं। अया सन्मनंसा हितः। अया सन् ह्व्यमूंहिषे। अया नों धेहि भेषजम्। इष्टो अग्निराहुंतः। स्वाहांकृतः पिपर्तु नः। स्वगा देवेभ्यं इदं नमः। कामों भूतस्य भव्यंस्य। सम्राडेको विरांजति॥९॥

स इदं प्रति पप्रथे। ऋतूनुथ्मृंजते वृशी। काम्स्तदग्रे समंवर्ततािधं। मनंसो रेतंः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। त्वयां मन्यो स्रथंमारुजन्तः। हर्षंमाणासो धृष्ता मंरुत्वः। तिग्मेषंव आयुंधा स्रशिशांनाः। उप प्रयंन्ति नरों अग्निरूपाः॥१०॥

मृन्युर्भगों मृन्युरेवासं देवः। मृन्युर्होता वर्रुणो विश्ववेदाः। मृन्युं विश्वं ईडते देवयन्तीः। पाहि नों मन्यो तपसा श्रमेण। त्वमंग्ने व्रत्भृच्छुचिः। देवा असांदया इह। अग्ने ह्व्याय् वोढंवे। व्रतानुबिभ्रंद्वतपा अदांभ्यः। यजां नो देवा अजरः सुवीरः। दध्द्रत्नांनि सुविदानो अग्ने। गोपाय नों जीवसे जातवेदः॥११॥

जिघारं सत्युमित्रां अधुन्वानींडते सर्वा अरहंसी वातो हुदे रांजत्युग्निरूपाः सुविदानो अंग्रु एकं च॥————[१]

चक्षुंषो हेते मनंसो हेते। वाचों हेते ब्रह्मंणो हेते। यो मांऽघायुरंभिदासंति। तमंग्ने मेन्या मेनिं कृणु। यो मा चक्षुंषा यो मनंसा। यो वाचा ब्रह्मंणाऽघायुरंभिदासंति। तयाँऽग्ने त्वं मेन्या। अमुमंमेनिं कृणा। यत्किश्चासौ मनसा यर्च वाचा। यज्ञैर्जुहोति यजुंषा हिविर्भिः॥१२॥

तन्मृत्युर्निर्ऋंत्या संविदानः। पुरादिष्टादाहुंतीरस्य हन्तु। यातुधाना निर्ऋंतिरादुरक्षः। ते अस्य घ्रन्त्वनृंतेन स्त्यम्। इन्द्रेषिता आज्यंमस्य मथ्नन्तु। मा तथ्समृंद्धि यद्सौ क्रोतिं। हन्मिं तेऽहं कृत १ ह्विः। यो में घोरमचींकृतः। अपाँश्चौ त उभौ बाहू। अपंनह्याम्यास्यम्॥१३॥

अपं नह्यामि ते बाहू। अपं नह्याम्यास्यम्। अग्नेर्देवस्य ब्रह्मणा। सर्वं तेऽविधषं कृतम्। पुराऽमुष्यं वषद्भारात्। युज्ञं देवेषुं नस्कृधि। स्विष्टम्स्माकं भूयात्। माऽस्मान्प्रापन्न-रातयः। अन्तिं दूरे स्तो अंग्ने। भ्रातृंव्यस्याभिदासंतः॥१४॥

वृषद्भारेण वर्त्रेण। कृत्या हिन्म कृतामहम्। यो मा नक्तं दिवां सायम्। प्रातश्चाह्नां निपीयंति। अद्या तिमंन्द्र वर्त्रेण। भातृंव्यं पादयामिस। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तन्त्वां। प्रपेद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। ईडें अग्निं विपश्चितम्॥१५॥

गिरा यज्ञस्य सार्धनम्। श्रुष्टीवानंन्धितावानम्। अग्ने श्वेकमं ते वयम्। यमं देवस्यं वाजिनंः। अति द्वेषार्श्से तरेम। अवंतं मा समंनसौ समोकसौ। सचेतसौ सरेतसौ। उभौ मामंवतञ्जातवेदसौ। शिवौ भंवतम्द्य नंः। स्वयं कृणवानः सुगमप्रयावम्॥१६॥ तिग्मश्रंङ्गो वृष्भः शोश्चानः। प्रत्नः स्थस्थमनु पश्यमानः। आ तन्तुम्गिर्दिव्यं ततान। त्वन्नस्तन्तुरुत सेतुंरग्ने। त्वं पन्थां भवसि देव्यानः। त्वयाऽग्ने पृष्ठं व्यमारुहेम। अथां देवैः संध्मादं मदेम। उद्त्ममं मुंमुग्धि नः। वि पाशं मध्यमञ्चृत। अवांधमानि जीवसं॥१७॥

वय सोम व्रते तर्व। मनंस्तनूषु बिभ्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमिह। इन्द्राणी देवी सुभगां सुपत्नीं। उद शोन पित्विद्यें जिगाय। त्रिश्शदंस्या ज्यनं योजंनानि। उपस्थ इन्द्रश् स्थिवेंरं बिभिति। सेनां हु नामं पृथिवी धंनश्र्या। विश्वव्यंचा अदिंतिः सूर्यंत्वक्। इन्द्राणी देवी प्रासहा ददांना॥१८॥

सा नों देवी सुहवा शर्म यच्छत्। आत्वांऽहार्षम्नतरंभूः। ध्रुवस्तिष्ठाविंचाचितः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधिं भ्रशत्। ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृंथिवी। ध्रुवं विश्वंमिदं जगत्। ध्रुवा ह पर्वता इमे। ध्रुवो राजां विशाम्यम्। इहैवैधि मा व्यंथिष्ठाः॥१९॥

पर्वत इवाविचाचिलः। इन्द्रं इवेह ध्रुवस्तिष्ठ। इह राष्ट्रमुं धारय। अभितिष्ठ पृतन्यतः। अधेरे सन्तु शत्रंवः। इन्द्रं इव वृत्रहा तिष्ठ। अपः क्षेत्राणि स्अयन्। इन्द्रं एणमदीधरत्। ध्रुवं ध्रुवेणं हृविषां। तस्मैं देवा अधिब्रवन्। अयं च् ब्रह्मणस्पतिः॥२०॥ हुविर्मिर्गुस्यमिभ् दासंतो विपुश्चितुमप्रयावश्चीवस् ददांना व्यथिष्ठा ब्रवुन्नेकं च॥————[२]

जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितृणाम्। अक्षंमव्ययं न किलारिषाथ। यच्छक्नरीषु बृह्ता रवेण। इन्द्रे शुष्ममद्धाथा वसिष्ठाः। पावका नः सरस्वती। वाजेभिर्वाजिनीवती। युज्ञं विष्ठु धिया वसुः। सरस्वत्यभिनों नेषि वस्यः। मा पंस्फरीः पर्यसा मा न आधंक्। जुषस्वं नः सख्यां वेश्यां च॥२१॥

मा त्वक्षेत्राण्यरंणानि गन्म। वृञ्जे ह्विर्नमंसा ब्र्हिर्ग्रौ। अयांमि सुग्धृतवंती सुवृक्तिः। अम्यक्षि सद्म सदेने पृथिव्याः। अश्रांयि यज्ञः सूर्ये न चक्षुः। इहार्वाञ्चमितं ह्वये। इन्द्रं जैत्रांय जेतंवे। अस्माकंमस्तु केवंलः। अर्वाञ्चमिन्द्रंम्मुतों हवामहे। यो गोजिद्धंनुजिदंश्वजिद्यः॥२२॥

ड्मं नो युज्ञं विंहुवे जुंषस्व। अस्य कुंमीं हरिवो मेदिनं त्वा। असंम्मृष्टो जायसे मातृवोः शुचिः। मृन्द्रः कुविरुदंतिष्ठो विवस्वतः। घृतेनं त्वा वर्धयन्नग्न आहुत। धूमस्ते केतुरंभविद्द्वि श्रितः। अग्निरग्रै प्रथमो देवतांनाम्। संयातानामृत्तमो विष्णुंरासीत्। यजमानाय परिगृह्यं देवान्। दीक्षयेद १ हिवरा गंच्छतन्नः॥२३॥

अग्निश्चं विष्णो तपं उत्तमं महः। दीक्षापालेभ्योऽवनंत्र् हि शंका। विश्वेंदिवर्यज्ञियैः संविदानौ। दीक्षामस्मै यजंमानाय धत्तम्। प्र तद्विष्णुंः स्तवते वीर्याय। मृगो न भीमः कुंचरो गिरिष्ठाः। यस्योरुषुं त्रिषु विक्रमंणेषु। अधि क्षियन्ति भुवंनानि विश्वां। नूमर्तो दयते सनिष्यन् यः। विष्णंव उरुगायाय दाशंत्॥२४॥

प्रयः स्त्राचा मनंसा यजांते। पृतावंन्त्त्रयंमा विवांसात्। विचंक्रमे पृथिवीमेष पृताम्। क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्। ध्रुवासो अस्य कीरयो जनांसः। उरुक्षिति स्पुजिनंमा चकार। त्रिर्देवः पृथिवीमेष पृताम्। विचंक्रमे शृतर्चंसं महित्वा। प्र विष्णुंरस्तु त्वस्स्तवीयान्। त्वेष इह्यंस्य स्थविंरस्य नामं॥२५॥

होतांरं चित्ररंथमध्वरस्यं। यज्ञस्यंयज्ञस्य केतु र रुशंन्तम्। प्रत्यंधिं देवस्यंदेवस्य मृह्णा। श्रिया त्वंग्निमितिंथिं जनांनाम्। आ नो विश्वांभिरूतिभिः स्जोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हंर्यश्व याहि। वरीवृज्यस्थविरेभिः सृशिप्र। अस्मे दधद्वृषंण् र शुष्मंमिन्द्र। इन्द्रः सुवर्षा जनयन्नहांनि। जिगायोशिग्भः पृतंना अभि श्रीः॥२६॥

प्रारोचयन्मनेवे केतुमह्नाम्। अविन्दुज्योतिर्बृह्ते रणाय। अश्विनाववसे निह्नये वाम्। आ नूनं यातः सुकृतायं विप्रा। प्रात्युक्तेनं सुवृता रथेन। उपागंच्छत्मवसागंतन्नः। अविष्टं धीष्वश्विना न आसु। प्रजावद्रेतो अह्नयं नो अस्तु। आवाँ तोके तनये तूर्तुजानाः। सुरत्नांसो देववीतिं गमेम॥२७॥

त्व र सोम् ऋतुंभिः सुऋतुंभूः। त्वं दक्षैः सुदक्षों विश्ववंदाः।

त्वं वृषां वृष्त्वेभिर्मिह्त्वा। द्युम्नेभिर्द्युम्यंभवो नृचक्षाः। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षामप्स्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा स्पंक्षिति स्सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनं मदेम सोम। भवां मित्रो न शेव्यों घृतासंतिः। विभूतद्यम्न एव या उस्प्रयाः॥२८॥

अधां ते विष्णो विदुषां चिद्दध्यः। स्तोमों युज्ञस्य राध्यों ह्विष्मंतः। यः पूर्व्यायं वेधसे नवीयसे। सुमज्ञांनये विष्णंवे ददांशति। यो जातमस्य महतो महि ब्रवांत्। सेदु श्रवोंभिर्युज्यं चिद्दभ्यंसत्। तमुं स्तोतारः पूर्व्यं यथां विद ऋतस्यं। गर्भ ह्विषां पिपर्तन। आऽस्यं जानन्तो नामं चिद्विवक्तन। बृहत्तं विष्णो सुमृतिं भंजामहे॥२९॥

ड्मा धाना घृंतस्रुवंः। हरीं इहोपंवक्षतः। इन्द्र र् सुखतंमे रथें। एष ब्रह्मा प्रतेमहे। विदर्थे शर्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्। इन्द्रो नामं घृतन्नयः। हरिभिक्षारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु॥३०॥

हरिवर्पसङ्गिरंः। आचंर्षणिप्रा वृष्मो जनानाम्। राजां कृष्टीनां पुरुहूत इन्द्रंः। स्तुतश्रंवस्यन्नवसोपंमद्रिक्। युक्ता हरी वृष्णायां ह्यर्वाङ्। प्र यथ्सिन्धंवः प्रस्वं यदायन्। आपंः समुद्र रथ्येव जग्मुः। अतंश्चिदिन्द्रः सदंसो वरीयान्। यदी र सोमः पृणतिं दुग्धो अर्शः। ह्वयांमसि त्वेन्द्रं याह्यंर्वाङ्॥३१॥

अरंन्ते सोमंस्त्नुवे भवाति। शतंक्रतो मादयंस्वा सुतेषुं। प्रास्मा अव पृतंनासु प्रयुथ्सु। इन्द्रांय सोमाः प्रदिवो विदानाः। ऋभुर्येभिर्वृषंपर्वा विहायाः। प्रयम्यमाणान्प्रति षू गृंभाय। इन्द्र पिब वृषंधूतस्य वृष्णंः। अहेंडमान् उपंयाहि यज्ञम्। तुभ्यं पवन्त इन्दंवः सुतासंः। गावो न वंज्रिन्थ्स्वमोको अच्छं॥३२॥

इन्द्रा गंहि प्रथमो युज्ञियांनाम्। या ते काकुथ्सुकृता या वरिष्ठा। यया शश्वत्यिवसि मध्वं ऊर्मिम्। तयां पाहि प्र तें अध्वर्युरंस्थात्। सन्ते वज्रों वर्ततामिन्द्र गृव्युः। प्रात्युंजा वि बोधय। अश्विनावेह गंच्छतम्। अस्य सोमंस्य पीतयै। प्रात्यावांणा प्रथमा यंजध्वम्। पुरा गृध्रादरंरुषः पिबाथः। प्रातर्रहि यज्ञमश्विना दधांते। प्रश्रेसन्ति क्वयः पूर्वभाजः। प्रात्यंजध्वमश्विनां हिनोत। न सायमंस्ति देवया अजुंष्टम्। उतान्यो अस्मद्यंजते विचांयः। पूर्वः पूर्वो यजंमानो वनीयान्॥३३॥

चाुर्श्वजिद्यो गंच्छतं नो दाश्त्रामांभिश्रीर्गमेम सुप्रथा भजामहे विशन्तु याह्यवाङच्छं पिवायुः षद्वं॥————[३]

नृक्तं जाताऽस्योषधे। रामे कृष्णे असिक्रि च। इद॰ रंजिन रजय। किलासं पिलतं च यत्। किलासं च पिलतं चं। निरितो नांशया पृषंत्। आ नः स्वो अंश्जुतां वर्णः। पर्गं श्वेतानि पातय। असितं ते निलयनम्। आस्थानमसितं तवं॥३४॥

असिक्रियस्योषधे। निरितो नांशया पृषंत्। अस्थिजस्यं किलासंस्य। तनूजस्यं च यत्त्वचि। कृत्ययां कृतस्य ब्रह्मंणा। लक्ष्मं श्वेतमंनीनशम्। सर्रूपा नामं ते माता। सर्रूपो नामं ते पिता। सर्रूपाऽस्योषधे सा। सर्रूपमिदं कृधि॥३५॥

शुन १ हुंवेम मघवांन्मिन्द्रम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वार्जसातौ। शृण्वन्तंमुग्रमूतये स्मर्थ्स्। घ्रन्तं वृत्राणि स्ञितं धनांनाम्। धूनुथ द्यां पर्वतान्दाशुषे वस्। नि वो वनां जिहते यामं नो भिया। कोपयंथ पृथिवीं पृंश्विमातरः। युधे यद्ग्राः पृषंतीरयुंग्ध्वम्। प्रवेपयन्ति पर्वतान्। विविश्वन्ति वनस्पतीन्॥३६॥

प्रोवारत मरुतो दुर्मदां इव। देवांसः सर्वया विशा। पुरुत्रा हि स्टङ्कासिं। विशो विश्वा अनुं प्रभु। समर्थ्यु त्वा हवामहे। समर्थ्यग्निमवंसे। वाज्यन्तों हवामहे। वाजेषु चित्रराधसम्। सङ्गंच्छध्व संवंदध्वम्। सं वो मना स्सि जानताम्॥३७॥

देवा भागं यथा पूर्वे। सञ्जानाना उपासंत। समानो मन्नः सिर्मितिः समानी। समानं मनः सह चित्तमेषाम्। समानं केतों अभि स॰ रंभध्वम्। संज्ञानेन वो ह्विषां यजामः। समानी व आकूंतिः। समाना हृदंयानि वः। समानमंस्तु वो मनः। यथां वः सुसहासंति॥३८॥

संज्ञानं नः स्वैः। संज्ञानुमरंणैः। संज्ञानंमिश्विना युवम्।

इहास्मासु नियंच्छतम्। संज्ञानं मे बृह्स्पतिः। संज्ञानरं सिवृता करत्। संज्ञानंमिश्वना युवम्। इह मह्यं नि यंच्छतम्। उपं च्छायामिव घृणैः। अगन्म शर्म ते वयम्॥३९॥

अग्ने हिरंण्यसन्दशः। अदंब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वम्। शिवेभिर्द्य परिपाहि नो गयम्। हिरंण्यजिह्वः सुविताय् नव्यंसे। रक्षा मार्किर्नो अघशर्स ईशत। मदेमदे हि नो दुदुः। यूथा गर्वामृजुऋतुः। सङ्गृभाय पुरूशता। उभया हुस्त्या वसुं। शिशीहि राय आ भर॥४०॥

शिप्रिन्वाजानां पते। शचीवस्तवं द्रसनां। आ तू नं इन्द्र भाजय। गोष्वश्वेषु शुभुषुं। सहस्रेषु तुवीमघ। यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा यूयम्। ऋतस्यर्तेनं मुश्चत। ऋतस्यर्तेनांऽऽदित्याः॥४१॥

यजंत्रा मुश्चतेह माँ। युज्ञैर्वो यज्ञवाहसः। आशिक्षंन्तो न शेंकिम। मेदंस्वता यजंमानाः। स्रुचाऽऽज्येन जुह्वंतः। अकामा वो विश्वेदेवाः। शिक्षंन्तो नोपं शेकिम। यदि दिवा यदि नक्तम्। एनं एन्स्योकंरत्। भूतं मा तस्माद्भव्यं च॥४२॥

द्रुपदादिव मुश्चतु। द्रुपदादिवन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलादिव। पूतं पवित्रेणेवाऽऽज्यम्। विश्वे मुश्चन्तु मैनसः। उद्वयं तमस्परि। पश्यन्तो ज्योति्रत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगन्म ज्योतिंरुत्तमम्॥४३॥ तवं कृषि वनस्पतीं आनतामसंति वयं भंरादित्याश्च नवं च॥

-[8]

वृषासो अर्शः पंवते ह्विष्मान्थ्सोमः। इन्द्रंस्य भाग ऋत्यः शतार्यः। स मा वृषाणं वृष्मं कृणोत्। प्रियं विशा सर्ववीर स्वीरम्ं। कस्य वृषां सुते सर्वा। नियुत्वानवृष्मो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। यस्ते शृङ्ग वृषोनपात्। प्रणंपात्कुण्डपाय्यः। न्यंस्मिन्दध्र आ मनः॥४४॥

तः स्प्रीचींकृतयो वृष्णियानि। पौ स्यांनि नियुतः सश्चिरिन्द्रम्। स्मुद्रं न सिन्धंव उक्थशुंष्माः। उरुव्यचंस्ङ्गिर् आ विंशन्ति। इन्द्रांय गिरो अनिंशितसर्गाः। अपः प्रैरंयन्थ्सगंरस्य बुध्नात्। यो अक्षेणेव चिक्रया शचींभिः। विष्वंक्तस्तम्मं पृथिवीमुत द्याम्। अक्षोदयच्छवंसा क्षामंबुध्नम्। वार्णवांतस्तिविषीभिरिन्द्रंः॥४५॥

दृढान्यौँघ्रादुशमांन् ओजंः। अवांभिनत्कुकुभः पर्वतानाम्। आ नो अग्ने सुकेतुनाँ। र्यिं विश्वायुंपोषसम्। मार्डीकं धेहि जीवसेँ। त्व॰ सोम महे भगमैं। त्वं यूनं ऋतायते। दक्षं दधासि जीवसेँ। रथं युअते मुरुतंः शुभे सुगम्। सूरो न मित्रावरुणा गविंष्टिषु॥४६॥

रजारेसि चित्रा विचंरन्ति त्न्यवंः। दिवः संम्राजा पर्यसा न उक्षतम्। वाच्र सुमित्रावरुणाविरावतीम्। पूर्जन्यश्चित्रां वंदति त्विषीमतीम्। अभ्रा वंसत मरुतः सुमाययां। द्यां वंर्षयतमरुणामंरेपसम्। अयुंक्त सप्त शुन्ध्युवंः। सूरो रथंस्य नृष्त्रियंः। ताभियाति स्वयुंक्तिभिः। वहिष्ठेभिर्विहरंन् यासि तन्तुम्॥४७॥

अवव्ययन्नसितं देव वस्वः। दिविध्वतो र्श्मयः सूर्यस्य। चर्मेवावाधुस्तमो अपस्वन्तः। पूर्जन्याय प्र गांयत। दिवस्पुत्रायं मीदुषें। स नो यवसंमिच्छत्। अच्छां वद त्वसं गीर्भिराभिः। स्तुहि पूर्जन्यं नम्साऽऽविवास। कनिक्रदद्वृष्भो जीरदानुः। रेतो दधात्वोषधीषु गर्भम्॥४८॥

यो गर्भमोषंधीनाम्। गर्वां कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्। तस्मा इदास्ये हुविः। जुहोता मधुमत्तमम्। इडां नः संयतं करत्। तिस्रो यदंग्ने श्ररदस्त्वामित्। शुचिं घृतेन शुचेयः सप्यन्। नामांनि चिद्दिधिरे युज्ञियांनि। असूदयन्त तुनुवः सुजांताः॥४९॥

इन्द्रंश्च नः शुनासीरौ। इमं युज्ञं मिंमिक्षतम्। गर्भं धत्तक्ष् स्वस्तयें। ययोरिदं विश्वं भुवनमा विवेशं। ययोरान्नदो निहितो महंश्च। शुनांसीरावृतुभिः संविदानौ। इन्द्रंवन्तौ ह्विरिदं जुंषेथाम्। आघाये अग्निमिन्धते। स्तृणन्तिं बर्हिरांनुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखाः। अग्न इन्द्रंश्च मेदिनाः। हथो वृत्राण्यंप्रति। युव॰ हि वृत्रहन्तंमा। याभ्याः सुव्रज्ञंयुत्रग्रं एव। यावांतस्थुतुर्भुवंनस्य मध्यः। प्रचंर्षणी वृषणा वर्ज्रबाहू। अग्नी इन्द्रावृत्रहणां हुवे वाम्॥५०॥

मन इन्द्रो गविष्टिषु तन्तुं गर्भुः सुजाताः सखां सुप्त चं॥——————————[५

उत नेः प्रिया प्रियासुं। सप्तस्वसा सुर्जुष्टा। सर्रस्वती स्तोम्यां अनूत्। इमा जुह्वां नायुष्मदा नमोंभिः। प्रति स्तोम रं सरस्वति जुषस्व। तव शर्मन्प्रियतंमे दर्धानाः। उपस्थेयाम शर्णं न वृक्षम्। त्रीणि पदा विचंक्रमे। विष्णुंर्गोपा अदौभ्यः। ततो धर्माणि धारयन्॥५१॥

तदंस्य प्रियम्भि पाथों अश्याम्। नरो यत्रं देवयवो मदंन्ति। उ्रुक्तमस्य स हि बन्धंरित्था। विष्णोः पदे पंरुमे मध्व उथ्मः। कृत्वादा अस्थु श्रेष्ठः। अद्य त्वां वन्वन्थ्सुरेक्णाः। मर्त आनाश सुवृक्तिम्। इमा ब्रंह्म ब्रह्मवाह। प्रिया त आ ब्रहः सीद। वीहि सूर पुरोडाशम्॥५२॥

उपं नः सूनवो गिरंः। शृण्वन्त्वमृतंस्य ये। सुमृडीका भंवन्तु नः। अद्या नो देव सवितः। प्रजावंध्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्वप्निय स्तव। विश्वांनि देव सवितः। दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आ सुव। शुचिंमकैंबृहस्पतिम्॥५३॥

अध्वरेषुं नमस्यत। अनाम्योज आ चंके। या धारयंन्त देवा सुदक्षा दक्षंपितारा। असुर्याय प्रमंहसा। स इत् क्षेति सुधित ओकंसि स्वे। तस्मा इडां पिन्वते विश्वदानीं। तस्मै विशंः स्वयमेवानंमन्ति। यस्मिन्ब्रह्मा राजंनि पूर्व एतिं। सकूंतिमिन्द्र

सच्युंतिम्। सच्युंतिं ज्ञघनंच्युतिम्॥५४॥

कुनात्काभात्र आ भंर। प्रयपस्यत्रिव स्वथ्यौं। वि नं इन्द्र मृधों जिह। किनींखुनिदव सापयन्। अभि नः सुष्टुंतिं नय। प्रजापंतिः स्त्रियां यशः। मुष्कयोरदधाथ्सपम्। कामंस्य तृप्तिमानन्दम्। तस्यौग्ने भाजयेह मां। मोदः प्रमोद आंनन्दः॥५५॥

मुष्कयोर्निहितः सपंः। सृत्वेव कामंस्य तृप्याणि। दक्षिणानां प्रतिग्रहे। मनसश्चित्तमाकूतिम्। वाचः सत्यमंशीमहि। पृश्नाः रूपमन्नंस्य। यशः श्रीः श्रंयतां मियं। यथाऽहमस्या अतृंपः स्त्रियै पुमान्ं। यथा स्त्री तृप्यंति पुरसि प्रिये प्रिया। एवं भगंस्य तृप्याणि॥५६॥

यज्ञस्य काम्यः प्रियः। ददामीत्यग्निर्वदित। तथेतिं वायुरांह् तत्। हन्तेतिं स्त्यं चन्द्रमाः। आदित्यः स्त्यमोमिति। आपस्तथ्सत्यमा भंरन्। यशो यज्ञस्य दक्षिणाम्। असौ मे कामः समृद्धताम्। न हि स्पश्मिविदन्नन्यम्स्मात्। वैश्वानरात्पुंरएतारंमग्नेः॥५७॥

अथेममन्थन्नमृत्ममूराः। वैश्वान्रं क्षेत्रजित्यांय देवाः। येषांमिमे पूर्वे अर्मास् आसन्। अयूपाः सद्म विभृता पुरूणि। वैश्वानर् त्वया ते नुत्ताः। पृथिवीमन्याम्भितंस्थुर्जनांसः। पृथिवीं मातरं महीम्। अन्तरिक्षमुपं ब्रुवे। बृह्तीमूतये

दिवम्। विश्वं बिभर्ति पृथिवी॥५८॥

अन्तिरिक्षं वि पंप्रथे। दुहे द्यौर्बृह्ती पर्यः। न ता नंशन्ति न दंभाति तस्करः। नैनां अमित्रो व्यथिरादंधर्षति। देवाङ्श्च याभिर्यजते ददांति च। ज्योगित्ताभिः सचते गोपंतिः सह। न ता अर्वा रेणुकंकाटो अश्जते। न सङ्स्कृत्त्रमुपं यन्ति ता अभि। उरुगायमभयं तस्य ता अनुं। गावो मर्त्यस्य वि चंरन्ति यज्वनः॥५९॥

रात्री व्यंख्यदायती। पुरुत्रा देव्यंक्षभिः। विश्वा अधि श्रियोऽधित। उपं ते गा इवाकंरम्। वृणीष्व दुंहितर्दिवः। रात्री स्तोमं न जिग्युषीं। देवीं वाचंमजनयन्त देवाः। तां विश्वरूपाः पृशवों वदन्ति। सा नों मृन्द्रेष्मूर्जुं दुहांना। धेनुवीग्स्मानुष् सुष्टुतैतुं॥६०॥

यद्वाग्वदंन्त्यविचेत्नानिं। राष्ट्रीं देवानां निष्सादं मृन्द्रा। चतंस्र ऊर्जं दुदृहे पयार्श्सा। क्रं स्विदस्याः पर्मं जंगाम। गौरी मिंमाय सलिलानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा पर्मे व्योमन्। तस्यार्श्व समुद्रा अधि विक्षंरन्ति। तेनं जीवन्ति प्रदिशश्चतंस्रः॥६१॥

ततः क्षरत्यक्षरम्। तद्विश्वमुपं जीवति। इन्द्रासूरां जनयंन्विश्वकंर्मा। मुरुत्वारं अस्तु गुणवान्थ्सजातवान्। अस्य स्रुषा श्वश्रं प्रशिष्टिम्। स्पत्ना वाचं मनंसा उपांसताम्। इन्द्रः सूरों अतर्द्रजारंसि। स्रुषा स्पत्ना श्वश्रंरोऽयमंस्तु। अयर शत्रृंअयतु जर्ह्णणः। अयं वाजं जयतु वाजंसातौ। अग्निः क्षंत्रभृदिनंभृष्टमोजंः। स्ह्सियों दीप्यतामप्रंयुच्छन्। विभ्राजंमानः समिधा न उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहदगुन्द्याम्॥६२॥

धारयंन्युरोडाशुं बृह्स्पतिं जुघनंच्युतिमानुन्दो भगंस्य तृप्याण्युग्नेः पृथिवी यज्वंन एतु प्रदिश्श्वतंस्रो वाजंसातौ चुत्वारिं

u=_____[٤]

वृषाँ उस्य १ शुर्वृष्मायं गृह्यसे। वृषा उयमुग्रो नृचक्षंसे। दिव्यः कंर्मण्यां हितो बृहन्नामं। वृष्मस्य या क्कृत्। विष्वान् विष्णो भवत्। अयं यो मामको वृषाँ। अथो इन्द्रं इव देवेभ्यः। वि ब्रंवीतु जनैभ्यः। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तम्। अथो अधिपतिं विशाम्॥६३॥

अस्याः पृंथिव्या अध्यक्षम्। इमिनेन्द्र वृष्भं कृणु। यः सृश्कृः सुवृष्भः। कृत्याणो द्रोण आहितः। कार्षीवल प्रगाणेन। वृष्भेणं यजामहे। वृष्भेण यजमानाः। अकूरेणेव सुर्पिषां। मृद्धेश्च सर्वा इन्द्रेण। पृतनाश्च जयामसि॥६४॥

यस्यायमृष्भो ह्विः। इन्द्रांय परिणीयतें। जयांति शत्रुंमायन्तम्। अथो हन्ति पृतन्यतः। नृणामहं प्रणीरसंत्। अग्रं उद्भिन्दतामंसत्। इन्द्र शुष्मं तनुवा मेरंयस्व। नीचा विश्वां अभितिंष्ठाभिमातीः। नि शृंणीह्याबाधं यो नो अस्ति। उरुं नो लोकं कृणुहि जीरदानो॥६५॥

प्रेह्मिभ प्रेहि प्र भंग सहंस्व। मा विवेनो वि शृंणुष्वा जनेषु। उदींडितो वृंषभ तिष्ठ शुष्मैः। इन्द्र शत्रून्पुरो अस्माकं युध्य। अभ्रे जेता त्वं जंय। शत्रून्थ्सहस् ओजंसा। वि शत्रून् विमृधो नुद। एतं ते स्तोमं तुविजात विप्रः। रथं न धीरः स्वपा अतक्षम्। यदीदंभ्रे प्रतित्वं देव हर्याः॥६६॥

सुवंवतीर्प एंना जयेम। यो घृतेनाभिमांनितः। इन्द्र जैत्रांय जिज्ञषे। स नः सङ्कांसु पारय। पृत्नासाह्यंषु च। इन्द्रों जिगाय पृथिवीम्। अन्तिरिक्ष्ट्रं सुवंर्म्हत्। वृत्रहा पुंरुचेतंनः। इन्द्रों जिगाय सहंसा सहार्रस। इन्द्रों जिगाय पृतंनानि विश्वां॥६७॥

इन्द्रों जातो वि पुरों रुरोज। स नेः पर्स्पा वरिंवः कृणोत्। अयं कृतुरगृंभीतः। विश्वजिदुद्धिदिथ्सोमेः। ऋषिविंप्रः काव्येन। वायुरंग्रेगा यंज्ञप्रीः। साकङ्गन्मनंसा यज्ञम्। शिवो नियुद्धिः शिवाभिः। वायो शुक्रो अंयामि ते। मध्वो अग्रं दिविष्टिषु॥६८॥

आ यांहि सोमं पीतये। स्वारुहो देव नियुत्वंता। इमिनंद्र वर्धय क्षित्रियांणाम्। अयं विशां विश्पतिंरस्तु राजां। अस्मा इंन्द्र मिहु वर्चा १सि धेहि। अवुर्चसं कणुहि शत्रुंमस्य। इममा भंज ग्रामे अश्वेषु गोषुं। निर्मुं भंज योऽिमत्रों अस्य। वर्ष्मन् क्षुत्रस्यं कुकुभिं श्रयस्व। ततों न उग्रो वि भंजा वसूंनि॥६९॥

अस्मे द्यांवापृथिवी भूरिं वामम्। सन्दुंहाथां घर्मदुघेंव धेनुः। अयः राजां प्रिय इन्द्रंस्य भूयात्। प्रियो गवामोषंधीनामुतापाम्। युनज्मिं त उत्तरावंन्तमिन्द्रम्। येन् जयांसि न परा जयांसै। स त्वांऽकरेकवृष्भः स्वानांम्। अथो राजन्नुत्तमं मानवानांम्। उत्तर्स्त्वमधेरे ते स्पन्नाः। एकंवृषा इन्द्रंसखा जिगीवान्॥७०॥

विश्वा आशाः पृतंनाः स्ञयं जयन्। अभि तिष्ठ शत्रूयतः संहस्व। तुभ्यं भरन्ति क्षितयो यविष्ठ। बिलमंग्ने अन्तित् ओत दूरात्। आ भन्दिष्ठस्य सुमृतिं चिकिद्धि। बृहत्ते अग्ने मिह् शर्म भुद्रम्। यो देह्यो अनंमयद्वध्स्तैः। यो अर्यपत्नीरुषसंश्र्वकारं। स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निः। विश्रंश्चके बलिहृतः सहोभिः॥७१॥

प्र सद्यो अंग्रे अत्यैष्यन्यान्। आविर्यस्मै चार्रुतरो बुभूथं। ईडेन्यो वपुष्यो विभावा। प्रियो विशामितिथिर्मानुंषीणाम्। ब्रह्मंज्येष्ठा वीर्या सम्भृंतानि। ब्रह्माग्रे ज्येष्ठं दिवमा तंतान। ऋतस्य ब्रह्मं प्रथमोत जंज्ञे। तेनांर्हित ब्रह्मंणा स्पर्धितुङ्कः। ब्रह्म सुचौ घृतवंतीः। ब्रह्मंणा स्वरंवो मिताः॥७२॥

ब्रह्मं युज्ञस्य तन्तंवः। ऋत्विजो ये हंविष्कृतंः।

शृङ्गाणीवेच्छुङ्गिणा १ सन्दंहिश्ररे। च्षालंबन्तः स्वरंबः पृथिव्याम्। ते देवासः स्वरंबस्तस्थिवा १ संः। नमः सर्खिभ्यः सन्नान्मा ५ वंगात। अभिभूरिश्गरंतर्द्रजा १ सि। स्पृधो विहत्य पृतंना अभिश्रीः। जुषाणो म आहुंतिं मामिहष्ट। हत्वा सपत्नान् वरिवस्करन्नः। ईशानं त्वा भुवंनानामिभिश्रयम्। स्तौम्यंग्र उरुकृत १ सुवीरम्। ह्विर्जुषाणः सपत्ना १ अभिभूरंसि। जहि शत्रू १ रप मृधो नुदस्व॥७३॥

विशां जंयामसि जीरदानो हर्या विश्वा दिविष्टिषु वर्सूनि जिगीवान्थ्सहोंभिर्मिता नश्चलारि च॥———— [9]

स प्रत्वन्नवीयसा। अग्नै द्युम्नेने स्यता। बृहत्तंतन्थ भानुना। नवं नु स्तोमंम्ग्नये। दिवः श्येनायं जीजनम्। वसोः कुविद्वनाति नः। स्वारुहा यस्य श्रियो दृशे। र्यिर्वीरवंतो यथा। अग्ने युज्ञस्य चेतंतः। अदाभ्यः पुरपृता॥७४॥

अग्निर्विशां मानुंषीणाम्। तूर्णी रथः सदा नवंः। नव्र् सोमाय वाजिनें। आज्यं पर्यसोऽजिन। जुष्ट्र् शुचितम् वसुं। नवर्र् सोम जुषस्व नः। पीयूषंस्येह तृंण्णुहि। यस्ते भाग ऋता व्यम्। नवंस्य सोम ते व्यम्। आ सुंमृतिं वृंणीमहे॥७५॥

स नो रास्व सहस्रिणंः। नवर्ष ह्विर्जुषस्व नः। ऋतुभिः सोम् भूतंमम्। तदङ्ग प्रतिहर्य नः। राजन्थ्सोम स्वस्तयै। नव्ड्स्तोम्नवर्ष ह्विः। इन्द्राग्निभ्यां नि वेदय। तज्ज्षेतार् सर्चेतसा। शुचिं नु स्तोमं नवंजातम्द्य। इन्द्रौग्नी वृत्रहणा जुषेथौम्॥७६॥

उभा हि वार् सुहवा जोहंवीमि। ता वाजरं सद्य उंश्ते धेष्ठां। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। इह देवौ संहुस्निणौं। यृज्ञं न आ हि गच्छंताम्। वसुंमन्तर सुवुर्विदम्। अस्य ह्व्यस्यं तृप्यताम्। अग्निरिन्द्रो नवंस्य नः। विश्वान्देवाइस्तंप्यत॥७७॥

ह्विषोऽस्य नवंस्य नः। सुवर्विदो हि जंजिरे। एदं बर्हिः सुष्टरीमा नवंन। अयं यज्ञो यजमानस्य भागः। अयं बंभूव भुवंनस्य गर्भः। विश्वं देवा इदम्द्यागंमिष्ठाः। इमे नु द्यावापृथिवी स्मीचीं। तन्वाने यज्ञं पुरुपेशंसन्धिया। आऽस्मे पृणीतां भुवंनानि विश्वां। प्रजां पुष्टिम्मृतं नवंन॥७८॥

ड्मे धेनू अमृतं ये दुहातैं। पर्यस्वत्युत्तरामेतु पृष्टिः। इमं यज्ञं जुषमाणे नवेन। समीची द्यावापृथिवी घृताचीं। यविष्ठो हव्यवाहंनः। चित्रभानुर्घृतासुंतिः। नवंजातो वि रोचसे। अग्रे तत्ते महित्वनम्। त्वमंग्ने देवताभ्यः। भागे देव न मीयसे॥७९॥

स एंना विद्वान् यंक्ष्यसि। नव्ह् स्तोमं जुषस्व नः। अग्निः प्रंथमः प्राश्ञांतु। स हि वेद यथां ह्विः। शिवा अस्मभ्यमोषंधीः। कृणोतुं विश्वचंर्षणिः। भुद्रान्नः श्रेयः समंनेष्ट देवाः। त्वयांऽवसेन् समंशीमहि त्वा। स नों मयोभूः पितो आ विशस्व। शं तोकायं तनुवें स्योनः। पृतमु त्यं मधुना संयुतं यवम्। सर्रस्वत्या अधिमनावेचकृषुः। इन्द्रं आसीथ्सीरंपतिः श्तकंतुः। कीनाशां आसन्मरुतः सुदानंवः॥८०॥

जुष्टश्चक्षंपो जुष्टींनरो नक्तआता वृषास उत नो वृषाँऽस्यू शुः सप्रंत्वदृष्टौ॥८॥

जुष्टीं मृन्युर्भगो जुष्टी नरो हरिवर्षसङ्गिरः शिप्रिंन्वाजानामुत नेः प्रिया यद्वाग्वदेन्ती विश्वा आशा अशींतिः॥८०॥ जुष्टेः सुदानेवः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः॥

प्राणो रक्षिति विश्वमेजंत्। इर्यो भूत्वा बंहुधा बहूनिं। स इथ्सर्वं व्यांनशे। यो देवो देवेषुं विभूरन्तः। आवृंदूदात् क्षेत्रियंध्वगद्वृषां। तिमत्प्राणं मन्सोपं शिक्षत। अग्रं देवानांमिदमंत्तु नो हृविः। मनंसृश्चित्तेदम्। भूतं भव्यं च गुप्यते। तिद्धे देवेष्वंग्रियम्॥१॥

आ नं एतु पुरश्चरम्। सह देवैरिम हवम्ं। मनः श्रेयंसिश्रेयसि। कर्मन् यूज्ञपंतिं दर्धत्। जुषतां मे वागिद श् ह्विः। विराङ्देवी पुरोहिता। ह्व्यवाडनंपायिनी। ययां रूपाणि बहुधा वदंन्ति। पेशा श्रेसि देवाः पंरमे जनित्रें। सा नो विराडनंपस्फुरन्ती॥२॥

वाग्देवी जुंषतामिद हिवः। चक्षुंर्देवानां ज्योतिर्मृते न्यंक्तम्। अस्य विज्ञानाय बहुधा निधीयते। तस्य सुम्नमंशीमिह। मा नो हासीद्विचक्षणम्। आयुरिन्नः प्रतीयंताम्। अनंन्याश्चक्षुंषा वयम्। जीवा ज्योतिरशीमिह। सुवर्ज्योतिरुतामृतम्। श्रोत्रेण भद्रमुत शृंण्वन्ति सृत्यम्। श्रोत्रेण वाचं बहुधोद्यमानाम्। श्रोत्रेण मोदंश्च महंश्च श्रूयते। श्रोत्रेण सर्वा दिश् आ शृंणोमि। येन प्राच्यां उत देक्षिणा। प्रतीच्यै दिशः शृण्वन्त्युंत्तरात्। तदिच्छ्रोत्रं बहुधोद्यमानम्।

अरान्न नेमिः परि सर्वं बभूव॥३॥

अृत्रियमनंपस्फुरन्ती सृत्य॰ सृप्त चं॥—————[१]

उदेहिं वाजिन्यो अस्यप्स्वंन्तः। इदः राष्ट्रमा विंश सूनृतांवत्। यो रोहिंतो विश्वंमिदं जजानं। स नों राष्ट्रेषु सुधितान्दधातु। रोहं रेरोह्र रोहिंत आरुरोह। प्रजािमवृद्धिं जनुषांमुपस्थम्। तािभः सःरंब्धो अविद्थ्यडुर्वीः। गातुं प्रपश्यंत्रिह राष्ट्रमाऽहाः। आऽहांर्षीद्राष्ट्रमिह रोहिंतः। मृधो व्यांस्थदभंयं नो अस्तु॥४॥

अस्मभ्यं द्यावापृथिवी शक्वंरीभिः। राष्ट्रं दुंहाथामिह रेवतीभिः। विमंमर्श रोहिंतो विश्वरूपः। समाचुऋाणः प्ररुहो रुहंश्च। दिवं गृत्वायं महृता मंहिम्ना। वि नो राष्ट्रमुनत्तु पर्यसा स्वेनं। यास्ते विश्वस्तपंसा सं बभूवुः। गायत्रं वथ्समनु तास्त आऽगुः। तास्त्वा विशन्तु महंसा स्वेनं। सं मांता पुत्रो अभ्येतु रोहिंतः॥५॥

यूयमुंग्रा मरुतः पृश्ञिमातरः। इन्द्रेण स्युजा प्रमृणीथ् शत्रून्। आ वो रोहिंतो अशृणोदभिद्यवः। त्रिसंप्तासो मरुतः स्वादुसम्मुदः। रोहिंतो द्यावांपृथिवी जंजान। तस्मिड्स्तन्तुं परमेष्ठी तंतान। तस्मिञ्छिश्रिये अज एकंपात्। अदर्हद्यावांपृथिवी बलेन। रोहिंतो द्यावांपृथिवी अंदर्हत्। तेन सुवंः स्तिभृतन्तेन नाकंः॥६॥ सो अन्तिरिक्षे रजंसो विमानंः। तेनं देवाः सुव्रन्वंविन्दन्। सुशेवं त्वा भानवो दीदिवा सम्मा समग्रासो जुह्वो जातवेदः। उक्षन्तिं त्वा वाजिनमा घृतेनं। सरसंमग्ने युवसे भोजंनानि। अग्ने शर्धं महते सौभंगाय। तवं द्युम्नान्यंत्तमानिं सन्तु। सञ्जास्पत्यर सुयममा कृंणुष्व। शृत्रूयताम्भि तिष्ठा महार्ससा७॥

अस्त्वेतु रोहिंतो नाको महा५सि॥

[२]

पुनर्न् इन्द्रो म्घवां ददातु। धनांनि श्वको धन्यः सुराधाः। अर्वाचीनं कृणुतां याचितो मनः। श्रुष्टी नो अस्य ह्विषों जुषाणः। यानि नोऽजिनं धनांनि। जहर्थं शूर मृन्युनां। इन्द्रानुंविन्द न्स्तानि। अनेनं ह्विषा पुनः। इन्द्र आशांभ्यः परि। सर्वाभ्योऽभंयं करत्॥८॥

जेता शत्रून् विचंर्षणिः। आकूँत्यै त्वा कामांय त्वा समृधे त्वा। पुरो दंधे अमृत्त्वायं जीवसे आकूंतिम्स्यावंसे। काममस्य समृद्धौ। इन्द्रंस्य युअते धियः। आकूंतिं देवीं मनसः पुरो दंधे। यज्ञस्यं माता सुहवां मे अस्तु। यदिच्छामि मनसा सकांमः। विदेयंमेन्द्धृदंये निविष्टम्॥९॥

सेदग्निर्ग्नी श्रत्यैत्यन्यान्। यत्रं वाजी तनयो वीडुपांणिः। सहस्रंपाथा अक्षरां समेतिं। आशानां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः। विधेमं हिविषां वयम्। विश्वा आशा मधुना स॰ सृंजामि। अनुमीवा आप ओषंधयो भवन्तु। अयं यजमानो मृधो व्यस्यताम्॥१०॥

अगृंभीताः पृशवंः सन्तु सर्वें। अग्निः सोमो वर्रणो मित्र इन्द्रंः। बृह्स्पतिः सिवता यः सहस्री। पूषा नो गोभिरवंसा सरंस्वती। त्वष्टां रूपाणि समनक्तु युज्ञैः। त्वष्टां रूपाणि दधंती सरंस्वती। पूषा भगर्ं सिवता नो ददातु। बृह्स्पतिदेददिन्द्रंः सहस्रम्ं। मित्रो दाता वर्रणः सोमो अग्निः॥११॥

क्रिविष्टमस्यतान्नवं च॥

[8]

आ नों भर् भगंमिन्द्र द्युमन्तम्। नि तें देष्णस्यं धीमहि प्ररेके। उर्व इंव पप्रथे कामों अस्मे। तमापृंणा वसुपते वसूंनाम्। इमं कामंं मन्दया गोभिरश्वैः। चन्द्रवंता राधंसा पप्रथंश्च। सुवर्यवों मृतिभिस्तुभ्यं विप्राः। इन्द्रांय वाहंः कृशिकासों अऋन्। इन्द्रंस्य नु वीर्याणि प्रवोचम्। यानिं चकारं प्रथमानिं वज्री॥१२॥

अह्न्नहिमन्वपस्तंतर्द। प्रवृक्षणां अभिनृत्पर्वतानाम्। अह्न्निहुं पर्वते शिश्रियाणम्। त्वष्टां उस्मे वज्र ई स्वर्यन्ततक्ष। वाश्रा इव धेनवः स्यन्दंमानाः। अञ्जः समुद्रमवं जग्मुरापः। वृषायमाणोऽवृणीत् सोमम्। त्रिकंद्रुकेष्विपबथ्सुतस्यं। आ सायंकं मुघवां दत्त् वज्रम्। अहंन्नेनं प्रथमुजा महीनाम्॥१३॥ यदिन्द्राहंन्प्रथम्जा महीनाम्। आन्मायिनामिनाः प्रोत मायाः। अथ्सूर्यं जनयन्द्यामुषासम्। तादीक्रा शत्रून्न किलांविविथ्से। अहंन्वृत्रं वृंत्रतरं व्यश्सम्। इन्द्रो वर्ज्रण मह्ता व्धेनं। स्कन्धारंसीव कुलिंशेनाविवृंक्णा। अहिंः शयत उपपृक्पृंथिव्याम्। अयोध्येव दुर्मद् आ हि जुह्ने। महावीरं तुंविबाधमृंजी्षम्॥१४॥

नातांरीरस्य समृतिं वधानांम्। स॰ रुजानाः पिपिष् इन्द्रंशत्रुः। विश्वो विहाया अर्तिः। वसुंदिधे हस्ते दक्षिणे। तरणिर्न शिश्रथत्। श्रवस्यया न शिश्रथत्। विश्वंस्मा इदिष्ध्यसे। देवत्रा ह्व्यमूहिषे। विश्वंस्मा इथ्सुकृते वारंमृण्वति। अग्निर्द्वारा व्यृण्वति॥१५॥

उदुजिहांनो अभि कामंमीरयन्। प्रपृश्चन्विश्वा भुवंनानि पूर्वथां। आ केतुना सुषंमिद्धो यिजिष्ठः। कामं नो अग्ने अभिहंयं दिग्भ्यः। जुषाणो ह्व्यम्मृतेषु दूढ्यः। आ नो र्यिं बहुलां गोमंतीमिषम्। नि धेहि यक्षंदमृतेषु भूषन्। अश्विना यज्ञमागंतम्। दाशुषः पुरुंद स्ससा। पूषा रक्षतु नो रियम्॥१६॥

ड्मं यज्ञमिश्वनां वर्धयंन्ता। इमो र्यिं यजंमानाय धत्तम्। इमौ पृशूत्रंक्षतां विश्वतों नः। पूषा नः पातु सद्मप्रंयच्छन्। प्रते महे संरस्वति। सुभंगे वार्जिनीवति। सत्यवाचे भरे मृतिम्। इदं ते हुव्यं घृतवंध्सरस्वति। सृत्यवाचे प्रभरेमा ह्वी १ षिं। इमानिं ते दुरिता सौभंगानि। तेभिंव्य १ सुभगांसः स्याम॥१७॥

वुज्यहींनामृजी्षं व्यृंण्वित रक्षतु नो र्यि सौभंगान्येकं च॥———[४]

युज्ञो रायो युज्ञ ईशे वसूनाम्। युज्ञः सस्यानांमुत सुंक्षितीनाम्। युज्ञ इष्टः पूर्विचेत्तिं दधातु। युज्ञो ब्रह्मण्वा अप्येतु देवान्। अयं युज्ञो वर्धतां गोभिरश्वैः। इयं वेदिः स्वपत्या सुवीरां। इदं बर्हिरिते बर्ही इष्यन्या। इमं युज्ञं विश्वे अवन्तु देवाः। भगं एव भगंवा अस्तु देवाः। तेनं वयं भगंवन्तः स्याम॥१८॥

तं त्वां भग् सर्व इज्ञोहवीमि। स नों भग पुरएता भेवेह। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्र णों जनय् गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिनृवन्तः स्याम। शश्वतीः समा उपयन्ति लोकाः। शश्वतीः समा उपयन्त्यापः। इष्टं पूर्त शश्वतीना समाना शाश्वतेनं। ह्विषेष्वाऽनन्तं लोकं परमा रुरोह॥१९॥

ड्यमेव सा या प्रथमा व्योच्छंत्। सा रूपाणि कुरुते पश्च देवी। द्वे स्वसारौ वयत्स्तन्नमेतत्। सनातनं वितंत्र् षण्मयूखम्। अवान्याङ्स्तन्तून्किरतो धृत्तो अन्यान्। नावंपृज्याते न गमाते अन्तम्। आ वो यन्तूदवाहासो अद्य। वृष्टिं ये विश्वे मुरुतो जुनन्ति। अयं यो अग्निर्मरुतः सिमेद्धः। पृतं जुंषध्वं कवयो युवानः॥२०॥

धारावरा मरुतो धृष्णुवोजसः। मृगा न भीमास्तंविषेभि-रूर्मिभिः। अग्नयो न शृंशुचाना ऋजीषिणः। भ्रुमिन्धमन्त उप गा अंवृण्वत। वि चंक्रमे त्रिर्देवः। आ वेधसं नीलंपृष्ठं बृहन्तम्। बृह्स्पिति सदेने सादयध्वम्। सादद्योनिं दम् आ दीदिवा सम्। हिरंण्यवर्णमरुष संपेम। स हि शुचिः शृतपंत्रः स शुन्ध्यूः॥२१॥

हिरंण्यवाशीरिष्ट्रिरः सुंवर्षाः। बृह्स्पतिः स स्वविश ऋष्वाः। पूरू सर्खिभ्य आसुतिं करिष्ठः। पूष्ड् स्तवे व्रते व्यम्। नरिष्येम कदाचन। स्तोतारंस्त इह स्मंसि। यास्ते पूषन्ना वो अन्तः संमुद्रे। हिर्ण्ययीर्न्तरिक्षे चरंन्ति। याभिर्यासि दृत्याः सूर्यस्य। कामेन कृतश्रवे इच्छमानः॥२२॥

अरंण्यान्यरंण्यान्यसौ। या प्रेव नश्यंसि। कथा ग्रामं न पृंच्छसि। न त्वाभीरिंव विन्दती (३)। वृषार्वाय वदंते। यदुपावंति चिच्चिकः। आघाटीभिरिव धावयन्। अर्ण्यानिर्महीयते। उत गावं इवादन्। उतो वेश्मेव दृश्यते॥२३॥

उतो अंरण्यानिः सायम्। शुक्टीरिव सर्जिति। गामुङ्गेषु आ ह्वंयति। दार्वङ्गेषु उपांवधीत्। वसंन्नरण्यान्याः सायम्। अर्न्नुक्षदिति मन्यते। न वा अंरण्यानिर्हन्ति। अन्यश्चेन्नाभिगच्छंति। स्वादोः फलंस्य जुग्ध्वा। यत्र कामं नि पंद्यते। आञ्जनगन्धी सर्भीम्। बृह्बन्नामकृषीवलाम्। प्राहं मृगाणां मातरम्। अरुण्यानीमंश स्सिषम्॥२४॥

स्याम् रुरोह् युवानः शुन्ध्यूरिच्छमानो दश्यते निपंद्यते चत्वारिं च॥lacksquare

वार्त्रहत्याय शवंसे। पृत्नासाह्यांय च। इन्द्र त्वा वंत्रयामिस। सुब्रह्मांणं वीरवंन्तं बृहन्तम्। उरुं गंभीरं पृथुबंध्नमिन्द्र। श्रुतर्षिमुग्रमंभिमातिषाहम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण १ र्यिं दाः। क्षेत्रिये त्वा निर्ऋत्ये त्वा। द्रुहो मुंश्चामि वरुंणस्य पाशांत्। अनागसं ब्रह्मंणे त्वा करोमि॥२५॥

शिवे ते द्यावांपृथिवी उभे इमे। शं ते अग्निः सहाद्विरंस्तु। शं द्यावांपृथिवी सहौषंधीभिः। शमन्तिरंक्षः सह वातेन ते। शं ते चतंस्रः प्रदिशों भवन्तु। या दैवीश्चतंस्रः प्रदिशंः। वातंपत्नीर्भि सूर्यों विच्षे। तासां त्वा ज्रस् आ दंधामि। प्र यक्ष्मं एतु निर्ऋतिं पराचैः। अमोचि यक्ष्मांदुरितादवंत्रीं॥२६॥

द्रुहः पाशान्तिर्ऋंत्यै चोदंमोचि। अहा अवंर्तिमविंदथ्स्योनम्। अप्यंभूद्भद्रे सुंकृतस्यं लोके। सूर्यमृतं तमंसो ग्राह्या यत्। देवा अमुंश्रुन्नसृंजन्व्यंनसः। एवम्हिम्मं क्षेत्रियाञ्जांमिशृ स्सात्। द्रुहो मुंश्चािम् वर्रुणस्य पाशात्। बृहंस्पते युविमन्द्रेश्च वस्वः। दिव्यस्यंशाथे उत पार्थिवस्य। धृत्तर र्यि स्तुंवते की्रयंचित्॥२७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। देवायुधिमन्द्रमा जोहंवानाः। विश्वावृधंमभि ये रक्षंमाणाः। येनं हृता दीर्घमध्वांनमायन्। अनुन्तमर्थमिनंवर्थ्स्यमानाः। यत्तं सुजाते हिमवंथ्सु भेषजम्। मयोभूः शन्तंमा यद्धृदोसिं। ततों नो देहि सीबले। अदो गिरिभ्यो अधि यत्प्रधावंसि। स्शोभंमाना कन्येव शुभ्रे॥२८॥

तां त्वा मुद्गेला ह्विषां वर्धयन्ति। सा नः सीबले र्यिमा भांजयेह। पूर्वं देवा अपरेणानुपश्यं जन्मंभिः। जन्मान्यवंरैः पराणि। वेदांनि देवा अयम्स्मीति माम्। अह॰ हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तांत। प्राणापानौ चक्षुः श्रोत्रम्। वाचं मनंसि सम्भृंताम्। हित्वा शरीरं जर्मः प्रस्तांत्। आभूतिं भूतिं व्यमंश्वामहै। इमा एव ता उषसो याः प्रथमा व्यौच्छन्। ता देव्यः कुर्वते पश्चंरूपा। शश्वंतीर्नावंपृज्यन्ति। न गंमन्त्यन्तम्॥२९॥

वसूंनां त्वाऽधीतेन। रुद्राणांमूर्म्या। आदित्यानां तेजंसा। विश्वेषां देवानां ऋतुंना। मुरुतामेम्नां जुहोमि स्वाहाँ। अभिभूतिरहमागंमम्। इन्द्रंसखा स्वायुधंः। आस्वाशांसु दुष्यहंः। इदं वर्चो अग्निनां दत्तमागांत्। यशो भर्गः सह ओजो बर्लं च॥३०॥ दीर्घायुत्वायं श्तर्शारदाय। प्रतिंगृभ्णामि मह्ते वीर्याय। आयुरिस विश्वायुरिस। सर्वायुरिस सर्वमायुरिस। सर्वं म् आयुर्भूयात्। सर्वमायुर्गेषम्। भूर्भुवः सुर्वः। अग्निर्धर्मेणान्नादः। मृत्युर्धर्मेणान्नपतिः। ब्रह्मं क्षत्र स्वाहां॥३१॥

प्रजापंतिः प्रणेता। बृह्स्पतिः पुरण्ता। यमः पन्थाः। चन्द्रमाः पुनर्सुः स्वाहां। अग्निरंत्रादोऽत्रंपितः। अन्नाद्यंमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। सोमो राजा राजंपितः। राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां। वर्रुणः सम्राद्थ्सम्रादंतिः। साम्राज्यमस्मिन् यज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां॥३२॥

मित्रः क्षत्रं क्षत्रपंतिः। क्षत्रमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। इन्द्रो बलं बलंपतिः। बलंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। बृह्स्पतिर्ब्रह्म ब्रह्मंपतिः। ब्रह्मास्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। सुविता राष्ट्रश् राष्ट्रपंतिः। राष्ट्रमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। पूषा विशां विद्वंतिः। विश्नंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। सर्रस्वती पृष्टिः पृष्टिंपत्नी। पृष्टिंमस्मिन् युज्ञे यर्जमानाय ददातु स्वाहाँ। स्वष्टां पशूनां मिथुनानाः रूप्कृद्रूपपंतिः। रूपेणास्मिन् युज्ञे यर्जमानाय पृशून्दंदातु स्वाहाँ॥३३॥

(अग्निः सोमो वर्रुणो मित्र इन्द्रो बृह्स्पितिः सिवता पूषा सर्रस्वती त्वष्टा दर्शा)॥lacktriangledown

च स्वाहा साम्राज्यमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहा विशंमस्मिन् युज्ञे यजमानाय ददातु स्वाहां चुत्वारि च

स ईं पाहि य ऋंजीषी तरुंत्रः। यः शिप्रंवान्वृष्भो यो मंतीनाम्। यो गौंत्रभिद्वंज्रभृद्यो हंरिष्ठाः। स इंन्द्र चित्राः अभि तृन्धि वाजान्। आ ते शुष्मो वृष्भ एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्नः सुवंवद्धेह्यस्मे। प्रोष्वंस्मै पुरोर्थम्। इन्द्रांय शूषमंर्चत॥३४॥

अभीके चिद् लोककृत्। सङ्गे समथ्सुं वृत्रहा। अस्माकें बोधि चोदिता। नर्भन्तामन्यकेषाँम्। ज्याका अधि धन्वंसु। इन्द्रं वय शुनासीरम्। अस्मिन् युज्ञे हंवामहे। आ वाजै्रू पं नो गमत्। इन्द्रांय शुनासीरांय। सुचा जुंहुत नो हुविः॥३५॥

जुषतां प्रति मेधिरः। प्र ह्व्यानि घृतवंन्त्यस्मै। हर्यश्वाय भरता स्जोषाः। इन्द्रर्तुभिक्र्रह्मणा वावृधानः। शुनासीरी ह्विरिदं जुषस्व। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रम्। प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुः। मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्। बृहदिन्द्रांय गायत॥३६॥

मर्रुतो वृत्रहन्तंमम्। येन् ज्योतिरजंनयत्रृतावृधंः। देवं देवाय जागृंवि। कामिहैकाः क इमे पंतुङ्गाः। मान्थालाः कुलिपरिमापतन्ति। अनांवृतैनान्प्रधंमन्तु देवाः। सौपंण्ं चक्षुंस्तुनुवां विदेय। एवा वन्दस्व वर्रुणं बृहन्तम्। नुमस्याधीरंमुमृतंस्य गोपाम्। स नुः शर्म त्रिवरूथं

वियर्भसत्॥३७॥

यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः। नार्के सुपूर्णमुप् यत्पतंन्तम्। हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रणस्य दूतम्। यमस्य योनौं शकुनं भुर्ण्युम्। शं नों देवीर्भिष्टंये। आपों भवन्तु पीत्रयें। शं योर्भि स्रंवन्तु नः। ईशांना वार्याणाम्। क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्॥३८॥

अपो यांचामि भेषजम्। अपसु मे सोमों अब्रवीत्। अन्तर्विश्वांनि भेषजा। अग्निं चं विश्वशंम्भुवम्। आपश्च विश्वभेषजीः। यद्पसु ते सरस्वति। गोष्वश्वेषु यन्मधुं। तेनं मे वाजिनीवति। मुखंमिङ्गि सरस्वति। या सरंस्वती वैशम्भल्या॥३९॥

तस्यां मे रास्व। तस्यांस्ते भक्षीय। तस्यांस्ते भूयिष्टभाजों भूयास्म। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंकुकुञ्जांतवेदः। इहैव सन्तत्र सन्तं त्वाऽग्ने। प्राणेनं वाचा मनसा बिभर्मि। तिरो मा सन्तमायुर्मा प्रहांसीत्॥४०॥

ज्योतिषा त्वा वैश्वान्रेणोपंतिष्ठे। अयं ते योनिंर्ऋत्वियः। यतो जातो अरोचथाः। तं जानन्नंग्र आरोह। अथां नो वर्धया र्यिम्। या ते अग्ने यज्ञियां तुनूस्तयेह्यारोहात्माऽऽत्मानम्ं। अच्छा वसूनि कृण्वन्नस्मे नर्या पुरूणिं। यज्ञो भूत्वा यज्ञमा सींद् स्वां योनिम्। जातंवेदो भुव आ जार्यमानः सक्षय एहि। उपावंरोह जातवेदः पुनस्त्वम्॥४१॥

देवेभ्यों ह्व्यं वंह नः प्रजानन्। आर्युः प्रजार र्यिम्स्मासुं धेहि। अर्जस्रो दीदिहि नो दुरोणे। तिमन्द्रं जोहवीमि मघवांनमुग्रम्। स्त्रा दधांनमप्रंतिष्कृत्र शवार्रस। मर्रहिष्ठो गीर्भिरा चं यज्ञियोऽव्वर्तत्। राये नो विश्वां सुपथां कृणोतु वृज्ञी। त्रिकंद्रकेषु महिषो यवांशिरं तुविशुष्मंस्तृपत्। सोमंमिपबृद्धिष्णुंना सुतं यथाऽवंशत्। स ईं ममाद महि कर्म कर्तवे महामुरुम्॥४२॥

सैन रे सश्चद्वेवं देवः स्त्यिमिन्दु रे स्त्य इन्द्रेः। विदद्यतीं स्रमां रुग्णमद्रैः। मिह् पार्थः पूर्व्य स्मिद्ध्येक्कः। अग्रं नयथ्सुपद्यक्षंराणाम्। अच्छा रवं प्रथमा जांन्तीगांत्। विदद्गव्य रे स्रमां दृढमूर्वम्। येनानुकं मानुषी भोजते विद्। आ ये विश्वाः स्वप्त्यानिं चुकुः। कृण्वानासों अमृत्त्वायं गातुम्। त्वं नृभिनृपते देवहूंतौ॥४३॥

भूरींणि वृत्वा हंर्यश्व हर्सा। त्वन्निदंस्युश्चमुंरिम्। धुनिं चास्वांपयो द्भीतंये सुहन्तुं। एवा पांहि प्रत्नथा मन्दंतु त्वा। श्रुधि ब्रह्मं वावृधस्वोत गीर्भिः। आविः सूर्यं कृणुहि पीपिहीषः। जहि शत्रूरं र्भि गा इन्द्र तृन्धि। अग्रे बाधंस्व वि मृधों नुदस्व। अपामींवा अप रक्षारंसि सेध। अस्मार्थ्समुद्राह्मंहुतो

दिवो नः॥४४॥

अपां भूमान्मुपं नः सृजेह। यज्ञ प्रतिं तिष्ठ सुमृतौ सुशेवा आ त्वां। वसूंनि पुरुधा विंशन्तु। दीर्घमायुर्यजंमानाय कृण्वन्। अथामृतेन जित्तारंमिङ्गा। इन्द्रंः शुनाविद्वितंनोति सीरम्ं। संवथ्सरस्यं प्रतिमाणंमेतत्। अर्कस्य ज्योतिस्तिदिदांस ज्येष्ठम्। संवथ्सर शुनवथ्सीरंमेतत्। इन्द्रंस्य राधः प्रयंतं पुरु त्मनां। तदंर्करूपं विमिमानमेति। द्वादंशारे प्रतिं तिष्ठतीद्वृषां। अश्वायन्तों ग्व्यन्तों वाज्यंन्तः। हवांमहे त्वोपंगन्तवा उं। आभूषंन्तस्त्वा सुमृतौ नवांयाम्। व्यमिन्द्र त्वा शुन १ हुवेम॥४५॥

प्राण उदेहि पुन्रा नों भर युज्ञो रायो वार्त्रहत्याय वर्स्ना<u>ः</u> स ईं पाह्यष्टौ॥८॥ प्राणो रंक्षत्यगृंभीता धाराव्या मुरुतों दीर्घायुत्वाय ज्योतिषा त्वा पश्चंचत्वारिश्शत्॥४५॥ प्राणः शुनश् हुंवेम॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

स्वाद्वीं त्वौ स्वादुनौ। तीव्रां तीव्रेणी। अमृतीम्मृतेन। मधुमतीं मधुमता। सृजामि स॰ सोमेन। सोमौऽस्यिश्यौं पच्यस्व। सर्रस्वत्यै पच्यस्व। इन्द्रीय सुत्राम्णे पच्यस्व। परीतो षिश्चता सुतम्। सोमो य उत्तम॰ ह्विः॥१॥

द्धन्वा यो नर्यो अपस्वंन्तरा। सुषाव सोम्मिद्रंभिः। पुनातुं ते परिस्रुतम्। सोम् सूर्यस्य दुहिता। वारेण शश्वंता तनां। वायुः पूतः पवित्रंण। प्राङ्ख्सोमो अतिद्रुतः। इन्द्रंस्य युज्यः सखां। वायुः पूतः पवित्रंण। प्रत्यङ्ख्सोमो अतिद्रुतः॥२॥

इन्द्रेस्य युज्यः सखाँ। ब्रह्मं क्ष्रत्रं पंवते तेजं इन्द्रियम्। सुरंया सोमः सुत आसुंतो मदाय। शुक्रेणं देव देवताः पिपृग्धि। रसेनात्रं यजंमानाय धेहि। कुविद्रङ्ग यवंमन्तो यवंश्चित्। यथा दान्त्यंनुपूर्वं वियूयं। इहेहैंषां कृणुत भोजंनानि। ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न ज्ग्मः। उपयामगृहीतोऽस्यश्विभ्यां त्वा जुष्टं गृह्णामि॥३॥

सरंस्वत्या इन्द्रांय सुत्राम्णैं। एष ते योनिस्तेजंसे त्वा। वीर्याय त्वा बलाय त्वा। तेजोंऽसि तेजो मियं धेहि। वीर्यमिस वीर्यं मियं धेहि। बलंमिस बलं मियं धेहि। नाना हि वाँ देवहिंत्र सदंः कृतम्। मा सर्सृक्षाथां पर्मे व्योमन्। सुरा त्वमिसं शुष्मिणी सोमं एषः। मा मां हि॰सीः स्वां योनिमाविशन्॥४॥

उपयामगृंहीतोऽस्याश्विनं तेर्जः। सार्स्वतं वीर्यम्। ऐन्द्रं बलम्। एष ते योनिर्मोदाय त्वा। आनन्दायं त्वा महंसे त्वा। ओजोऽस्योजो मियं धेहि। मृन्युरंसि मृन्युं मियं धेहि। महोऽसि महो मियं धेहि। सहोऽसि सहो मियं धेहि। या व्याघ्रं विषूंचिका। उभौ वृकं च रक्षंति। श्येनं पंतृत्रिण्रं सिर्हम्। सेमं पात्वर्हंसः। सम्पृचंः स्थ सं मां भुद्रेणं पृङ्का। विपृचंः स्थ वि मां पाप्मनां पृङ्का। ॥

हुविः प्रत्यङ्ख्सोमो अतिंद्रुतो गृह्णाम्यावि्शन्विपूचिका पश्चं च॥————[१

सोमो राजाऽमृतर् सुतः। ऋजीषेणांजहान्मृत्युम्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। विपानर् शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्येन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं। सोमम्द्र्यो व्यंपिबत्। छन्दंसा हुर्सः शुंचिषत्। ऋतेनं सत्यिमिन्द्रियम्। अद्भः क्षीरं व्यंपिबत्॥६॥

त्रुङ्कः क्षिर्सो धिया। ऋतेनं स्त्यिमिन्द्रियम्। अन्नात्पिर्सुतो रसम्। ब्रह्मणा व्यपिबत् क्ष्त्रम्। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। रेतो मूत्रं विजंहाति। योनिं प्रविशिदिन्द्रियम्। गर्भो ज्रायुणाऽऽवृतः। उल्बं जहाति जन्मना। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्॥७॥

वेदेन रूपे व्यंकरोत्। सृतासृती प्रजापंतिः। ऋतेनं सृत्यमिन्द्रियम्। सोमेन् सोमौ व्यंपिबत्। सृतासृतौ प्रजापंतिः। ऋतेनं स्त्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत्। सत्यानृते प्रजापंतिः। अश्रंद्धामनृतेऽदंधात्। श्रद्धाः सत्ये प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। दृष्ट्वा पंरिस्रुतो रसम्। शुक्रेणं शुक्रं व्यंपिबत्। पयः सोमं प्रजापंतिः। ऋतेनं सत्यमिन्द्रियम्। विपानः शुक्रमन्धंसः। इन्द्रंस्थेन्द्रियम्। इदं पयोऽमृतं मधुं॥८॥

सुरांवन्तं बर्ह्षिद र् सुवीरम्ं। युज्ञ हिन्वन्ति महिषा नमोभिः। दर्धानाः सोमं दिवि देवतांसु। मदेमेन्द्रं यजमानाः स्वर्काः। यस्ते रसः सम्भृत ओषंधीषु। सोमंस्य शुष्मः सुरया सुतस्यं। तेनं जिन्व यजमानं मदेन। सरस्वतीमश्विनाविन्द्रंमुग्निम्। यमश्विना नमुंचेरासुरादिधं। सरस्वत्यसंनोदिन्द्रियायं॥९॥

ड्मन्तर शुक्रं मधुमन्त्मिन्दुम्। सोम्र् राजानिम्ह भंक्षयामि। यदत्रं रिप्तर रिसनः सुतस्यं। यदिन्द्रो अपिंबच्छचींभिः। अहं तदंस्य मनसा शिवेनं। सोम्र् राजानिम्ह भंक्षयामि। पितृभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। पितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। प्रपितामहेभ्यः स्वधाविभ्यः स्वधा नमः। अक्षंन्पितरः॥१०॥

अमीमदन्त पितरंः। अतीतृपन्त पितरंः। अमीमृजन्त पितरंः। पितंरुः शुन्धंध्वम्। पुनन्तुं मा पितरंः सोम्यासंः। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः। प्वित्रेण श्तायुंषा। पुनन्तुं मा पिताम्हाः। पुनन्तु प्रपितामहाः॥११॥

प्वित्रेण शृतायुंषा। विश्वमायुर्व्यश्यवै। अग्न आयू श्रिष् प्रवसेऽग्ने प्रवस्व। पर्वमानः सुवर्जनः पुनन्तुं मा देवज्ञनाः। जातंवेदः प्रवित्रंवृद्यत्तं प्रवित्रंमृर्चिषिं। उभाभ्यां देव सवितर्वेश्वदेवी पुनती। ये संमानाः समनसः। पितरां यम्राज्यें। तेषां लोकः स्वधा नमः। यज्ञो देवेषुं कल्पताम्॥१२॥

ये संजाताः समंनसः। जीवा जीवेषुं मामकाः। तेषा् श्रीमीयं कल्पताम्। अस्मिँ छोके श्रात समाँः। द्वे स्रुती अंश्रणवं पितृणाम्। अहं देवानांमुत मर्त्यांनाम्। याभ्यांमिदं विश्वमेज्ञथ्समेति। यदंन्त्रा पितरं मातरं च। इद हिवः प्रजनंनं मे अस्तु। दर्शवीर स्वर्गण स्वस्तयें। आत्मसिनं प्रजासिनं। पृशुसन्यंभयसिनं लोकसिनं। अग्निः प्रजां बंहुलां में करोतु। अन्नं पयो रेतों अस्मासुं धत्त। रायस्पोष्मिष्मूर्जम्समासुं दीधर्थस्वाहाँ॥१३॥

हुन्द्रियायं पितरंः शृतायुंषा पुनन्तुं मा पितामृहाः पुनन्तु प्रपिंतामहाः कल्पताः स्वस्तये पश्चं च॥————[३]

सीसेन तत्रुं मनसा मनीषिणः। ऊर्णासूत्रेणं क्वयों वयन्ति। अश्विनां यज्ञः संविता सरस्वती। इन्द्रंस्य रूपं वरुणो भिषुज्यन्। तदस्य रूपमुमृत्ः शचींभिः। तिस्रोऽदंधुर्देवताः स॰रराणाः। लोमानि शष्पैर्बहुधा न तोक्मेभिः। त्वर्गस्य मा॰्समेभवन्न लाजाः। तदिश्वनां भिषजां रुद्रवर्तनी। सर्रस्वती वयति पेशो अन्तरः॥१४॥

अस्थिं मुज्ञानं मासंरैः। कारोत्रेण दर्धतो गर्वां त्वचि। सरंस्वती मनंसा पेश्लं वसुं। नासंत्याभ्यां वयति दर्श्तं वपुः। रसं परिस्रुता न रोहितम्। नुग्रहुर्धीर्स्तसंर्न्न वेमं। पर्यसा शुक्रम्मृतं जनित्रम्। सुरया मूत्रांजनयन्ति रेतः। अपामंतिं दुर्मतिं बार्धमानाः। ऊर्वध्यं वातर्थ सबुवन्तदारात्॥१५॥

इन्द्रंः सुत्रामा हृदयेन स्त्यम्। पुरोडाशेन सिवता जंजान। यकृत्क्रोमानं वर्रणो भिष्ज्यन्। मतंस्रे वाय्व्यैर्न मिनाति पित्तम्। आन्नाणि स्थाली मधु पिन्वंमाना। गुदा पात्रांणि सुद्धा न धेनुः। श्येनस्य पत्रं न प्रीहा शचींभिः। आस्नदी नाभिरुदरं न माता। कुम्भो वंनिष्ठुर्जनिता शचींभिः। यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भो अन्तः॥१६॥

प्राशीर्व्यक्तः श्तथांर उथ्संः। दुहे न कुम्भी स्वधां पितृभ्यंः। मुख्य सदंस्य शिर् इथ्सदेन। जिह्ना पिवित्रंमिश्विना सर् सरंस्वती। चप्पन्न पायुर्भिषगंस्य वालः। वस्तिर्न शेपो हरंसा तर्स्वी। अश्विभ्यां चक्षुंरमृतं ग्रहाँभ्याम्। छागेन तेजो हिष्णं श्रुतेनं। पक्ष्माणि गोधूमैः क्वेलेश्तानिं। पेशो न

शुक्रमसितं वसाते॥१७॥

अविर्न मेषो नसि वीर्याय। प्राणस्य पन्थां अमृतो ग्रहाँभ्याम्। सरंस्वृत्युप्वाकैंर्व्यानम्। नस्यांनि बर्हिर्बदंरैर्जजान। इन्द्रंस्य रूपमृष्भो बलाय। कर्णांभ्याड्ड श्रोत्रंममृतं ग्रहाँभ्याम्। यवा न बर्हिर्श्रुवि केसंराणि। कर्कन्धुं जज्ञे मधुं सार्घं मुखाँत्। आत्मन्नुपस्थे न वृकंस्य लोमं। मुखे श्मश्रूंणि न व्यांघ्रलोमम्॥१८॥

केशा न शीर्षन् यशंसे श्रिये शिखाँ। सिर्हस्य लोम् त्विषिरिन्द्रियाणि। अङ्गाँन्यात्मिन्धिषजा तद्धिनाँ। आत्मान्मङ्गैः समधाथ्मरंस्वती। इन्द्रंस्य रूपर श्तमान्मायुः। चन्द्रेण ज्योतिरमृतं दधाना। सरंस्वती योन्यां गर्भम्नतः। अधिभ्यां पत्नी सुकृतं बिभर्ति। अपार रसेन् वरुणो न साम्नां। इन्द्रई श्रिये जनयंत्रपसु राजां। तेर्जः पश्नार ह्विरिन्द्रियावंत्। परिस्रुता पर्यसा सार्घं मधुं। अधिभ्यां दुग्धं भिषजा सरंस्वत्या सुतासुताभ्यांम्। अमृतः सोम् इन्दुः॥१९॥

अन्तरं आरादुन्तर्वसाते व्याघ्रलोमः राजां चुत्वारिं च॥—————[४]

मित्रोंऽसि वर्रुणोऽसि। समृहं विश्वैर्देवैः। क्षुत्रस्य नाभिरिसि। क्षुत्रस्य योनिरिसे। स्योनामा सीद। सुषदामा सीद। मा त्वां हिश्सीत्। मा मां हिश्सीत्। निषंसाद धृतव्रंतो वर्रुणः। पुस्त्यास्वा॥२०॥

साम्राज्याय सुक्रतुंः। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। अश्विनोर्भेषंज्येन। तेजंसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। सरंस्वत्ये भैषंज्येन॥२१॥

वीर्यायात्राद्यायाभिषिश्चामि। देवस्यं त्वा सवितुः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्याम्। इन्द्रंस्येन्द्रियेणं। श्रियै यशंसे बलायाभिषिश्चामि। कोऽसि कत्मोऽसि। कस्मै त्वा कार्यं त्वा। सुश्लोकाँ(४) सुमंङ्गलाँ(४) सत्यंराजा(३)न्। शिरो मे श्रीः॥२२॥

यशो मुखम्ँ। त्विषिः केशाँश्च श्मश्रूंणि। राजां मे प्राणीं-ऽमृतम्ँ। सम्राद्वक्षुंः। विराद्धोत्रम्ँ। जिह्वा में भुद्रम्। वाङ्गहंः। मनों मृन्युः। स्वराङ्कामंः। मोदाः प्रमोदा अङ्गुलीरङ्गांनि॥२३॥

चित्तं मे सहंः। बाहू मे बर्लमिन्द्रियम्। हस्तौं मे कर्म वीर्यम्। आत्मा क्षत्रमुरो ममं। पृष्टीर्मे राष्ट्रमुदर्म श्सौं। ग्रीवाश्च श्रोण्यौं। ऊरू अर्बी जानुंनी। विशो मेऽङ्गांनि सुर्वतः। नाभिर्मे चित्तं विज्ञानम्। पायुर्मेऽपंचितिर्भसत्॥२४॥

आनुन्दनन्दावाण्डौ में। भगः सौभाँग्यं पसंः। जङ्घाँभ्यां पुन्न्यां धर्मोंऽस्मि। विशि राजा प्रतिष्ठितः। प्रतिं क्षुत्रे प्रतिं तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्चेषु प्रति तिष्ठामि गोष्। प्रत्यङ्गेषु प्रति तिष्ठाम्यात्मन्। प्रति प्राणेषु प्रति तिष्ठामि पुष्टे। प्रति द्यावापृथिव्योः। प्रति तिष्ठामि यज्ञे॥२५॥

त्रया देवा एकांदश। त्रयस्त्रिष्शाः सुराधंसः। बृह्स्पतिंपुरो-हिताः। देवस्यं सिवृतुः सवे। देवा देवैरंवन्तु मा। प्रथमा द्वितीयैः। द्वितीयांस्तृतीयैः। तृतीयाः सत्येनं। सत्यं यज्ञेनं। यज्ञो यजुर्भिः॥२६॥

यजूरेषि सामंभिः। सामाँन्यृग्भिः। ऋचो याज्यांभिः। याज्यां वषद्भारेः। वृषद्भारा आहुंतिभिः। आहुंतयो मे कामान्थ्समंधयन्तु। भूः स्वाहाँ। लोमांनि प्रयंतिममं। त्वङ्म आनंतिरागंतिः। मार्सं म् उपनितिः। वस्वस्थि। मुज्जा म् आनंतिः॥२७॥

पुस्त्यांस्वा सरंस्वत्ये भेषंज्येन श्रीरङ्गानि भुसद्यज्ञे युज्ञो यजुर्भिरुपंनतिर्द्वे चं॥——————[५]

यद्देवा देवहेर्डनम्। देवांसश्चकृमा व्यम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि दिवा यदि नक्तम्। एना १ सि चकृमा व्यम्। वायुर्मा तस्मादेनंसः। विश्वांन्मुश्चत्व १ हंसः। यदि जाग्रद्यदि स्वप्नें। एना १ सि चकृमा व्यम्॥ २८॥

सूर्यो मा तस्मादेनंसः। विश्वान्मुश्चत्व १ हंसः। यद्ग्रामे यदरंण्ये। यथ्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यद्र्ये। एनंश्चकृमा व्यम्। यदेक्स्याधि धर्मणि। तस्यांव्यजंनमसि। यदापो अघ्निया वरुणेति शपांमहे। ततों वरुण नो मुश्र॥२९॥

अवंभृथ निचङ्कुण निचेरुरंसि निचङ्कुण। अवं देवैर्देवकृंतमेनोंऽयाट्। अव मर्त्यूर्मर्त्यंकृतम्। उरोरा नों देव रिषस्पांहि। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु। दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। द्रुपदाद्विवन्मुंमुचानः। स्विन्नः स्नात्वी मलांदिव॥३०॥

पूतं प्वित्रेणेवाऽऽज्यम्। आपः शुन्धन्तु मैनंसः। उद्घयं तमंस्स्परि। पश्यंन्तो ज्योतिरुत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यम्। अगंन्म ज्योतिरुत्तमम्। प्रतियुतो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। प्रत्यंस्तो वरुणस्य पाशः। एधौऽस्येधिषीमिहै। समिदंसि॥३१॥

तेजों ऽसि तेजो मियं धेहि। अपो अन्वंचारिषम्। रसेन् समंसृक्ष्मिहि। पर्यस्वाः अग्र आगंमम्। तं मा सःसृंज् वर्चसा। प्रजयां च धनेन च। समावंवर्ति पृथिवी। समुषाः। समु सूर्यः। समु विश्वंमिदं जगंत्। वृश्वान्रज्योंतिर्भूयासम्। विभुं कामं व्यंश्ववै। भूः स्वाहां॥३२॥

स्वप्न एनार्श्स चकृमा वयं मुंश्च मलांदिव स्मिदंसि जगुत्रीणिं च॥lacksquare

होतां यक्षथ्समिधेन्द्रंमिडस्पदे। नाभां पृथिव्या अधि। दिवो वर्ष्म्नश्यमिध्यते। ओजिष्ठश्चर्षणी सहान्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्तनूनपांतम्। ऊतिभिर्जेतांर्मपंराजितम्। इन्द्रं देव र सुंवर्विदम्। पृथिभिर्मधुंमत्तमैः। नराश रसेन् तेजसा॥ ३३॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्ष्विद्धांभिरिन्द्रंमीडितम्। आजुह्वांन्ममर्त्यम्। देवो देवैः सवींर्यः। वज्रंहस्तः पुरन्द्रः। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतांयक्षद्वर्हिषीन्द्रंन्निषद्वरम्। वृष्मं नर्यापसम्। वसुंभीरुद्रैरांदित्यैः। स्युग्भिंर्बर्हिरा-संदत्॥३४॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रदोजो न वीर्यम्ं। सहो द्वार् इन्द्रंमवर्धयन्। सुप्रायणा विश्रयन्तामृतावृधंः। द्वार् इन्द्रांय मीदुषें। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषे इन्द्रंस्य धेनू। सुदुषे मातरौ मही। सवातरौ न तेजंसी। वथ्समिन्द्रंमवर्धताम्॥३५॥

वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्देव्या होतांरा। भिषजा सर्खाया। ह्विषेन्द्रंं भिषज्यतः। क्वी देवौ प्रचेतसौ। इन्द्रांय धत्त इन्द्रियम्। वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीः। त्रयंस्त्रिधातंवोपसंः। इडा सरस्वती भारती॥३६॥

महीन्द्रंपत्नीर्ह्विष्मंतीः। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांर्मिन्द्रं देवम्। भिषज्ञं सुयजं घृत्श्रियम्। पुरुरूपं सुरेतंसं मघोनिम्। इन्द्रांय त्वष्टा दर्धदिन्द्रियाणि। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शमितारं

शतक्रंतुम्। धियो जोष्टारंमिन्द्रियम्॥३७॥

मध्यां समञ्जन्पथिभिः सुगेभिः। स्वदांति हव्यं मधुना घृतेनं। वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्येजं। होतां यक्षदिन्द्रं स्वाहा-ऽऽज्यंस्य। स्वाहा मेदंसः। स्वाहां स्तोकानांम्। स्वाहा स्वाहांकृतीनाम्। स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवा १ आंज्यपान्। स्वाहेन्द्र५ होत्राज्जुंषाणाः। इन्द्र आज्यंस्य वियन्तु। होतर्यजं॥३८॥

तेर्जसाऽऽसददवर्धतां भारतीन्द्रियं जुंपाणा द्वे चं (सुमिधेन्द्रन्तनूनपांतुमिर्डाभिर्व्रिष्योर्ज उुषे दैव्यां तिस्रस्त्वष्टांरुं वनुस्पतिमिन्द्रम्॥ सुमिधेन्द्रं चुतुर्वेत्वेको वियन्तु द्विर्वीतामेको वियन्तु द्विर्वेत्वेको वियन्तु होत्र्येजं॥)॥lacktriangledown

सिमंद्ध इन्द्रं उषसामनीके। पुरोरुचां पूर्वकृद्वांवृधानः। त्रिभिर्देवैस्त्रि र्शता वर्जनाहुः। ज्ञानं वृत्रं वि दुरों ववार। नराश थसः प्रतिशूरो मिर्मानः। तनूनपात्प्रति यज्ञस्य धामं। गोभिर्वपावान्मधुंना समञ्जन्। हिरंण्यैश्चन्द्री यंजित प्रचेताः। ईडितो देवैर्हरिवा अभिष्टिः। आजुह्वांनो हविषा शर्धमानः॥३९॥

पुर्न्दरो मुघवान् वर्ज्ञबाहुः। आयांतु युज्ञमुपंनो जुषाणः। जुषाणो ब्रहिर्हरिवान इन्द्रं। प्राचीन र सीदत्प्रदिशां पृथिव्याः। उरुव्यचाः प्रथंमानः स्योनम्। आदित्यैरक्तं वसुंभिः सजोषाः। इन्द्रं दुरः कवष्यों धावमानाः। वृषाणं यन्तु जनंयः सुपर्हीः। द्वारों देवीर्भितो विश्रंयन्ताम्। सुवीरां वीरं प्रथंमाना महोंभिः॥४०॥

उषासानक्तां बृह्ती बृहन्तम्। पर्यस्वती सुदुधे शूरिमन्द्रम्। पेशंस्वती तन्तुंना संव्ययंन्ती। देवानां देवं यंजतः सुरुक्ते। देव्या मिमाना मनसा पुरुत्रा। होतांराविन्द्रं प्रथमा सुवाचां। मूर्धन् यज्ञस्य मधुंना दर्धाना। प्राचीनं ज्योतिंह्विषां वृधातः। तिस्रो देवीर्ह्विषा वर्धमानाः। इन्द्रं जुषाणा वृषंणं न पत्नीः॥४१॥

अच्छिन्नं तन्तुं पर्यसा सरंस्वती। इडां देवी भारंती विश्वतूँर्तिः। त्वष्टा दधदिन्द्रांय शुष्मम्। अपाकोचिंष्टुर्य्शसे पुरूणिं। वृषा यजन्वृषणं भूरिरेताः। मूर्धन् यज्ञस्य समनक्तु देवान्। वनस्पतिरवंसृष्टो न पाशैः। त्मन्यां सम्अञ्छंिमृता न देवः। इन्द्रंस्य ह्व्यैर्जुठरं पृणानः। स्वदांति ह्व्यं मध्ना घृतेनं। स्तोकानामिन्दुं प्रति शूर इन्द्रंः। वृषायमाणो वृष्भस्तुंराषाट्। घृतप्रुषा मध्ना ह्व्यमुन्दन्। मूर्धन् यज्ञस्यं जुषता कुं स्वाहाँ॥४२॥

-[८]

आचंर्षणिप्रा विवेष यन्मां। त॰ स्प्रीचींः। स्त्यिमित्तन्न त्वावा॰ अन्यो अस्ति। इन्द्रं देवो न मर्त्यो ज्यायान्। अहुन्निहं परि्शयांन्मणिः। अवांसृजोऽपो अच्छां समुद्रम्। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रून्। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरस्तु। इन्द्रा भेर दक्षिणेना वसूंनि। पतिः सिन्धूंनामसि रेवतींनाम्। स शेवृंधमिधं धाद्युम्नम्समे। मिहं क्षत्रं जनाषाडिन्द्र तव्यम्। रक्षां च नो मुघोनः पाहि सूरीन्। राये चं नः स्वपत्या इषे धाः॥४३॥

देवं ब्रहिरिन्द्र र सुदेवं देवैः। वीरवंध्स्तीर्णं वेद्यांमवर्धयत्। वस्तौर्वृतं प्राक्तौर्भृतम्। राया ब्रहिष्मृतोऽत्यंगात्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वार् इन्द्र र सङ्घाते। विङ्वीर्यामंत्रवर्धयन्। आ वृथ्सेन् तरुणेन कुमारेणं चमीविता अपार्वाणम्। रेणुकंकाटं नुदन्ताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥४४॥

देवी उषासानक्तां। इन्ह्रं यज्ञे प्रयत्यंह्वेताम्। दैवीर्विशः प्रायांसिष्टाम्। सुप्रीते सुधिते अभूताम्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्ट्री वसुंधिती। देविमन्द्रंमवर्धताम्। अयांव्यन्याघा द्वेषा १सि। आन्यावांक्षीद्वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते॥४५॥

वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहंती दुघें सुदुधें। पयसेन्द्रंमवर्धताम्। इष्मूर्जंम्न्याऽवांक्षीत्। सिन्ध्रिः सपीतिम्न्या। नवेन् पूर्वं दयमाने। पुराणेन् नवम्। अधातामूर्जमूर्जाहंती वसु वार्याणि। यजंमानाय शिक्षिते। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं॥४६॥

देवा दैव्या होतांरा। देविमन्द्रंमवर्धताम्। हृताघंश श्मावा-भाष्टां वसुवार्याणि। यजंमानाय शिक्षितौ। वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। अस्पृक्षद्भारती दिवम्। रुद्रैर्यज्ञ सरंस्वती। इडा वसुंमती गृहान्॥४७॥

वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशर्सः। त्रिव्रूथस्निवन्धुरः। देविमन्द्रमवर्धयत्। शतेनं शिति-पृष्ठानामाहितः। सहस्रेण प्रवर्तते। मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हतः। बृह्स्पतिः स्तोत्रम्। अश्विनाऽऽध्वर्यवम्। वसुवने वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४८॥

देव इन्द्रो वन्स्पतिः। हिरंण्यपर्णो मधुंशाखः सुपिप्पलः। देविमन्द्रंमवर्धयत्। दिव्मग्रंणाप्रात्। आऽन्तिरक्षं पृथिवीमंद्दश्तित्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनाम्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्वासस्थिमिन्द्रेणा-संन्नम्। अन्या बर्ही इष्यभ्यंभूत्। वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देविमन्द्रंमवर्धयत्। स्विष्टं कुर्वन्थ्रित्वंष्टकृत्। स्विष्टम्द्यं करोतु नः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥४९॥

वियन्तु यर्ज शिक्षिते शिक्षिते वंसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्ज गृहान् वेंतु यर्जाभृथ्यद्वं (देवं ब्र्हिर्देवीद्वरिं देवी उपासानक्तां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहंती देवा दैव्या होतांरा शिक्षितौ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीर्देव इन्द्रो नर्पश्चसी देव इन्द्रो वनस्पतिंदेंवं ब्र्हिर्वारिंतीनान्देवो अग्निः स्विष्ट्कह्देवम्। वेतु वियन्तु चृतुर्वीतामेकौ वियन्तु

चतुर्वेत्ववर्धयदवर्धयुत्रिरंवर्धतामेकोऽ वर्धयःश्चतुरंवर्धयत्। वस्तोरा वृथ्सेन् दैवी्रयावीप रहताऽस्पृक्षच्छ्तेन् दिवः स्वासस्यः स्विष्टः शिक्षिते शिक्षिते शिक्षिते शिक्षितो॥)॥—————[१०]

होतां यक्षथ्समिधाऽग्निमिडस्पदे। अश्विनेन्द्रश् सरंस्वतीम्। अजो धूम्रो न गोधूमैः क्रंलैर्भेषजम्। मधु शष्पैर्न तेजं इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्तत्तनूनपाथ्सरंस्वती। अविर्मेषो न भेषजम्। पथा मधुंमताभंरन्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्॥५०॥

बदंरैरुपवाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्री। वियन्त्वाज्यस्य होत्र्यज्ञं। होतां यक्ष्रं नराशरस्यं न नग्नहुम्। पतिर् सुरांये भेषुजम्। मेषः सरस्वती भिषक्। रथो न चन्द्र्यंश्विनौर्वपा इन्द्रंस्य वीर्यम्। बदंरैरुपवाकांभिर्भेषुजं तोकांभिः। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्री। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यज्ञं॥५१॥

होतां यक्षिद्विडेहित आजुह्वांनः सरंस्वतीम्। इन्द्रं बलेन वर्धयन्। ऋष्भेण गर्वेन्द्रियम्। अश्विनेन्द्रांय वीर्यम्। यवैः कर्कन्धुंभिः। मधुं लाजैर्न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्हिः सुष्टरीमोर्णम्रदाः। भिषङ्गासंत्या॥५२॥

भिषजाऽश्विनाऽश्वा शिशुंमती। भिषग्धेनुः सरंस्वती। भिषग्दुह इन्द्रांय भेषजम्। पयः सोमंः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्दुरो दिशः। क्वष्यो न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशः। इन्द्रो न रोदंसी दुधै। दुहे कामान्थ्सरस्वती॥५३॥

अश्विनेन्द्रांय भेषजम्। शुक्रं न ज्योतिंरिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुपेशंसोषे नक्तं दिवां। अश्विनां सञ्जानाने। समं जाते सरंस्वत्या। त्विषिमिन्द्रे न भेषजम्। श्येनो न रजंसा हृदा। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं॥५४॥

वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्रद्दैव्या होतांरा भिषजाऽश्विनां। इन्द्रं न जागृंवी दिवा नक्तं न भेषजेः। शूष्ट्रं सरंस्वती भिषक्। सीसेन दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीर्न भेषजम्। त्रयंस्त्रिधातंवोऽपसंः। रूपिनन्द्रें हिर्ण्ययम्॥५५॥

अश्विनेडा न भारती। वाचा सरंस्वती। मह् इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मध्रं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्त्त्वष्टांरिमन्द्रमश्विनां। भिषजं न सरंस्वतीम्। ओजो न जूतिरिन्द्रियम्। वृको न रंभसो भिषक्। यशः सुरंया भेषजम्॥५६॥

श्रिया न मासंरम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिम्। शृमितारः श्तक्रंतुम्। भीमं न मृन्यु राजांनं व्याघ्रं नमंसाऽश्विना भामम्। सरस्वती भिषक्। इन्द्रांय दुह इन्द्रियम्। पयः सोमः परिस्रुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यजं॥५७॥

होतां यक्षद्ग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्तोकानांम्। स्वाहां मेदंसां पृथंक्। स्वाहा छागंमिश्वभ्यांम्। स्वाहां मेषः सरंस्वत्ये। स्वाहंर्ष्भिमिन्द्रांय सिःश्हाय सहंसेन्द्रियम्। स्वाहाऽग्निं न भेषजम्। स्वाहा सोमंमिन्द्रियम्। स्वाहेन्द्रः सुत्रामाणः सिवतारं वरुणं भिषजां पितम्। स्वाहा वनस्पितं प्रियं पाथो न भेषजम्। स्वाहां देवाः आंज्यपान्॥५८॥

स्वाह् । प्रिम्न होत्राञ्ज्षंषाणो अग्निर्भेष जम्। पयः सोमंः पिर्म्नुतां घृतं मधुं। वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजं। होतां यक्षदिश्वना सरंस्वतीमिन्द्र स्तुत्रामाणम्। इमे सोमाः सुरामाणः। छागैर्न मेषेर्ऋष्भः सुताः। शष्पैर्न तोक्यंभिः। लाजैर्महंस्वन्तः। मदा मासंरेण परिष्कृताः। शुकाः पर्यस्वन्तोऽमृताः। प्रस्थिता वो मधुश्चतः। तानिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। जुषन्ता स्तौम्यं मधुं। पिबंन्तु मदंन्तु वियन्तु सोमम्। होत्र्यंजं॥५९॥

वीर्यं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंज् नासंत्या सरंस्वती मध् हिर्ण्ययं भेषुजं वियन्त्वाज्यंस्य होत्र्यंजांज्युपानुमृताः पश्चं च
(स्मिधाऽग्निः षद। तनूनपांथ्सुप्त। नराशःस्मृषिः। इडेडितो यवैर्ष्टो। बर्हिः सुप्त। दुरोऽश्विना नवं। सुपेश्चसर्षिः।
देव्या होतांग् सीसेन् रसंः। तिस्रस्त्वष्टांरमृष्टावंष्टो। वनस्पतिमृषिः। अग्निश्चयोंदश। अश्विना द्वादंश त्रयोदश। स्मिधाऽग्निं
वदंरै्वंदंरै्वंवेर्श्विना त्विषिमृश्विना न भेषुजः रूपमृश्विनां भीमं भामम्॥॥
[११]

सिमिं अग्निरंश्विना। तृप्तो घूर्मी विराट्थ्सुतः। दुहे धेनुः सरंस्वती। सोमर् शुक्रमिहेन्द्रियम्। तृनूपा भिषजां सुते। अश्विनोभा सरंस्वती। मध्वा रजारसीन्द्रियम्। इन्द्रांय पृथिभिर्वहान्। इन्द्रायेन्दुर् सरंस्वती। नराशरसेन नग्नहुं:॥६०॥

अधांताम्श्विना मधुं। भेषजं भिषजां स्ते। आजुह्वांना सरंस्वती। इन्द्रांयेन्द्रियाणि वीर्यम्। इडांभिरश्विनाविषम्। समूर्ज्र स॰ र्यिं दंधः। अश्विना नमुंचेः सुतम्। सोम॰ शुक्रं पंरिस्रुतां। सरंस्वती तमाभरत्। बर्हिषेन्द्रांय पातंवे॥६१॥

कुवष्यों न व्यचंस्वतीः। अश्विभ्यां न दुरो दिशंः। इन्द्रो न रोदंसी दुधं। दुहे कामान्थ्सरंस्वती। उषासा नक्तंमश्विना। दिवेन्द्रं सायमिन्द्रियैः। सञ्जानाने सुपेशंसा। समं जाते सरंस्वत्या। पातं नो अश्विना दिवां। पाहि नक्तं सरस्वति॥६२॥

दैव्यां होतारा भिषजा। पातिमन्द्र सर्चां सुते। तिस्रस्रेधा सर्रस्वती। अश्विना भारतीडाँ। तीव्रं परिस्रुता सोमम्ं। इन्द्रांय सुषवुर्मदम्ं। अश्विना भेषजं मधुं। भेषजं नः सर्रस्वती। इन्द्रे त्वष्टा यशः श्रियम्। रूप र रूपमधः सुते। ऋतुथेन्द्रो वनस्पतिः। शशमानः परिस्रुतां। कीलालमश्विभ्यां मधुं। दुहे धेनुः सर्रस्वती। गोभिर्न सोममश्विना। मासंरेण परिष्कृतां।

समेधाता १ सरंस्वत्या। स्वाहेन्द्रें सुतं मधुं॥६३॥

नुम्रहुः पातंवे सरस्वत्यधुः सुर्तेऽष्टो चं॥ \blacksquare

अश्विनां ह्विरिन्द्रियम्। नमुंचेर्धिया सरंस्वती। आ शुक्रमांसुराद्वसु। मुघमिन्द्रांय जिभ्रेरे। यमश्विना सरंस्वती। ह्विषेन्द्रमवर्धयन्। स बिंभेद वृत्तं मुघम्। नमुंचावासुरे सर्चां। तिमिन्द्रं पशवः सर्चां। अश्विनोभा सरंस्वती॥६४॥

दर्धाना अभ्यंनूषत। हृविषां यज्ञिमिन्द्रियम्। य इन्द्रं इन्द्रियं द्धुः। सृविता वर्रुणो भगः। स सुत्रामां हृविष्पंतिः। यजमानाय सश्चत। सृविता वर्रुणोऽदर्धत्। यजमानाय दाशुषैं। आदंत्त नमुंचेर्वसुं। सुत्रामा बलंगिन्द्रियम्॥६५॥

वर्रणः क्षुत्रमिन्द्रियम्। भगेन सिवता श्रियम्। सूत्रामा यशंसा बलम्। दधांना यज्ञमांशत। अश्विना गोभिरिन्द्रियम्। अश्वेभिर्वीर्यं बलम्। हृविषेन्द्रक्ष् सरंस्वती। यजमानमवर्धयन्। ता नासंत्या सुपेशंसा। हिरंण्यवर्तनी नर्गं। सरंस्वती हृविष्मंती। इन्द्र कर्मसु नोऽवत। ता भिषजां सुकर्मणा। सा सुदुघा सरंस्वती। स वृत्रहा शृतक्रंतुः। इन्द्रांय दधुरिन्द्रियम्॥६६॥

देवं ब्र्हिः सरंस्वती। सुदेविमन्द्रं अश्विनाः तेजो न चक्षुंरक्ष्योः। ब्रहिषां दधुरिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जं। देवीर्द्वारों अश्विनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। प्राणं न वीर्यंत्रसि। द्वारों दधुरिन्द्रियम्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यर्जं॥६७॥

देवी उषासांविश्वनां। भिषजेन्द्रे सरंस्वती। बलं न वार्चमास्यें। उषाभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज। देवी जोष्ट्री अश्विनां। सुत्रामेन्द्रे सरंस्वती। श्रोत्रं न कर्णयोर्यशंः। जोष्ट्रीभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यर्ज॥६८॥

देवी ऊर्जाहुंती दुघे सुदुघें। पयसेन्द्र सरंस्वत्यश्विनां भिषजांवत। शुक्रं न ज्योतिः स्तनंयोराहुंती धत्त इन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवा देवानां भिषजां। होतांराविन्द्रंमश्विनां। वषद्भारेः सरंस्वती। त्विषिं न हृदंये मृतिम्। होतृंभ्यां दधुरिन्द्रियम्। वसुवने वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥६९॥

देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। सर्गस्वत्यश्विना भारतीडाँ। शूषत्र मध्ये नाभ्याँम्। इन्द्रांय दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देव इन्द्रो नराशश्यां। त्रिव्रूथः सर्गस्वत्याऽश्विभ्यांमीयते रथंः। रेतो न रूपम्मृतं जनित्रम्। इन्द्रांय त्वष्टा दधंदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७०॥ देव इन्द्रो वनस्पतिः। हिरंण्यपणी अश्विभ्याम्। सरंस्वत्याः सुपिप्पूलः। इन्द्रांय पच्यते मधुं। ओजो न जूतिमृंष्भो न भामम्। वनस्पतिंनीं दर्धदिन्द्रियाणि। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजे। देवं बर्हिवीरितीनाम्। अध्वरे स्तीणमश्विभ्याम्। ऊर्णम्रदाः सरंस्वत्याः॥७१॥

स्योनिमंन्द्र ते सदंः। ईशायें मृन्यु राजांनं बर्हिषां दध्रिन्द्रियम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। देवान् यंक्षद्यथायथम्। होतांराविन्द्रंमिश्वनां। वाचा वाच सरंस्वतीम्। अग्नि सोम इं स्विष्टकृत्। स्विष्ट इन्द्रंः सुत्रामां सिवृता वर्रुणो भिषक्। इष्टो देवो वनस्पतिः। स्विष्टा देवा आंज्यपाः। इष्टो अग्निरिग्निनां। होतां होत्रे स्विष्टकृत्। यशो न दधंदिन्द्रियम्। ऊर्ज्मपंचिति इं स्वधाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं॥७२॥

द्वारों दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् जोष्ट्रींभ्यां दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् होतृंभ्यां दध्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज्जैन्द्रियाणिं वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वनस्पितः पद्वं (देवं वर्ष्रिन्द्रियं वंसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यज् सरंस्वत्या वनस्पितः पद्वं (देवं वर्ष्रिहेंवीद्वंतिं देवी उपासांविश्वनां देवी जोष्ट्रीं देवी ऊर्जाहृंती देवा देवानां भिषजां वपद्वृरिदेंवीस्तिस्रस्तिस्रों देवीं वर्ष्यति वर्ष्यति वर्षेत्वं वर्ष्यति वर्षेत्वं वर्ष्यति वर्ष्यति वर्षेत्वं वर्ष्यति वर्षेत्वं वर्ष्यति वर्ष्यति वर्षेत्वं वर्ष्यति वर्षेत्वं वर्ष्यति वर्षेत्वं वर्यं वर्येत्वं वर्येत्वं वर्यं वर्येत्वं वर्षेत्वं वर्षेत्व

अग्निम् होतांरमवृणीत। अय र सुंतासुती यजंमानः। पर्चन्युक्तीः। पर्चन्युरोडाशान्। गृह्णन्ग्रहान्। बुध्नन्निभ्यां छागुर् सरंस्वत्या इन्द्रांय। ब्रध्नन्थ्सरंस्वत्यै मेषिनद्रांयािश्व-भ्याम्। ब्रधित्रन्द्रांयर्षभमिश्वभ्यार् सरंस्वत्यै। सूपस्था अद्य देवो वनस्पतिरभवत्। अश्विभ्यां छागेन् सरंस्वत्या इन्द्रांय॥७३॥

सरंस्वत्यै मेषेणेन्द्रांयािश्वभ्यांम्। इन्द्रांयर्षभेणािश्वभ्याः सरंस्वत्यै। अक्षः स्तान्मंद्रस्तः प्रतिंपचताग्रंभीषः। अवीवृधन्त ग्रहैंः। अपातामिश्वना सरंस्वतीन्द्रः सुत्रामां वृत्रहा। सोमान्थ्युराम्णः। उपो उक्थामदाः श्रौद्विमदां अदन्। अवीवृधन्ताङ्गूषैः। त्वामद्यर्षं आर्षेयर्षीणात्रपादवृणीत। अय स्ंतासुती यजंमानः। बहुभ्य आ सङ्गंतभ्यः। एष मे देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति। ता या देवा देवदानान्यदुः। तान्यस्मा आ च शास्वं। आ चं गुरस्व। इषितश्चं होत्रसिं भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः। सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूहि॥७४॥

उशन्तंस्त्वा हवामह् आ नों अग्ने सुकेतुनां। त्वर सोंम महे भगं त्वर सोंम् प्रचिंकितो मनीषा। त्वया हि नेः पितरं सोम् पूर्वे त्वर सोंम पितृभिः संविदानः। बर्हिषदः पितर् आऽहं पितृन्। उपहूताः पितरोऽग्निष्वात्ताः पितरः। अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे। नराशरसे सोमपीथं य आशुः। ते नो अर्वन्तः सुहवां भवन्तु। शं नो भवन्तु द्विपदे शं चतुष्पदे। ये अंग्निष्वात्ता येऽनंग्निष्वात्ताः॥७५॥ अर्श्होमुर्चः पितरंः सोम्यासंः। परेऽवंरेऽमृतांसो भवंन्तः। अधि ब्रुवन्तु ते अंवन्त्वस्मान्। वान्यांयै दुग्धे जुषमांणाः कर्म्भम्। उदीरांणा अवंरे परे च। अग्निष्वात्ता ऋतुभिः संविदानाः। इन्द्रंवन्तो ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यदंग्ने कव्यवाहन् त्वमंग्न ईडितो जांतवेदः। मातंली कव्यैः। ये तांतृपुर्देवृत्रा जेहंमानाः। होत्रावृधः स्तोमंतष्टासो अर्कैः। आऽग्ने याहि सुविदत्रेभिर्वाङ्। सत्यैः कव्यैः पितृभिर्धर्म्सिद्धः। ह्व्यवाहंम्जरं पुरुप्रियम्। अग्निं घृतेनं ह्विषां सप्यन्। उपांसदं कव्यवाहं पितृणाम्। स नः प्रजां वीरवंती स् समृण्वतु॥७६॥

अनंग्निष्वात्ता जेहंमानाः सप्त चं॥

[88]

होतां यक्षदिडस्पदे। समिधानं महद्यशंः। सुषंमिद्धं वरेण्यम्। अग्निमिन्द्रं वयोधसम्। गायत्रीं छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छुचिंव्रतम्। तनूनपांतमुद्भिदम्। यं गर्भमिदिंतिर्दधे॥७७॥

शुचिमिन्द्रं वयोधसम्। उष्णिह्ं छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदीडेन्यम्। ईडितं वृत्रहन्तंमम्। इडाभिरीड्यक् सहंः। सोम्मिन्द्रं वयोधसम्। अनुष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्। त्रिवृथ्सं गां वयो दर्धत्॥७८॥

वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षथ्मुबर्हिषदम्ं। पूष्णवन्तममंत्र्यम्। सीदंन्तं बर्हिषं प्रिये। अमृतेन्द्रं वयोधसम्। बृह्तीं छन्दं इन्द्रियम्। पश्चांविं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्रयंजं। होतांयक्ष्रद्यचंस्वतीः। सुप्रायणा ऋतावृधंः॥७९॥

द्वारों देवीर्हिर्ण्ययीः। ब्रह्माण् इन्ह्रं वयोधसम्। पृङ्किः छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाहं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजे। होतां यक्षथ्सुपेशंसे। सुशित्ये बृह्ती उभे। नक्तोषासा न दंर्शते। विश्वमिन्द्रं वयोधसम्। त्रिष्टुभं छन्दं इन्द्रियम्॥८०॥

पृष्ठवाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्प्रचेतसा। देवानांमुत्तमं यशः। होतांरा देव्यां क्वी। स्युजेन्द्रं वयोधसम्। जर्गतीं छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गाह्ं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्यंजं। होतां यक्षत्पेशंस्वतीः॥८१॥

तिस्रो देवीरहिंरण्ययीः। भारतीर्बृह्तीर्म्हीः। पितृमिन्द्रं वयोधसम्। विराजं छन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षथ्सुरेतंसम्। त्वष्टांरं पृष्टिवर्धनम्। रूपाणि बिभ्रंतं पृथंक्। पृष्टिमिन्द्रं वयोधसम्॥८२॥

द्विपदं छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षाणं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षच्छ्तक्रंतुम्। हिरंण्य-पर्णमुक्थिनम्। रृश्नां बिभ्रंतं वृशिम्। भगमिन्द्रं वयोधसम्। क्कुभं छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशां वेहतं गां न वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्यस्वाहांकृतीः। अग्निं गृहपंतिं पृथंक्। वर्रुणं भेषजं क्विम्। क्षुत्रमिन्द्रं वयोधसम्। अतिंच्छन्दसं छन्दं इन्द्रियम्। बृहद्ष्पभं गां वयो दर्धत्। वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥८३॥

द्धे दर्धहतावृथं इन्द्रियं पेशंस्वतीर्वयोषम् वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यंजं सुप्त चं (ड्डस्प्देँऽग्निङ्गांयत्रीत्र्यविम्ं। शुचिंत्रत्थ् शुचिंमुण्णिहिन्दित्यवाहम्। ईडेन्य् सोमंमनुष्टुभं त्रिवृथ्यम्। सुव्रृहिषदंमुमृतेन्द्रं वृह्तीं पश्चांविम्। व्यचंस्वतीः सुप्रायणा द्वारौं ब्रह्मणः पृङ्किमिह तुंर्यवाहम्। सुपेशंसे विश्वमिन्द्रं त्रिष्टुभं पष्टवाहम्। प्रचेतसा सुयुजेन्द्रं जर्गतीमिहानुङ्गाहम्। पेशंस्वतीस्त्रिस्रः पितं विराजंमिह धेनुन्न। सुरेतंसन्त्वष्टांर् पृष्टिमिन्द्रं द्विपदंमिहोक्षाण्त्र। शृतकंतुं भगृमिन्द्रं कुकुभंमिह वृशात्र। स्वाहांकृतीः क्षत्रमतिंच्छन्दसं बृहदंपभं गां वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं द्शेहंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिन्द्रियमृषि वसु नवं द्शेहंन्द्रियमष्टं नव दश् गां न वयो दर्धदिङस्पदे सर्वं वेत्॥॥

सिमंद्धो अग्निः स्मिधां। सुषंमिद्धो वरेंण्यः। गायत्री छन्दं इन्द्रियम्। त्र्यविगींवयो दधुः। तनूनपाच्छुचिव्रतः। तनूपाच् सरंस्वती। उष्णिक्छन्दं इन्द्रियम्। दित्यवाङ्गोर्वयो दधुः। इडांभिर्ग्निरीड्यः। सोमो देवो अमर्त्यः॥८४॥

अनुष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। त्रिव्थ्सो गौर्वयो दधुः। सुबर्हिरग्निः पूषण्वान्। स्तीर्णबर्हिरमंत्र्यः। बृह्ती छन्दं इन्द्रियम्। पञ्चांविर्गीर्वयो दधुः। दुरो देवीर्दिशो महीः। ब्रह्मा देवो बृह्स्पतिंः। पङ्किश्छन्दं इहेन्द्रियम्। तुर्यवाङ्गोर्वयो दधुः॥८५॥

उषे यही सुपेशंसा। विश्वं देवा अमंर्त्याः। त्रिष्टुप्छन्दं इन्द्रियम्। पृष्ठवाद्गौर्वयो दधुः। दैव्यां होतारा भिषजा। इन्द्रेण स्युजां युजा। जगंती छन्दं इहेन्द्रियम्। अनुङ्गान्गौर्वयो दधुः। तिस्र इडा सरंस्वती। भारंती मुरुतो विशः॥८६॥

विराद्धन्दं इहेन्द्रियम्। धेनुर्गौर्न वयो दधः। त्वष्टां तुरीपो अद्भंतः। इन्द्राग्नी पृष्टिवर्धना। द्विपाच्छन्दं इहेन्द्रियम्। उक्षा गौर्न वयो दधः। श्रमिता नो वनस्पितः। स्विता प्रस्वन्भगम्। कुकुच्छन्दं इहेन्द्रियम्। वृशा वेहद्गौर्न वयो दधः। स्वाहां यृज्ञं वर्रुणः। सुक्षत्रो भेषुजं करत्। अतिच्छन्दाश्छन्दं इन्द्रियम्। बृहदंष्मो गौर्वयो दधः॥८७॥

अमेर्त्यस्तुर्युवाङ्गोर्वयो दधुर्विशो वृशा बेहद्गोर्न वयो दधुश्चत्वारि च॥————[१८]

वसन्तेन्त्त्नां देवाः। वसंविश्चिवृतां स्तुतम्। रथन्तरेण् तेजंसा। ह्विरिन्द्रे वयो दधः। ग्रीष्मेणं देवा ऋतुनां। रुद्राः पंश्चद्रशे स्तुतम्। बृह्ता यशंसा बलम्ं। ह्विरिन्द्रे वयो दधः। वर्षाभिर्ऋतुनांऽऽदित्याः। स्तोमे सप्तद्रशे स्तुतम्॥८८॥

वैरूपेणं विशोजंसा। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। शार्देन्र्तनां देवाः। एकविर्श ऋभवंः स्तुतम्। वैराजेनं श्रिया श्रियम्ं। ह्विरिन्द्रे वयों दधः। हेमन्तेन्र्त्नां देवाः। मुरुतंस्निण्वे स्तुतम्। बलेन् शर्करीः सर्हः। ह्विरिन्द्रे वयो दधुः। शैशिरेणुर्तुनां देवाः। त्रयस्त्रिष्टशेंऽमृतई स्तुतम्। सृत्येनं रेवतीः क्षत्रम्। हविरिन्द्रे वयो दधुः॥८९॥

स्तोमें सप्तद्रशे स्तुत सहीं हुविरिन्द्रे वयों दधुश्चत्वारिं च (वसन्तेनं ग्रीष्मेणं वर्षाभिः शार्देनं हेमन्तेनं शैशिरेण

षद्॥॥———[१९]

देवं ब्र्हिरिन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। गायत्रिया छन्दंसेन्द्रियम्। तेज् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारों देविमन्द्रं वयोधसम्। देवीर्देवमंवर्धयन्। उण्णिहा छन्दंसेन्द्रियम्। प्राणिमन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेर्यस्य वियन्तु यजं॥९०॥

देवी देवं वंयोधसम्। उषे इन्द्रंमवर्धताम्। अनुष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। वाचमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा। देवी जोष्ट्री देवमिन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमवर्धताम्। बृह्त्या छन्दंसेन्द्रियम्। श्रोत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यर्जा॥९१॥

देवी ऊर्जाहुंती देविमन्द्रं वयोधसम्। देवी देवमंवर्धताम्। पृङ्ग्या छन्दंसेन्द्रियम्। शुक्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वीतां यजं। देवा दैव्या होतांरा देविमन्द्रं वयोधसम्। देवा देवमंवर्धताम्। त्रिष्टुभा छन्दंसेन्द्रियम्। त्विषिमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधयंस्य वीतां यजं॥९२॥ देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीवंयोधसम्। पितिमिन्द्रंमवर्धयन्। जगत्या छन्दंसेन्द्रियम्। बलुमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनें वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराशश्सों देविमिन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। विराजा छन्दंसेन्द्रियम्। रेत इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनें वसुधेयंस्य वेतु यजं॥९३॥

देवो वन्स्पतिर्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। द्विपदा छन्दंसेन्द्रियम्। भगमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनां देविमन्द्रं वयोधसम्। देवं देवमंवर्धयत्। कुकुभा छन्दंसेन्द्रियम्। यश् इन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवो अग्निः स्विष्टुकृद्देविमन्द्रं वयोधसम्। देवो देवमंवर्धयत्। अतिच्छन्दसा छन्दंसेन्द्रियम्। क्षुत्रमिन्द्रे वयो दर्धत्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं॥ १४॥

वियुन्तु यर्ज वीतां यर्ज वीतां यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज वेतु यर्ज पश्च च (देवं बुर्हिर्गायित्रिया तेर्जः। देवीद्वरि उण्णिहाँ प्राणम्। देवी देवमुषे अनुष्टुमा वाचमाँ। देवी जोष्टीं बृहत्या श्रोत्रमाँ। देवी ऊर्जाहंती पृङ्क्या श्रुक्रम्। देवा दैव्या होतारा त्रिष्टुमा विषिमाँ। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः पितं जगत्या बलमाँ। देवो नराशश्चीं विराजा रेतः। देवो वनस्पितीर्द्विपदा भगमाँ। देवं बुर्हिवीरितीनां कुकुमा यशः। देवो अग्निः स्विष्टकृदितिच्छन्दसा क्षुत्रम्। वेतु वियुन्तु चृतुर्वीतामेको वियन्तु चृतुर्वैत्ववर्थयदवर्थयश्चुतुरंवर्थतामेकोऽवर्थयश्च श्रुतुरंवर्थयत्॥॥

[२०]

स्वाद्वीं त्वा सोमः सुरावन्तर् सीसेन मित्रोऽसि यद्देवा होतां यक्षथ्यमिधेन्द्रर् सिमंद्ध इन्द्र आचर्षणिप्रा देवं बुर्हिरहोतां यक्षथ्यमिधाऽग्निर सिमंद्धो अग्निरिश्वनाऽश्विनां हविरिन्द्रियं देवं बुर्हिः सरस्वत्यग्निम्द्योशन्तो होतां यक्षदिडस्पदे 258 ঘষ্টদ: प्रश्नः

सिमंद्वो अग्निः सुमिधां वसुन्तेनुर्तुनां देवं बुरुहिरिन्द्रं वयोधसं विश्वातिः॥२०॥
स्वाद्वीं त्वाऽमींमदन्त पितरुः साम्राज्याय पूतं पुवित्रेणोपासानक्ता वदेरैरधांतां देव इन्द्रो वनस्पतिः पष्टवाहुङ्गां देवी देवं
वयोधस् चतुर्नवितिः॥९४॥
स्वाद्वीं त्वां वेतु यजं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

त्रिवृथ्स्तोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वै त्रिवृत्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। अग्निष्टोमः सोमो भवति। ब्रह्मवर्चसं वा अग्निष्टोमः। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। रथन्तर साम भवति। ब्रह्मवर्चसं वै रथन्तरम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्थे। परिस्रुजी होतां भवति॥१॥

अरुणो मिंरिसिश्रं कः। एतद्वै ब्रह्मवर्चसस्यं रूपम्। रूपेणैव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। बृह्स्पतिरकामयत देवानां पुरोधां गंच्छेयमिति। स एतं बृहस्पतिस्वमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स देवानां पुरोधामंगच्छत्। यः पुरोधाकांमः स्यात्। स बृहस्पतिस्वनं यजेत॥२॥

प्रजापंतिश्चतुस्त्रिष्यो देवतांनाम्। यावंतीरेव देवताः। ता एवावं रुन्धे। कृष्णाजिनंऽभिषिश्चिति। ब्रह्मणो वा एतद्रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मवर्चसेनैवैन्ष् समर्थयति। आज्येनाभिषिश्चति। तेजो वा आज्यम्। तेजं एवास्मिन्दधाति॥४॥

यदाँग्नेयो भवंति। अग्निम्ंखा ह्यृद्धिः। अथ् यत्पौष्णः। पृष्टिर्वे पूषा। पृष्टिर्वेश्यस्य। पृष्टिमेवावं रुन्धे। प्रस्वायं सावित्रः। अथ् यत्त्वाष्ट्रः। त्वष्टा हि रूपाणिं विकरोतिं। निर्वरुणत्वायं वारुणः॥५॥

अथो य एव कश्च सन्थ्सूयतें। स हि वांरुणः। अथ् यद्वैश्वदेवः। वैश्वदेवो हि वैश्यः। अथ् यन्मांरुतः। मा्रुतो हि वैश्यः। स्प्तैतानिं ह्वी १ षि भवन्ति। सप्तगंणा वै म्रुतः। पृश्जिः पृष्ठोही मांरुत्या लेभ्यते। विश्वे मुरुतः। विश्वे पृवैतन्मध्यतोऽभिषिंच्यते। तस्माद्वा एष विशः प्रियः। विश्वो हि मध्यतोऽभिषिच्यते। ऋष्मचर्मेऽध्यभिषिश्चित। स हि प्रजनियता। द्वाऽभिषिश्चित। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिधे। ऊर्जेवनमन्नाद्येन समर्धयति॥६॥

यदाँग्नेयो भवंति। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। अथु यथ्सौम्यः। सौम्यो हि ब्राँह्मणः। प्रस्वायैव सांवित्रः। अथु यद्वांर्हस्पृत्यः। एतद्वे ब्राँह्मणस्यं वाक्पृतीयम्। अथु यदंग्नीषोमीयः। आग्नेयो वै ब्राँह्मणः। तौ यदा सङ्गच्छेते॥७॥

अर्थ वीर्यावत्तरो भवति। अथु यथ्सारस्वतः। एतद्धि

प्रत्यक्षं ब्राह्मणस्यं वाक्पतीयम्। निर्वृरुणत्वायैव वांरुणः। अथो य एव कश्च सन्थ्सूयते। स हि वांरुणः। अथ् यद्यांवापृथिव्यः। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। तं द्यावांपृथिवी नान्वंमन्येताम्। तमेतेनैव भागधेयेनान्वंमन्येताम्॥८॥

वर्ज्रस्य वा एषोऽनुमानायं। अनुंमतवज्ञः सूयाता इति। अष्टावेतानिं ह्वी १ षिं भवन्ति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्री ब्रह्मवर्च्सम्। गायत्रियेव बंह्मवर्च्समवं रुन्धे। हिरंण्येन घृतमृत्पंनाति। तेजंस एव रुचे। कृष्णाजिनेऽभिषिंश्वति। ब्रह्मंणो वा एतदंख्सामयों रूपम्। यत्कृष्णाजिनम्। ब्रह्मंत्रेवेनंमृख्सामयोरध्यभिषिंश्वति। घृतेनाभिषिंश्वति। तथां वीर्यावत्तरो भवति॥९॥

सुङ्गच्छेते भागुधेयुनान्वमन्येतार रूपं चृत्वारिं च॥—————[३]

न वै सोमंन् सोमंस्य स्वौंऽस्ति। ह्तो ह्यंषः। अभिष्ंतो ह्यंषः। न हि हृतः सूयतें। सौमी स्तृतवंशामा लंभते। सोमो वै रेतोधाः। रेतं पृव तद्दंधाति। सौम्यर्चाऽभिषिश्चिति। रेतोधा ह्यंषा। रेतः सोमः। रेतं पृवास्मिन्दधाति। यत्किं चं राज्यस्यमृते सोमम्। तथ्सर्वं भवति। अषांढं युथ्सु पृतंनासु पप्रिम्। सुवर्षाम्पस्वां वृजनंस्य गोपाम्। भरेषुजा संक्षिति सुश्रवंसम्। जयंन्तं त्वामनं मदेम सोम॥१०॥

[૪]

यो वै सोमेन सूयतें। स देवस्वः। यः पृशुनां सूयतें। स देवस्वः। य इष्ट्यां सूयतें। स मनुष्यस्वः। एतं वै पृथंये देवाः प्रायंच्छन्। ततो वै सोऽप्यांरण्यानां पशूनामंसूयत। यावंतीः कियंतीश्च प्रजा वाचं वदंन्ति। तासार् सर्वासार सूयते॥११॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। नाराश्र्य्यां-ऽभिषिश्चिति। मृनुष्यां वै नराश्र्यं। निह्नुत्य वावैतत्। अथाभिषिश्चिति। यित्कं चं राज्यूयंमनुत्तरवेदीकम्। तथ्सर्वं भवति। ये में पश्चाशतंं दृदुः। अश्वांना स्प्यस्तुंतिः। द्युमदंग्ने मिह् श्रवंः। बृहर्त्कृषि मुघोनांम्। नृवदंमृत नृणाम्॥१२॥

सूयते स्थस्तुंतिस्रीणि च॥—————[५]

पुष गोंस्वः। षुट्टिश्श उक्थ्यों बृहथ्सांमा। पर्वमाने कण्वरथन्त्ररं भंवति। यो वै वाज्येर्यः। स संम्राट्थ्स्वः। यो राजसूर्यः। स वंरुणस्वः। प्रजापंतिः स्वाराज्यं परमेष्ठी। स्वाराज्यं गौरेव। गौरिव भवति॥१३॥

य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। उभे बृंहद्रथन्त्रे भंवतः। तिद्ध स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्ध स्वारांज्यम्। अयुतं दक्षिंणाः। तिद्ध स्वारांज्यम्। प्रतिधुषाऽभिषिश्चिति। तिद्ध स्वारांज्यम्। अनुंद्धते वेद्यै दक्षिणत आंहवनीयंस्य बृह्तः स्तोत्रं प्रत्यभिषिश्चिति। इयं वाव रंथन्तरम्॥१४॥

असौ बृहत्। अनयोर्वेनमनंन्तर्हितम्भिषिश्चिति। पृशुस्तोमो वा पृषः। तेनं गोस्वः। षृद्विर्शः सर्वः। रेवज्ञातः सहंसा वृद्धः। क्षृत्राणां क्षत्रभृत्तंमो वयोधाः। महान्मंहित्वे तंस्तभानः। क्षत्रे राष्ट्रे चं जागृहि। प्रजापंतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वाराज्येनाभिषिश्चामीत्यांह। स्वाराज्यमेवैनं गमयति॥१५॥

इव भवति रथन्तरमाहैकं च॥

[3]•

सि्र्हे व्याघ्र उत या पृदांकौ। त्विषिरुग्नौ ब्राँह्मणे सूर्ये या। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या रांजन्ये दुन्दुभावायंतायाम्। अश्वंस्य ऋन्द्ये पुरुषस्य मायौ। इन्द्रं या देवी सुभगां जजानं। सा न आगुन्वर्चसा संविदाना। या हस्तिनिं द्वीपिनि या हिरंण्ये। त्विष्रश्वंषु पुरुषेषु गोषुं॥१६॥

इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। रथे अक्षेषुं वृष्भस्य वाजें। वाते पूर्जन्ये वर्रुणस्य शुष्में। इन्द्रं या देवी सुभगां ज्जानं। सा न आग्न्वर्चसा संविदाना। राडंसि विराडंसि। सुम्राडंसि स्वराडंसि। इन्द्रांय त्वा तेजंस्वते तेजंस्वन्त श्रीणामि। इन्द्रांय त्वौजंस्वत् ओजंस्वन्त श्रीणामि॥१७॥

इन्द्रांय त्वा पर्यस्वते पर्यस्वन्तः श्रीणामि। इन्द्रांय त्वाऽऽयुष्मत् आयुष्मन्तः श्रीणामि। तेजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। तेजंस्वदस्तु मे मुखम्ं। तेजंस्वच्छिरों अस्तु मे। तेजंस्वान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। तेजंसा सम्पिपृग्धि मा। ओजोंऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि॥१८॥

ओजंस्वदस्तु मे मुखमं। ओजंस्वच्छिरों अस्तु मे। ओजंस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्गः। ओजंसा सं पिंपृग्धि मा। पयोऽसि। तत्ते प्र यंच्छामि। पयंस्वदस्तु मे मुखमं। पयंस्वच्छिरों अस्तु मे। पयंस्वान् विश्वतंः प्रत्यङ्गः। पयंसा सं पिंपृग्धि मा॥१९॥

आयुंरिस। तत्ते प्र यंच्छामि। आयुंष्मदस्तु मे मुखम्ँ। आयुंष्मच्छिरों अस्तु मे। आयुंष्मान् विश्वतः प्रत्यङ्कः। आयुंषा सं पिंपृग्धि मा। इममंग्र आयुंषे वर्चसे कृधि। प्रिय॰ रेतों वरुण सोम राजन्। मातेवासमा अदिते शर्म यच्छ। विश्वें देवा जरंदष्टिर्यथाऽसंत्॥२०॥

आयुंरिस विश्वायुंरिस। सूर्वायुंरिस सर्वमायुंरिस। यतो वातो मनोजवाः। यतः क्षरेन्ति सिन्धंवः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्चामि वर्चसा। समुद्र इंवासि गृह्मनाँ। सोमं इवास्यदाँभ्यः। अग्निरिंव विश्वतः प्रत्यङ्कः। सूर्यं इव ज्योतिंषा विभूः॥२१॥

अपां यो द्रवंणे रसंः। तम्हम्स्मा आमुष्यायणायं। तेर्जसे ब्रह्मवर्चसायं गृह्णामि। अपां य ऊमीं रसंः। तमहमस्मा आं-

मुष्यायणायं। ओजंसे वीर्याय गृह्णामि। अपां यो मध्यतो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। पुष्ट्यैं प्रजनंनाय गृह्णामि। अपां यो यज्ञियो रसंः। तमहम्स्मा आंमुष्यायणायं। आयुंषे दीर्घायुत्वायं गृह्णामि॥२२॥

गोष्वोर्जस्वन्तः श्रीणाम्योर्जोऽसि तत्ते प्रयंच्छामि पर्यसा सम्पिपृग्धि माऽसिद्वभूर्यिज्ञयो रसो द्वे चं॥————[9]

अभिप्रेहिं वी्रयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपब्रहा। आतिष्ठ मित्रवर्धनः। तुभ्यं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभित् आतिष्ठ वृत्रहृत्रथम्। आतिष्ठंन्तं पिर् विश्वं अभूषन्। श्रियं वसानश्चरित् स्वरोचाः। महत्तदस्यासुंरस्य नामं। आ विश्वरूपो अमृतांनि तस्थौ। अनु त्वेन्द्रों मद्त्वनु बृहस्पितः॥२३॥

अनु सोमो अन्वग्निरांवीत्। अनुं त्वा विश्वं देवा अंवन्तु। अनुं सप्त राजांनो य उताभिषिंक्ताः। अनुं त्वा मित्रावरुंणाविहावंतम्। अनु द्यावांपृथिवी विश्वशंम्भू। सूर्यो अहोंभिरनुं त्वाऽवतु। चन्द्रमा नक्षंत्रैरनुं त्वाऽवतु। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिंकिता सोमों अग्निः। आऽयं पृंणक्तु रजंसी उपस्थम्॥२४॥

बृह्स्पतिः सोमों अग्निरेकं च॥

·[८]

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्सृष्टाः परांचीरायन्।

स एतं प्रजापंतिरोद्नमंपश्यत्। सोऽन्नं भूतोंऽतिष्ठत्। ता अन्यत्रान्नाद्यमविंत्वा। प्रजापंतिं प्रजा उपावंर्तन्त। अन्नंमेवैनं भूतं पश्यंन्तीः प्रजा उपावंर्तन्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं। सर्वाण्यन्नांनि भवन्ति॥२५॥

सर्वे पुरुषाः। सर्वांण्येवान्नान्यवं रुन्धे। सर्वान्पुरुषान्। राडंसि विराड्सीत्यांह। स्वारांज्यमेवैनं गमयति। यद्धिरंण्यं ददांति। तेज्नस्तेनावं रुन्धे। यत्तिंसृधन्वम्। वीर्यं तेनं। यदष्ट्रांम्॥२६॥

पुष्टिं तेनं। यत्कंमण्डलुम्ं। आयुष्टेनं। यद्धिरंण्यमा बुध्नातिं। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिरेवास्मिन्दधाति। अथो तेजो वै हिरंण्यम्। तेजं एवाऽऽत्मन्धंत्ते। यदोद्नं प्राश्ञातिं। एतदेव सर्वमवरुध्यं॥२७॥

तदंस्मिन्नेक्धाऽधाँत्। रोहिण्यां कार्यः। यद्वाँह्मण एव रोहिणी। तस्मांदेव। अथो वर्ष्मैवैन र्समानानां करोति। उद्यता सूर्येण कार्यः। उद्यन्तं वा एतर सर्वाः प्रजाः प्रतिनन्दन्ति। दिदृक्षेण्यो दर्श्नीयो भवति। य एवं वेदं। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥२८॥

अवेत्यों ऽवभृथा (३) ना (३) इतिं। यद्देर्भपुञ्जीलैः प्वयंति। तथ्स्वंदेवावैति। तन्नावैति। त्रिभिः पंवयति। त्रयं इमे लोकाः। पुभिरेवैनं लोकैः पंवयति। अथों अपां वा पुतत्तेजो वर्चः। यद्र्भाः। यद्र्भपुञ्जीलैः प्वयंति। अपामेवैनं तेर्जसा वर्चसा-ऽभिषिञ्चति॥२९॥

प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयाँन्थ्स्यामितिं। स एतं पंश्रशार्दीयंमपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजत। ततो वै स बहोर्भूयांनभवत्। यः कामयेत बहोर्भूयांन्थ्स्यामितिं। स पंश्रशार्दीयंन यजेत। बहोरेव भूयांन्भवति। मुरुथ्स्तोमो वा एषः। मुरुतो हि देवानां भूयिष्ठाः॥३०॥

बहुर्भविति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। पश्चशारदीयों भविति। पश्च वा ऋतवंः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिं तिष्ठति। अथो पश्चौक्षरा पङ्किः। पाङ्को यज्ञः। यज्ञमेवावं रुन्थे। सप्तदशः स्तोमा नातिं यन्ति। सप्तदशः प्रजापंतिः। प्रजापंतेरास्यै॥३१॥

अगस्त्यों मुरुद्धं उक्ष्णः प्रौक्षंत्। तानिन्द्र आदंत्त। त एंनं वज्रंमुद्यत्याभ्यांयन्त। तानगस्त्यंश्चैवेन्द्रंश्च कयाशुभीयंनाशमयताम्। ताञ्छान्तानुपाँह्वयत। यत्कंयाशुभीयं भवंति शान्त्यैं। तस्मांदेत ऐन्द्रामारुता उक्षाणंः सवनीयां भवन्ति। त्रयंः प्रथमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। एवं द्वितीयें। एवं तृतीयें॥३२॥ पुवं चंतुर्थे। पश्चौत्तमेऽहुन्ना लेभ्यन्ते। वर्षिष्ठमिव् ह्येतदहंः। वर्षिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजंते। य उंचैनमेवं वेदं। स्वारौज्यं वा एष युज्ञः। एतेन् वा एक्या वां कान्द्मः स्वारौज्यमगच्छत्। स्वारौज्यं गच्छति। य एतेन् यजंते॥३३॥

य उं चैनमेवं वेदं। मा्रुतो वा एषः स्तोमंः। एतेन् वै म्रुतो देवानां भूयिष्ठा अभवन्। भूयिष्ठः समानानां भवति। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं। पृश्चशार्दीयो वा एष यज्ञः। आ पश्चमात्पुरुषादन्नमित्ति। य एतेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं। स्प्तद्शः स्तोमा नातिं यन्ति। स्प्तद्शः प्रजा-पंतिः। प्रजापंतेरेव नैति॥३४॥

अस्या जरांसो दमा मृरित्राः। अर्चर्द्धमासो अग्नयः पावकाः। श्विचीचयः श्वात्रासो भुरण्यवः। वनर्षदो वायवो न सोमाः। यजां नो मित्रावरुणा। यजां देवा र ऋतं बृहत्। अग्ने यक्षि स्वन्दमम्। अश्विना पिबंत र सुतम्। दीद्यंग्नी शुचिव्रता। ऋतुनां यज्ञवाहसा॥३५॥

द्वे विरूपे चरतः स्वर्थै। अन्याऽन्यां वृथ्समुपं धापयेते। हरिंरुन्यस्यां भवंति स्वधावान्। शुक्रो अन्यस्यां ददशे सुवर्चाः। पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवंनाऽभि चष्टें। ऋतून्न्यो विदधंज्ञायते पुनंः। त्रीणि शता त्रीष्हस्राण्यग्निम्। त्रिष्शचं देवा नवं चाऽसपर्यन्॥३६॥

औक्षं घृतैरास्तृंणन्बर्हिरंस्मै। आदिद्धोतांरं न्यंषादयन्त। अग्निनाऽग्निः समिध्यते। कृविर्गृहपंति्युंवां। हृव्यवाङ्गुह्वांऽऽस्यः। अग्निर्देवानां जठरम्। पूतदंक्षः कृविक्रंतुः। देवो देवेभि्रा गमत्। अग्निश्रियों मुरुतों विश्वकृष्टयः। आ त्वेषमुग्रमवं ईमहे वयम्॥३७॥

ते स्वानिनों रुद्रियां वर्षिनिणिजः। सिर्हा न हेषक्रंतवः सुदानंवः। यदुंत्तमे मरुतो मध्यमे वाँ। यद्वांऽवमे सुभगासो दिवि ष्ठ। ततों नो रुद्रा उत वाऽन्वस्यं। अग्ने वित्ताद्धविषो यद्यजांमः। ईडे अग्निः स्ववंसन्नमोंभिः। इह प्रंसप्तो वि चं यत्कृतं नंः। रथैरिव प्रभरे वाज्यद्भिः। प्रदक्षिणिन्म्रुताः स्तोमंमृद्धाम्॥३८॥

श्रुधि श्रुंत्कर्ण् वह्निभिः। देवैरंग्ने स्यावंभिः। आसींदन्तु बर्हिषिं। मित्रो वर्रुणो अर्यमा। प्रात्यावाणो अध्वरम्। विश्वेषामिदंतिर्यज्ञियांनाम्। विश्वेषामितंथिर्मानुंषाणाम्। अग्निर्देवानामवं आवृणानः। सुमृडीको भेवतु विश्ववेदाः। त्वे अग्ने सुमृतिं भिक्षंमाणाः॥३९॥

दिवि श्रवो दिधरे यज्ञियांसः। नक्तां च चुकुरुषसा विरूपे। कृष्णं च वर्णमरुणं च सन्धुः। त्वामंग्न आदित्यासं आस्यम्। त्वां जिह्वा १ शुचंयश्चकिरे कवे। त्वा १ रांतिषाचो अध्वरेषुं सिश्चरे। त्वे देवा ह्विरंदन्त्याहुंतम्। नि त्वां यज्ञस्य साधंनम्। अग्ने होतांरमृत्विजम्। वनुष्वद्देव धीमिह् प्रचेतसम्। जीरं दूतममंर्त्यम्॥४०॥

यज्ञवाहुसास्पूर्य-व्यमृद्धां भिक्षमाणाः प्रचैतस्मेके च॥———[१२

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमांना याहि। वायुर्न नियुतों नो अच्छं। पिबास्यन्थों अभिसृष्टो अस्मे। इन्द्रः स्वाहां रिमा ते मदांय। कस्य वृषां सुते सचाँ। नियुत्वाँन्वृष्भो रंणत्। वृत्रहा सोमंपीतये। इन्द्रं वयं महाधने। इन्द्रमर्भे हवामहे। युजंं वृत्रेषुं विज्ञणम्॥४१॥

द्विता यो वृंत्रहन्तंमः। विद इन्द्रः श्तकंतुः। उपं नो हरिंभिः सुतम्। स सूर् आजनयं ज्योतिरिन्द्रम्ं। अया धिया त्रणिरद्रिंबर्हाः। ऋतेनं शुष्मी नवंमानो अर्कैः। व्यंस्त्रिधों अस्रो अद्रिंबिभेद। उत्तत्यदाश्वश्वियम्। यदिन्द्र नाहुंषी्ष्वा। अग्रे विक्षु प्रतीदंयत्॥४२॥

भरेष्विन्द्र र सुहवर हवामहे। अर्होमुचर सुकृतं दैव्यं जनम्। अग्निं मित्रं वर्रणर सातये भगम्। द्यावापृथिवी मुरुतः स्वस्तये। मुहि क्षेत्रं पुरुश्चन्द्रं वि विद्वान्। आदिथ्सर्खिभ्यश्चरथुर् समैरत्। इन्द्रो नृभिरजन्दीद्यानः साकम्। सूर्यमुषसं गातुम्ग्निम्। उरुं नो लोकमनुं नेषि विद्वान्। सुर्वर्वुङ्योतिरभयः स्वस्ति॥४३॥

ऋष्वा तं इन्द्र स्थविरस्य बाहू। उपंस्थेयाम शर्णा बृहन्तां। आ नो विश्वांभिरूतिभिः सजोषाः। ब्रह्मं जुषाणो हर्यश्व याहि। वरींवृज्धस्थविरेभिः सुशिप्र। अस्मे दधृदृषंणु श्र्षामिन्द्र। इन्द्रांय गावं आशिरम्ं। दुदुहे विज्ञिणे मध्री यथ्सींमुपह्वरे विदत्। तास्ते विज्ञिन्धेनवों जोजयुर्नः॥४४॥

गर्भस्तयो नियतो विश्ववाराः। अहंरहुर्भूय इञ्जोगंवानाः। पूर्णा इंन्द्र क्षुमतो भोजनस्य। इमां ते धियं प्र भेरे महो महीम्। अस्य स्तोत्रे धिषणा यत्तं आनुजे। तमुंथ्सवे चं प्रस्वे चं सासहिम्। इन्द्रं देवासुः शवंसा मदं ननुं॥४५॥

वुज्रिणंमयथ्स्वुस्ति जोंजयुर्नः सुप्त चं॥■

[8 8]**-**

प्रजापंतिः पृशूनंसृजत। तेंऽस्माथ्सृष्टाः परौं च आयन्। तानंग्निष्टोमेन् नाऽऽप्नौत्। तानुक्थ्येन् नाऽऽप्नौत्। तान्थ्योड्शिना् नाऽऽप्नौत्। तान्नात्रिया् नाऽऽप्नौत्। तान्थ्यन्धिना् नाऽऽप्नौत्। सौऽग्निमंब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानृग्निस्त्रिवृता् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्॥४६॥

स इन्द्रंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तानिन्द्रंः पश्चद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नौत्। स विश्वान्देवानंब्रवीत्। इमान्मं

ईफ्सतेतिं। तान् विश्वेंदेवाः संप्तद्शेन् स्तोमेन् नाऽऽप्नुंवन्। स विष्णुंमब्रवीत्। इमान्मं ईफ्सेतिं। तान् विष्णुंरेकविर्शेन् स्तोमेनाऽऽप्नोत्। वार्वन्तीयेनावारयत॥४७॥

ड्रदं विष्णुर्वि चंक्रम् इति व्यंक्रमत। यस्मौत्पृशवः प्रप्रेव भ्रश्शेरन्। स एतेनं यजेत। यदाप्नौत्। तद्प्तोर्यामंस्याप्तोर्याम्-त्वम्। एतेन् वै देवा जैत्वांनि जित्वा। यं काम्मकांमयन्त् तमाँऽऽप्नवन्। यं कामं कामयंते। तमेतेनाँऽऽप्नोति॥४८॥

व्याघ्रोंऽयम्ग्रौ चंरित प्रविष्टः। ऋषींणां पुत्रो अंभिशस्तिपा अयम्। नमस्कारेण नमंसा ते जुहोमि। मा देवानां मिथुयाकंर्म भागम्। सावीर्हि देव प्रस्वायं पित्रे। वर्ष्माणंमस्मै विर्माणंमस्मै। अथास्मभ्य सिवतः सर्वतांता। दिवेदिंव आ सुंवा भूरि पृश्वः। भूतो भूतेषुं चरित प्रविष्टः। स भूतानामधिपतिर्बभूव॥४९॥

तस्यं मृत्यौ चंरित राज्ञसूयम्ं। स राजां राज्यमनुं मन्यतामिदम्। येभिः शिल्पैः पप्रथानामद्दर्हत्। येभिर्द्याम्भ्यिपर्श्यत्प्रजापंतिः। येभिर्वाचं विश्वरूपार्श्यस्ययत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्धि। येभिरादित्यस्तपंति प्र केतुभिः। येभिः सूर्यो दृद्शे चित्रभानुः। येभिर्वाचं पुष्कुलेभिरव्यंयत्। तेनेममंग्र इह वर्चसा समिङ्धि॥५०॥

आऽयं भांतु शवंसा पश्चं कृष्टीः। इन्द्रं इव ज्येष्ठो भंवतु प्रजावान्। अस्मा अंस्तु पुष्कृतं चित्रभांनु। आऽयं पृणक्तु रजंसी उपस्थम्। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंत्पुष्कृतं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्। तस्मिन्नाजांन्मिध् विश्रंयेमम्। द्यौरंसि पृथिव्यंसि। व्याघ्रो वैयाघ्रेऽिधं॥५१॥

विश्रंयस्व दिशों महीः। विशंस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु। मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत्। या दिव्या आपः पर्यसा सम्बभूवुः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। तासाँ त्वा सर्वासार रुचा। अभिषिश्रामि वर्चसा। अभि त्वा वर्चसाऽसिचं दिव्येनं। पर्यसा सह। यथासां राष्ट्रवर्धनः॥५२॥

तथाँ त्वा सिवता करत्। इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्।
समुद्रव्यंचसङ्गिरंः। र्थीतंमः रथीनाम्। वाजांनाः
सत्पंतिं पितम्। वसंवस्त्वा पुरस्तांदिभिषिश्चन्तु गायत्रेण्
छन्दंसा। रुद्रास्त्वां दक्षिण्तोंऽभिषिश्चन्तु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा।
आदित्यास्त्वां पृश्चादिभिषिश्चन्तु जागंतेन् छन्दंसा।
विश्वें त्वा देवा उत्तर्तोंऽभिषिश्चं त्वाऽनुंष्टुभेन् छन्दंसा।
बृहस्पतिंस्त्वोपरिष्टादिभिषिश्चतु पाङ्केन् छन्दंसा॥५३॥

अ्रुणं त्वा वृकंमुग्रङ्कंजङ्करम्। रोचंमानं म्रुतामग्रें अर्चिषंः। सूर्यवन्तं मुघवानं विषास्हिम्। इन्द्रंमुक्थेषुं नाम्हूर्तम हवेम। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः। आ नो गर्व्यातिमुक्षतं घृतेनं। आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इन्द्रंस्य ते वीर्युकृतंः। बाहू उपावं हरामि॥५४॥

बुभूबाव्यंयत्तेनुममंग्न हुह वर्चसा समिक्ष्चि वैयाघ्रेऽधि राष्ट्रवर्धनः पाङ्केन छन्दंसोपावंहरामि॥————[१५]

अभि प्रेहिं वीरयंस्व। उग्रश्चेत्तां सपल्रहा। आतिष्ठ वृत्रहन्तमः। तुभ्यंं देवा अधिब्रवन्। अङ्कौ न्यङ्कावभितो रथं यौ। ध्वान्तं वांताग्रमन्ं स्श्चरंन्तौ। दूरेहेतिरिन्द्रियावांन्यत्त्री। ते नोऽग्नयः पप्रयः पारयन्तु। नमंस्त ऋषे गद। अव्यंथाये त्वा स्वधायें त्वा॥५५॥

मा नं इन्द्राभित्स्त्वदृष्वारिष्टासः। एवा ब्रेह्मन्तवेदेस्तु। तिष्ठा रथे अधि यद्वज्रंहस्तः। आ र्श्मीन्देव युवसे स्वर्श्वः। आ तिष्ठ वृत्रहन्नातिष्ठंन्तं परि। अनु त्वेन्द्रो मद्त्वनुं त्वा मित्रावरुंणौ। द्यौश्चं त्वा पृथिवी च प्रचेतसा। शुक्रो बृहद्दक्षिणा त्वा पिपर्तु। अनुं स्वधा चिकिता सोमो अग्निः। अनुं त्वाऽवतु सविता सुवेनं॥५६॥

इन्द्रं विश्वां अवीवृधन्। समुद्रव्यंचस्क्विरंः। र्थीतंमश् रथीनाम्। वाजांनाश् सत्पंतिं पतिम्। परिमा सेन्या घोषाः। ज्यानां वृञ्जन्तु गृध्नवंः। मेथिष्ठाः पिन्वंमाना इह। मां गोपंतिम्भि संविंशन्तु। तन्मेऽनुंमित्रिरनुं मन्यताम्। तन्माता पृंथिवी तित्पता द्यौः॥५७॥ तद्भावांणः सोम्सुतां मयो्भुवंः। तदंश्विना शृणुतश् सौभगा युवम्। अवं ते हेड् उद्त्तमम्। एना व्याघ्रं परिषस्वजानाः। सिश्हश् हिन्वन्ति महते सौभंगाय। समुद्रं न सुहुवंन्तस्थिवाश्सम्। मुर्मुज्यन्ते द्वीपिनंमुफ्स्वंन्तः। उदसावंतु सूर्यः। उदिदं मांमुकं वचंः। उदिहि देव सूर्य। सह वृग्नुना ममं। अहं वाचो विवाचंनम्। मिय वागंस्तु धर्णसिः। यन्तुं नृदयो वर्षंन्तु पूर्जन्याः। सुपिप्पुला ओषंधयो भवन्तु। अन्नंवतामोद्नवंतामामिक्षंवताम्। एषाश् राजां भूयासम्॥५८॥

स्वधायैँ त्वा स्वेन् द्यौः सूर्य सप्त चं॥

-[१६]

ये केशिनंः प्रथमाः स्त्रमासंत। येभिराभृतं यदिदं विरोचंते। तेभ्यों जुहोमि बहुधा घृतेनं। रायस्पोषेणेमं वर्चसा स॰ सृंजाथ। नर्ते ब्रह्मणस्तपंसो विमोकः। द्विनाम्नी दीक्षा विशिनी ह्यंग्रा। प्र केशाः सुवतं काण्डिनो भवन्ति। तेषां ब्रह्मेदीशे वपंनस्य नान्यः। आ रोह प्रोष्ठं विषंहस्व शत्रून्ं। अवासाग्दीक्षा विशिनी ह्यंग्रा॥५९॥

देहि दक्षिणां प्रतिरुक्षायुः। अथांमुच्यस्व वरुंणस्य पाशांत्। येनावंपथ्सिवता क्षुरेणं। सोमंस्य राज्ञो वरुंणस्य विद्वान्। तेनं ब्रह्माणो वपतेदम्स्योर्जेमम्। र्य्या वर्चसा सक् सृंजाथ। मा ते केशाननुं गाद्वर्चं एतत्। तथां धाता करोतु ते। तुभ्यमिन्द्रो बृहस्पतिः। स्विता वर्च आदंधात्॥६०॥

तेभ्यों निधानं बहुधा व्यैच्छन्। अन्तरा द्यावांपृथिवी अपः सुवंः। दुर्भस्तम्बे वीर्यंकृते निधायं। पौइस्येनेमं वर्चसा सर् सृंजाथ। बलं ते बाहुवोः संविता दंधातु। सोमंस्त्वाऽनक्तु पर्यसा घृतेनं। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमं वर्चसा सर्मृंजाथ। यथ्सीमन्तङ्कः क्षंतस्ते लिलेखं। यद्वौ क्षुरः परिववर्ज् वपईस्ते। स्त्रीषु रूपमंश्विनैतन्नि धंत्तम्। पौइस्येनेमर सर् सृंजाथो वीर्यण॥६१॥

अवाँस्राग्दीक्षा वृशिनी ह्युंप्राऽदंधाद्ववर्ज् वपई स्ते द्वे चं॥————[१७]

इन्द्रं वै स्वाविशों मुरुतो नापांचायन्। सोऽनंपचाय्यमान एतं विघनमंपश्यत्। तमाऽहंरत्। तेनांयजता तेनैवासान्तर सई स्तम्भं व्यंहन्। यद्यहन्ं। तिद्वंघनस्यं विघनत्वम्। वि पाप्मानं भ्रातृंव्यर् हते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

य॰ राजांनं विशो नाप्चायंयुः। यो वाँ ब्राह्मणस्तमंसा पाप्मना प्रावृतः स्यात्। स एतेनं यजेत। विघनेनैवैनंद्विहत्यं। विशामाधिपत्यं गच्छति। तस्य द्वे द्वांद्शे स्तोत्रे भवंतः। द्वे चंतुर्वि॰्शे। औद्भिंद्यमेव तत्। एतद्वै क्षुत्रस्यौद्भिंद्यम्। यदंस्मै स्वाविशों बलि॰ हर्रन्ति॥६३॥

हरंन्त्यस्मै विशों बुलिम्। ऐनुमप्रंतिख्यातं गच्छति। य एवं

वेदं। प्रबाहुग्वा अग्रें क्षत्राण्यातेपुः। तेषामिन्द्रः क्षत्राण्यादेत्त। न वा इमानि क्षत्राण्यंभूवन्निति। तन्नक्षंत्राणां नक्षत्रत्वम्। आ श्रेयंसो भ्रातृंव्यस्य तेजं इन्द्रियं देत्ते। य एतेन् यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥६४॥

तद्यथां हु वै संचित्रिणौ कप्लंकावुपावंहितौ स्याताँम्। प्वमेतौ युग्मन्तौ स्तोमौँ। अयुक्षु स्तोमेषु क्रियेते। पाप्मनो-ऽपंहत्यै। अपं पाप्मानं भ्रातृंव्य हते। य पृतेन् यज्ञते। य उं चैनमेवं वेदं। तद्यथां हु वै सूतग्रामण्यंः। पृवं छन्दा हिस। तेष्वसावांदित्यो बृंहतीर्भ्यूंढः॥६५॥

स्तोबृंहतीषु स्तुवते स्तो बृंहन्। प्रजयां प्शुभिरसानीत्येव। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तं व क्षत्रं विशा। विशेवैनं क्षत्रेण व्यतिषज्ञति। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व ग्रांमणीः संजातेः। स्जातैरेवैनं व्यतिषज्जित। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्ताभिः स्तुवते। व्यतिषक्तो व पुरुषः पाप्मभिः। व्यतिषक्ताभिरेवास्यं पाप्मनो नुदते॥६६॥

वेद् हर्रन्त्येनमेवं वेदाभ्यूंढः पाप्पभिरेकं च॥—————[१८]

त्रिवृद्यदाँभ्रेयौँऽग्निमुंखा ह्युद्धिर्यदाँभ्रेय आँग्नेयो न वै सोमेंन् यो वै सोमेंनेष गोंसुवः सि्र्हेऽभि प्रेहिं मित्रवर्धनः प्रजापंतिस्ता ओंदनं प्रजापंतिरकामयत बहोर्भूयांनगस्त्योस्या जरांसुस्तिष्ठा हरीं प्रजापंतिः पृश्न्व्याभ्रौंऽयमुभिभ्रेहिं वृत्रहन्तंमो ये केशिन् इन्द्रं वा अष्टादंश॥१८॥

त्रिवृद्धो वै सोमेनायुरिस बुहुर्भविति तिष्ठा हरीरथ आयं भांतु तेभ्यों निषान् पदर्थ्यष्टिः॥६६॥

त्रिवृत्पाप्मनौ नुदते॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

पीवौन्ना रियवृधं सुमेधाः। श्वेतः सिंपक्ति नियुतां-मिभुशीः। ते वायवे समनसो वितस्थः। विश्वेन्नरं स्वपृत्यानिं चक्रः। रायेऽन यञ्जजतू रोदंसी उभे। राये देवी धिषणां धाति देवम्। अधां वायुं नियुतंः सश्चत् स्वाः। उत श्वेतं वसुंधितिन्निरेके। आ वायो प्र याभिः। प्र वायुमच्छां बृह्ती मनीषा॥१॥

बृहद्रंयिं विश्ववाराः रथप्राम्। द्युतद्यांमा नियुतः पत्यंमानः। कविः कविमियक्षसि प्रयज्यो। आ नो नियुद्धिः श्तिनीभिरध्वरम्। सहस्रिणीभिरुपं याहि यज्ञम्। वायो अस्मिन् ह्विषिं मादयस्व। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जुहुमस्तं नो अस्तु॥२॥

वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। रयीणां पतिं यज्तं बृहन्तम्। अस्मिन्भरे नृतंमं वाजंसातौ। प्रजापतिं प्रथम्जामृतस्य। यजांम देवमिं नो ब्रवीतु। प्रजापते त्वित्रिंधिपाः पुराणः। देवानां पिता जंनिता प्रजानांम्। पतिर्विश्वंस्य जगंतः परस्पाः। ह्विनों देव विह्वे जुंषस्व। तवेमे लोकाः प्रदिशो दिशंश्च॥३॥

प्रावतो निवतं उद्वतंश्च। प्रजांपते विश्वसृज्जीवधंन्य इदं नो देव। प्रतिहर्य ह्व्यम्। प्रजापितं प्रथमं यज्ञियांनाम्। देवानामग्रे यज्ञतं यंजध्वम्। स नो ददातु द्रविण १ सुवीर्यम्। रायस्पोषं वि ष्यंतु नाभिमस्मे। यो राय ईशे शतदाय उक्थ्यः। यः पंशूना १ रिक्षेता विष्ठितानाम्। प्रजापितः प्रथमजा ऋतस्यं॥४॥

स्रहस्रंधामा जुषता हिवर्नः। सोमांपूषणेमौ देवौ। सोमांपूषणा रजंसो विमानम्। सप्तचंऋ रथमविश्वमिन्वम्। विष्वृतं मनंसा युज्यमानम्। तं जिन्वथो वृषणा पश्चरिष्टमम्। दिव्यंन्यः सदंनं च्ऋ उच्चा। पृथिव्यामन्यो अध्यन्तरिक्षे। तावस्मभ्यं पुरुवारं पुरुक्षुम्। रायस्पोषं विष्यंतान्नाभिमस्मे॥५॥

धियं पूषा जिंन्वतु विश्वमिन्वः। र्यिश् सोमों रियपितिर्दधातु। अवंतु देव्यदितिरन्वां। बृहद्वेदेम विदर्थे सुवीराः। विश्वांन्यन्यो भुवंना ज्जानं। विश्वंमन्यो अभिचक्षांण एति। सोमांपूषणाववंतं धियं मे। युवभ्यां विश्वाः पृतंना जयेम। उद्तुं मं वंश्रणास्तं भाद्याम्। यत्कि चेदं कित्वासः। अवं ते हेड्स्तत्त्वां यामि। आदित्यानामवंसा न दक्षिणा। धारयंन्त आदित्यासंस्तिस्रो भूमीर्धारयन्। यज्ञो देवानाः शुचिरपः॥६॥

ते शुक्रासः शुचंयो रिम्वन्तः। सीदंन्नादित्या अधिं बर्हिषिं प्रिये। कामेन देवाः स्रथं दिवो नः। आ याँन्तु यज्ञमुपं नो जुषाणाः। ते सूनवो अदितेः पीवसामिषम्। घृतं पिन्वत्प्रतिहर्यन्नृतेजाः। प्र यज्ञिया यजमानाय येमुरे। आदित्याः कामं पितुमन्तंमस्मे। आ नः पुत्रा अदितेर्यान्तु यज्ञम्। आदित्यासंः पथिभिर्देवयानैः॥७॥

अस्मे कामं दाशुषे सन्नमंन्तः। पुरोडाशं घृतवंन्तं जुषन्ताम्। स्कुभायत् निर्ऋति सेधृतामंतिम्। प्र रिश्मिभिर्यतंमाना अमृध्राः। आदित्याः काम् प्रयंतां वर्षद्कृतिम्। जुषध्वं नो ह्व्यदांतिं यजत्राः। आदित्यान्काम्मवंसे हुवेम। ये भूतानिं जनयंन्तो विचिख्युः। सीदंन्तु पुत्रा अदितेरुपस्थम्। स्तीणं बर्हिर्हंविरद्यांय देवाः॥८॥

स्तीर्णं बर्हिः सींदता युज्ञे अस्मिन्। ध्राजाः सेधंन्तो अमंतिं दुरेवांम्। अस्मभ्यं पुत्रा अदितेः प्र यश्सत। आदित्याः कामं ह्विषो जुषाणाः। अग्रे नयं सुपर्था राये अस्मान्। विश्वानि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठान्ते नमं उक्तिं विधेम। प्र वंः शुक्रायं भानवे भरध्वम्। ह्व्यं मृतिं चाग्नये सुपूंतम्॥९॥

यो दैव्यांनि मानुंषा जनूर्षि। अन्तर्विश्वांनि विद्मना जिगांति। अच्छा गिरों मृतयों देवयन्तीः। अग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षंमाणाः। सुसन्दशर् सुप्रतीक्ष् स्वश्रम्॥ ह्व्यवाहंमर्तिं मानुंषाणाम्। अग्ने त्वम्समद्यंयोध्यमीवाः। अनिग्नता अभ्यंमन्त कृष्टीः। पुनर्स्मभ्यर् सुवितायं देव। क्षां विश्वंभिर्जरंभिर्यजत्र॥१०॥

अग्ने त्वं पारया नव्यो अस्मान्। स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूश्चं पृथ्वी बंहुला नं उवीं। भवां तोकाय तनयाय शं योः। प्रकारवो मन्ना वच्यमानाः। देवद्रीचीं नयथ देवयन्तंः। दक्षिणावाङ्वाजिनी प्राच्येति। ह्विभरन्त्यग्नये घृताचीं। इन्द्रं नरों युजे रथम्ं। जुगुभ्णाते दक्षिणिमन्द्र हस्तम्॥११॥

वसूयवो वसुपते वसूनाम्। विद्या हि त्वा गोपंति शूर् गोनाम्। अस्मभ्यं चित्रं वृषंण र रियन्दाः। तवेदं विश्वंमभितः पश्व्यम्। यत्पश्यंसि चक्षंसा सूर्यस्य। गवांमसि गोपंतिरेकं इन्द्र। भक्षीमिहं ते प्रयंतस्य वस्वंः। सिनंद्र णो मनंसा नेषि गोभिः। सर सूरिभिर्मघवन्थ्स इस्वस्त्या। सं ब्रह्मंणा देवकृतं यदस्ति॥१२॥

सं देवाना रे सुमृत्या यज्ञियांनाम्। आराच्छत्रुमपं बाधस्व दूरम्। उग्रो यः शम्बंः पुरुहूत तेनं। अस्मे धेंहि यवंमुद्गोमंदिन्द्र। कुधीधियंं जरित्रे वाजंरलाम्। आ वेधस् सहि शुचिंः। बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। महो ज्योतिषः पर्मे व्योमन्। स्प्तास्यंस्तुविजातो रवेण। वि

सप्तरंश्मिरधमृत्तमा ५सि॥१३॥

बृह्स्पतिः समंजयद्वसूनि। महो व्रजान्गोमंतो देव एषः। अपः सिषांस्न्थ्सुव्रप्रतित्तः। बृह्स्पतिर्हन्त्यमित्रंमकैः। बृहंस्पते पर्येवा पित्रे। आ नों दिवः पावीरवी। इमा जुह्वांना यस्ते स्तनंः। सरंस्वत्यभि नों नेषि। इय॰ शुष्मंभिर्विस्खा इंवारुजत्। सानुं गिरीणान्तंविषेभिरूर्मिभिः। पारावद्ग्रीमवंसे सुवृक्तिभिः। सरंस्वतीमा विवासेम धीतिभिः॥१४॥

देव्यानैर्देवाः सुपूर्तं यजत्रु हस्तुमस्ति तमाईस्यूर्मिभि ${f i}$ चं॥lacksquare

सोमों धेनु सोमों अर्वन्तमाशुम्। सोमों वीरं केर्मण्यं ददातु। सादन्यं विद्थ्य समेयम्। पितुः श्रवंणं यो ददांशदस्मै। अषांढं युथ्सु त्व सोम् ऋतुंभिः। या ते धामांनि ह्विषा यर्जन्ति। त्विममा ओषधीः सोम् विश्वाः। त्वमपो अंजनयस्त्वङ्गाः। त्वमातंतन्थोर्वन्तिरिक्षम्। त्वं ज्योतिषा वि तमो ववर्थ॥१५॥

या ते धामांनि दिवि या पृंथिव्याम्। या पर्वतेष्वोषंधीष्वपस्। तेभिर्नो विश्वैः सुमना अहंडन्। राजैन्थ्सोम् प्रतिं ह्व्या गृंभाय। विष्णोर्नुकं तदस्य प्रियम्। प्र तिद्वष्णुः। प्रो मात्रया त्नुवां वृधान। न ते महि्त्वमन्वंश्जुवन्ति। उभे ते विद्य रजंसी पृथिव्या विष्णों देव त्वम्। प्रमस्यं विथ्से॥१६॥

विचंक्रमे त्रिर्देवः। आ ते महो यो जात एव। अभि गोत्राणि। अभिः स्पृधी मिथतीररिषण्यन्। अमित्रंस्य व्यथया मृन्युमिन्द्र। आभिर्विश्वां अभियुजो विषूंचीः। आर्याय विशोवंतारीर्दासीः। अय शृंण्वे अध जयंत्रुत घ्रन्। अयमुत प्र कृंणुते युधा गाः। यदा सृत्यं कृंणुते मृन्युमिन्द्रंः॥१७॥

विश्वं दृढं भंयत् एजंदस्मात्। अनुं स्वधामंक्षर्न्नापों अस्य। अवर्धत् मध्य आ नाव्यांनाम्। सुधीचीनेन मनसा तिमंन्द्र ओजिष्ठेन। हन्मंनाहन्नभिद्यून्। मुरुत्वंन्तं वृष्भं वांवृधानम्। अकंवारिं दिव्य शासिमन्द्रम्। विश्वासाहमवसे नूतंनाय। उग्र सहोदामिह त हुवेम। जिनेष्ठा उग्रः सहंसे तुरायं॥१८॥

मन्द्र ओजिंष्ठो बहुलाभिमानः। अवधिन्निन्द्रं म्रुतंश्चिदत्रं। माता यद्वीरं द्धनृद्धनिष्ठा। क्वंस्यावो मरुतः स्वधाऽऽसीत्। यन्मामेक समर्धत्ताहिहत्ये। अहङ् ह्यंग्रस्तंविषस्तुविष्मान्। विश्वंस्य शत्रोरनमं वध्सैः। वृत्रस्यं त्वा श्वसथा दीषंमाणाः। विश्वं देवा अंजहुर्ये सखायः। म्रुद्धिरिन्द्र सुख्यं ते अस्तु॥१९॥

अथेमा विश्वाः पृतंना जयासि। वधीं वृत्रं मंरुत इन्द्रियेणं। स्वेन भामेन तिवषो बंभूवान्। अहमेता मनवे विश्वश्चन्द्राः। सुगा अपश्चंकर् वर्ज्ञंबाहुः। स यो वृषा वृष्णियेभिः समीकाः। महो दिवः पृथिव्याश्चं सम्राट्। सतीनसंत्वा हव्यो भरेषु। मुरुत्वां नो भवत्विन्द्रं ऊती। इन्द्रों वृत्रमंतरद्वृत्रतूर्ये॥२०॥

अनाधृष्यो मघवा शूर इन्द्रंः। अन्वेनं विशो अमदन्त पूर्वीः। अय राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। स एव वीरः स उ वीर्यावान्। स एंकराजो जगंतः पर्स्पाः। यदा वृत्रमतंरच्छूर इन्द्रंः। अथांभवद्दमिताभिक्तंतूनाम्। इन्द्रो यज्ञं वर्धयंन्विश्ववेदाः। पुरोडाशंस्य जुषता हिवर्नः। वृत्रं तीत्वां दान्वं वर्ज्रंबाहुः॥२१॥

विशोऽह ५ हृ ६ हृ ता ह ५ हंणेन। इमं युज्ञं वर्धयन्विश्व-वेदाः। पुरोडाश्ं प्रति गृभ्णात्विन्द्रः। यदा वृत्रमतं रच्छू र इन्द्रः। अथैकराजो अभवज्ञनानाम्। इन्द्रो देवाञ्छं म्बर्हत्यं आवत्। इन्द्रो देवानां मभवत्पुरोगाः। इन्द्रो युज्ञे हृ विषां वावृधानः। वृत्रतूर्नो अभय १ शर्म य १ सत्। यः सप्त सिन्धू १ रदंधात्पृथिव्याम्। यः सप्त लोकानकृंणोद्दिशंश्व। इन्द्रो ह्विष्मान्थ्यगंणो मुरुद्धिः। वृत्रतूर्नो युज्ञमिहोपं यासत्॥ २२॥ वृत्र्यं विष्मा इन्द्रो वर्ष्ट्या व्याप्ति वर्ष्ट्या वर्या वर्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्ष्ट्या वर्या वर्ष्ट्या वर्या वर्या वर्ष्ट्या वर्या वर्य

इन्द्रस्तरंस्वानभिमातिहोग्रः। हिरंण्यवाशीरिषिरः सुंवर्षाः। तस्यं वय १ सुंमृतौ यज्ञियंस्य। अपि भृद्रे सौंमन्से स्योम। हिरंण्यवर्णो अभयं कृणोतु। अभिमातिहेन्द्रः पृतंनासु जिष्णुः। स नः शर्म त्रिवरूथं वि यर्सत्। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः। इन्द्रई स्तुहि वृज्जिण्ड् स्तोमंपृष्ठम्। पुरोडाशंस्य जुषतार हुविर्नः॥२३॥

ह्त्वाभिमांतीः पृतंनाः सहंस्वान्। अथाभंयं कृणुहि विश्वतां नः। स्तुहि शूरं विज्ञिणमप्रंतीत्तम्। अभिमातिहनं पुरुह्तिमन्द्रम्ं। य एक इच्छ्तपंतिर्जनंषु। तस्मा इन्द्रांय हिवरा जुंहोत। इन्द्रां देवानांमिधपाः पुरोहिंतः। दिशां पितंरभवद्वाजिनीवान्। अभिमातिहा तिवषस्तुविष्मान्। असमभ्यं चित्रं वृषंण र रियन्दांत्॥२४॥

य ड्रमे द्यावांपृथिवी मंहित्वा। बलेनाह रहिदिभमातिहेन्द्रंः। स नों ह्विः प्रतिं गृभ्णातु रातयें। देवानां देवो निधिपा नों अव्यात्। अनंवस्ते रथं वृष्णे यत्तें। इन्द्रंस्य नु वीर्याण्यह्न्नहिम्। इन्द्रों यातोऽवंसितस्य राजां। शमंस्य च शृङ्गिणो वर्ज्ञंबाहुः। सेदु राजां क्षेति चर्षणीनाम्। अरान्न नेमिः परि ता बंभूव॥२५॥

अभि सिध्मो अंजिगादस्य शत्रून्। वितिग्मेनं वृष्भेणा पुरोभेत्। सं वर्ज्जेणासृजद्वृत्रमिन्द्रंः। प्र स्वां मृतिमंतिरुच्छाशंदानः। विष्णुं देवं वर्रुणमूतये भगम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्। ता नो यज्ञमागंतं विश्वधंना। प्रजावंदस्मे द्रविणेह धंत्तम्। मेदंसा देवा वृपयां यजध्वम्।

विष्णुं च देवं वर्रणं च रातिम्॥२६॥

ता नो अमींवा अप बाधंमानौ। इमं यज्ञं जुषमांणावुपेतम्ं। विष्णूंवरुणा युवमंध्वरायं नः। विशे जनांय मिह शर्मं यच्छतम्। दीर्घप्रंयज्ञ्यू हिवषां वृधाना। ज्योतिषा-ऽरांतीर्दहत्नतमा रसि। ययोरोजंसा स्किभृता रजारसि। वीर्यंभिर्वीरतंमा शिवंष्ठा। याऽपत्यं ते अप्रंतीत्ता सहोंभिः। विष्णूं अगुन्वरुणा पूर्वहूंतौ॥२७॥

विष्णूंवरुणाविभिशस्तिपावाँम्। देवा यंजन्त ह्विषां घृतेनं। अपामीवा स्सेधत स्क्षसंश्च। अथाधत्तं यजंमानाय शं योः। अस्होमुचां वृष्मा सुप्रतूर्ती। देवानां देवतंमा शचिष्ठा। विष्णूंवरुणा प्रतिहर्यतन्नः। इदं नरा प्रयंतमूतये ह्विः। मही नु द्यावांपृथिवी इह ज्येष्ठें। रुचा भवता स्शुचयंद्भिर्कैः॥२८॥

यथ्सीं वरिष्ठे बृह्ती विमिन्वन्। नृवद्योक्षा पंप्रथानेभिरेवैंः। प्रपूर्वजे पितरा नव्यंसीभिः। गीर्भिः कृंणुष्व सदेने ऋतस्यं। आ नौं द्यावापृथिवी दैव्यंन। जनेन यातं मिहं वां वरूथम्। स इथ्स्वपा भुवंनेष्वास। य इमे द्यावांपृथिवी ज्जानं। उवीं गंभीरे रजंसी सुमेकें। अवु शे धीरः शच्या समैरत्॥२९॥

भूरिं द्वे अचंरन्ती चरंन्तम्। पृद्वन्तं गर्भम्पदींदधाते। नित्यं न सूनुं पित्रोरुपस्थैं। तं पिपृत रोदसी सत्यवाचम्। इदं द्यांवापृथिवी स्त्यमंस्तु। पितुर्मातुर्यदिहोपं ब्रुवे वाम्। भूतं देवानांमवमे अवोभिः। विद्यामेषं वृजनं जीरदांनुम्। उर्वी पृथ्वी बंहुले दूरे अन्ते। उपं ब्रुवे नमंसा यज्ञे अस्मिन्। दर्धाते ये सुभगं सुप्रतूर्ती। द्यावा रक्षतं पृथिवी नो अभ्वात्। या जाता ओषंधयोऽति विश्वाः परिष्ठाः। या ओषंधयः सोमंराज्ञीरश्वावती सोमवतीम्। ओषंधीरितिं मातरोऽन्या वो अन्यामंवतु॥३०॥

शुचिं नु स्तोम् श्रव्यद्वृत्तम्। उभा वांमिन्द्राग्नी प्र चंर्षणिभ्यः। आ वृत्तहणा गीर्भिर्विप्रः। ब्रह्मणस्पते त्वम्स्य यन्ता। सूक्तस्यं बोधि तन्यं च जिन्व। विश्वं तद्भद्रं यद्वन्तिं देवाः। बृहद्वंदेम विदथे सुवीराः। स ईंश् सत्येभिः सर्विभिः शुचद्भिः। गोधायसं विधन्सैरतर्दत्। ब्रह्मणस्पतिर्वृषंभिर्वराहैः॥३१॥

घर्मस्वेदेभिद्रविणं व्यानट्। ब्रह्मण्स्पतेरभवद्यथावशम्। सत्यो मन्युर्मिह् कर्मा करिष्यतः। यो गा उदाज्ञथ्स दिवे वि चाभजत्। महीवं रीतिः शवंसा सर्त्पृथंक्। इन्धानो अग्निं वंनवद्वनुष्यतः। कृतब्रंह्मा शूश्वद्रातहंव्य इत्। जातेनं जातमित्सुत्प्र सृर्स्सते। यं यं युजं कृणुते ब्रह्मण्स्पतिः। ब्रह्मणस्पते सुयमस्य विश्वहाँ॥३२॥

रायः स्याम रथ्यो विवस्वतः। वीरेषुं वीरा उपंपृिङ्ग

न्स्त्वम्। यदीशांनो ब्रह्मंणा वेषि मे हवम्ँ। स इञ्जनेंन स विशा स जन्मंना। स पुत्रैर्वाजं भरते धना नृभिंः। देवानां यः पितरमा विवासति। श्रद्धामंना ह्विषा ब्रह्मंणस्पतिम्ँ। यास्ते पूषन्नावो अन्तः। शुक्रं ते अन्यत्पूषेमा आशाः। प्रपंथे प्थामंजनिष्ट पूषा॥३३॥

प्रपंथे दिवः प्रपंथे पृथिव्याः। उमे अभि प्रियतंमे स्थस्थैं। आ च परां च चरित प्रजानन्। पूषा सुबन्धंर्दिव आ पृथिव्याः। इडस्पितम्घवां दस्मवंर्चाः। तं देवासो अदंदः सूर्यायैं। कामेन कृतं त्वस्कृ स्वश्रम्ं। अजाऽश्वः पशुपा वाजंबस्त्यः। धियं जिन्वो विश्वे भुवंने अपितः। अष्ट्रां पूषा शिथिरामुद्धरीवृजत्॥३४॥

स्श्रक्षांणो भुवंना देव ईयते। शुची वो ह्व्या मंरुतः शुचींनाम्। शुचिर्ं हिनोम्यध्वर शुचिंभ्यः। ऋतेनं स्त्यमृत्सापं आयन्। शुचिंजन्मानः शुचंयः पावकाः। प्रचित्रम्कं गृंणते तुरायं। मारुताय स्वतंवसे भरध्वम्। ये सहार्ंस् सहंसा सहंन्ते। रेजंते अग्ने पृथिवी मुखेभ्यः। अरुसेष्वा मंरुतः खादयों वः॥३५॥

वक्षः सुरुक्ता उपं शिश्रियाणाः। वि विद्युतो न वृष्टिभीं रुचानाः। अनुं स्वधामायुंधैर्यच्छंमानाः। या वः शर्म शशमानाय सन्तिं। त्रिधातूंनि दाशुषे यच्छ्ताधिं। अस्मभ्यं तानिं मरुतो वियंन्त। र्यिं नों धत्त वृषणः सुवीरम्ं। इमे तुरं मुरुतों रामयन्ति। इमे सहः सहंस् आ नमन्ति। इमे शर्संवनुष्यतो नि पान्ति॥३६॥

गुरुद्वेषो अरंरुषे दधन्ति। अरा इवेदचंरमा अहेव। प्रप्रं जायन्ते अकंवा महोभिः। पृश्ञैः पुत्रा उपमासो रभिष्ठाः। स्वयां मृत्या मुरुतः सं मिमिक्षुः। अनुं ते दायि मृह इन्द्रियायं। स्त्रा ते विश्वमनुं वृत्रहत्यै। अनुं क्षृत्रमनु सहो यजत्र। इन्द्रं देवेभिरनुं ते नृषह्यै। य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति॥३७॥

शिक्षा सर्खिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः। त्वर हि दृढा मंघवन्विचेताः। अपांवृधि परिवृतिं न राधः। इन्द्रो राजा जगंतश्चर्षणीनाम्। अधिक्षमि विषुंरूपं यदस्ति। ततो ददातु दाशुषे वसूनि। चोद्द्राध उपंस्तुतश्चिद्वांक्। तमुंष्टुहि यो अभिभूत्योजाः। वन्वन्नवांतः पुरुहूत इन्द्रः। अषांढमुग्रर सहंमानमाभिः॥३८॥

गीर्भिर्वर्ध वृष्मं चंर्षणीनाम्। स्थूरस्यं रायो बृंह्तो य ईशैं। तम् ष्टवाम विदथेष्विन्द्रम्। यो वायुना जयंति गोमंतीष्। प्र धृंष्णुया नयिति वस्यो अच्छं। आ ते शुष्मो वृष्म एतु पृश्चात्। ओत्तरादंधरागा पुरस्तौत्। आ विश्वतो अभिसमैत्वर्वाङ्। इन्द्रं द्युम्न सुवंविद्धेह्यस्मे॥३९॥ आ देवो यांतु सिवता सुरत्नः। अन्तिरिक्षप्रा वहंमानो अश्वैः। हस्ते दर्धानो नर्या पुरूणि। निवेशयं च प्रसुवं च भूमं। अभीवृंतं कृशंनैर्विश्वरूपम्। हिरंण्यशम्यं यज्तो बृहन्तम्। आस्थाद्रथर् सिवता चित्रभानुः। कृष्णा रजार्सि तिवेषीं दर्धानः। सर्घा नो देवः संविता स्वायं। आ सांविषद्वस्पितिर्वसूनि॥४०॥

विश्रयंमाणो अमंतिमुरूचीम्। मूर्तभोजंनमधंरासतेन। विजनां ज्छ्यावाः शिंतिपादों अख्यन्। रथु हरिण्यप्रउगं वहंन्तः। शश्वद्दिशंः सवितुर्दैव्यंस्य। उपस्थे विश्वा भुवंनानि तस्थः। वि सुंपूर्णो अन्तरिक्षाण्यख्यत्। गुभीरवेपा असुंरः सुनीथः। क्वेदानी सूर्यः कश्चिकत। कृतमान्द्या रशिमरस्या तंतान॥४१॥

भगं धियं वाजयंन्तः पुरंन्धिम्। नराश्या ग्रास्पितंनीं अव्यात्। आ ये वामस्यं सङ्ग्थे रंयीणाम्। प्रिया देवस्यं सिवतुः स्यांम। आ नो विश्वे अस्क्रांगमन्तु देवाः। मित्रो अर्यमा वर्रणः सजोषाः। भुवन् यथां नो विश्वे वृधासः। करंन्थ्रमुषाहां विथुरं न शवंः। शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु। श्र सरंस्वती सह धीभिरंस्तु॥४२॥

शर्मभिषाचः शर्मु रातिषाचः। शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः। ये संवितः सत्यसंवस्य विश्वे। मित्रस्यं व्रते वरुणस्य देवाः। ते सौभंगं वीरवद्गोमदप्रः। दर्धातन् द्रविणं चित्रम्स्मे। अग्ने याहि दूत्यं वारिषेण्यः। देवाः अच्छां ब्रह्मकृतां गुणेनं। सरस्वतीं मुरुतों अश्विनापः। यक्षि देवान्नंब्रधेयांय विश्वान्॥४३॥

द्यौः पिंतुः पृथिवि मात्रधूंक्। अग्नै भ्रातर्वसवो मृडतां नः। विश्वं आदित्या अदिते सृजोषाः। अस्मभ्युः शर्म बहुलं वि यंन्त। विश्वं देवाः शृणुतेमः हवं मे। ये अन्तरिक्षे य उप द्यवि ष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजंत्राः। आसद्यास्मिन्बर्हिषं मादयध्वम्। आ वां मित्रावरुणा हृव्यजुंष्टिम्। नमंसा देवाववंसाऽऽववृत्याम्॥४४॥

अस्माकं ब्रह्म पृतंनासु सह्या अस्माकम्। वृष्टिर्द्विया सुंपारा। युवं वस्त्राणि पीवसा वंसाथे। युवोरिच्छंद्रा मन्तंवो ह सर्गाः। अवांतिरत्मनृंतानि विश्वाः। ऋतेनं मित्रावरुणा सचेथे। तथ्सु वां मित्रावरुणा महित्वम्। ईमा तस्थुषीरहंभिर्दुदुह्ने। विश्वाः पिन्वथ स्वसंरस्य धेनाः। अनुं वामेकः पविरा वंवर्ति॥४५॥

यद्व १ हिष्ठन्नाति विदे सुदान्। अच्छिंद्र १ शर्म भुवंनस्य गोपा। ततों नो मित्रावरुणाववीष्टम्। सिषांसन्तो जीगिवा १ संः स्याम। आ नो मित्रावरुणा ह्व्यदांतिम्। घृतैर्गव्यूंतिमुक्षत्मिडांभिः। प्रतिं वामत्र वर्मा जनांय। पृणीतमुद्रो दिव्यस्य चारौंः। प्र बाहवां सिसृतं जीवसे नः।

आ नो गर्व्यूतिमुक्षतं घृतेनं॥४६॥

वर्सूनि ततानास्तु विश्वान् ववृत्यां ववर्ति घृतेन् विपूचीः श्रुतन्द्वे चं॥

आ नो जने श्रवयतं युवाना। श्रुतं में मित्रावरुणा हवेमा। इमा रुद्रायं स्थिरधंन्वने गिरं। क्षिप्रेषंवे देवायं स्वधाम्ने अषांढाय सहंमानाय मीढुषे तिग्मायंधाय भरता शृणोतंन। त्वादंत्तेभी रुद्र शन्तंमेभिः। श्रतर हिमां अशीय भेषजेभिः। व्यंस्मद्वेषों वित्रं व्यर्श्हं। व्यमींवाइश्चातयस्वा विषूंचीः॥४७॥

अर्हंन्बिभर्षि मा नंस्तोके। आ ते पितर्मरुता समुम्रमेतु। मा नः सूर्यस्य सन्दशो युयोथाः। अभि नो वीरो अर्वति क्षमेत। प्र जांयेमहि रुद्र प्रजाभिः। एवा बंभ्रो वृषभ चेकितान। यथां देव न हंणी्षे न हश्सिं। हावनश्रूर्नो रुद्रेह बोंधि। बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः। परिंणो रुद्रस्यं हेतिः स्तुहि श्रुतम्। मीढुंष्ट्मार्हंन्बिभर्षि। त्वमंग्ने रुद्र आ वो राजांनम्॥४८॥

सूर्यो देवीमुषस् रोचंमानामर्यः। न योषांमभ्येति पृश्चात्। यत्रा नरो देवयन्तो युगानि। वितन्वते प्रति भृद्रायं भृद्रम्। भृद्रा अश्वां हृरितः सूर्यस्य। चित्रा एदंग्वा अनुमाद्यांसः। नृमस्यन्तो दिव आ पृष्ठमंस्थः। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः। तथ्सूर्यस्य देवत्वं तन्मंहित्वम्। मृध्या कर्तोवितंत्र् सञ्जेभार॥४९॥ यदेदयंक्त हिरतंः सधस्थांत्। आद्रात्री वासंस्तनुते सिमस्मैं। तिन्मित्रस्य वर्रुणस्याभिचक्षें। सूर्यो रूपं कृणुते द्योरुपस्थें। अनुन्तमृन्यद्रुशंदस्य पार्जः। कृष्णमृन्यद्धरितः सं भरिन्त। अद्या देवा उदिता सूर्यस्य। निर॰हंसः पिपृतान्निरंवद्यात्। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्ताम्। अदितिः सिन्धुंः पृथिवी उत द्योः॥५०॥

दिवो रुका उरुचक्षा उदेति। दूरे अंर्थस्तरणिभ्राजिमानः। नूनं जनाः सूर्येण प्रसूताः। आयन्नर्थानि कृणवन्नपार्शसे। शं नो भव चक्षेसा शं नो अहाँ। शं भानुना शर हिमा शं घृणेने। यथा शम्समै शमसंदुरोणे। तथ्सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम्। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः॥५१॥

आप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्यं आत्मा जगंतस्त्स्थुषेश्च। त्वष्टा दध्तन्नंस्तुरीपम्। त्वष्टां वीरं पिशङ्गंरूपः। दशेमन्त्वष्टंर्जनयन्त् गर्भम्। अतंन्द्रासो युवतयो बिभंत्रम्। तिग्मानींक्र् स्वयंशसं जनेषु। विरोचंमानं परिषीन्नयन्ति। आविष्ट्यों वर्धते चारुरासु। जिह्मानांमूर्ध्वस्वयंशा उपस्थै॥५२॥

उभे त्वष्टुंर्बिभ्यतुर्जायंमानात्। प्रतीचीं सि्रहं प्रतिं-जोषयेते। मित्रो जनान्प्र स मित्र। अयं मित्रो नंमस्यंः सुशेवंः। राजां सुक्षत्रो अंजनिष्ट वेधाः। तस्यं वयर सुंमतौ युज्ञियंस्य। अपि भुद्रे सौंमनुसे स्यांम। अनुमीवास् इडंया मदंन्तः। मितज्मंवो वरिमन्ना पृंथिव्याः। आदित्यस्यं वृतमुंपक्ष्यन्तः॥५३॥

व्यं मित्रस्यं सुमृतौ स्यांम। मित्रं न ई शिम्या गोषुं गृव्यवंत्। स्वाधियों विदर्थं अपस्वजींजनन्। अरेजयता श्रेतंसी पाजंसा गिरा। प्रतिं प्रियं यंजतं जनुषामवंः। महा श्र आंदित्यो नमंसोप्सद्यंः। यात्यज्ञंनो गृण्ते सुशेवंः। तस्मां पृतत्पन्यंतमाय जुष्टम्ं। अग्नौ मित्रायं ह्विरा जुंहोत। आवा श्रे रथो रोदंसी बद्धधानः॥५४॥

हिर्ण्ययो वृषंभिर्यात्वश्वैः। घृतवंतिनः प्विभीरुचानः। इषां वोढा नृपतिर्वाजिनीवान्। स पंप्रथानो अभि पश्च भूमे। त्रिवन्धुरो मन्सायांतु युक्तः। विशो येन् गच्छंथो देवयन्तीः। कुत्रां चिद्याममिश्विना दर्धाना। स्वश्वां यशसाऽऽयांतम्वीक्। दस्रां निधिं मध्मन्तं पिबाथः। वि वार् रथों वध्वां यादंमानः॥५५॥

अन्तां दिवो बांधते वर्तनिभ्यांम्। युवोः श्रियं परि योषांवृणीत। सूरों दुहिता परितिक्ययायाम्। यद्देवयन्तमवंथः शचींभिः। परिघ्रष्ट्रं सवां मनावां वयोगाम्। यो हुस्यवार्षं रथिरावस्तं उस्राः। रथों युजानः परियातिं वर्तिः। तेनं नः शं योरुषसो व्यंष्टौ। न्यंश्विना वहतं युज्ञे अस्मिन्। युवं भुज्युमवंविद्धर् समुद्रे॥५६॥ उदूंहथुरणंसो अस्रिंधानैः। प्तित्रिभिरश्रमैरेव्यथिभिः। दुश्सनांभिरिश्वना पारयंन्ता। अग्नीषोमा यो अद्य वाम्। इदं वर्चः सप्यिति। तस्मै धत्तर सुवीर्यम्। गवां पोष्ड् स्विश्वयम्। यो अग्नीषोमां हिविषां सप्यात्। देवद्रीचा मनसा यो घृतेनं। तस्यं व्रतर रक्षतं पातमरहंसः॥५७॥

विशे जनांय मिह् शर्म यच्छतम्। अग्नीषोमा य आहुंतिम्। यो वां दाशाँद्धविष्कृंतिम्। स प्रजयां सुवीर्यम्। विश्वमायुर्व्यश्ववत्। अग्नीषोमा चेति तद्दीर्यं वाम्। यदमुंष्णीतमव्सं पणिङ्गोः। अवांतिरतं प्रथंयस्य शेषंः। अविंन्दतं ज्योतिरेकं बहुभ्यंः। अग्नीषोमाविम स सुमेऽग्नीषोमा हविषः प्रस्थितस्य॥५८॥

अहमंस्मि प्रथम्जा ऋतस्यं। पूर्वं देवेभ्यां अमृतंस्य नाभिः। यो मा ददांति स इदेव माऽऽवाः। अहमन्नमन्न-मदन्तंमिद्मा। पूर्वम्ग्नेरिपं दहृत्यन्नम्। यृत्तौ हांसाते अहमुत्तरेषुं। व्यात्तंमस्य पृशवः सुजम्भम्। पश्यंन्ति धीराः प्रचंरन्ति पाकाः। जहाम्यन्यन्न जंहाम्यन्यम्। अहमन्नं वशमिचरामि॥५९॥

समानमर्थं पर्येमि भुञ्जत्। को मामन्नं मनुष्यों दयेत। परांके अन्नं निहितं लोक एतत्। विश्वैर्देवैः पितृभिर्गुप्तमन्नम्। यद्द्यते लुप्यते यत्पंरोप्यतें। शृत्तमी सा तुनूमें बभूव। महान्तौं चरू संकृद्दुग्धेनं पप्रौ। दिवंं च पृश्ञिं पृथिवीं चं साकम्। तथ्सम्पिबंन्तो न मिनन्ति वेधसंः। नैतद्भूयो भवंति नो कनीयः॥६०॥

अन्नं प्राणमन्नंमपानमांहः। अन्नं मृत्युं तम्ं जीवातुंमाहः। अन्नं ब्रह्माणों जरसं वदन्ति। अन्नंमाहः प्रजनंनं प्रजानांम्। मोघमन्नं विन्दते अप्रंचेताः। सत्यं ब्रंवीमि वध इथ्स तस्यं। नार्यमणुं पुर्ष्यति नो सर्खायम्। केवंलाघो भवति केवलादी। अहं मेघः स्तनयन्वर्षंन्नस्मि। मामंदन्त्यहमंद्र्यन्यान्॥६१॥

अह सद्मृतों भवामि। मदांदित्या अधि सर्वे तपन्ति। देवीं वार्चमजनयन्त् यद्वाग्वदंन्ती। अनुन्तामन्तादधि निर्मितां महीम्। यस्यां देवा अंदधुर्भीजंनानि। एकांक्षरां द्विपदा पदंदां च। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं देवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं वेवा उपं जीवन्ति विश्वं। वार्चं गन्ध्वाः प्शवों मनुष्याः। वार्चीमा विश्वा भुवंनान्यर्पिता॥६२॥

सा नो हवंं जुषतामिन्द्रंपत्नी। वागुक्षरं प्रथमजा ऋतस्यं। वेदांनां माताऽमृतंस्य नाभिः। सा नो जुषाणोपं यज्ञमागांत्। अवन्ती देवी सुहवां मे अस्तु। यामृषंयो मन्नुकृतो मनीषिणः। अन्वैच्छं देवास्तपंसा श्रमंण। तान्देवीं वाच रं ह्विषां यजामहे। सा नों दधातु सुकृतस्यं लोके। चृत्वारि वाक्परिमिता पदानिं॥६३॥

तानि विदुर्बाह्मणा ये मेनीषिणः। गृहा त्रीणि निहिता नेङ्गंयन्ति। तुरीयं वाचो मेनुष्यां वदन्ति। श्रृद्धयाऽग्निः समिध्यते। श्रृद्धयां विन्दते ह्विः। श्रृद्धां भगस्य मूर्धनि। वचसा वेदयामसि। प्रियक् श्रृद्धे ददेतः। प्रियक् श्रृद्धे दिदांसतः। प्रियं भोजेषु यज्वंसु॥६४॥

इदं मं उदितं कृषि। यथां देवा असुरेषु। श्रद्धामुग्रेषुं चिक्तरे। एवं भोजेषु यज्वंसु। अस्माकंमुदितं कृषि। श्रद्धां देवा यजमानाः। वायुगोपा उपांसते। श्रद्धां हंदय्यंया-ऽऽकूत्या। श्रद्धयां ह्यते हुविः। श्रद्धां प्रातर्हंवामहे॥६५॥

श्रुद्धां मध्यन्दिनं परि। श्रुद्धाः सूर्यस्य निम्नुचिं। श्रद्धे श्रद्धांपयेह मा। श्रुद्धा देवानिधं वस्ते। श्रुद्धा विश्वमिदं जगंत्। श्रुद्धां कामस्य मातरम्। हिवषां वर्धयामिस। ब्रह्मं जज्ञानं प्रथमं पुरस्तात्। वि सीमृतः सुरुचों वेन आंवः। स बुिप्रयां उप मा अस्य विष्ठाः॥६६॥

स्तश्च योनिमसंतश्च विवंः। पिता विराजांमृष्भो रंयीणाम्। अन्तरिक्षं विश्वरूप् आविवेश। तमकैर्भ्यंचिन्त वथ्सम्। ब्रह्म सन्तं ब्रह्मणा वर्धयन्तः। ब्रह्मं देवानंजनयत्। ब्रह्म विश्वंमिदं जगत्। ब्रह्मणः क्षत्रं निर्मितम्। ब्रह्मं ब्राह्मण आत्मनाः।

अन्तरंस्मिन्निमे लोकाः॥६७॥

अन्तर्विश्वंमिदं जगंत्। ब्रह्मैव भूतानां ज्येष्ठम्। तेन कोऽर्हित स्पर्धितुम्। ब्रह्मेन्देवास्त्रयंस्त्रिश्शत्। ब्रह्मेन्निन्द्रप्रजापती। ब्रह्मेन् ह् विश्वां भूतानि। नावीवान्तः स्माहिता। चतस्त्र आशाः प्रचरन्त्वग्नयः। इमं नो यज्ञं नयतु प्रजानन्। घृतं पिन्वंन्नजर्श् सुवीरम्॥६८॥

ब्रह्मं स्मिद्धंवत्याहुंतीनाम्। आ गावों अग्मन्नुत भ्द्रमंत्रन्। सीदंन्तु गोष्ठे रणयंन्त्वस्मे। प्रजावंतीः पुरुरूपां इह स्युः। इन्द्रांय पूर्वीरुषस्ो दुहानाः। इन्द्रो यज्वंने पृण्ते चं शिक्षति। उपेद्दंदाति न स्वं मुंषायति। भूयोभूयो र्यिमिदंस्य वर्धयन्। अभिन्ने खिल्ले नि दंधाति देवयुम्। न ता नंशन्ति न ता अर्वा॥६९॥

गावो भगो गाव इन्द्रों मे अच्छात्। गावः सोमंस्य प्रथमस्यं भृक्षः। इमा या गावः सर्जनास् इन्द्रंः। इच्छामीद्धृदा मनसा चिदिन्द्रम्। यूयं गांवो मेदयथा कृशं चित्। अश्लीलं चित्कृणुथा सुप्रतींकम्। भृद्रं गृहं कृणुथ भद्रवाचः। बृहद्वो वयं उच्यते सभासुं। प्रजावंतीः सूयवंस रिशन्तीः। शुद्धा अपः सुप्रपाणे पिबंन्तीः। मा वंः स्तेन ईशत् माऽघशर्रसः। परि वो हेती रुद्रस्यं वृञ्चात्। उपेदमुंपपर्चनम्। आसु गोषूपंपृच्यताम्। उपंर्षभस्य रेतंसि। उपेन्द्र तवं वीर्ये॥७०॥

चुगुमि कर्नीयोऽन्यानिर्पेता पुदानि यज्वंसु हवामहे विष्ठा लोकाः सुवीरुमर्वा पिवंन्तीः पर्द्व॥—————[८]

ता सूँर्याचन्द्रमसां विश्वभृत्तंमा महत्। तेजो वसुंमद्राजतो दिवि। सामौत्माना चरतः सामचारिणां। ययोंर्वृतं न मुमे जातुं देवयोंः। उभावन्तौ परि यात् अर्म्यां। दिवो न र्ष्मी इस्तंनुतो व्यंर्णवे। उभा भुवन्ती भुवना क्विकंत्। सूर्या न चन्द्रा चंरतो हुतामंती। पतीं द्युमिद्वंश्वविदां उभा दिवः। सूर्या उभा चन्द्रमंसा विचक्षणा॥७१॥

विश्ववारा वरिवोभा वरेण्या। ता नोंऽवतं मित्मन्ता मित्त्रिता। विश्ववपंरी प्रतरंणा तर्न्ता। सुवर्विदां दृशये भूरिरश्मी। सूर्या हि चन्द्रा वसुं त्वेषदर्शता। मनस्विनोभानुंचरतोनु सन्दिवम्। अस्य श्रवो नद्यः सप्त विश्वति। द्यावा क्षामां पृथिवी दंर्शतं वपुः। अस्म सूर्याचन्द्रमसांऽभिचक्षे। श्रद्धेकिमेन्द्र चरतो विचर्तुरम्॥७२॥

पूर्वाप्रं चंरतो माययैतौ। शिशू क्रीडंन्तौ परिं यातो अध्वरम्। विश्वान्यन्यो भुवनाऽभि चष्टें। ऋतूनन्यो विदधंज्ञायते पुनंः। हिरंण्यवर्णाः शुचंयः पावका यासाः राजां। यासां देवाः शिवेनं मा चक्षंषा पश्यत। आपो भूद्रा आदित्पंश्यामि। नासंदासीन्नो सदांसीत्तदानींम्। नासीद्रजो नो व्योमा प्रो यत्। किमावंरीवः कुह् कस्य शर्मन्ं॥७३॥

अम्भः किर्मासीद्गह्नं गभीरम्। न मृत्युर्मृतं तर्हि न। रात्रिया अह्नं आसीत्प्रकेतः। आनीदवातः स्वधया तदेकम्। तस्माँ ख्रान्यं न प्रः किश्चनासं। तमं आसी त्तमंसा गूढमग्रे प्रकेतम्। सिल्लि सर्वमा इदम्। तुच्छेना भविषितं यदासीत्। तमंस्रत्नमंहिना जांयतैकम्। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि॥७४॥

मनंसो रेतः प्रथमं यदासींत्। स्तो बन्धुमसंति निरंबिन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषा। तिरश्चीनो वितंतो रश्मिरंषाम्। अधः स्विदासी(३)दुपरि स्वदासी(३)त्। रेतोधा आंसन्महिमानं आसन्। स्वधा अवस्तात्प्रयंतिः प्रस्तांत्। को अद्धा वेंद्र क इह प्र वोंचत्। कृत आजांता कृतं इयं विसृष्टिः। अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनाय॥७५॥

अथा को वेद यतं आब्भूवं। इयं विसृष्टिर्यतं आब्भूवं। यदि वा द्धे यदि वा न। यो अस्याध्यक्षः पर्मे व्योमन्। सो अङ्ग वेद यदि वा न वेदं। किङ्स्विद्वनङ्कः उ स वृक्ष आंसीत्। यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतत्। यद्ध्यतिष्टद्भुवंनानि धारयन्। ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्॥७६॥

यतो द्यावांपृथिवी निष्टतृक्षुः। मनींषिणो मनसा विब्रंवीमि वः। ब्रह्माध्यतिष्ठद्भुवंनानि धारयन्। प्रातर्ग्निं प्रातरिन्द्र रं हवामहे। प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरिश्वनां। प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिम्। प्रातः सोमंमुत रुद्र ह्वेम। प्रातर्जितं भगमुग्र ह्वेम। व्यं पुत्रमिदंतेर्यो विधर्ता। आधिश्चदं

मन्यंमानस्तुरश्चित्॥७७॥

राजां चिद्यं भगंं भृक्षीत्याहं। भग् प्रणेतुर्भग् सत्यंराधः। भगेमां धियमुदंव ददंत्रः। भग् प्रणों जनय गोभिरश्वैः। भग् प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम। उतेदानीं भगंवन्तः स्याम। उत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्। उतोदिता मघवन्थ्सूर्यस्य। व्यं देवानार् सुमृतौ स्याम। भगं एव भगंवार अस्तु देवाः॥७८॥

तेनं वयं भगंवन्तः स्याम। तं त्वां भग् सर्व इञ्जोहवीमि। स नो भग पुर एता भेवेह। समध्वरायोषसो नमन्त। द्धिकावेव शुचये पदायं। अर्वाचीनं वंसुविदं भगं नः। रथंमिवाश्वां वाजिन् आवंहन्तु। अश्वांवतीर्गोमतीर्न उषासंः। वीरवंतीः सदंमुच्छन्तु भुद्राः। घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीनाः। यूयं पात स्वस्तिभिः सदां नः॥७९॥

विच्छुणा विंचर्तुरः शर्मुत्रिपे विसर्जनाय ब्रह्म वनं ब्रह्म स वृक्ष आंसीत्तुरिश्चिदेवाः प्रपीना एकं च॥———[९]
पीवौत्रान्ते शुक्रासः सोमों धेनुमिन्द्रस्तरंस्वाञ्छुचिमा देवो यांतु स्यौं देवीमृहमंस्मि ता सूँर्याचन्द्रमसा नवं॥९॥
पीवौत्रामभ्रे त्वं पारयानाधृष्यः शुचिं नु विश्रयंमाणो दिवो कृक्कोऽत्रं प्राणमत्रन्ता सूँर्याचन्द्रमसा नवंसप्ततिः॥७९॥
पीवौत्रां यूयं पांत स्वस्तिभिः सर्वा नः॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे द्वितीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टकम् ३॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः॥

अग्निर्नः पातु कृत्तिकाः। नक्षेत्रं देविमिन्द्रियम्। इदमासां विचक्षणम्। ह्विरासं जुंहोतन। यस्य भान्ति रश्मयो यस्यं केतवः। यस्येमा विश्वा भुवनानि सर्वां। स कृत्तिकाभि-रभिसंवसानः। अग्निर्नो देवः सुंविते देधातु। प्रजापंते रोहिणी वेतु पत्नीं। विश्वरूपा बृह्ती चित्रभानुः॥१॥

सा नों यज्ञस्यं सुविते दंधातु। यथा जीवेंम श्ररदः सवींराः। रोहिणी देव्युदंगात्पुरस्तांत्। विश्वां रूपाणिं प्रतिमोदंमाना। प्रजापंति १ ह्विषां वर्धयंन्ती। प्रिया देवानामुपंयातु यज्ञम्। सोमो राजां मृगशीर्षेण आगन्। शिवं नक्षेत्रं प्रियमंस्य धामं। आप्यायंमानो बहुधा जनेषु। रेतः प्रजां यजंमाने दधातु॥२॥

यत्ते नक्षेत्रं मृगशीर्षमस्ति। प्रियर रांजन् प्रियतंमं प्रियाणांम्। तस्मै ते सोम ह्विषां विधेम। शं ने एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। आईयां रुद्रः प्रथंमा न एति। श्रेष्ठों देवानां पतिरिघ्यानांम्। नक्षेत्रमस्य ह्विषां विधेम। मा नः प्रजार रींरिष्नमोत वीरान्। हेती रुद्रस्य परि णो वृणक्तु। आईरा नक्षेत्रं जुषतार हिर्वाः॥३॥

प्रमुश्रमांनौ दुरितानि विश्वां। अपाघश र सन्नुदतामरांतिम्।

पुनर्नो देव्यदितिः स्पृणोतु। पुनर्वसू नः पुनरेतां यज्ञम्। पुनर्नो देवा अभियन्तु सर्वे। पुनः पुनर्वो ह्विषां यजामः। एवा न देव्यदितिरनुर्वा। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। पुनर्वसू ह्विषां वर्धयन्ती। प्रियं देवानामप्येतु पार्थः॥४॥

बृह्स्पतिः प्रथमं जायंमानः। तिष्यं नक्षंत्रम्भि सम्बंभूव। श्रेष्ठो देवानां पृतंनासु जिष्णुः। दिशोऽनु सर्वा अभयं नो अस्तु। तिष्यः पुरस्तांदुत मध्यतो नः। बृह्स्पतिर्नः परि पातु पश्चात्। बाधेतां द्वेषो अभयं कृणुताम्। सुवीर्यस्य पत्यः स्याम। इद स्पेभ्यो ह्विरंस्तु जुष्टम्। आश्रेषा येषांमनुयन्ति चेतः॥५॥

ये अन्तिरिक्षं पृथिवीं क्षियन्ति। ते नेः सूर्पासो हवमागिमिष्ठाः। ये रोचने सूर्यस्यापि सूर्पाः। ये दिवं देवीमन् सूर्अरिन्त। येषांमाश्रेषा अनुयन्ति कामम्। तेभ्यः सूर्पभ्यो मध्मञ्जहोमि। उपहूताः पितरो ये मुघास्। मनोजवसः सुकृतः सुकृत्याः। ते नो नक्षेत्रे हवमागिमिष्ठाः। स्वधाभिर्य्ञं प्रयंतं जुषन्ताम्॥६॥

ये अंग्निद्ग्धा येऽनंग्निदग्धाः। येऽमुं लोकं पितरंः क्षियन्ति। या ॥ विद्या या ॥ उं च न प्रविद्या। मृघासुं यज्ञ ॥ सुकृतं जुषन्ताम्। गवां पितः फल्गुंनीनामसि त्वम्। तदर्यमन्वरुणमित्र चारुं। तं त्वां व्य ॥ संनितार ॥ सनीनाम्। जीवा जीवंन्तमुप् संविंशेम। येनेमा विश्वा भुवंनानि सर्ञिता। यस्यं देवा अनु सं यन्ति चेतः॥७॥

अर्यमा राजाऽजरस्तुविष्मान्। फल्गुंनीनामृष्भो रोरवीति। श्रेष्ठों देवानां भगवो भगासि। तत्त्वां विदुः फल्गुंनीस्तस्यं वित्तात्। अस्मभ्यं क्षुत्रम्जर्रं सुवीर्यम्। गोम्दर्श्ववुप् सन्नुदेह। भगों ह दाता भग इत्प्रंदाता। भगों देवीः फल्गुंनीरा विवेश। भगस्येत्तं प्रंस्वं गंमेम। यत्रं देवैः संधमादं मदेम॥८॥

आयांतु देवः संवितोपंयातु। हिर्ण्ययंन सुवृता रथेन। वह्न् हस्तर् सुभगं विद्यनापंसम्। प्रयच्छंन्तं पपुंरिं पुण्यमच्छं। हस्तः प्रयंच्छत्वमृतं वसीयः। दक्षिणेन् प्रति-गृभ्णीम एनत्। दातारंम्द्य संविता विदेय। यो नो हस्तांय प्रसुवातिं युज्ञम्। त्वष्टा नक्षेत्रम्भ्येति चित्राम्। सुभर संसं युवतिर रोचंमानाम्॥९॥

निवेशयंत्रमृतान्मर्त्या ईश्च। रूपाणि पि श्वान् भुवंनानि विश्वा। तत्रस्त्वष्टा तदं चित्रा विचंष्टाम्। तत्रक्षत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तत्रः प्रजां वीरवंती स्मनोतु। गोभिनी अश्वैः समनक्त यज्ञम्। वायुर्नक्षेत्रमभ्येति निष्ट्याम्। तिग्मश्वं वृष्मो रोरुवाणः। समीरयन् भुवंना मात्रिश्वा। अप् द्वेषा स्मि नुदतामरांतीः॥१०॥

तन्नों वायुस्तदु निष्ट्यां शृणोतु। तन्नक्षंत्रं भूरिदा अंस्तु मह्मम्। तन्नों देवासो अनुजानन्तु कामम्। यथा तरंम दुरितानि विश्वां। दूरम्समच्छत्रं वो यन्तु भीताः। तदिन्द्राग्नी कृणतां तद्विशांखे। तन्नों देवा अनुमदन्तु यज्ञम्। पृश्चात् पुरस्तादभंयं नो अस्तु। नक्षंत्राणामिधंपत्नी विशांखे। श्रेष्ठांविन्द्राग्नी भुवंनस्य गोपौ॥११॥

विषूचः शत्रूनप् बाधंमानौ। अप् क्षुधं नुदतामरांतिम्। पूर्णा पृश्चादुत पूर्णा पुरस्तात्। उन्मध्यतः पौर्णमासी जिंगाय। तस्यां देवा अधि संवसंन्तः। उत्तमे नाकं इह मांदयन्ताम्। पृथ्वी सुवर्चा युवृतिः स्जोषाः। पौर्णमास्युदंगाच्छोभंमाना। आप्याययंन्ती दुरितानि विश्वां। उरुं दुहां यजंमानाय युज्ञम्॥१२॥

चित्रभांनुर्यर्जमाने दधातु हुविर्नुः पाथुश्चेतों ज्ञुषन्ताञ्चेतों मदेम् रोचमानामरातीर्गोपौ युज्ञम्॥==========[१]

ऋखास्मं ह्व्यैर्नमंसोप्सद्यं। मित्रं देवं मित्र्धेयं नो अस्तु। अनूराधान् ह्विषां वर्धयन्तः। शतं जीवेम शरदः सवीराः। चित्रं नक्षेत्रमुदंगात्पुरस्तात्। अनूराधास् इति यद्वदेन्ति। तिम्त्र एति प्थिभिदेवयानैः। हिर्ण्ययैर्वितंतर्न्तरिक्षे। इन्द्रौ ज्येष्ठामन् नक्षेत्रमेति। यस्मिन्वृत्रं वृत्रुतूर्ये तृतार्ग॥१३॥

तस्मिन्वयम्मृतं दुहांनाः। क्षुधं तरेम् दुरितिं दुरिष्टिम्। पुरन्दरायं वृष्भायं धृष्णवें। अषांढाय सहंमानाय मीढुषें।

इन्द्रांय ज्येष्ठा मधुंमृद्दुहांना। उरुं कृंणोतु यजंमानाय लोकम्। मूलं प्रजां वीरवंतीं विदेय। पराँच्येतु निर्ऋतिः पराचा। गोभिर्नक्षंत्रं पृशुभिः समंक्तम्। अहंर्भूयाद्यजंमानाय् मह्मम्॥१४॥

अहंनी अद्य संवित दंधातु। मूलं नक्षंत्रमिति यद्वदंन्ति। परांचीं वाचा निर्ऋतिं नुदािम। शिवं प्रजाये शिवमंस्तु मह्मम्। या दिव्या आपः पर्यंसा सम्बभूवः। या अन्तरिक्ष उत पार्थिवीर्याः। यासांमषाढा अनुयन्ति कामम्। ता न आपः शङ् स्योना भवन्तु। याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वेशन्तीरुत प्रांस्चीर्याः॥१५॥

यासांमषाढा मधुं भृक्षयंन्ति। ता न आपः शङ् स्योना भंवन्तु। तन्नो विश्वे उपं शृण्वन्तु देवाः। तदंषाढा अभिसंयंन्तु यज्ञम्। तन्नक्षंत्रं प्रथतां पृशुभ्यः। कृषिर्वृष्टिर्यजंमानाय कल्पताम्। शुभ्राः कृन्यां युवृतयः सुपेशंसः। कृर्मकृतः सुकृतों वीर्यावतीः। विश्वान् देवान् ह्विषां वर्धयंन्तीः। अषाढाः काम्मुपं यान्तु युज्ञम्॥१६॥

यस्मिन् ब्रह्माऽभ्यजंयथ्सवंमेतत्। अमुं चं लोकमिदमूं च सर्वम्। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विजित्यं। श्रियं दधात्वहंणीय-मानम्। उभौ लोकौ ब्रह्मंणा सञ्जितेमौ। तन्नो नक्षंत्रमभिजिद्विचंष्टाम्। तस्मिन्वयं पृतंनाः सञ्जयेम। तन्नों देवासो अनुंजानन्तु कामम्। शृण्वन्तिं श्रोणाम्मृतंस्य गोपाम्। पुण्यांमस्या उपंश्रणोमि वाचम्॥१७॥

महीं देवीं विष्णुंपत्नीमजूर्याम्। प्रतीचींमेना हिवं यजामः। त्रेधा विष्णुंरुरुगायो विचंक्रमे। महीं दिवं पृथिवीमन्तरिक्षम्। तच्छ्रोणैतिश्रवं इच्छमाना। पुण्य श्रे श्लोकं यजमानाय कृण्वती। अष्टौ देवा वसंवः सोम्यासंः। चतंस्रो देवीर्जराः श्रविष्ठाः। ते यज्ञं पान्तु रजंसः प्रस्तात्। संवथ्सरीणंम्मृत इस्वस्ति॥१८॥

यज्ञं नेः पान्तु वसंवः पुरस्तांत्। दक्षिणतों-ऽभियंन्तु श्रविष्ठाः। पुण्यं नक्षंत्रम्भि संविशाम। मा नो अर्रातिर्घशृश्साऽगन्। क्षत्रस्य राजा वर्रुणोऽधिराजः। नक्षंत्राणाश्शृतभिष्वविसेष्ठः। तौ देवेभ्यः कृणुतो दीर्घमायुः। शृतश्सहस्रां भेषजानि धत्तः। यज्ञं नो राजा वर्रुण उपयातु। तन्नो विश्वे अभि संयन्तु देवाः॥१९॥

तन्नो नक्षंत्र श्वतिभिषग्जुषाणम्। दीर्घमायुः प्रति-रद्भेषजानि। अज एकंपादुदंगात्पुरस्तांत्। विश्वा भूतानिं प्रति मोदंमानः। तस्यं देवाः प्रंस्वं यंन्ति सर्वे। प्रोष्ठपदासो अमृतंस्य गोपाः। विभाजंमानः समिधान उग्रः। आऽन्तरिक्षमरुहृदगुन्द्याम्। त स्पूर्यं देवम्जमेकंपादम्। प्रोष्ठपदासो अनुयन्ति सर्वे॥२०॥ अहिं बुंध्रियः प्रथंमान एति। श्रेष्ठों देवानांमुत मानुंषाणाम्। तं ब्राँह्मणाः सोंम्पाः सोम्यासंः। प्रोष्ठपदासों अभि रंक्षन्ति सर्वे। चत्वार एकंम्भि कर्म देवाः। प्रोष्ठपदास् इति यान् वदंन्ति। ते बुध्रियं परिषद्य एकंम्भि कर्म स्तुवन्तः। अहि रक्षन्ति नमंसोपसद्यं। पूषा रेवत्यन्वंति पन्थांम्। पुष्टिपतीं पशुपा वाजंबस्त्यौ॥२१॥

ड्मानिं ह्व्या प्रयंता जुषाणा। सुगैर्नो यानैरुपंयातां यज्ञम्। क्षुद्रान् पृशून् रंक्षतु रेवतीं नः। गावों नो अश्वार् अन्वेतु पूषा। अन्नर् रक्षंन्तौ बहुधा विरूपम्। वाजरं सनुतां यजंमानाय यज्ञम्। तद्श्विनांवश्वयुजोपंयाताम्। शुभुङ्गिष्ठौ सुयमेंभिरश्वैः। स्वं नक्षंत्रर ह्विषा यजंन्तौ। मध्वा सम्पृंक्तौ यजुंषा समंक्तौ॥२२॥

यौ देवानां भिषजौ हव्यवाहौ। विश्वंस्य दूताव्मृतंस्य गोपौ। तौ नक्षंत्रं जुजुषाणोपंयाताम्। नमोऽश्विभ्यां कृणमोऽश्वयुग्भ्याम्। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। तद्यमो राजा भगंवान् विचंष्टाम्। लोकस्य राजां महतो महान् हि। सुगं नः पन्थामभंयं कृणोतु। यस्मिन्नक्षंत्रे यम एति राजां। यस्मिन्नेनम्भ्यषिश्चन्त देवाः। तदंस्य चित्रः ह्विषां यजाम। अपं पाप्मानं भरंणीर्भरन्तु। निवेशंनी यत्तं देवा अदंधः॥२३॥ तृतार् मह्यं प्रासुचीर्या याँन्तु युज्ञं वाचईं स्वृस्ति देवा अनुयन्ति सर्वे वार्जवस्त्यौ समंक्तौ देवास्त्रीणि च॥🕳 🍳 🗍

नवीनवो भवित जार्यमानो यमोदित्या अर्शुमौप्याययंन्ति। ये विरूपे समेनसा संव्ययंन्ती। समानं तन्तुं परितातना तैं। विभू प्रभू अनुभू विश्वतो हुवे। ते नो नक्षेत्रे हवमागमेतम्। व्यं देवी ब्रह्मणा संविदानाः। सुरत्नांसो देववीतिं दर्धानाः। अहोरात्रे ह्विषां वर्धयन्तः। अति पाप्मान्मितं मुक्त्या गमेम। प्रत्युवदृश्यायती॥२४॥

व्युच्छन्तीं दुह्तित दिवः। अपो मही वृंणुते चक्षुंषा। तमो ज्योतिंष्कृणोति सूनरीं। उदुस्त्रियाः सचते सूर्यः। सचां उद्यन्नक्षंत्रमर्चिमत्। तवेदुंषो व्युषि सूर्यस्य च। सं भक्तेनं गमेमहि। तन्नो नक्षंत्रमर्चिमत्। भानुमक्तेजं उचरंत्। उपयुज्ञमिहागंमत्॥२५॥

प्र नक्षंत्राय देवायं। इन्द्रायेन्दु हवामहे। स नंः सिवता स्वथ्मिनम्। पृष्टिदां वीरवंत्तमम्। उदुत्यं चित्रम्। अदिंतिर्न उरुष्यतु महीमू षु मातरम्। इदं विष्णुः प्रतिद्वष्णुः। अग्निर्मूर्धा भुवः। अनुनोऽद्यानुंमित्रिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाहु ह्यं स्विष्टम्॥२६॥

आयुर्त्वंगम्ष्रित्वंष्टम्॥—————[3]

अग्निर्वा अंकामयत। अन्नादो देवाना ईस्यामिति। स एतम्ग्नये कृत्तिंकाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकपालं निरंवपत्। ततो वै सौंऽन्नादो देवानांमभवत्। अग्निर्वे देवानांमन्नादः। यथां ह वा अग्निर्देवानांमन्नादः। एव॰ ह् वा एष मंनुष्यांणां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा कृत्तिंकाभ्यः स्वाहाँ। अम्बाये स्वाहां दुलाये स्वाहाँ। नित्त्ये स्वाहाऽभ्रयंन्त्ये स्वाहां। मेघयंन्त्ये स्वाहां वर्षयंन्त्ये स्वाहां। चुपुणीकांये स्वाहेतिं॥२७॥

प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। ता अंस्माथ्मृष्टाः परांचीरायन्। तासा रे रोहिणीम्भ्यंध्यायत्। सोंऽकामयत। उप मा वंर्तेत। समेंनया गच्छेयेतिं। स एतं प्रजापंतये रोहिण्ये च्रं निरंवपत्। ततो वै सा तमुपावंर्तत। समेंनयागच्छत। उपं ह् वा एंनं प्रियमावंर्तते। सं प्रियेणं गच्छते। य एतेनं हृविषा यजते। य उंचैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहां रोहिण्ये स्वाहां। रोचंमानाये स्वाहां प्रजाभ्यः स्वाहेतिं॥२८॥

सोमो वा अंकामयत। ओषंधीना र गुज्यम्भिजंयेयमितिं। स एत र सोमांय मृगशीर्षायं श्यामाकं च्रं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स ओषंधीना र गुज्यम्भ्यंजयत्। समानाना र हु वै गुज्यम्भिजंयित। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सोमांय स्वाहां मृगशीर्षाय स्वाहां। इन्वकाभ्यः स्वाहौषंधीभ्यः स्वाहां। गुज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥२९॥

रुद्रो वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामितिं। स एतः रुद्रायाऽऽर्द्राये प्रैय्यंङ्गवं चुरुं पर्यसि निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भंवति। य एतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। रुद्राय स्वाहाऽऽद्रीयै स्वाहां। पिन्वंमानायै स्वाहां पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३०॥

ऋक्षा वा इयमेलोमकोऽऽसीत्। साऽकोमयत। ओषधीभिर्वनस्पतिभिः प्रजायेयेति। सैतमदित्यै पुनेर्वसुभ्यां चरुं निरंवपत्। ततो वा इयमोषधीभिर्वनस्पतिभिः प्राजायत। प्रजायते हु वै प्रजयां पृशुभिः। य पृतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अदित्यै स्वाहा पुनेर्वसुभ्याम्। स्वाहा भूँत्यै स्वाहा प्रजाँत्यै स्वाहेति॥३१॥

बृह्स्पतिर्वा अंकामयत। ब्रह्मवर्चसी स्यामितिं। स एतं बृह्स्पतंये तिष्यांय नैवारं चरुं पर्यासे निरंवपत्। ततो वै स ब्रह्मवर्चस्यंभवत्। ब्रह्मवर्चसी हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहां तिष्यांय स्वाहां। ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥३२॥

देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवाः सूर्पेभ्यं आश्रेषाभ्य आज्यं कर्म्मं निरंवपन्। तानेताभिरेव देवतांभिरुपांनयन्। पृताभिर्ह् वे देवतांभिर्द्धिषन्तं भ्रातृंव्यमुपंनयति। य पृतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्पेभ्यः स्वाहांऽऽश्रेषाभ्यः स्वाहां। दन्दशूकेंभ्यः स्वाहेतिं॥३३॥

पितरो वा अंकामयन्त। पितृलोक ऋंध्रुयामेतिं। त एतं

पितृभ्यो म्घाभ्यः पुरोडाश्र् षद्वपालं निरंवपन्। ततो वै ते पितृलोक आधुंवन्। पितृलोके ह् वा ऋंध्रोति। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। पितृभ्यः स्वाहां म्घाभ्यः। स्वाहांऽन्घाभ्यः स्वाहांऽग्दाभ्यः। स्वाहां-ऽरुन्धतीभ्यः स्वाहेतिं॥३४॥

अर्यमा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतमेर्यम्णे फल्गुनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् हु वै भवति। य एतेनं हुविषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अर्यम्णे स्वाहा फल्गुनीभ्या इं स्वाहाँ। पृशुभ्यः स्वाहेतिं॥३५॥

भगो वा अंकामयत। भगी श्रेष्ठी देवाना ईस्यामितिं। स एतं भगाय फल्गुंनीभ्यां चुरुं निरंवपत्। ततो वै स भगी श्रेष्ठी देवानांमभवत्। भगी हु वै श्रेष्ठी संमानानां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। भगाय स्वाहा फल्गुंनीभ्या इं स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहेतिं॥३६॥

स्विता वा अंकामयत। श्रन्में देवा दधीरन्। स्विता स्यामिति। स एत र संवित्रे हस्तांय पुरोडाशं द्वादंशकपालं निरंवपदाशूनां व्रींहीणाम्। ततो वै तस्मै श्रद्देवा अदंधत। स्विताऽभंवत्। श्रद्धवा अंस्मै मनुष्यां दधते। स्विता संमानानां भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। स्वित्रे स्वाहा हस्तांय। स्वाहां

दद्ते स्वाहां पृण्ते। स्वाहां प्रयच्छंते स्वाहां प्रतिगृभ्णते स्वाहेतिं॥३७॥

त्वष्टा वा अंकामयत। चित्रं प्रजां विंन्देयेतिं। स एतं त्वष्ट्रं चित्रायें पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपत्। ततो वै स चित्रं प्रजामंविन्दत। चित्र ह वै प्रजां विंन्दते। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। त्वष्ट्रे स्वाहां चित्राये स्वाहां। चैत्राय स्वाहां प्रजाये स्वाहेतिं॥३८॥

वायुर्वा अंकामयत। कामचारंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतद्वायवे निष्ट्यांयै गृष्ट्यै दुग्धं पयो निरंवपत्। ततो वै स कामचारंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। कामचार् ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वायवे स्वाहा निष्ट्यांयै स्वाहां। कामचारांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥३९॥

इन्द्राग्नी वा अंकामयेताम्। श्रेष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेवेतिं। तावेतिमंन्द्राग्निभ्यां विशांखाभ्यां पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रेष्ठ्यं देवानांमभ्यंजयताम्। श्रेष्ठ्यं हु वे संमानानांम्भि जंयति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्राग्निभ्याः स्वाहा विशांखाभ्याः स्वाहां। श्रेष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजिंत्यै स्वाहेतिं॥४०॥

अथैतत्पौर्णमास्या आज्यं निर्वपति। कामो वै पौर्णमासी।

काम् आज्यम्। कामेनेव काम् समर्धयति। क्षिप्रमेन् स् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। पौर्णमास्ये स्वाहा कामाय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेतिं॥४१॥

अभिः पश्चंदश प्रजापंतिः पोडंश् सोम् एकांदश कुद्रो दश्केंकांदश् बृहस्पतिर्दशं देवासुरा नवं पितर् एकांदशार्युमा भगो दशं दश सिवृता चतुर्दश् त्वष्टां बायुरिन्द्राग्नी दशं दशायेृतत्पौर्णमास्या अष्टो पश्चंदश॥—————[४]

मित्रो वा अंकामयत। मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभिजंयेयमितिं। स एतं मित्रायांनूराधेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स मित्रधेयंमेषु लोकेष्वभ्यंजयत्। मित्रधेय ह वा एषु लोकेष्वभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। मित्राय स्वाहांऽनूराधेभ्यः स्वाहां। मित्रधेयांय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥४२॥

इन्द्रो वा अंकामयत। ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भिजंयेय्मितिं। स एतमिन्द्रांय ज्येष्ठायं पुरोडाश्मेकांदशकपालं निरंवपन्महाव्रींहीणाम्। ततो वै स ज्यैष्ठ्यं देवानांम्भ्यंजयत्। ज्यैष्ठ्य ह वै संमानानांम्भिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। इन्द्रांय स्वाहां ज्येष्ठाये स्वाहां। ज्यैष्ठ्यांय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४३॥

प्रजापंतिर्वा अंकामयत। मूलं प्रजां विन्देयेति। स एतं प्रजापंतये मूलाय चुरुं निरंवपत्। ततो वै स मूलं प्रजामंविन्दत। मूलर्ं हु वै प्रजां विन्दते। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। प्रजापंतये स्वाहा मूलांय स्वाहां। प्रजायै स्वाहेतिं॥४४॥

आपो वा अंकामयन्त। समुद्रं कामंम्भिजंयेमेति। ता पृतमुद्धोऽषाढाभ्यंश्चरुं निरंवपन्। ततो वै ताः संमुद्रं कामंमभ्यंजयन्। समुद्र र ह वै कामंम्भिजंयति। य पृतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अद्भः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। समुद्राय स्वाहा कामांय स्वाहां। अभिजित्ये स्वाहेति॥४५॥

विश्वे वै देवा अंकामयन्त। अनुपुज्य्यं जंयेमेति। त पृतं विश्वेभ्यो देवेभ्योऽषाढाभ्यंश्वरं निरंवपन्। ततो वै ते-ऽनपज्य्यमंजयन्। अनुपुज्य्यः हु वै जंयित। य पृतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहांऽषाढाभ्यः स्वाहां। अनुपुज्य्याय स्वाहा जित्ये स्वाहेतिं॥४६॥

ब्रह्म वा अंकामयत। ब्रह्मलोकम्भिजंयेयमिति। तदेतं ब्रह्मणेऽभिजिते च्रं निरंवपत्। ततो वै तद्गंह्मलोकम्भ्यंजयत्। ब्रह्मलोक ह् वा अभिजंयति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उ चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। ब्रह्मणे स्वाहांऽभिजिते स्वाहां। ब्रह्मलोकाय स्वाहाऽभिजिंत्ये स्वाहेतिं॥४७॥

विष्णुर्वा अंकामयत। पुण्यु श्लोक १ शृण्वीय। न मां पापी कीर्तिरागंच्छेदितिं। स पृतं विष्णंवे श्रोणायैं पुरोडाशं त्रिकपालं निरंवपत्। ततो वै स पुण्य हु श्लोकं मशृणुत। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छत्। पुण्य हु वै श्लोक है शृणुते। नैनं पापी कीर्तिरागंच्छति। य पुतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां श्रोणाये स्वाहां। श्लोकांय स्वाहां श्रुताय स्वाहेति॥४८॥

वसंवो वा अंकामयन्त। अग्रं देवतांनां परीयामेतिं। त एतं वसुंभ्यः श्रविष्ठाभ्यः पुरोडाशंमुष्टाकंपालं निरंवपन्। ततो वै तेऽग्रं देवतांनां पर्यायन्। अग्रं हु वै संमानानां पर्येति। य एतेनं हृविषा यज्ञंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वसुंभ्यः स्वाहा श्रविष्ठाभ्यः स्वाहां। अग्रांय स्वाहा परींत्यै स्वाहेतिं॥४९॥

इन्द्रो वा अंकामयत। दृढोऽशिंथिलः स्यामितिं। स एतं वर्रुणाय श्वतिभेषजे भेषजेभ्यः पुरोडाशं दर्शकपालं निर्रवपत्कृष्णानां व्रीहीणाम्। ततो वे स दृढोऽशिंथिलो-ऽभवत्। दृढो ह् वा अशिंथिलो भवति। य एतेनं हृविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहां श्वतिभेषजे स्वाहां। भेषजेभ्यः स्वाहेतिं॥५०॥

अजो वा एकंपादकामयत। तेजस्वी ब्रंह्मवर्चसी स्यामिति। स एतम्जायैकंपदे प्रोष्ठपदेभ्यंश्चरुं निरंवपत्। ततो वै स तेजस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंभवत्। तेजस्वी ह् वै ब्रंह्मवर्चसी भवति। य एतेनं ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं

वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अजायैकंपदे स्वाहाँ प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहाँ। तेजंसे स्वाहाँ ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेतिं॥५१॥

अहिर्वे बुध्नियोंऽकामयत। इमां प्रतिष्ठां विन्देयेति। स एतमहंये बुध्नियांय प्रोष्ठपदेभ्यः पुरोडाशं भूमिकपालं निरंवपत्। ततो वै स इमां प्रतिष्ठामंविन्दत। इमा॰ हु वै प्रतिष्ठां विन्दते। य एतेनं ह्विषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अहंये बुध्नियांय स्वाहां प्रोष्ठपदेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥५२॥

पूषा वा अंकामयत। पृशुमान्थ्स्यामिति। स एतं पूष्णे रेवत्यै चुरुं निरंवपत्। ततो वै स पंशुमानंभवत्। पृशुमान् ह् वै भंवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। पूष्णे स्वाहां रेवत्यै स्वाहां। पृशुभ्यः स्वाहेति॥५३॥

अश्विनौ वा अंकामयेताम्। श्रोत्रस्विनावबंधिरौ स्यावेतिं। तावेतमृश्विभ्यांमश्वयुग्भ्यां पुरोडाशं द्विकपालं निरंवपताम्। ततो वे तौ श्रोत्रस्विनावबंधिरावभवताम्। श्रोत्रस्वी ह वा अबंधिरो भवति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अश्विभ्याङ् स्वाहाँऽश्वयुग्भ्याङ् स्वाहाँ। श्रोत्रांय स्वाहा श्रुत्यै स्वाहेतिं॥५४॥

यमो वा अंकामयत। पितृणाः राज्यम्भिजंयेयमितिं। स एतं यमायाप्भरंणीभ्यश्चरुं निरंपवत्। ततो वै स पितृणाः राज्यम्भ्यंजयत्। सुमानानाः हु वै राज्यम्भि जंयति। य पृतेनं हिविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। यमाय स्वाहांऽपुभरंणीभ्यः स्वाहां। राज्याय स्वाहाऽभिजित्यै स्वाहेतिं॥५५॥

अथैतदंमावास्यांया आज्यं निर्वपति। कामो वा अमावास्यां। काम आज्यम्। कामेनेव काम् समर्थयति। क्षिप्रमेन् सकाम् उपनमति। येन् कामेन् यजंते। सोऽत्रं जुहोति। अमावास्यांये स्वाहा कामांय स्वाहाऽऽगंत्ये स्वाहेतिं॥५६॥

चन्द्रमा वा अंकामयत। अहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्सं-वथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य स्वलोकतांमाप्रयामिति। स एतं चन्द्रमंसे प्रतीदृष्ट्यांये पुरोडाशं पश्चंदशकपालं निरंवपत्। ततो वै सोंऽहोरात्रानंधमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सर-मास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोत्। अहोरात्रान् ह वा अंधमासान्मासांनृतून्थ्यंवथ्सरमास्वा। चन्द्रमंसः सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। चन्द्रमंसे स्वाहाँ प्रतीदृष्ट्यांये स्वाहाँ। अहोरात्रेभ्यः स्वाहाँऽर्धमासेभ्यः स्वाहाँ। मासेभ्यः स्वाहर्तुभ्यः स्वाहाँ। संवथ्सराय स्वाहेति॥५७॥

अहोरात्रे वा अंकामयेताम्। अत्यंहोरात्रे मुंच्येवहि।

न नांवहोरात्रे आंप्रुयातामिति। ते एतमहोरात्राभ्यां च्रं निरंवपताम्। द्वयानां व्रीहीणाम्। शुक्लानां च कृष्णानां च। स्वात्योर्दुग्धे। श्वेतायं च कृष्णायं च। ततो वे ते अत्यंहोरात्रे अंमुच्येते। नैनं अहोरात्रे आंप्रुताम्। अति ह वा अंहोरात्रे मुंच्यते। नैनंमहोरात्रे आंप्रुतः। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अह्रे स्वाहा रात्रियै स्वाहां। अतिमृक्तये स्वाहेतिं॥५८॥

उषा वा अंकामयत। प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगां स्यामिति। सैतमुषसं चुरुं निरंवपत्। ततो वै सा प्रियाऽऽदित्यस्यं सुभगांऽभवत्। प्रियो हु वै संमानाना र् सुभगों भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहां। व्यूषुष्ये स्वाहां व्युच्छन्त्ये स्वाहां। व्यंष्टाये स्वाहेतिं॥५९॥

अथैतस्मै नक्षंत्राय चुरुं निर्वपित। यथा त्वं देवानामिसं। एवम्हं मंनुष्याणां भूयास्मिति। यथां हु वा एतद्देवानाम्। एव॰ हु वा एष मंनुष्याणां भवति। य एतेनं हुविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। नक्षंत्राय स्वाहोदेष्यते स्वाहां। उद्यते स्वाहोदिताय स्वाहां। हरसे स्वाहा भरसे स्वाहां। भ्राजंसे स्वाहा तेजंसे स्वाहां। तपंसे स्वाहां ब्रह्मवर्चसाय स्वाहेति॥६०॥

सूर्यो वा अंकामयत। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा स्यामितिं। स

पृतः सूर्याय नक्षंत्रेभ्यश्चरं निरंवपत्। ततो वै स नक्षंत्राणां प्रतिष्ठाऽभंवत्। प्रतिष्ठा हु वै संमानानां भवति। य पृतेनं हिविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। सूर्याय स्वाहा नक्षंत्रेभ्यः स्वाहां। प्रतिष्ठाये स्वाहेति॥६१॥

अथैतमदिंत्यै च्रुं निर्वपति। इयं वा अदिंतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। अदिंत्यै स्वाहां प्रतिष्ठायै स्वाहेतिं॥६२॥

अथैतं विष्णंवे चुरुं निर्वपति। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञ एवान्तृतः प्रतिं तिष्ठति। सोऽत्रं जुहोति। विष्णंवे स्वाहां युज्ञाय स्वाहां। प्रतिष्ठायै स्वाहेति॥६३॥

चन्द्रमाः पश्चंदशाहोरात्रे स्तर्वशोषा एकांद्रशायेतस्मे नक्षंत्राय त्रयोदश् सूर्यो दशायेतमदित्ये पश्चायेतं विष्णेव पद्ध्सप्त (स्विताऽऽशूनां ब्रीहीणामिन्द्री महाब्रीहीणामिन्द्री कृष्णानां ब्रीहीणामंहोरात्रे द्वयानां ब्रीहीणाम्। पितरः पद्धंपालः सविता द्वादंशकपालमिन्द्राग्री एकांदशकपालमिन्द्र एकांदशकपालमिन्द्रो दशंकपालं विष्णृश्चिकपालमिह्मूर्मिकपालम्थिनौ द्विकपालं चन्द्रमाः पश्चंदशकपालमृत्रिस्त्वष्ट्रा वसंवोऽष्टाकंपालमृन्यत्रं चुरुम्। कृद्रोंऽर्युमा पूषा पंश्वमान्थ्स्याः सोमों कृद्रो बृहस्पितः पर्यसि वायः पयः सोमों वायुरिन्द्राग्री मित्र इन्द्र आपो ब्रह्मं युमोंऽभिजित्ये त्वष्टां प्रजापितः प्रजाये पौर्णमास्या अमावास्याया अगंत्ये विश्वे जित्यां अश्विनौ श्रुत्ये। ब्रह्म तदेतं विष्णुः स एतं वायः स एतदापुस्ताः। पितरो विश्वे वसंवोऽकामयन्त् मेति त एतत्रिरंवपन्। अन्दिनीवकामयेतां विति तावेतिन्निरंवपताम्। अहोरात्रे वा अंकामयेतामिति ते एतन्निरंवपताम्। अन्यत्रांकामयतेति स एतन्निरंवपत्। इन्द्राग्री श्रैष्ठ्यमिन्द्रो ज्यैष्ठ्यमिन्द्रो इदः। अितः सूर्योऽदित्ये विष्णेव प्रतिष्ठाये। सोमों युमः संमानानांम्। अग्निनौ रीरिषद्न्यत्रं रीरिषः॥)॥

अग्निर्न ऋध्यास्म नवीनवोऽग्निर्मित्रश्चन्द्रमाः षद्॥६॥

322 प्रथमः प्रश्नः

अभिर्नुस्तन्नों वायुरहिंबुंभ्रियं ऋक्षा वा ड्यमथेृतत्यौर्णमास्या अजो वा एकंपाथ्सूर्यस्त्रिपंष्टिः॥६३॥ अभिर्नः पातु प्रतिष्ठाये स्वाहेतिं॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके प्रथमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः॥

तृतीयंस्यामितो दिवि सोमं आसीत्। तं गांयत्र्या-ऽहंरत्। तस्यं पूर्णमच्छिद्यत। तत्पूर्णोऽभवत्। तत्पूर्णस्यं पर्णत्वम्। ब्रह्म वै पूर्णः। यत्पंणशाखयां वृथ्सानंपाकरोति। ब्रह्मणैवैनानपाकरोति। गायत्रो वै पूर्णः। गायत्राः पृशवः॥१॥

तस्मात्रीणित्रीण पूर्णस्यं पलाशानि। त्रिपदां गायत्री। यत्पंणशाखया गाः प्रापंयति। स्वयैवैनां देवतंया प्रापंयति। यं कामयेतापृशः स्यादितिं। अपूर्णान्तस्मै शुष्कांग्रामाहंरेत्। अपूर्शरेव भंवति। यं कामयेत पशुमान्थ्र्यादितिं। बहुपूर्णान्तस्मै बहुशाखामाहंरेत्। पृशुमन्तंमेवैनंं करोति॥२॥

यत्प्राचीमा हरैत्। देवलोकम्भि जंयेत्। यद्दीचीं मनुष्यलोकम्। प्राचीमुदीचीमा हंरति। उभयौर्लोकयोर्भि-जित्यै। इषे त्वोर्जे त्वेत्याह। इषेमेवोर्जं यजमाने दधाति। वायवः स्थेत्याह। वायुर्वा अन्तरिक्षस्याध्यक्षाः। अन्तरिक्षदेवत्याः खलु वै पृशवः॥३॥

वायवं प्वैनान्परि ददाति। प्र वा एंनानेतदा कंरोति। यदाहं। वायवः स्थेत्यंपायवः स्थेत्यांह। यजंमानायैव प्शूनुपं ह्वयते। देवो वंः सविता प्रापंयत्वित्यांह प्रसूत्यै। श्रेष्ठंतमाय कर्मण इत्यांह। यज्ञो हि श्रेष्ठंतमं कर्म। तस्मांदेवमांह।

आप्यांयध्वमघ्निया देवभागमित्यांह॥४॥

वृथ्सेभ्यंश्च वा एताः पुरा मंनुष्येभ्यश्चाप्यांयन्त। देवेभ्यं एवेना इन्द्रायाप्यांययित। ऊर्जस्वतीः पर्यस्वतीरित्यांह। ऊर्ज् हि पर्यः सम्भरंन्ति। प्रजावंतीरनमीवा अयक्ष्मा इत्यांह प्रजात्ये। मा वंः स्तेन ईशत माऽघश्र स् इत्यांह गृत्यै। रुद्रस्यं हेतिः परिं वो वृण्कित्यांह। रुद्रादेवेनांस्रायते। ध्रुवा अस्मिन्गोपंतौ स्यात बह्वीरित्यांह। ध्रुवा प्वास्मिन्बह्वीः करोति॥५॥

यजंमानस्य पृश्न्पाहीत्यांह। पृश्न्नां गोंपीथायं। तस्मांथ्सायं पृशव् उपसमावंतन्ते। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव् निदंधाति। उपरीव् हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये॥६॥

पुशर्वः करोति पुशर्वो देवभागमित्यांह करोति नवं च॥ \blacksquare

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इत्यंश्वप्र्शुमादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहु यत्यै। यो वा ओषंधीः पर्वशो वेदं। नैनाः स हिनस्ति। प्रजापंतिर्वा ओषंधीः पर्वशो वेद। स एना न हिनस्ति। अश्वपृश्वा बर्हरच्छैति। प्राजापत्यो वा अश्वंः सयोनित्वायं॥७॥

ओषंधीनामहिर्सायै। यज्ञस्यं घोषद्सीत्यांह। यजंमान एव र्यिं दंधाति। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। प्रेयमंगाद्धिषणां ब्र्हिरच्छेत्यांह। विद्या वै धिषणां। विद्ययैवैनदच्छेंति। मनुंना कृता स्वधया वितष्टेत्यांह। मानवी हि पर्शुं स्वधाकृता॥८॥

त आवंहिन्ति क्वयंः पुरस्तादित्यांह। शुश्रुवाश्सो वै क्वयंः। यज्ञः पुरस्तांत्। मुख्त एव यज्ञमा रंभते। अथो यदेतदुक्ता यतः कृतंश्चा हरंति। तत्प्राच्यां एव दिशो भंवति। देवेभ्यो जुष्टंमिह ब्र्हिरासद इत्यांह। ब्र्हिषः समृद्धै। कर्मणोऽनंपराधाय। देवानां परिषूतम्सीत्यांह॥९॥

यद्वा इदं किं चं। तद्देवानां परिषूतम्। अथो यथा वस्यंसे प्रतिप्रोच्याहेदं करिष्यामीति। एवमेव तदंध्वर्युर्देवेभ्यः प्रतिप्रोच्यं बर्हिर्दाति। आत्मनोऽहिर्ंसायै। यावंतः स्तम्बान्पंरिदिशेत्। यत्तेषांमुच्छिड्ष्यात्। अति तद्यज्ञस्यं रेचयेत्। एकई स्तम्बं परिदिशेत्। तर सर्वं दायात्॥१०॥

युज्ञस्यानंतिरेकाय। वर्षवृंद्धम्सीत्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। देवंबर्हिरित्यांह। देवेभ्यं एवैनंत्करोति। मा त्वा-ऽन्वङ्गा तिर्यगित्याहाहि रंसायै। पर्वं ते राध्यासमित्याहध्यैं। आच्छेत्ता ते मा रिषमित्यांह। नास्याऽऽत्मनों मीयते। य एवं वेदं॥११॥ देवंबर्हिः शृतवंल्श्ं विरोहेत्यांह। प्रजा वै ब्र्हिः। प्रजानां प्रजननाय। सहस्रंवल्शा वि वय र रुहेमेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। पृथिव्याः सम्पृचंः पाहीत्यांह प्रतिंष्ठित्यै। अयुंङ्गायुङ्गान्मुष्टीं लुंनोति। मिथुन्त्वाय प्रजांत्यै। सुसम्भृतां त्वा सम्भंरामीत्यांह। ब्रह्मणैवेनथ्सम्भंरति॥१२॥

अदित्ये रास्नाऽसीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवैन्द्रास्नां करोति। इन्द्राण्ये सन्नहंनुमित्यांह। इन्द्राणी वा अग्रे देवतांना समंनह्यत। साऽऽभ्रीत्। ऋद्धे सन्नह्यति। प्रजा व बर्हिः। प्रजानामपंरावापाय। तस्माथ्स्नावंसन्तताः प्रजा जांयन्ते॥१३॥

पूषा तें ग्रन्थं ग्रंशात्वत्यांह। पृष्टिमेव यजंमाने दधाति। स ते मास्थादित्याहाहि रंसायै। पृश्चात्प्राञ्चमुपंगूहित। पृश्चाद्वै प्राचीन् रेतों धीयते। पृश्चादेवास्में प्राचीन् रेतों दधाति। इन्द्रंस्य त्वा बाहुभ्यामुद्यंच्छ् इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। बृह्स्पतेंर्मूर्भा हंग्मीत्यांह। ब्रह्म वे देवानां बृहस्पतिं:॥१४॥

ब्रह्मंणैवैनंद्धरति। उर्वन्तिरिक्षमिन्विहीत्यांह् गत्यैं। देवुङ्गमम्सीत्यांह। देवानेवैनंद्रमयति। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव नि दंधाति। उपरीव हि सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं

लोकस्य समंष्ट्यै॥१५॥

पूर्वेद्युरिध्माब्र्हिः करोति। यज्ञमेवारभ्यं गृहीत्वोपंवसति।
प्रजापंतिर्यज्ञमंसृजत। तस्योखे अंस्रश्सेताम्। यज्ञो वै
प्रजापंतिः। यथ्मांन्नाय्योखे भवंतः। यज्ञस्यैव तदुखे
उपंदधात्यप्रंस्रश्साय। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया
इत्यांह। देवयुज्यायां एवैनांनि शुन्धति। मात्रिश्वंनो
धुर्मोऽसीत्यांह॥१६॥

अन्तरिक्षं वै मांत्रिश्वंनो घर्मः। एषां लोकानां विधृत्यै। द्यौरंसि पृथिव्यंसीत्यांह। दिवश्च ह्येषा पृथिव्याश्च सम्भृंता। यदुखा। तस्मादेवमांह। विश्वधाया असि पर्मेण धाम्नेत्यांह। वृष्टिर्वे विश्वधायाः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। दण्हंस्व मा ह्वारित्यांह धृत्यै॥१७॥

वसूनां प्वित्रंम्सीत्यांह। प्राणा वै वसंवः। तेषां वा एतद्भाग्धेयम्। यत्पवित्रम्। तेभ्यं एवैनंत्करोति। श्तधार सहस्रंधार्मित्यांह। प्राणेष्वेवायुर्दधाति सर्वत्वायं। त्रिवृत्पंलाशशाखायां दर्भमयं भवति। त्रिवृद्वै प्राणः। त्रिवृतंमेव प्राणं मध्यतो यजंमाने दधाति॥१८॥

सौम्यः पूर्णः संयोनित्वायं। साक्षात्प्वित्रं दुर्भाः। प्राख्सायमधिनि दंधाति। तत्प्राणापानयो रूपम्। तिर्यक्प्रातः। तद्दर्शस्य रूपम्। दार्श्यङ् ह्यंतदहंः। अन्नं वै चन्द्रमाः। अन्नं प्राणाः। उभयमेवोपैत्यजांमित्वाय॥१९॥

तस्मांदय सर्वतंः पवते। हुतः स्तोको हुतो द्रपस इत्यांह् प्रतिष्ठित्यै। हुविषोऽस्कन्दाय। न हि हुत इ स्वाहांकृत इ स्कन्दिति। दिवि नाको नामाग्निः। तस्ये विप्रुषो भागधेयम्। अग्नये बृह्ते नाकायेत्यांह। नाकंमेवाग्निं भागधेयेन समर्धयति। स्वाहा द्यावांपृथिवीभ्यामित्यांह। द्यावांपृथिव्योरेवैन्त्प्रतिष्ठापयति॥२०॥

प्वित्रंवत्यानंयित। अपां चैवौषंधीनां च रस् स् सः सृजिति। अथो ओषंधीष्वेव पृश्न्म्प्रतिष्ठापयित। अन्वारभ्य वाचं यच्छिति। यज्ञस्य धृत्यै। धारयंन्नास्ते। धारयंन्त इव हि दुहन्तिं। कामधुक्ष इत्याहातृतीयंस्यै। त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकान् यजमानो दुहे॥२१॥

अमूमिति नामं गृह्णाति। भुद्रमेवासां कर्मा विष्कंरोति। सा विश्वायुः सा विश्वव्यंचाः सा विश्वक्रमेत्यांह। इयं वे विश्वायुंः। अन्तरिक्षं विश्वव्यंचाः। असौ विश्वकंर्मा। इमानेवेताभिर्लोकान् यंथापूर्वं दुंहे। अथो यथां प्रदात्रे पुण्यंमाशास्ते। एवमेवेनां एतदुपंस्तौति। तस्मात्प्रादादित्युन्नीय वन्दंमाना उपस्तुवन्तंः पृशून्दुं-हन्ति॥२२॥ बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यों ह्विरिति वाचं विसृंजते। यथादेवतमेव प्रसौंति। दैव्यंस्य च मानुषस्यं च व्यावृंत्यै। त्रिराह। त्रिषंत्या हि देवाः। अवांचं यमोऽनंन्वार्भ्योत्तराः। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। न दांरुपात्रेणं दुह्यात्। अग्निवद्वै दांरुपात्रम्। यद्दांरुपात्रेणं दुह्यात्॥२३॥

यातयाँम्ना ह्विषां यजेत। अथो खल्वांहुः। पुरोडाशंमुखानि वै ह्वी १ षिं। नेत इंतः पुरोडाश १ ह्विषो यामोऽस्तीतिं। काममेव दांरुपात्रेणं दुह्यात्। शूद्र एव न दुंह्यात्। असंतो वा एष सम्भूतः। यच्छूद्रः। अहंविरेव तदित्यांहुः। यच्छूद्रो दोग्धीतिं॥ २४॥

अग्निहोत्रमेव न दुंह्याच्छूद्रः। तद्धि नोत्पुनन्तिं। यदा खलु वै प्वित्रंमत्येतिं। अथ् तद्धविरितिं। सम्पृच्यध्वमृतावरीरित्याह। अपां चैवौषंधीनां च रस्र् सर् सृंजति। तस्माद्पां चौषंधीनां च रस्मुपंजीवामः। मृन्द्रा धनस्य सात्य इत्याह। पृष्टिंमेव यजमाने दधाति। सोमेन् त्वातंनच्मीन्द्रांय दधीत्यांह॥२५॥

सोमं वेनंत्करोति। यो वे सोमं भक्षियत्वा। संवृथ्सर सोमं न पिबंति। पुनुर्भक्ष्यों उस्य सोमपीथो भंवति। सोमः खलु वे सान्नाय्यम्। य एवं विद्वान्थ्सान्नाय्यं पिबंति। अपुनुर्भक्ष्यों उस्य सोमपीथो भंवति। न मृन्मयेनापि दध्यात्। यन्मृन्मयेनापिद्ध्यात्। पितृदेवृत्य स्थात्॥ २६॥

अयस्पात्रेणं वा दारुपात्रेण वाऽपिं दधाति। तिद्ध सदेवम्। उद्दन्वद्भवति। आपो वै रक्षोघ्धीः। रक्षंसामपंहत्यै। अदंस्तमसि विष्णंवे त्वेत्यांह। यज्ञो वै विष्णंः। यज्ञायैवैन्ददंस्तं करोति। विष्णां हृव्य रक्षंस्वेत्यांह् गृष्ट्यै। अनंधः सादयति। गर्भाणां धृत्या अप्रंपादाय। तस्माद्गर्भाः प्रजानामप्रंपादुकाः। उपरीव निदंधाति। उपरीव हि सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टियै॥२७॥

असीत्यांहु भृत्ये यर्जमाने दधात्यर्जामित्वाय स्थापयति दुहे दुहन्ति दुह्याद्दोग्धीति दधीत्यांह स्याथ्सादयति पश्चं च॥ 🗦 🕽

कर्मणे वां देवेभ्यः शकेयमित्यांह् शत्त्र्यै। यज्ञस्य वे सन्तंतिमन् प्रजाः प्रावो यजंमानस्य सन्तांयन्ते। यज्ञस्य विच्छित्तिमन् प्रजाः प्रावो यजंमानस्य विच्छिंद्यन्ते। यज्ञस्य सन्तंतिरसि यज्ञस्यं त्वा सन्तंत्यै स्तृणामि सन्तंत्यै त्वा यज्ञस्येत्याहंवनीयाथ्सन्तंनोति। यजंमानस्य प्रजाये पश्नाः सन्तंत्यै। अपः प्रणंयति। श्रद्धा वा आपंः। श्रद्धामेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरति। अपः प्रणंयति। यज्ञो वा आपंः॥२८॥

युज्ञमेवारभ्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। वज्रो वा आपः। वज्रंमेव भ्रातृंव्येभ्यः प्रहृत्यं प्रणीय प्रचंरित। अपः प्रणंयित। आपो वै रंक्षोघ्नीः। रक्षंसामपहत्यै। अपः प्रणंयित। आपो वै देवानां प्रियं धामं। देवानांमेव प्रियं धामं प्रणीय प्रचंरित॥२९॥

अपः प्रणंयति। आपो वै सर्वा देवताः। देवतां पुवारभ्यं

प्रणीय प्रचेरति। वेषाय त्वेत्यांह। वेषाय ह्येनदादत्ते। प्रत्युंष्ट्र रक्षः प्रत्युंष्टा अरातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। धूर्सीत्यांह। एष वै धुर्योऽग्निः। तं यदनुंपस्पृश्यातीयात्॥३०॥

अध्वर्यं च यजंमानं च प्रदेहेत्। उपस्पृश्यात्येति। अध्वर्योश्च यजंमानस्य चाप्रदाहाय। धूर्व तं योंस्मान्धूर्वित् तं धूर्व यं व्यं धूर्वाम् इत्याह। द्वौ वाव पुरुषौ। यं चैव धूर्वित। यश्चेनं धूर्वित। तावुभौ शुचाऽर्पयति। त्वं देवानांमिस् सिस्रितमं पप्रितमं जुष्टेतमं विह्नितमं देवहूर्तम्मित्याह। यथायजुरेवैतत्॥३१॥

अहुंतमिस हिव्धानिमित्याहानाँत्यै। द १ हेस्व मा ह्यारित्यांह धृत्यैं। मित्रस्यं त्वा चक्षुंषा प्रेक्ष इत्यांह मित्रत्वायं। मा भेमा संविंक्था मा त्वां हि १ सिष्मित्याहाहि १ सायै। यद्वै किं च वातो नाभि वाति। तथ्सर्वं वरुणदेवत्यम्। उरु वातायेत्यांह। अवांरुणमेवैनंत्करोति। देवस्यं त्वा सिवतुः प्रमुव इत्यांह प्रसूत्ये। अश्विनौंबांहुभ्यामित्यांह॥३२॥

अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांह् यत्यें। अग्नये जुष्टं निर्वपामीत्यांह। अग्नयं पृवैनां जुष्टं निर्वपति। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः। पृषां लोकानामाध्यें। तूष्णीं चंतुर्थम्। अपंरिमितमेवावं रुन्थे। स पृवमेवानंपूर्व १ ह्वी १ षि निर्वपति॥ ३३॥ ड्दं देवानांमिदम् नः सहत्यांह् व्यावृत्ये। स्फात्ये त्वा नारात्या इत्यांह् गृत्ये। तमसीव वा एषों उन्तश्चरित। यः पंरीणिहिं। सुवंरिम वि ख्येषं वैश्वान्रं ज्योतिरित्यांह। सुवंरेवाभि वि पंश्यित वैश्वान्रं ज्योतिः। द्यावांपृथिवी ह्विषि गृहीत उदंवेपेताम्। दृश्हंन्तान्दुर्या द्यावांपृथिव्योरित्यांह। गृहाणां द्यावांपृथिव्योर्धृत्ये। उर्वन्तिरिक्षमिन्वहीत्यांह् गत्ये। अदित्यास्त्वोपस्थे सादयामीत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या एवेनंदुपस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रेष्ट्रस्वत्यांह् गृह्ये॥३४॥ वा अग्रेष्ट्रप्रस्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रेष्ट्रप्रस्वत्यांह् गृह्ये॥३४॥ वा अग्रेष्ट्रप्रस्वे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रेष्ट्रप्रस्वे व्यांह् व्यांष्ट्रप्रस्वे वा अदितिः। अस्या प्रवेनद्रपर्थे सादयति। अग्ने ह्व्यश्रेष्ट्रप्रस्वेत्यांह् गृह्ये॥३४॥

इन्द्रों वृत्रमंहन्। सोंऽपः। अभ्यंम्रियत। तासां यन्मेध्यं यिज्ञयु सदेवमासींत्। तदपोदंक्रामत्। ते दुर्भा अभवन्। यद्भैर्प उंत्पुनाति। या एव मेध्यां यिज्ञयाः सदेवा आपः। ताभिरेवैना उत्पुनाति। द्वाभ्यामृत्पुनाति॥३५॥

द्विपाद्यजंमानः प्रतिष्ठित्यै। देवो वंः सिव्तोत्पुनात्वित्यांह। सिव्तृप्रंसूत एवेना उत्पुनाति। अच्छिंद्रेण पिवत्रेणेत्यांह। असौ वा आदित्योऽच्छिंद्रं पिवत्रम्। तेनैवेना उत्पुनाति। वसोः सूर्यस्य रिष्मिभिरित्यांह। प्राणा वा आपंः। प्राणा वसंवः। प्राणा रश्मयंः॥३६॥

प्राणैरेव प्राणान्थ्सं पृणिक्ति। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदिति। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पुच्छो गांयत्रिया त्रिष्यमृद्धत्वायं। आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव् इत्याह। रूपमेवासामेतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। अग्रं इमं युज्ञं नंयताग्रं युज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव युज्ञं नंयन्ति। अग्रं युज्ञपंतिम्॥३७॥

युष्मानिन्द्रोऽवृणीत वृत्रतूर्ये यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रतूर्यं इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यित्रिन्द्रं आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विवरे। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह। तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्नये वो जुष्टं प्रोक्षांम्यग्नीषोमांभ्यामित्यांह। यथादेवतमेवैनान्प्रोक्षंति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥३८॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। शुन्धंध्वं दैव्यांय कर्मणे देवयुज्याया इत्यांह। देवयुज्यायां एवेनांनि शुन्धित। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अर्रातय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वगुसीत्यांह। इयं वा अदितिः॥३९॥

अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्वित्यांह् प्रतिंष्ठित्ये। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवृमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्पुरा गृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत। कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंध्यवहन्तिं। युज्ञादेव तद्यज्ञं

प्रयुंङ्के। हविषोऽस्कंन्दाय॥४०॥

अधिषवंणमसि वानस्पत्यमित्यांह। अधिषवंण-मेवैनत्करोति। प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्त्वित्यांह सयत्वायं। अग्नेस्त्नूरसीत्यांह। अग्नेर्वा एषा तुनूः। यदोषंधयः। वाचो विसर्जन्मित्यांह। यदा हि प्रजा ओषंधीनाम्श्ञन्तिं। अथ वाचं विसृंजन्ते। देववीतये त्वा गृह्णामीत्यांह॥४१॥

देवतांभिरेवैन्थ्समंध्यति। अद्विरिस वानस्पृत्य इत्यांह। ग्रावाणमेवैनंत्करोति। स इदं देवेभ्यों हृव्य स्पुशिमं शिम्ष्वेत्यांह् शान्त्यैं। हिविष्कृदेहीत्यांह। य एव देवाना हे हिव्ष्कृतंः। तान् ह्वंयति। त्रिर्ह्वंयति। त्रिषंत्या हि देवाः। इषुमावदोर्जुमावदेत्यांह॥४२॥

इषमेवोर्जं यर्जमाने दधाति। द्युमह्रंदत वय संङ्घातं जेष्मेत्यांह् भ्रातृंव्याभिभूत्ये। मनोः श्रद्धादेवस्य यर्जमानस्या-सुर्घ्नी वाक्। यृज्ञायुधेषु प्रविष्टाऽऽसीत्। तेऽसुर्ग् यावंन्तो यज्ञायुधानांमुद्धदंतामुपाश्वेण्वन्। ते पर्राभवन्। तस्माध्स्वानां मध्येऽवसायं यजेत। यावंन्तोऽस्य भ्रातृंव्या यज्ञायुधानां-मुद्धदंतामुपश्वण्वन्ति। ते पर्रा भवन्ति। उ्चैः समाहंन्त् वा आंह विजिंत्ये॥४३॥

वृङ्क एषामिन्द्रियं वीर्यम्। श्रेष्ठं एषां भवति। वर्षवृंद्धमसि प्रतिं त्वा वर्षवृंद्धं वेत्त्वित्यांह। वर्षवृंद्धा वा ओषंधयः। वर्षवृंद्धा इषीकाः समृद्धौ। यज्ञश् रक्षाः इस्यनु प्राविशन्। तान्यस्ना पृशुभ्यो निरवादयन्त। तुषैरोषंधीभ्यः। परांपूतः रक्षः परांपूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥४४॥

रक्षंसां भागोंऽसीत्यांह। तुषैरेव रक्षार्श्स निरवंदयते। अप उपंस्पृशति मेध्यत्वायं। वायुर्वो विविन्कित्यांह। पवित्रं वै वायुः। पुनात्येवैनान्। अन्तरिक्षादिव वा एते प्रस्केन्दन्ति। ये शूर्पात्। देवो वंः सविता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांहु प्रतिष्ठित्ये। ह्विषोऽस्केन्दाय। त्रिष्फलीकेर्त्वा आह। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं॥४५॥

द्वाभ्यामुत्युंनाति रुश्मयों नयन्त्यग्रें यज्ञपंतिं यज्ञोऽदिंतिरस्कंन्दाय गृह्णमीत्यांह वदेत्यांहु विजित्या अपहत्या अस्कंन्दाय

अवंधूत्र रक्षोऽवंधूता अरांतय इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अदित्यास्त्वग्सीत्यांह। इयं वा अदिंतिः। अस्या एवैन्त्वचं करोति। प्रतिं त्वा पृथिवी वेत्त्वत्यांह प्रतिष्ठित्यै। पुरस्तांत्प्रतीचीनंग्रीवमुत्तंरलोमोपंस्तृणाति मेध्यत्वायं। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चः पृशवो मेध्मुपंतिष्ठन्ते। तस्मांत्प्रजा मृगं ग्राहुंकाः। युज्ञो देवेभ्यो निलायत॥४६॥

कृष्णों रूपं कृत्वा। यत्कृष्णाजिने ह्विरंधिपिनष्टिं। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुंङ्के। ह्विषोऽस्कन्दाय। द्यावापृथिवी सहास्ताम्। ते शम्यामात्रमेकमहूर्वेता १ शम्यामात्रमेकमहंः। दिवः स्कम्भिनिरंसि प्रति त्वाऽदित्यास्त्वग्वेत्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योवींत्यैं। धिषणांऽसि पर्वत्या प्रतिं त्वा दिवः स्कंम्भुनिर्वेत्त्वत्यांह। द्यावांपृथिव्योर्विधृंत्यै॥४७॥

धिषणांऽसि पार्वतेयी प्रतिं त्वा पर्वतिर्वेन्वित्यांह। द्यावांपृथिव्योर्धृत्यैं। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूत्ये। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्त्यैं। अधिवपामीत्यांह। यथादेवतमेवेनानिधं वपति। धान्यमिस धिनुहि देवानित्यांह। पृतस्य यजुंषो वीर्येण॥४८॥

यावदेकां देवतां कामयंते यावदेकां। तावदाहुंतिः प्रथते। न हि तदस्ति। यत्तावदेव स्यात्। यावंश्रुहोतिं। प्राणायं त्वाऽपानाय त्वेत्यांह। प्राणानेव यजंमाने दधाति। दीर्घामनु प्रसितिमायुंषे धामित्यांह। आयुरेवास्मिन्दधाति। अन्तरिक्षादिव वा एतानि प्रस्केन्दन्ति। यानि दृषदंः। देवो वंः सिवता हिरंण्यपाणिः प्रतिंगृह्णात्वित्यांह प्रतिष्ठित्ये। हिवषोऽस्केन्दाय। असंवपन्ती पिश्षाणूनि कुरुतादित्यांह मेध्यत्वायं॥४९॥

निर्लायत् विर्धृत्ये वीर्येण स्कन्दन्ति चुत्वारि च॥————[६]

धृष्टिंरसि ब्रह्मं युच्छेत्यांह् धृत्यैं। अपाँग्नेऽग्निमामादं जिह् निष्क्रव्यादर्भ सेधा देवयजं वहेत्यांह। य एवामात्क्रव्यात्। तमंपहत्यं। मेध्येऽग्नौ कुपालुमुपंदधाति। निर्देग्ध्र रक्षो निर्देग्धा अरांतय इत्यांह। रक्षा ईस्येव निर्देहति। अग्निवत्युपंदधाति। अस्मिन्नेव लोके ज्योतिर्धत्ते। अङ्गार्मिधं वर्तयति॥५०॥

अन्तरिक्ष एव ज्योतिर्धत्ते। आदित्यमेवामुष्मिँ होके ज्योतिर्धत्ते। ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति। य एवं वेदं। ध्रुवमंसि पृथिवीं दृश्हेत्यांह। पृथिवीमेवैतेनं दृश्हित। धर्त्रमंस्यन्तरिक्षं दृश्हेत्यांह। अन्तरिक्षमेवैतेनं दृश्हित। धरुणंमसि दिवं दृश्हेत्यांह। दिवंमेवैतेनं दृश्हित॥५१॥

धर्मासि दिशों हुर्हेत्यांह। दिशं एवैतेनं हर्हित। इमानेवैतैर्लोकान्हर्हित। हर्हन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पश्मिः। य एवं वेदं। त्रीण्यग्नें कृपालान्यपंदधाति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्यं। एक्मग्नें कृपालमुपं दधाति। एकं वा अग्नें कृपालं पुरुषस्य सम्भवंति॥५२॥

अथ द्वे। अथ त्रीणिं। अथं चत्वारिं। अथाष्टौ। तस्मांदृष्टा-कंपालं पुरुषस्य शिरंः। यदेवं कृपालांन्युपदधांति। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंति स् सङ्स्कंरोति। आत्मानंमेव तथ्सङ्स्कंरोति। तर् सङ्स्कृतमात्मानम्॥५३॥

अमुष्मिँ ह्योकेऽनु परैति। यद्ष्टावृप्दधांति। गायत्रिया तथ्सम्मितम्। यन्नवं। त्रिवृता तत्। यद्दशं। विराजा तत्। यदेकांदश। त्रिष्टुभा तत्। यद्वादंश॥५४॥ जगंत्या तत्। छन्दंः सम्मितानि स उपदर्धत्कपालांनि। इमाँ ह्यो कानंनुपूर्वं दिशो विधृत्ये द १ हित। अथा ऽऽयुंः प्राणान्य्रजां पृशून् यजंमाने दधाति। सजातानंस्मा अभितो बहुलान्कंरोति। चितः स्थेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। भृगूंणामङ्गिरसां तपंसा तप्यध्वमित्यांह। देवतांनामेवैनांनि तपंसा तपति। तानि ततः स इस्थिते। यानि घर्मे कपालांन्युपचिन्वन्तिं वेधस् इति चतुंष्पदय्चां वि मुंश्रति। चतुंष्पादः पश्चः। पशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति॥५५॥

वर्त्यति दिवंमेवेतेनं दश्हित सम्भवंति तश् सङ्स्कृतमात्मानं द्वादंश सङ्स्थिते त्रीणि च॥—————[9]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इत्यांह् प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। सं वेपामीत्यांह। यथादेवतमेवनांनि संवंपति। समापो अद्भिरंग्मत समोषंधयो रसेनेत्यांह। आपो वा ओषंधीर्जिन्वन्ति। ओषंधयोऽपो जिन्वन्ति। अन्या वा एतासांमन्या जिन्वन्ति॥५६॥

तस्मदिवमाह। स॰ रेवतीर्जगंतीभिर्मध्रंमतीर्मध्रंमतीभिः सृज्यध्वमित्याह। आपो वै रेवतीः। पृशवो जगंतीः। ओषंधयो मध्रंमतीः। आप ओषंधीः पृशून्। तानेवास्मां एक्धा स्॰सृज्यं। मध्रंमतः करोति। अद्भः परि प्रजांताः स्थ समद्भः पृंच्यध्वमितिं पूर्याप्रांवयति। यथा सुवृष्ट इमामंनुविसृत्यं॥५७॥

आप् ओषंधीर्महयंन्ति। ताहगेव तत्। जनंयत्ये त्वा संयौमीत्यांह। प्रजा एवेतेनं दाधार। अग्नयें त्वाऽग्नीषोमांभ्यामित्यांह् व्यावृत्त्ये। मुखस्य शिरो-ऽसीत्यांह। युज्ञो वे मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्पुंरोडाशंः। तस्मादेवमांह॥५८॥

घुर्मोऽसि विश्वायुरित्यांह। विश्वंमेवायुर्यजंमाने दधाति। उरु प्रथस्वोरु ते युज्ञपंतिः प्रथतामित्यांह। यजंमानमेव प्रजयां पृश्वाभिः प्रथयति। त्वचं गृह्णीष्वेत्यांह। सर्वमेवैन्र् सर्तनुं करोति। अथाऽऽप आनीय परिमार्ष्टि। मार्स एव तत्त्वचं दधाति। तस्मौत्त्वचा मा्र्सं छुन्नम्। घुर्मो वा एषो-ऽशौन्तः॥५९॥

अर्धमासें ऽर्धमासे प्रवृंज्यते। यत्पुंरोडाशंः। स ईश्वरो यजंमान श्रुचा प्रदहंः। पर्यग्नि करोति। प्शुमेवैनंमकः। शान्त्या अप्रदाहाय। त्रिः पर्यग्नि करोति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथो रक्षंसामपंहत्यै। अन्तरित् रक्षोऽन्तरिता अरातय इत्याह॥६०॥

रक्षंसाम्नतर्हित्यै। पुरोडाशं वा अधिश्रित्र रक्षा ईस्य-जिघा १ सन्। दिवि नाको नामाग्नी रक्षोहा। स एवास्माद्रक्षा इस्यपाहन्। देवस्त्वां सिवता श्रंपयत्वित्याह। सुवितृप्रंसूत एवैन ई श्रपयति। वर्षिष्ठे अधि नाक इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्निस्तें तुनुवं माऽतिंधागित्याहा-ऽनंतिदाहाय। अग्नें हव्य॰ रंक्षुस्वेत्यांह गुप्त्यै॥६१॥

अविंदहन्तः श्रपयतेति वाचं विसृंजते। यज्ञमेव ह्वी इष्यंभिव्याहृत्य प्रतंनुते। पुरोरुचमविंदाहाय शृत्यें करोति। मुस्तिष्को वै पुरोडाशः। तं यन्नाभिं वासयैत्। आविर्मस्तिष्केः स्यात्। अभिवांसयति। तस्माद्गृहां मुस्तिष्केः। भरमनाऽभिवांसयति। तस्मान्मा इसेनास्थिं छन्नम्॥६२॥

वेदेनाभिवांसयित। तस्मात्केशैः शिरंश्छुन्नम्। अखंलिति-भावुको भवति। य एवं वेदं। पृशोर्वे प्रतिमा पुरोडाशः। स नायुजुष्कंमिभवास्यः। वृथेव स्यात्। ईश्वरा यजमानस्य पृशवः प्रमेतोः। सं ब्रह्मणा पृच्युस्वेत्यांह। प्राणा वै ब्रह्मं॥६३॥

प्राणाः प्शवंः। प्राणेरेव प्शून्थ्सम्पृणिक्ति। न प्रमायुंका भवन्ति। यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा पृशवः पुरीषम्। यदेवमंभिवासयंति। यजंमानमेव प्रजयां पृशुभिः समर्धयति। देवा वै ह्विर्भृत्वाऽब्रुंवन्। कस्मिन्निदं म्रंक्ष्यामह् इतिं। सौऽग्निरंब्रवीत्॥६४॥

मियं तुनूः सं निधंध्वम्। अहं वस्तं जनियध्यामि। यस्मिन्मुक्ष्यध्व इतिं। ते देवा अग्नौ तुनूः सन्न्यंदधत। तस्मादाहुः। अग्निः सर्वा देवता इतिं। सोऽङ्गारेणाऽऽपः। अभ्यंपातयत्। ततं एकतोऽजायत। स द्वितीयंमुभ्यं-

पातयत्॥६५॥

ततौं द्वितोंऽजायत। स तृतीयंम्भ्यंपातयत्। ततिस्तितों-ऽजायत। यद्द्योऽजांयन्त। तदाप्यानांमाप्यत्वम्। यदात्मभ्योऽजांयन्त। तदात्म्यानांमात्म्यत्वम्। ते देवा आप्येष्वंमृजत। आप्या अंमृजत् सूर्यांभ्युदिते। सूर्यांभ्युदितः सूर्यांभिनिमुक्ते॥६६॥

सूर्याभिनिमुक्तः कुन्खिनि। कुन्खी श्यावदंति। श्यावदंत्रग्रदिधिषौ। अग्रदिधिषुः परिवित्ते। परिवित्तो वीर्हणि। वीर्हा ब्रह्महणि। तद्बंह्महणुं नात्यंच्यवत। अन्तर्वेदि निनयत्यवंरुद्धौ। उल्मुंकेनाभि गृह्णाति शृत्त्वायं। शृतकांमा इव हि देवाः॥६७॥

अन्या जिन्वन्त्यनु विमुत्येवमाहाशाँन्त आहु गुस्यैं छुन्नं ब्रह्माँब्रवीद्वितीयंमुभ्यंपातयृथ्सूर्यांभिनिम्रुक्ते देवाः॥======[८]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्व इति स्प्यमादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांह यत्यै। आदंद इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। सहस्रंभृष्टिः शततेजा इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। वायुरंसि तिग्मतेजा इत्यांह। तेजो व वायुः॥६८॥ तेजी एवास्मिन्दधाति। विषादे नामांसर आसीत।

तेजं पुवास्मिन्दधाति। विषाद्वै नामांसुर आंसीत्। सोंऽबिभेत्। युज्ञेनं मा देवा अभिभविष्यन्तीतिं। स पृथिवीमुभ्यंवमीत्। सा मेध्याऽभवत्। अथो यदिन्द्रों वृत्रमहर्न्। तस्य लोहितं पृथिवीमनु व्यंधावत्। सा मेध्याऽभंवत्। पृथिवि देवयज्ननीत्यांह॥६९॥

मध्यांमेवेनां देवयर्जनीं करोति। ओषंध्यास्ते मूलं मा हिर्श्सिष्मित्यांह। ओषंधीनामहिर्श्सायै। ब्रजं गंच्छ गोस्थानमित्यांह। छन्दार्श्सि वे ब्रजो गोस्थानंः। छन्दार्श्स्येवास्में ब्रजं गोस्थानं करोति। वर्षंतु ते द्यौरित्यांह। वृष्टिर्वे द्यौः। वृष्टिमेवावं रुन्धे। ब्रधान देव सवितः पर्मस्यां परावतीत्यांह॥७०॥

द्वौ वाव पुरुषो। यं चैव द्वेष्टिं। यश्चैनं द्वेष्टिं। तावुभो बंध्राति पर्मस्यां परावितं शतेन पाशैंः। योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मस्तमतो मा मौगित्याहानिम्नुत्त्वै। अररुर्वे नामांसुर आंसीत्। स पृथिव्यामुपंस्नुप्तोऽशयत्। तं देवा अपंहतो-ऽररुंः पृथिव्या इति पृथिव्या अपाँघ्नन्। भ्रातृंव्यो वा अररुंः। अपंहतोऽररुंः पृथिव्या इति यदाहं॥७१॥

भ्रातृं व्यमेव पृंथिव्या अपहन्ति। तेंऽमन्यन्त। दिवं वा अयमितः पतिष्यतीति। तम्ररुं स्ते दिवं माऽस्कानिति दिवः पर्यं बाधन्त। भ्रातृं व्यो वा अरुं । अरुं स्ते दिवं मा स्कानिति यदाहं। भ्रातृं व्यमेव दिवः परिं बाधते। स्तम्बयु जुर्हं रित। पृथिव्या एव भ्रातृं व्यमपहन्ति। द्वितीय हरित॥७२॥

अन्तरिक्षादेवैनुमपंहन्ति। तृतीय र हरति। दिव

एवैन्मपंहन्ति। तूष्णीं चंतुर्थः हंरति। अपंरिमितादेवैन्मपं-हन्ति। असुराणां वा इयमग्रं आसीत्। यावदासीनः परापश्यंति। तावंद्देवानांम्। ते देवा अंब्रुवन्। अस्त्वेव नोऽस्यामपीति॥७३॥

क्यंत्रो दास्यथेतिं। यावंथ्स्वयं पंरिगृह्णीथेतिं। ते वसंवस्त्वेतिं दक्षिणतः पर्यगृह्णन्। रुद्रास्त्वेतिं पश्चात्। आदित्यास्त्वेत्यंत्तर्तः। तेंऽग्निना प्राञ्चोऽजयन्। वसंभिदिक्षिणा। रुद्रैः प्रत्यश्चेः। आदित्येरुदंश्चः। यस्यैवं विदुषो वेदिं परिगृह्णन्ति॥७४॥

भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंत्यो भवति। देवस्यं सिवृतुः स्व इत्यांह् प्रसूत्ये। कर्म कृण्वन्ति वेधस् इत्यांह। इषितः हि कर्म क्रियतें। पृथित्ये मेध्यं चामेध्यं च व्युदंक्रामताम्। प्राचीनंमुदीचीनं मेध्यम्। प्रतीचीनं दक्षिणाऽमेध्यम्। प्राचीमुदीचीं प्रवृणां करोति। मेध्यांमेवैनां देवयजंनीं करोति॥७५॥

प्राश्चौं वेद्यश्सावुन्नयिति। आहुवनीयस्य परिगृहीत्यै। प्रतीची श्रोणीं। गार्हपत्यस्य परिगृहीत्यै। अथों मिथुनत्वायं। उद्धन्ति। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदपंहन्ति। उद्धन्ति। तस्मादोषंधयः परांभवन्ति॥७६॥

मूलंं छिनत्ति। भ्रातृंव्यस्यैव मूलंं छिनत्ति। मूलं वा

अंतितिष्ठद्रक्षाङ्स्यनूत्पिंपते। यद्धस्तेन छिन्द्यात्। कुन्खिनीः प्रजाः स्युः। स्फोनं छिनत्ति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षाङ्स्यपंहन्ति। पितृदेवत्याऽतिंखाता। इयंतीं खनति॥७७॥

प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मिताम्। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां चंतुरङ्गुलेऽन्वंविन्दन्। तस्माँचतुरङ्गुलं खेयाँ। चतुरङ्गुलं खंनति। चतुरङ्गुले ह्योषंधयः प्रतितिष्ठंन्ति। आ प्रंतिष्ठायै खनति। यजमानमेव प्रंतिष्ठां गंमयति। दक्षिणतो वर्षीयसीं करोति। देवयजनस्यैव रूपमंकः॥७८॥

पुरीषवतीं करोति। प्रजा वै प्रावः पुरीषम्। प्रजयैवैनं प्रािमः पुरीषवन्तं करोति। उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। प्रतावती वै पृथिवी। यावती वेदिः। तस्यां प्रतावत एव भ्रातृंव्यं निर्भज्यं। आत्मन् उत्तरं परिग्राहं परिगृह्णाति। ऋतमंस्यृत्सदंनमस्यृत्श्रीर्सीत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥७९॥

कूरिमंव वा एतत्कंरोति। यद्वेदिं क्रोति। धा असि स्वधा असीतिं योयुप्यते शान्त्यैं। उर्वी चासि वस्वीं चासीत्यांह। उर्वीमेवैनां वस्वीं करोति। पुरा कूरस्यं विसृपों विरिष्शिन्नित्यांह मेध्यत्वायं। उदादायं पृथिवीं जीरदांनुर्यामेरंयं चन्द्रमंसि स्वधाभिरित्यांह। यदेवास्यां अमेध्यम्। तदंपहत्यं। मेध्यां देवयजंनीं कृत्वा॥८०॥

यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यम्। तद्स्यामेरंयति। तां धीरांसो अनुदृश्यं यजन्त इत्याहानुंख्यात्यै। प्रोक्षंणीरा सांदय। इध्माब्र्हिरुपंसादय। स्रुवं च स्रुचंश्च सम्मृंहि। पत्नी १ सन्नंह्य। आज्येंनोदेहीत्यांहानुपूर्वतांयै। प्रोक्षंणीरा सांदयति। आपो वै रंक्षोष्नीः॥८१॥

रक्षंसामपंहत्यै। स्फास्य वर्त्मंन्थ्सादयति। युज्ञस्य सन्तंत्यै। उवाच हासितो दैवलः। पृतावंतीर्वा अमुष्मिं लोक आपं आसन्। यावंतीः प्रोक्षंणीरिति। तस्मां द्वह्वीरासाद्याः। स्फामुदस्यन्। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। शुचैवैनंमपंयति॥८२॥

वै बायुराह परावतीत्याहाहं द्वितीयर् हर्तीतिं परिगृह्णन्तिं देवयर्जनीं करोति भवन्ति खनत्यकरेतत्कृत्वा

रंक्षोुघ्रीरंपंयति॥=

-[3]

वज्रो वै स्फाः। यद्नवश्चं धारयेत्। वज्रेंऽध्वर्युः क्षंण्वीत। पुरस्तांत्तिर्यश्चं धारयति। वज्रो वै स्फाः। वज्रेणैव यज्ञस्यं दक्षिणतो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। अग्निभ्यां प्राचंश्च प्रतीचंश्च। स्फोनोदींचश्चाधराचंश्च। स्फोन् वा एष वज्रेणास्य पाप्मानं भ्रातृंव्यमपहत्यं। उत्करेऽधि प्रवृंश्चति॥८३॥

यथोपधार्यं वृश्चन्त्येवम्। हस्ताववं नेनिक्ते। आत्मानंमेव पंवयते। स्फ्यं प्रक्षांलयति मेध्यत्वायं। अथो पाप्मनं एव भ्रातृंव्यस्य न्यङ्गं छिनित्ते। इध्माब्र्हिरुपंसादयित् युक्त्यै। यज्ञस्यं मिथुन्त्वायं। अथो पुरोरुचंमेवैतां दंधाति। उत्तरस्य कर्मणोऽनुंख्यात्यै। न पुरस्तांत्प्रत्यगुपंसादयेत्॥८४॥
यत्पुरस्तांत्प्रत्यगुपसादयेत्। अन्यत्रांऽऽहृतिपथादिध्मं
प्रतिपादयेत्। प्रजा वै बर्हिः। अपंराध्रयाद्वर्हिषां प्रजानां
प्रजनंनम्। पृश्चात्प्रागुपंसादयित। आहुतिपथेनेध्मं प्रतिपादयित। सम्प्रत्येव बर्हिषां प्रजानां प्रजनंनम्पैति।
दक्षिणमिध्मम्। उत्तरं बर्हिः। आत्मा वा इध्मः। प्रजा
बर्हिः। प्रजा ह्यांत्मन् उत्तरेतरा तीर्थे। ततो मेधंमुपनीयं।

वृश्चित् साद्येदिध्मः पश्चं च॥————[१०]

यथादेवतमेवैन्त्प्रतिष्ठापयति। प्रतिं तिष्ठति

तृतीर्यस्यां देवस्यांश्वपुर्शुं यो वै पूँर्वेद्युः कर्मणे वामिन्द्रौं वृत्रमंहुन्थ्सौंऽपोऽवधूत्ं धृष्टिंदेवस्येत्यांहु सं वेपामि देवस्य स्फामा देदे वज्रो वै स्फाो दर्श॥१०॥

तृतीर्यस्यां युज्ञस्यानंतिरेकाय पुवित्रंवत्यध्वयुँ चांधिषवंणमस्युन्तरिक्ष एव रक्षंसामुन्तरिहंत्ये द्वौ वाव पुरुंषो यद्दश्चन्द्रमंसि मेध्यं पञ्चार्शीतिः॥८५॥

तृतीयंस्यां यजमानः॥

पश्भिर्यजंमानः॥८५॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके द्वितीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः॥

प्रत्युष्ट्रं रक्षः प्रत्युष्ट्यं अरातयं इत्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। अग्नेर्वस्तेजिष्ठेन तेजंसा निष्टंपामीत्यांह मेध्यत्वायं। स्रुचः सम्माष्टिं। स्रुवमग्रें। पुमार्ंसमेवाभ्यः सङ्श्यंति मिथुन्त्वायं। अथं जुहूम्। अथोप्भृतम्। अथं ध्रुवाम्। असौ वै जुहूः॥१॥

अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। इमे वै लोकाः स्रुचैः। वृष्टिः सम्मार्जनानि। वृष्टिवी इमाँ लोकानंनुपूर्वं केल्पयित। ते ततः क्रुप्ताः समेधन्ते। समेधन्तेऽस्मा इमे लोकाः प्रजयां पृश्मिः। य एवं वेदे। यदि कामयेत् वर्षुकः पूर्जन्यः स्यादिति। अग्रतः सम्मृज्यात्॥२॥

वृष्टिंमेव नि यंच्छति। अवाचीनांग्रा हि वृष्टिं। यदिं कामयेतावंर्षुकः स्यादितिं। मूलतः सम्मृंज्यात्। वृष्टिंमेवोद्यंच्छति। तदु वा आहुः। अग्रत एवोपरिष्टाथ्सम्मृं-ज्यात्। मूलतोऽधस्तांत्। तदंनुपूर्वं कंल्पते। वर्षुंको भवतीतिं॥३॥

प्राचींमभ्याकारम्। अग्रैरन्तर्तः। एविमव् ह्यन्नेम्ह्यते। अथो अग्राद्वा ओषंधीनामूर्जं प्रजा उपंजीवन्ति। ऊर्ज एवान्नाद्यस्यावंरुद्धे। अधस्तांत्प्रतीचींम्। दण्डमुत्तम्तः। मूलंन् मूलं प्रतिष्ठित्ये। तस्मांदर्बो प्राञ्च्यपरिष्टाल्लोमानि।

प्रत्यश्चधस्तांत्॥४॥

सुग्धेषा। प्राणो वै स्रुवः। जुहूर्दक्षिणो हस्तः। उपभृथ्सव्यः। आत्मा ध्रुवा। अन्न सम्मार्जनानि। मुख्तो वै प्राणोऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नं प्रविश्यं। बाह्यतस्तनुव श्रिभयति। तस्माध्स्रुवमेवाग्रे सम्मार्षि। मुख्तो हि प्राणो-ऽपानो भूत्वा। आत्मानमन्नमाविश्वति। तौ प्राणापानो। अर्व्यर्धुकः प्राणापानाभ्यां भवति। य एवं वेदं॥५॥

जुहूर्मृज्याद्भवतीतिं प्रत्यभ्यधस्तौन्मार्ष्ट् पश्चं च॥🕳

[8]

दिवः शिल्पमवंततम्। पृथिव्याः क्किभं श्रितम्। तेनं वयः सहस्रंवल्शेन। सपत्नं नाशयामसि स्वाहेति स्रुख्सम्मार्जनान्यग्रौ प्र हंरति। आपो वै दर्भाः। रूपमेवैषांमेतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। अनुष्टुभूर्चा। आनुष्टुभः प्रजापंतिः। प्राजापत्यो वेदः। वेदस्याग्रई स्रुख्सम्मार्जनानि॥६॥

स्वेनैवैनांनि छन्दंसा। स्वयां देवतंया समर्धयति। अथो ऋग्वाव योषां। दुर्भो वृषां। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजननाय। प्रजायते प्रजयां पृशुभिर्यजमानः। तान्येके वृथैवापांस्यन्ति। तत्तथा न कार्यम्। आरंब्यस्य य्जियंस्य कर्मणः सविंदोहः॥७॥

यद्यंनानि पुशवोंऽभि तिष्ठंयुः। न तत्पुशुभ्यः कम्।

अद्भिर्मार्जियित्वोत्करे न्यंस्येत्। यद्वै यज्ञियंस्य कर्मणो-ऽन्यत्राऽऽहुंतीभ्यः सन्तिष्ठंते। उत्करो वाव तस्यं प्रतिष्ठा। एता हि तस्मैं प्रतिष्ठां देवाः समभंरन्। यद्द्भिर्मार्जयति। तेनं शान्तम्। यदुंत्करे न्यस्यति। प्रतिष्ठामेवैनांनि तद्गंमयति॥८॥

प्रति तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजंमानः। अथौं स्तम्बस्य वा पृतद्रूपम्। यथ्स्रुंख्सम्मार्जनानि। स्तम्बशो वा ओषंधयः। तासां जरत्कक्षे पृशवो न रंमन्ते। अप्रियो ह्येषां जरत्कक्षः। यावंदप्रियो ह वे जंरत्कक्षः पंशूनाम्। तावंदप्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्यन्यत्राग्नेर्दधंति। नुवदाव्यांसु वा ओषंधीषु पृशवो रमन्ते॥९॥

नृवदावो ह्येषां प्रियः। यावंत्प्रियो हु वै नंवदावः पंशूनाम्। तावंत्प्रियः पशूनां भंवति। यस्यैतान्युग्नौ प्रहरंन्ति। तस्मदितान्युग्नावेव प्रहरेत्। यत्रस्मिन्थ्सम्मृज्यात्। पृशूनां धृत्यै। यो भूतानामधिपतिः। रुद्रस्तंन्तिचरो वृषां। पृशूनस्माकं मा हि सीः। पृतदंस्तु हुतं तव स्वाहेत्यंग्निस्ममार्जनान्युग्नौ प्रहरित। पृषा वा पृतेषां योनिः। पृषा प्रतिष्ठा। स्वामेवैनांनि योनिम्। स्वां प्रतिष्ठां गंमयति। प्रतिं तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥१०॥

वेदस्याग्रई स्रुख्सुम्मार्जनानि विदोहो गंमयति पुशवों रमन्ते हि॰सीः षद चं॥————[२]

अयंज्ञो वा एषः। योऽप्रक्षीकः। न प्रजाः प्रजायेरन्। पत्र्यन्वास्ते। यज्ञमेवाकः। प्रजानां प्रजननाय। यत्तिष्ठंन्ती स्त्रह्येत। प्रियं ज्ञाति १ रुन्ध्यात्। आसीना सन्नह्यते। आसीना ह्येषा वीर्यं करोति॥११॥

यत्पश्चात्प्राच्यन्वासीत। अनयां समदंन्दधीत। देवानां पित्रिया समदंन्दधीत। देशाँदक्षिणत उदीच्यन्वाँस्ते। आत्मनों गोपीथायं। आशासांना सौमन्सिमत्यांह। मेध्यांमेवैनां केवंलीं कृत्वा। आशिषा समर्धयिति। अग्नेरनुं- व्रता भूत्वा सन्नंह्ये सुकृताय किनत्यांह। एतद्वे पित्रिये व्रतोपनयंनम्॥१२॥

तेनैवैनां व्रतमुपंनयति। तस्मांदाहुः। यश्चैवं वेद् यश्च न। योक्रमेव युंते। यम्नवास्ते। तस्यामुष्मिं ह्योके भंवतीति योक्रेण। यद्योक्रम्। स योगः। यदास्ते। स क्षेमः॥१३॥

योगक्षेमस्य क्र्रस्यै। युक्तं क्रियाता आशीः कामें युज्याता इतिं। आशिषः समृद्धे। ग्रन्थिं ग्रंश्नाति। आशिषं पुवास्यां परिं गृह्णाति। पुमान् वै ग्रन्थिः। स्त्री पत्नीं। तन्मिथुनम्। मिथुनमेवास्य तद्यज्ञे करोति प्रजननाय। प्र जांयते प्रजयां पशुभिर्यजंमानः॥१४॥

अथो अर्धो वा एष आत्मनेः। यत्पर्नी। यज्ञस्य धृत्या अशिथिलं भावाय। सुप्रजसंस्त्वा वयर सुपर्नीरुपं सेदिमेत्यांह। यज्ञमेव तिन्मिथुनीकरोति। ऊनेऽतिरिक्तं धीयाता इति प्रजाँत्यै। महीनां पयोऽस्योषधीनाः रस् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। तस्य तेऽक्षीयमाणस्य निर्वपामि देवयुज्याया इत्यांह। आ-मेवैतामा शाँस्ते॥१५॥

कुरोतिं व्रतोपनयंनुं क्षेमो यर्जमानः शास्ते॥

-[3]

घृतं च वै मध्रं च प्रजापंतिरासीत्। यतो मध्यांसीत्। ततः प्रजा अंसृजत। तस्मान्मध्रंषि प्रजनंनिमवास्ति। तस्मान्मध्रंषा न प्रचंरन्ति। यातयांम् हि। आज्येन् प्रचंरन्ति। यज्ञो वा आज्यम्। यज्ञेनैव यज्ञं प्रचंरन्त्ययांतयामत्वाय। पत्न्यवेंक्षते॥१६॥

मिथुन्त्वाय प्रजांत्ये। यद्वै पत्नीं युज्ञस्यं क्रोतिं। मिथुनं तत्। अथो पत्निया एवेष युज्ञस्यांन्वारम्भोऽनंवच्छित्त्ये। अमेध्यं वा एतत्करोति। यत्पत्य्ववेक्षंते। गार्हंपत्येऽधिं श्रयति मेध्यत्वायं। आहुवनीयंम्भ्युद्रवति। युज्ञस्य सन्तंत्यै। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह॥१७॥

तेजो वा अग्निः। तेज आज्यम्। तेजंसैव तेजः समर्थयित। अग्निस्ते तेजो मा विनैदित्याहाहि स्सायै। स्प्यस्य वर्त्मन्थ्सादयित। यज्ञस्य सन्तंत्यै। अग्नेर्जिह्वाऽसिं सुभूर्देवानामित्यांह। यथायजुरेवेतत्। धाम्नेधाम्ने देवेभ्यो यज्ञंषेयजुषे भ्वेत्यांह। आम्वेतामा शास्ते॥१८॥

तद्वा अतः प्वित्रांभ्यामेवोत्पंनाति। यजंमानो वा आज्यम्। प्राणापानौ प्वित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। पुन्राहारम्। एविमेव हि प्राणापानौ स्श्ररंतः। शुक्रमंसि ज्योतिरसि तेजोऽसीत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमानं व्याचंष्टे। त्रिर्यज्ञंषा। त्रयं इमे लोकाः॥१९॥

पुषां लोकानामार्स्यै। त्रिः। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। अथाऽऽज्यंवतीभ्यामुपः। रूपमेवासांमेतद्वर्णं दधाति। अपि वा उताऽऽहुंः। यथां हु वे योषां सुवर्ण्ष्ट्रं हिरंण्यं पेश्नलं बिभ्रंती रूपाण्यास्तैं। एवमेता एतर्हीतिं। आपो वे सर्वा देवताः॥२०॥

पुषा हि विश्वेषां देवानां तृनः। यदाज्यम्। तृत्रोभयोमीमाक्सा। जामि स्यात्। यद्यजुषाऽऽज्यं यज्ञेषाऽप उत्पृनीयात्। छन्दंसाऽप उत्पृनात्यजामित्वाय। अथो मिथुनत्वायं। सावित्रियर्चा। सवितृप्रंसूतं मे कर्मासदितिं। सवितृप्रंसूतमेवास्य कर्म भवति। पच्छो गांयत्रिया त्रिष्णमृद्धत्वायं। अद्भिरेवौषंधीः सं नयति। ओषंधीभिः पृशून्। पृशुभिर्यज्ञंमानम्। शुक्रं त्वां शुक्रायां ज्योतिंस्त्वा ज्योतिंष्यूर्चिस्त्वाऽर्चिषीत्याह सर्वत्वायं। पर्यांध्या अनंन्तरायाय॥२१॥

[8]

देवासुराः संयंत्ता आसन्। स एतिमन्द्र आज्यंस्याव-काशमंपश्यत्। तेनावैंक्षत्। ततो देवा अभवन्। पराऽसुंराः। य एवं विद्वानाज्यंम्वेक्षंते। भवंत्यात्मनां। परांऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यदाज्येनान्यानि ह्वी इष्यंभिघारयंति॥२२॥

अथ् केनाऽऽज्यमितिं। स्त्येनेतिं ब्रूयात्। चक्षुर्वे स्त्यम्। स्त्येनैवैनंद्भि घारयति। ईश्वरो वा एषाँऽन्धो भविंतोः। यश्चक्षुषाऽऽज्यंम्वेक्षंते। निमील्यावेंक्षेत। दाधारात्मश्चक्षुंः। अभ्याज्यं घारयति। आज्यं गृह्णाति॥२३॥

छन्दा रेस् वा आज्यम्। छन्दा रेस्येव प्रीणाति। चृतुर्जुह्वां गृंह्णाति। चतुंष्पादः पृशवंः। पृशूनेवावं रुन्थे। अष्टावंपभृति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रः प्राणः। प्राणमेव पृशुषं दधाति। चतुर्भुवायाम्॥२४॥

चतुंष्पादः प्शवंः। पृशुष्वेवोपरिष्टात्प्रतिं तिष्ठति। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। चतुर्जुह्वां गृह्णन्भूयो गृह्णीयात्। अष्टावुंपभृतिं गृह्णन्कनीयः। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। गौर्वे स्रुचंः। चतुर्जुह्वां गृह्णाति। तस्माचतुंष्पदी॥२५॥

अष्टावंपभृतिं। तस्मांद्रष्टाशंफा। चृतुर्धुवायांम्। तस्माचतुः स्तना। गामेव तथ्सङ्स्कंरोति। साऽस्मै सङ्स्कृतेषुमूर्जं दुहे। यञ्जुह्वां गृह्णातिं। प्रयाजेभ्यस्तत्। यदुंपभृतिं। प्रयाजानूयाजेभ्यस्तत्। सर्वस्मै वा एतद्यज्ञायं गृह्यते। यद्भुवायामाज्यम्॥२६॥

आपों देवीरग्रेपुवो अग्रेगुव इत्यांह। रूपमेवासांमेतन्मंहि-मानं व्याचेष्टे। अग्रं इमं यज्ञं नंयताग्रं यज्ञपंतिमित्यांह। अग्रं एव यज्ञं नंयन्ति। अग्रं यज्ञपंतिम्। युष्मानिन्द्रों-ऽवृणीत वृत्रत्यें यूयमिन्द्रंमवृणीध्वं वृत्रत्यं इत्यांह। वृत्र हं हिन्ष्यित्रिन्द्र आपों वव्रे। आपो हेन्द्रं विव्रेर। संज्ञामेवासांमेतथ्सामानं व्याचेष्टे। प्रोक्षिताः स्थेत्यांह॥२७॥

तेनाऽऽपः प्रोक्षिताः। अग्निर्देवेभ्यो निलायत। कृष्णो रूपं कृत्वा। स वनस्पतीन्प्राविशत्। कृष्णो ऽस्याखरेष्ठौ ऽग्नये त्वा स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। अथो अग्नेरेव मेधमवं रुन्थे। वेदिरिस बर्हिषे त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा व बर्हिः। पृथिवी वेदिः॥२८॥

प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयित। बर्हिरेसि सुग्भ्यस्त्वा स्वाहेत्यांह। प्रजा वै बर्हिः। यजमानः सुचंः। यजमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयित। दिवे त्वाऽन्तिरक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेतिं बर्हिरासाद्य प्रोक्षंति। एभ्य एवैनं ल्लोकेभ्यः प्रोक्षंति। अथ ततः सह सुचा पुरस्तांत्प्रत्यश्चं ग्रन्थिं प्रत्युंक्षिति। प्रजा वै बर्हिः। यथा सूत्यै काल आपंः पुरस्ताद्यन्तिं॥२९॥

ताहगेव तत्। स्वधा पितृभ्य इत्यांह। स्वधाकारो हि पितृणाम्। ऊर्भव बर्हिषद्भ्य इति दक्षिणायै श्रोणेरोत्तंरस्यै निनंयति सन्तंत्यै। मासा वै पितरों बर्हिषदंः। मासांनेव प्रीणाति। मासा वा ओषंधीर्वर्धयंन्ति। मासाः पचन्ति समृद्धै। अनंतिस्कन्दन् ह पूर्जन्यों वर्षति। यत्रैतदेवं क्रियतें॥३०॥

ऊर्जा पृथिवीं गंच्छुतेत्यांह। पृथिव्यामेवोर्जं दधाति। तस्मांत्पृथिव्या ऊर्जा भुंअते। ग्रन्थिं वि स्रश्ंसयित। प्रजनयत्येव तत्। ऊर्ध्वं प्राश्चमुद्गृढं प्रत्यश्चमा यंच्छति। तस्मांत्प्राचीन् १ रेतों धीयते। प्रतीचींः प्रजा जांयन्ते। विष्णोः स्तूपोऽसीत्याह। यज्ञो वै विष्णुं:॥३१॥

यज्ञस्य धृत्यै। पुरस्तांत्प्रस्तरं गृह्णाति। मुख्यंमेवेनं करोति। इयंन्तं गृह्णाति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। यज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयंन्तं गृह्णाति। पृतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥३२॥

अपंरिमितं गृह्णाति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। तस्मिन्पवित्रे अपि सृजति। यजंमानो वै प्रस्तरः। प्राणापानौ पवित्रें। यजंमान एव प्राणापानौ दंधाति। ऊर्णांम्रदसं त्वा स्तृणामीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। स्वास्थं देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं एवैनंथ्स्वासस्थं करोति॥३३॥ ब्र्हिः स्तृंणाति। प्रजा वै ब्र्हिः। पृथिवी वेदिः। प्रजा एव पृथिव्यां प्रतिष्ठापयति। अनंतिदृश्वः स्तृणाति। प्रजयैवेनं पृश्मिरनंतिदृश्वं करोति। धारयंन्प्रस्तरं परिधीन्परि दधाति। यजमानो वै प्रस्तरः। यजमान एव तथ्स्वयं परिधीन्परि दधाति। गृन्धुर्वोऽसि विश्वावंसुरित्यांह॥३४॥

विश्वमेवायुर्यजंमाने दधाति। इन्द्रंस्य बाहुरंसि दक्षिण इत्यांह। इन्द्रियमेव यजंमाने दधाति। मित्रावरुंणौ त्वोत्तर्तः परिधत्तामित्यांह। प्राणापानौ मित्रावरुंणौ। प्राणापानावेवास्मिन्दधाति। सूर्यस्ता पुरस्तांत् पात्वित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै। कस्यांश्चिद्भिशंस्त्या इत्यांह। अपंरिमितादेवैनंं पाति॥३५॥

वीतिहाँत्रं त्वा कव इत्यांह। अग्निमेव होत्रेण् समर्थयति। द्युमन्त्र समिधीमहीत्यांह समिद्धे। अग्ने बृहन्तंमध्वर इत्यांह वृद्धैं। विशो युत्रे स्थ इत्यांह। विशां यत्यैं। उदीचीनाँग्ने नि दंधाति प्रतिष्ठित्ये। वसूंनार रुद्राणांमादित्यानार सदिस सीदेत्यांह। देवतांनामेव सदेने प्रस्तुर सांदयति। जुहूरंसि घृताची नाम्नेत्यांह॥३६॥

असौ वै जुहूः। अन्तरिक्षमुप्भृत्। पृथिवी ध्रुवा। तासामेतदेव प्रियं नामं। यद्घृताचीतिं। यद्घृताचीत्याहं। प्रियेणैवैना नाम्नां सादयति। एता अंसदन्थ्सुकृतस्यं लोक इत्यांह। सृत्यं वै सुंकृतस्यं लोकः। सृत्य एवैनाः सुकृतस्यं लोके सांदयित। ता विष्णो पाहीत्यांह। युज्ञो वै विष्णुंः। युज्ञस्य धृत्यैं। पाहि युज्ञं पाहि युज्ञपंतिं पाहि मां यंज्ञनियमित्यांह। युज्ञाय यजंमानायाऽऽत्मनें। तेभ्यं पुवाऽऽशिषुमाशास्तेऽनांत्ये॥३७॥

स्थेत्यांह पृथिवी वेदिर्यन्ति क्रियते वीर्णुर्वीर्यसम्मितं करोत्याह पाति नाम्नेत्यांह लोके सांदयित षट चं॥ lacksquare

अग्निना वै होत्रां। देवा असुंरान्भ्यंभवन्। अग्नयं सिम्ध्यमानायानुंब्रूहीत्यांह् भ्रातृंव्याऽभिभूत्ये। एकंविश्याति-मिध्मदारूणिं भवन्ति। एकविश्यो वै पुरुषः। पुरुष्ट्याऽऽस्यें। पश्चंदशेध्मदा्रूण्यभ्या दंधाति। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रंयः। अर्धमास्याः संवथ्सर आप्यते। त्रीन्पंरिधीन्परिं दधाति॥३८॥

ऊर्ध्वे स्मिधावा दंधाति। अन्याजेभ्यंः स्मिध्मितं शिनष्टि। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनोपं वाजयित। प्राजापत्यो वै वेदः। प्राजापत्यः प्राणः। यजमान आहवनीयंः। यजमान एव प्राणं दंधाति॥३९॥

त्रिरुपं वाजयित। त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। वेदेनोप्यत्यं स्रुवेणं प्राजापत्यमाघारमा घारयित। यज्ञो वै प्रजापंतिः। यज्ञमेव प्रजापंतिं मुख्त आरंभते। अथौं प्रजापंतिः सर्वा देवताः। सर्वा एव देवताः प्रीणाति। अग्निमंग्नीत्रिस्तिः सं मृह्वीत्यांह। त्र्यांवृद्धि यज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। परिधीन्थ्सं माँष्टिं। पुनात्येवैनान्।

त्रिस्त्रिः सं माँष्टिं। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वाये। अथों एते वै देवाश्वाः। देवाश्वानेव तथ्सं माँष्टिं। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्ट्यै। आसीनोऽन्यमाघारमा घारयति॥४१॥

तिष्ठंत्र्न्यम्। यथाऽनों वा रथंं वा युआत्। एवमेव तदंध्वर्युर्यज्ञं युनिक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्याभ्यूँढ्यै। वहन्त्येनं ग्राम्याः पृशवंः। य एवं वेदं। भुवनमिस वि प्रथस्वेत्यांह। यज्ञो वे भुवनम्। यज्ञ एव यजमानं प्रजयां पृश्भिः प्रथयति। अग्ने यष्टरिदं नम् इत्यांह॥४२॥

अग्निर्वे देवानां यष्टां। य एव देवानां यष्टां। तस्मां एव नमंस्करोति। जुह्नेह्यग्निस्त्वां ह्वयति देवयुज्याया उपंभृदेहिं देवस्त्वां सिवृता ह्वयति देवयुज्याया इत्याह। आग्नेयी वै जुहूः। सावित्र्युंपभृत्। ताभ्यांमेवेने प्रसूत् आदंत्ते। अग्नांविष्णू मा वामवं क्रमिष्मित्यांह। अग्निः पुरस्तांत्। विष्णुंर्य्ज्ञः पश्चात्॥४३॥

ताभ्यांमेव प्रतिप्रोच्यात्या ऋांमित। विजिहाथां मा मा सन्तांप्तमित्याहाहि रेसायै। लोकं में लोककृतौ कृणुतमित्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। विष्णोः स्थानंमसीत्यांह। यज्ञो वै विष्णुंः। एतत्खलु वै देवानामपंराजितमायतंनम्। यद्यज्ञः। देवानांमेवापंराजित आयतंने तिष्ठति। इत इन्द्रों अकृणोद्वीर्याणीत्यांह॥४४॥

इन्द्रियमेव यर्जमाने दधाति। सुमारभ्योर्ध्वो अध्वरो

दिविस्पृश्मित्यांह् वृद्धौ। आघारमांघार्यमांणमनुं समारभ्यं। एतस्मिन्काले देवाः सुंवर्गं लोकमांयन्। साक्षादेव यजमानः सुवर्गं लोकमेति। अथो समृद्धेनैव यज्ञेन यजमानः सुवर्गं लोकमेति। अहुंतो यज्ञो यज्ञपतिरित्याहानांत्र्यै। इन्द्रांवान्थ्स्वाहेत्यांह। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। बृहद्भा इत्यांह॥४५॥

सुवर्गो वै लोको बृहद्भाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यै। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भ्रातृव्यदेवत्योपभृत्। प्राण आंघारः। यथ्म ईस्पर्शयेत्। भ्रातृंव्येऽस्य प्राणं दंध्यात्। अस ईस्पर्शयन्नत्या क्रांमति। यजमान एव प्राणं दंधाति। पाहि माँऽग्ने दुश्चंरितादा मा सुचंरिते भुजेत्यांह॥४६॥

अग्निर्वाव प्वित्रम्। वृज्ञिनमनृतं दुश्चेरितम्। ऋजुक्रमं स्त्य स्यंरितम्। अग्निरेवैनं वृज्ञिनादनृताद्दश्चेरितात्पाति। ऋजुक्रमें सत्ये सुचरिते भजति। तस्मदिवमा शांस्ते। आत्मनों गोपीथायं। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यदांघारः। आत्मा ध्रुवा॥४७॥

आघारमाघार्यं ध्रुवा र समंनक्ति। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिरः प्रति दधाति। द्विः समंनक्ति। द्वौ हि प्रांणापानौ। तदांहुः। त्रिरेव समंभ्यात्। त्रिधांतु हि शिर् इतिं। शिरं इवैतद्यज्ञस्यं। अथो त्रयो वै प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। मुखस्य शिरोऽसि सभ्योतिंषा ज्योतिंरङ्कामित्यांह। ज्योतिंरेवास्मां

उपरिष्टाद्वधाति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै॥४८॥

परिंदधाति प्राणं दंधाति हि युज्ञो घांरयति नम् इत्यांह पृक्षाद्वीर्याणीत्यांहु भा इत्यांह भुजेत्यांह ध्रुवैवास्मिन्दधाति

धिष्णिया वा एते न्युंप्यन्ते। यद्घ्रह्मा। यद्घोतां। यदंध्वर्युः। यद्ग्रीत्। यद्यजमानः। तान् यदंन्तरेयात्। यजमानस्य प्राणान्थ्सङ्कर्षेत्। प्रमायुंकः स्यात्। पुरोडाशमप्गृह्य सश्चरत्यध्वर्युः॥४९॥

यजंमानायैव तल्लोक शिर्ष्षित। नास्यं प्राणान्थ्सङ्कर्ष् षति। न प्रमायंको भवति। पुरस्तात प्रत्यङ्कासीनः। इडांया इडामा दंधाति। हस्त्या होत्रें। प्रावो वा इडां। प्रावः पुरुषः। प्राुष्वेव प्राून्प्रतिष्ठापयति। इडांये वा एषा प्रजांतिः॥५०॥

तां प्रजातिं यजमानोऽनु प्र जायते। द्विर्ङ्गुलांवनिक्ति पर्वणोः। द्विपाद्यजमानः प्रतिष्ठित्यै। स्कृदुपं स्तृणाति। द्विरा देधाति। स्कृद्भि घारयति। चृतुः सम्पद्यते। चृत्वारि वै पृशोः प्रतिष्ठानांनि। यावानेव पृशुः। तमुपंह्वयते॥५१॥

मुर्खिमिव प्रत्युपंह्वयेत। सम्मुखानेव पृश्नुपं ह्वयते। पृशवो वा इडाँ। तस्माथ्साऽन्वारभ्याँ। अध्वर्युणां च यजंमानेन च। उपंहूतः पशुमानंसानीत्यांह। उप ह्येनो ह्वयंते होताँ। इडांये देवतानामुपहुवे। उपंहूतः पशुमान्भंवति। य एवं वेदं॥५२॥ यां वै हस्त्यामिडांमादधांति। वाचः सा भांगधेयम्। यामुंपह्वयंते। प्राणाना सा। वाचं चैव प्राणा श्र्यावं रुन्थे। अथ वा एतर्ह्युपंहूतायामिडांयाम्। पुरोडाशंस्यैव बंहिषदों मीमा सा। यजंमानं देवा अंब्रुवन्। ह्विनों निर्व्यते। नाहमंभागो निर्वपस्यामीत्यंब्रवीत्॥ ५३॥

न मयांऽभागयाऽनुंवक्ष्यथेति वागंब्रवीत्। नाहमंभागा पुरोनुवाक्यां भविष्यामीतिं पुरोनुवाक्यां। नाहमंभागा याज्यां भविष्यामीतिं याज्यां। न मयांऽभागेन वर्षद्वरिष्यथेतिं वषद्वारः। यद्यंजमानभागं निधायं पुरोडाशंं बर्हिषदं करोतिं। तानेव तद्भागिनंः करोति। चतुर्धा करोति। चतस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिं तिष्ठति। ब्रहिषदंं करोति॥५४॥

यजंमानो वै पुंरोडाशंः। प्रजा बर्हिः। यजंमानमेव प्रजासु प्रतिष्ठापयति। तस्मांदस्थ्राऽन्याः प्रजाः प्रतितिष्ठंन्ति। मार्सेनान्याः। अथो खल्वांहुः। दक्षिणा वा एता हंविर्यज्ञस्यांन्तर्वेद्यवं रुध्यन्ते। यत्पुंरोडाशं बर्हिषदं करोतीतिं। चतुर्धा कंरोति। चत्वारो ह्यंते हंविर्यज्ञस्यर्त्विजः॥५५॥

ब्रह्मा होताँ ऽध्वर्युर्ग्नीत्। तम्भि मृंशेत्। इदं ब्रह्मणंः। इदः होतुंः। इदमंध्वर्योः। इदम्ग्नीध् इतिं। यथैवादः सौम्येँ ऽध्वरे। आदेशमृत्विग्भ्यो दक्षिणा नीयन्तें। ताद्दगेव तत्। अग्नीधै

प्रथमाया दंधाति॥५६॥

अग्निम्ंखा ह्यद्धिः। अग्निम्ंखामेवर्धिं यजंमान ऋभ्नोति। सकृदुंप्स्तीर्य द्विरादधंत्। उपस्तीर्य द्विर्भि घारयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतूनेव प्रीणाति। वेदेनं ब्रह्मणे ब्रह्मभागं परिहरति। प्राजापत्यो वे वेदः। प्राजापत्यो ब्रह्मा॥५७॥

स्विता यज्ञस्य प्रसूँत्यै। अथ कामंमन्येनं। ततो होत्रैं। मध्यं वा एतद्यज्ञस्यं। यद्धोताँ। मध्यत एव यज्ञं प्रीणाति। अथाध्वर्यवैं। प्रतिष्ठा वा एषा यज्ञस्यं। यद्ध्वर्युः। तस्मौद्धविर्यज्ञस्यैतामेवाऽऽवृतमनुं॥५८॥

अन्या दक्षिणा नीयन्ते। युज्ञस्य प्रतिष्ठित्यै। अग्निमंग्नीध्मकृथ्मंकृथ्मं मृड्ढीत्यांह। परांङिव ह्यंतर्हिं युज्ञः। इषिता दैव्या होतांर इत्यांह। इषित हि कर्म क्रियतें। भृद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रहीत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। स्वगा दैव्या होतृभ्य इत्यांह। युज्ञमेव तथ्स्वगा करोति। स्वस्तिमानुषभ्य इत्यांह। आमेवैतामा शांस्ते। शुं योर्ब्रूहीत्यांह। शुंयुमेव बांर्हस्पत्यं भांगधेयेन समर्धयति॥५९॥

च्रुत्युध्वर्युः प्रजातिर्ह्वयते वेदाँब्रवीद्वर्रहिषदं करोत्यृत्विजों दथाति ब्रह्माऽनुंकरोति चृत्वारिं च॥————[८]

अथ् स्रुचांवनुष्टुग्भ्यां वाजंवतीभ्यां व्यूहित। प्रतिष्ठा वा अनुष्टुक्। अत्रुं वाजुः प्रतिष्ठित्यै। अन्नाद्यस्यावंरुद्धै। प्राचीं जुहूमूंहति। जातानेव भ्रातृं व्यान्प्रणुंदते। प्रतीचीमुप्भृतम्। जनिष्यमाणानेव प्रतिनुदते। सविषूच एवापोह्यं सपत्नान् यजमानः। अस्मिँ क्षोके प्रतिं तिष्ठति॥६०॥

द्वाभ्यांम्। द्विप्रंतिष्ठो हि। वसुंभ्यस्त्वा रुद्रेभ्यंस्त्वा-ऽऽदित्येभ्यस्त्वेत्यांह। यथायजुरेवेतत्। स्रुक्षु प्रस्तरमंनक्ति। इमे वै लोकाः स्रुचंः। यजंमानः प्रस्तरः। यजंमानमेव तेजंसाऽनक्ति। त्रेधाऽनंक्ति। त्रयं इमे लोकाः॥६१॥

पुभ्य एवैनं लोकेभ्योऽनिक्तः। अभिपूर्वमंनिकः। अभिपूर्वमेव यजमानं तेजसाऽनिक्तः। अक्तः रिहाणा इत्याहः। तेजो वा आज्यम्। यजमानः प्रस्तरः। यजमानमेव तेजसाऽनिकः। वियन्तु वयु इत्याहः। वयं एवैनं कृत्वाः सुवृगं लोकं गंमयति॥६२॥

प्रजां योनिं मा निर्मृक्षमित्यांह। प्रजायें गोपीथायं। आप्यायन्तामाप ओषंधय इत्यांह। आपं एवौषंधीरा प्याययति। मुरुतां पृषंतयः स्थेत्यांह। मुरुतो वे वृष्ट्यां ईशते। वृष्टिंमेवावं रुन्धे। दिवंं गच्छु ततों नो वृष्टिमेर्येत्यांह। वृष्टिंवें द्यौः। वृष्टिंमेवावं रुन्धे॥६३॥

यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्यायुंमीयते। आयुष्पा अंग्रेऽस्यायुंमें पाहीत्यांह। आयुंरेवाऽऽत्मन्धंते। यावृद्वा अध्वर्युः प्रस्तरं प्रहरंति। तावंदस्य चक्षुंमीयते। चृक्षुष्पा अंग्नेऽसि चक्षुंर्मे पाहीत्यांह। चक्षुंरेवाऽऽत्मन्धंत्ते। भ्रुवाऽसीत्यांहु प्रतिष्ठित्यै। यं परि्षिं पूर्यधंत्था इत्यांह॥६४॥

यथायजुरेवैतत्। अग्ने देव पणिभिर्वीयमाण् इत्यांह। अग्नयं एवेनं जुष्टं करोति। तन्तं एतमनु जोषं भरामीत्यांह। सजातानेवास्मा अनुंकान्करोति। नेदेष त्वदंपचेतयांता इत्याहानुंख्यात्ये। यज्ञस्य पाथ उप समित्मित्यांह। भूमानंमेवोपैंति। परिधीन्म्र हंरति। यज्ञस्य समिष्ट्ये॥६५॥

सुचौ सं प्रस्नांवयित। यदेव तत्रं क्रूरम्। तत्तेनं शमयित। जुह्वामुंपभृतम्। यजमानदेवत्यां वै जुहूः। भातृव्यदेवत्योंपभृत्। यजमानायैव भ्रातृंव्यमुपंस्तिं करोति। सङ्स्रावभागाः स्थेत्यांह। वसंवो वै रुद्रा आंदित्याः सङ्स्रावभागाः। तेषां तद्भाग्धेयम्॥६६॥

तानेव तेनं प्रीणाति। वैश्वदेव्यर्चा। एते हि विश्वं देवाः। त्रिष्टुग्भवति। इन्द्रियं वे त्रिष्टुक्। इन्द्रियमेव यजमाने दधाति। अग्नेर्वामपंत्रगृहस्य सदंसि सादयामीत्यांह। इयं वा अग्निरपंत्रगृहः। अस्या एवैने सदंने सादयति। सुम्नायं सुम्निनी सुम्ने मां धत्तमित्यांह॥६७॥

प्रजा वै प्शवंः सुम्नम्। प्रजामेव पृशूनात्मन्धेत्ते। धुरि धुर्यौ पात्मित्यांह। जायापत्योगीपीथायं। अग्नेऽदब्धायोऽशीततनो इत्यांह। यथायजुरेवैतत्। पाहि माऽद्य दिवः पाहि प्रसित्यै पाहि दुरिष्ट्यै पाहि दुंरद्मन्यै पाहि दुश्चरितादित्यांह। आमेवैतामा शाँस्ते। अविषन्नः पितुं कृण सुषदा योनिङ् स्वाहेतींध्मस्ंवृश्चनान्यन्वाहार्यपर्चनेऽभ्याधार्यं फलीकरणहोमं जुंहोति। अतिरिक्तानि वा इंध्मसं वृश्चनानि॥६८॥

अतिरिक्ताः फलीकरणाः। अतिरिक्तमाज्योच्छेषणम्। अतिरिक्त पुवातिरिक्तं दधाति। अथो अतिरिक्तेनैवातिरिक्त-मास्वाऽवं रुन्धे। वेदिर्देवेभ्यो निलायत। तां वेदेनान्वंविन्दन्। वेदेन् वेदिं विविद्ः पृथिवीम्। सा पंप्रथे पृथिवी पार्थिवानि। गर्भं बिभर्ति भुवंनेष्वन्तः। ततो यज्ञो जांयते विश्वदानिरिति पुरस्तांथ्स्तम्बयजुषों वेदेन् वेदिश सम्मार्ष्ट्यनुंवित्त्यै॥६९॥

अथो यद्वेदश्च वेदिश्च भवंतः। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। प्रजापंतेर्वा एतानि श्मश्रूणि। यद्वेदः। पत्निया उपस्थ आस्यंति। मिथुनमेव कंरोति। विन्दते प्रजाम्। वेद होता-ऽऽहंवनीयाँ अस्तृणन्नेति। यज्ञमेव तथ्सन्तंनोत्योत्तंरस्मादर्ध-मासात्। त स्सन्तंतुमुत्तंरेऽर्धमास आलंभते॥७०॥

तं कालेकांल आगंते यजते। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। स त्वा अध्वर्युः स्यात्। यो यतो यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयतीति। वाताद्वा अध्वर्युर्य्ज्ञं प्रयुङ्के। देवां गातुविदो गातुं वित्वा गातुमितेत्याह। यतं एव यज्ञं प्रयुङ्के। तदेनं प्रतिष्ठापयति। प्रति तिष्ठति प्रजयां पृशुभिर्यजमानः॥७१॥

तिष्ठतीमे लोका गमयति द्यौर्वृष्टिमेवावं रुन्धे पूर्यर्थत्था इत्यांह् समिष्ट्ये भागुधेयन्धत्तमित्यांह् वा इंध्मसं वृश्चनान्यन्वित्त्ये

लभते यर्जमानः॥————[९]

यो वा अयंथादेवतं यज्ञम्ंपूचरंति। आ देवतांभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यो यंथादेवतम्। न देवतांभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। वारुणो वे पाशंः। इमं विष्यांमि वरुणस्य पाश्मित्यांह। वरुणपाशादेवेनां मुश्चति। स्वितृप्रंसूतो यथादेवतम्॥७२॥

न देवताँभ्य आवृंश्च्यते। वसीयान्भवति। धातुश्च योनौं सुकृतस्यं लोक इत्याह। अग्निर्वे धाता। पुण्यं कर्म सुकृतस्यं लोकः। अग्निरेवैनां धाता। पुण्ये कर्मणि सुकृतस्यं लोके दंधाति। स्योनं में सह पत्यां करोमीत्यांह। आत्मनश्च यर्जमानस्य चानांत्ये सन्त्वायं। समायुंषा सं प्रजयेत्यांह॥७३॥

आमेवैतामा शाँस्ते पूर्णपात्रे। अन्ततोऽनुष्टुभाँ। चतुंष्पद्वा एतच्छन्दः प्रतिष्ठितं पित्रिये पूर्णपात्रे भविति। अस्मिक्षोके प्रति तिष्ठानीति। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। अथो वाग्वा अनुष्टुक्। वाङ्किंथुनम्। आपो रेतः प्रजनंनम्। एतस्माद्वै मिथुनाद्विद्योतंमानः स्तनयंन्वर्षिति। रेतः सिश्चन्॥७४॥

प्रजाः प्रजनयन्। यद्वै यज्ञस्य ब्रह्मणा युज्यतें। ब्रह्मणा वै तस्यं विमोकः। अद्भिः शान्तिः। विम्तं वा एतर्हि योक्रं ब्रह्मणा। आदायेन्त्पत्नी सहाप उपगृह्णीते शान्त्यै। अञ्जलौ पूर्णपात्रमा नयति। रेतं एवास्यां प्रजां दंधाति। प्रजया हि मंनुष्यः पूर्णः। मुखं वि मृष्टे। अवभृथस्यैव रूपं कृत्वोत्तिष्ठति॥७५॥

स्वित्प्रमूतो यथादेवतं प्रजयेत्यांह सिञ्चन्मृष्ट् एकं च॥————[१०]

प्रिवेषो वा एष वनस्पतीनाम्। यदुंपवेषः। य एवं वेदं। विन्दतें परिवेष्टारम्। तमुंत्करे। यं देवा मंनुष्येषु। उपवेषमधारयन्। ये अस्मदपं चेतसः। तानस्मभ्यमिहा कुरु। उपवेषोपं विष्टि नः॥७६॥

प्रजां पुष्टिमथो धनम्। द्विपदो नश्चतुंष्पदः। ध्रुवाननंप-गान्कुर्विति पुरस्तांत्प्रत्यश्चमुपं गृहति। तस्मांत्पुरस्तांत्प्रत्यश्चंः शूद्रा अवस्यन्ति। स्थविम्त उपंगूहति। अप्रंतिवादिन प्वैनांन्कुरुते। धृष्टि्वा उपवेषः। शुचर्तो वज्रो ब्रह्मणा सर्शितः। योपंवेषे शुक्। साऽमुमृंच्छतु यं द्विष्म इति॥७७॥

अथाँस्मै नाम् गृह्य प्रहेरित। निर्मुन्नुंद् ओकंसः। सपत्नो यः पृंतन्यितं। निर्बाध्येन हिविषां। इन्द्रं एणं परांशरीत्। इहि तिस्रः पंरावतः। इहि पश्च जना अति। इहि तिस्रोऽति रोचनायावंत्। सूर्यो असंद्विव। पुरमान्त्वां परावतम्॥७८॥

इन्द्रों नयतु वृत्रहा। यतो न पुन्रायंसि। शृश्वतीभ्यः समाभ्य इति। त्रिवृद्धा एष वज्रो ब्रह्मणा सश्शितः। शुचैवैनं विध्वा। एभ्यो लोकेभ्यो निर्णुद्यं। वज्रेण ब्रह्मणा स्तृणुते। हुतोऽसाववंधिष्मामुमित्यांहु स्तृत्यैं। यं द्विष्यात्तं ध्यांयेत्। 368 तृतीयः प्रश्नः

शुचैवैनंमर्पयति॥७९॥

प्रत्युष्टं दिवः शिल्पुमयंज्ञो घृतं चं देवासुराः स पुतिमन्द्र आपों देवीर्ग्निन्त् धिष्णिया अयु स्रुचौ यो वा अयंथादेवतं परिवेपो वा एकोदश॥११॥ प्रत्युष्ट्मयंज्ञ पुषा हि विश्वेषां देवानामूर्जा पृथिवीमथो रक्षसान्तां प्रजातिं द्वाभ्यां तं कालेकोले नवसप्ततिः॥७९॥ प्रत्युष्टमर्पयति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके तृतीयः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः॥

ब्रह्मणे ब्राह्मणमालंभते। क्षुत्रायं राज्नन्यम्। मुरुद्धो वैश्यम्। तपंसे शूद्रम्। तमसे तस्करम्। नारंकाय वीर्हणम्। पाप्मने क्रीबम्। आक्रयायांयोगूम्। कामांय पुङ्श्वलूम्। अतिंकुष्टाय मागधम्॥१॥

गीतायं सूतम्। नृत्तायं शैलूषम्। धर्माय सभाचरम्। नर्मायं रेभम्। निरेष्ठाये भीमृलम्। हसाय कारिम्। आनुन्दायं स्रीषुखम्। प्रमुदं कुमारीपुत्रम्। मेधाये रथकारम्। धेर्याय तक्षाणम्॥२॥

श्रमाय कौलालम्। मायायै कार्मारम्। रूपायं मणिकारम्। शुभे वपम्। शर्व्याया इषुकारम्। हेत्यै धेन्वकारम्। कर्मणे ज्याकारम्। दिष्टायं रञ्जसर्गम्। मृत्यवे मृग्युम्। अन्तंकाय श्वनितम्॥३॥

स्न्थये जारम्। ग्रेहायोपपृतिम्। निर्ऋत्ये परिवित्तम्। आर्त्ये परिविविदानम्। अराध्ये दिधिषूपितम्। पृवित्राय भिषजम्। प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शम्। निष्कृत्ये पेशस्कारीम्। बलायोपदाम्। वर्णायानूरुधम्॥४॥

न्दीभ्यः पौञ्जिष्टम्। ऋक्षीकाँभ्यो नैषांदम्। पुरुष्व्याघ्रायं दुर्मदम्। प्रयुद्ध उन्मंत्तम्। गुन्धर्वाफ्सराभ्यो व्रात्यम्। सुर्पदेव- जनेभ्योऽप्रंतिपदम्। अवेभ्यः कित्वम्। इर्यताया अर्कितवम्। पिशाचेभ्यो बिदलकारम्। यातुधानेभ्यः कण्टककारम्॥५॥

उथ्सादेभ्यः कुज्जम्। प्रमुदे वामनम्। द्वाभ्यः स्रामम्। स्वप्नायान्थम्। अधंर्माय बिधरम्। संज्ञानाय स्मरकारीम्। प्रकामोद्यायोपसदम्। आशिक्षायै प्रश्जिनम्। उपशिक्षायां अभिप्रश्जिनम्। मुर्यादाये प्रश्जविवाकम्॥६॥

ऋत्यैं स्तेनह्रंदयम्। वैरंहत्याय पिशुंनम्। विवित्त्ये क्षतारम्। औपंद्रष्टाय सङ्ग्रहीतारम्। बलायानुचरम्। भूम्ने पंरिष्कुन्दम्। प्रियायं प्रियवादिनम्। अरिष्ट्या अश्वसादम्। मेधाय वासः पल्पूलीम्। प्रकामायं रजयित्रीम्॥७॥

भायै दार्वाह्यरम्। प्रभायां आग्नेन्थम्। नाकंस्य पृष्ठायांभि-षेक्तारम्। ब्रध्नस्यं विष्ठपाय पात्रनिर्णेगम्। देवलोकायं पेशितारम्। मनुष्यलोकायं प्रकरितारम्। सर्वेभ्यो लोकेभ्यं उपसेक्तारम्। अवंत्ये वधायोपमन्थितारम्। सुवर्गायं लोकायं भागदुघम्। वर्षिष्ठाय नाकांय परिवेष्टारम्॥८॥

अर्मेभ्यो हस्तिपम्। ज्वायांश्वपम्। पुष्ट्ये गोपालम्। तेजंसेऽजपालम्। वीर्यायाविपालम्। इराये कीनाशम्। कीलालाय सुराकारम्। भृद्रायं गृहुपम्। श्रेयंसे वित्त्रधम्। अध्यक्षायानुक्षत्तारम्॥९॥

मुन्यवेऽयस्तापम्। क्रोधांय निस्रम्। शोकांयाभिस्रम्।

उत्कूलुविकूलाभ्यां त्रिस्थिनम्। योगांय योक्तारम्। क्षेमांय विमोक्तारम्। वर्पुषे मानस्कृतम्। शीलांयाञ्जनीकारम्। निर्ऋत्ये कोशकारीम्। यमायासूम्॥१०॥

युम्यै यम्सूम्। अर्थर्वभ्योऽवंतोकाम्। स्ंवृथ्स्रायं पर्यारिणीम्। परिवृथ्स्रायाविजाताम्। इदावृथ्स्रायाप्-स्कद्वरीम्। इद्वथ्स्रायातीत्वरीम्। वृथ्स्राय् विजेर्जराम्। संवृथ्स्राय् पर्तिक्रीम्। वनाय वन्पम्। अन्यतोरण्याय दावपम्॥११॥

सरोंभ्यो धेवरम्। वेशंन्ताभ्यो दाशम्ँ। उपस्थावंरीभ्यो वैन्दम्ँ। नुङ्गुलाभ्यः शौष्कलम्। पार्याय कैवर्तम्। अवार्याय मार्गारम्। तीर्थेभ्यं आन्दम्। विषंमेभ्यो मैनालम्। स्वनेंभ्यः पर्णकम्। गुहाँभ्यः किरातम्। सानुभ्यो जम्भंकम्। पर्वतेभ्यः किम्पूरुषम्॥१२॥

प्रतिश्रुत्कांया ऋतुलम्। घोषांय भूषम्। अन्तांय बहुवादिनम्। अनुन्ताय मूकम्। महंसे वीणावादम्। क्रोशांय तूणव्धमम्। आक्रन्दायं दुन्दुभ्याघातम्। अवरुस्परायं शङ्खध्मम्। ऋभुभ्योजिनसन्धायम्। साध्येभ्यंश्चर्म्मणम्॥१३॥

बीभ्थ्सायै पौल्क्सम्। भूत्यै जागर्णम्। अभूँत्यै स्वपनम्। तुलायै वाणिजम्। वर्णाय हिरण्यकारम्। विश्वैभ्यो देवेभ्यः सिध्मलम्। पृश्चाद्दोषायं ग्लावम्। ऋत्यै जनवादिनम्। व्यृंद्धा अपग्लम्। स्<u>र्</u>श्रायं प्रच्छिदम्॥१४॥

हसाय पु श्रृश्वलूमा लेभते। वीणावादं गणेकं गीताये। यादेसे शाबुल्याम्। नुर्मायं भद्रवतीम्। तूण्वध्मं ग्रामण्यं पाणिसङ्घातं नृत्तायं। मोदायानुक्रोशंकम्। आन्नन्दायं तल्वम्॥१५॥

अक्षराजायं कित्वम्। कृतायं सभाविनम्। त्रेतांया आदिनवदुर्शम्। द्वापरायं बहिः सदम्। कलये सभास्थाणुम्। दुष्कृतायं चरकांचार्यम्। अध्वंने ब्रह्मचारिणम्। पिशाचेभ्यंः सैलगम्। पिपासायै गोव्यच्छम्। निर्ऋत्ये गोघातम्। क्षुधे गोविकर्तम्। क्षुत्तृष्णाभ्यान्तम्। यो गां विकृन्तंन्तं मार्सं भिक्षंमाण उपतिष्ठते॥१६॥

भूम्यै पीठसर्पिणमा लंभते। अग्नयेऽर्रस्लम्। वायवे चाण्डालम्। अन्तरिक्षाय वर्शनर्तिनम्। दिवे खंलतिम्। सूर्याय हर्यक्षम्। चन्द्रमंसे मिर्मिरम्। नक्षेत्रेभ्यः किलासम्। अहे शुक्लं पिङ्गलम्। रात्रियै कृष्णं पिङ्गक्षम्॥१७॥

वाचे पुरुषमा लेभते। प्राणमंपानं व्यानमुंदानः संमानं तान् वायवैं। सूर्याय चक्षुरा लेभते। मनश्चन्द्रमंसे। दिग्भ्यः श्रोत्रम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१८॥

अथैतानरूपेभ्य आर्लभते। अतिह्रस्वमितदीर्घम्।

अतिंकृश्मत्य रेसलम्। अतिंशुक्कमतिंकृष्णम्। अतिंश्रक्षण्-मतिंलोमशम्। अतिंकिरिट्मतिंदन्तुरम्। अतिंमिर्मिर्मतिं-मेमिषम्। आशायैं जामिम्। प्रतीक्षायैं कुमारीम्॥१९॥

ब्रह्मणे गीताय श्रमांय सन्ध्ये नदीभ्यं उथ्मादेभ्य ऋत्ये भाया अमेंभ्यो मृत्यवे युम्ये दशंदश् सरौभ्यो द्वादंश प्रतिश्रुत्कांये बीभृथ्याये दशंदश् हसांय सुप्ताक्षंगुजाय त्रयोंदश् भूम्ये दशं वाचे पडथ् नवैकान्नविर्श्शितः॥१९॥ ब्रह्मणे युम्ये नवंदश॥१९॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके चतुर्थः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पञ्चमः प्रपाठकः॥

स्तयं प्रपंद्ये। ऋतं प्रपंद्ये। अमृतं प्रपंद्ये। प्रजापंतेः प्रियां तनुवमनातां प्रपंद्ये। इदम्हं पश्चद्शेन् वर्ज्ञेण। द्विषन्तं भ्रातृंव्यमवं क्रामामि। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। भूर्भुवः सुवंः। हिम्॥१॥

प्र वो वाजां अभिद्यंवः। ह्विष्मंन्तो घृताच्यां। देवाञ्जिंगाति सम्भयः। अग्न आयांहि वीतयें। गृणानो ह्व्यदांतये। नि होतां सिथ्स बर्हिषिं। तं त्वां समिद्धिरङ्गिरः। घृतेनं वर्धयामिस। बृहच्छोंचा यविष्ठ्य। स नः पृथुः श्रवाय्यम्॥२॥

अच्छां देव विवासिस। बृहदंग्ने सुवीर्यम्। ईडेन्यों नमस्यंस्तिरः। तमा रंसि दर्शतः। सम्ग्रिरिध्यते वृषां। वृषों अग्निः समिध्यते। अश्वो न देववाहंनः। तर ह्विष्मंन्त ईडते। वृषंणं त्वा वृयं वृषन्ं। वृषांणः समिधीमहि॥३॥

अग्ने दीर्घतं बृहत्। अग्निं दूतं वृणीमहे। होतांरं विश्ववेदसम्। अस्य यज्ञस्यं सुऋतुम्। समिध्यमांनो अध्वरे। अग्निः पांवक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे। समिद्धो अग्न आहुत। देवान् यंक्षि स्वध्वर। त्व॰ हि हंव्यवाडसिं। आ जुंहोत दुवस्यतं। अग्निं प्रयत्यंध्वरे। वृणीध्व॰ हंव्यवाहंनम्। त्वं वरुण उत मित्रो अंग्ने। त्वां वर्धन्ति मृतिभिवंसिष्ठाः। त्वे वस् सुषण्नानि सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥४॥

श्वाय्यंमिधीमुह्हासं सुह चं॥———[२]

अग्नें महार असि ब्राह्मण भारत। असावसौँ। देवेछो मन्विंद्धः। ऋषिष्ठतो विप्रांनुमदितः। कृविश्वस्तो ब्रह्मंसर्शितो घृताहंवनः। प्रणीर्यज्ञानांम्। र्थीरेध्वराणांम्। अतूर्तो होतां। तूर्णिर्हव्यवाट्। आस्पात्रं जुहुर्देवानांम्॥५॥

चमुसो देवपानंः। अराश् इंवाग्ने नेमिर्देवाश्स्त्वं पंरिभूरंसि। आ वंह देवान् यजंमानाय। अग्निमंग्न आवंह। सोममावंह। अग्निमावंह। प्रजापंतिमावंह। अग्नीषोमावावंह। इन्द्राग्नी आवंह। इन्द्रमावंह। महेन्द्रमावंह। देवाश् औज्यपाश् आवंह। अग्निश् होत्रायाऽऽवंह। स्वं मंहिमान्मावंह। आचंग्ने देवान् वहं। सुयजां च यज जातवेदः॥६॥

देवानामिन्द्रमा वंहु पद चं॥———[3]

अग्निर्होता वेत्वग्निः। होत्रं वैत्तु प्रावित्रम्। स्मो वयम्। साधु ते यजमान देवता। घृतवंतीमध्वर्यो सुचमास्यंस्व। देवायुवं विश्ववाराम्। ईडांमहै देवा ईडेन्यान्। नमस्यामं नमस्यान्। यजांम यज्ञियान्॥७॥

स्मिधों अग्न आज्यंस्य वियन्तु। तनूनपांदग्न आज्यंस्य वेतु। इडो अंग्न आज्यंस्य वियन्तु। ब्रहिरंग्न आज्यंस्य वेतु। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहा सोमम्। स्वाहाऽग्निम्। स्वाहाँ प्रजापंतिम्। स्वाहाऽग्नीषोमौँ। स्वाहेँ-द्राग्नी। स्वाहे-द्रम्। स्वाहां देवा अौज्यपान्। स्वाहाऽग्निश् होत्राञ्ज्षेषाणाः। अग्न आज्यंस्य वियन्तु॥८॥

अग्निर्वृत्राणि जङ्घनत्। द्रविणस्युर्विपन्ययां। सिमिद्धः शुक्र आहुंतः। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। त्व सोमासि सत्पंतिः। त्व राजोत वृंत्रहा। त्वं भद्रो असि कर्तुः। जुषाणः सोम् आज्यंस्य ह्विषों वेतु। अग्निः प्रवेन जन्मंना। शुम्भांनस्त्नुव् स्वाम्। क्विविंप्रेण वावृधे। जुषाणो अग्निराज्यंस्य वेतु। सोमं गीर्भिष्ट्वां व्यम्। वर्धयांमो वचोविदंः। सुमृडीको न् आविंश। जुषाणः सोम् आज्यंस्य हिवेषों वेतु॥९॥

स्वा॰ षट् चं॥------[६]

अग्निर्मूर्धा दिवः कुकुत्। पितः पृथिव्या अयम्। अपार रेतार्रस जिन्वति। भुवो यज्ञस्य रजंसश्च नेता। यत्रां नियुद्धिः सचंसे शिवाभिः। दिवि मूर्धानं दिधेषे सुवर्षाम्। जिह्वामंग्ने चकृषे हव्यवाहम्। प्रजापते न त्वदेतान्यन्यः। विश्वां जातानि परि ता बंभूव। यत्कांमास्ते जहुमस्तं नो अस्तु॥१०॥

वय स्यांम् पतंयो रयीणाम्। स वेंद पुत्रः पितर् स

मातरम्। स सूनुर्भुव्थ्य भुवत्पुनंभिघः। स द्यामौर्णोद्नतिरेक्ष्य स सुवंः। स विश्वा भुवो अभव्थ्य आभवत्। अग्नीषोमा सर्वेदसा। सहूंती वनत्ङ्गिरंः। सन्देवत्रा बंभूवथः। युवमेतानि दिवि रोचनानि। अग्निश्चं सोम् सर्ऋत् अधत्तम्॥११॥

युव सिन्धू रे रिभशंस्तेरवद्यात्। अग्नीषोमावमुंश्चतं गृभीतान्। इन्द्रौग्नी रोचना दिवः। पिर् वाजेषु भूषथः। तद्वौश्चेति प्रवीर्यम्। श्वथंद्वृत्रमुत संनोति वाजम्। इन्द्रायो अग्नी सहंरी सपूर्यात्। इर्ज्यन्तां वस्व्यंस्य भूरैः। सहंस्तमा सहंसा वाज्यन्तां। एन्द्रं सान्सि रियम्॥१२॥

स्जित्वांन सदासहम्। वर्षिष्ठमूतये भर। प्रसंसाहिषे पुरुहूत शत्रूनं। ज्येष्ठंस्ते शुष्मं इह रातिरंस्तु। इन्द्रा भंर दक्षिणेना वसूंनि। पितः सिन्धूंनामिस रेवतींनाम्। महा इन्द्रो य ओजंसा। पुर्जन्यो वृष्टिमा ईव। स्तोमैंर्व्थसस्यं वावृधे। महा इन्द्रो नृवदाचंर्षणिप्राः॥१३॥

उत द्विबर्हां अमिनः सहोभिः। अस्मद्रियंग्वावृधे वीर्याय। उरुः पृथुः सुकृंतः कुर्तृभिंभूत्। पिप्रीहि देवार उंशतो यंविष्ठ। विद्वार ऋतूर्रऋंतुपते यजेह। ये दैव्यां ऋत्विज्सतेभिंरग्ने। त्वर होतॄंणामस्यायंजिष्ठः। अग्निर्श् स्विष्टकृतम्। अयांडग्निर्ग्नेः प्रिया धामांनि। अयाद्थ्सोमंस्य प्रिया धामांनि॥१४॥ अयांड्ग्रेः प्रिया धामांनि। अयांद्रुजापंतेः प्रिया धामांनि। अयांड्ग्रीषोमयोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्राग्नियोः प्रिया धामांनि। अयांडिन्द्रंस्य प्रिया धामांनि। अयांण्महेन्द्रस्यं प्रिया धामांनि। अयांड्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्रेर्होतुंः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं मंहिमानम्। आयंजतामेज्या इषंः। कृणोतु सो अंध्वरा जातवंदाः। जुषता हिवः। अग्ने यद्द्य विशो अंध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या१५॥

अस्त्व<u>धत्त</u>र् र्यिं चंर्षणिप्राः सोमंस्य प्रिया धामानीषुः षद्वं॥lacktriangle

उपंहूत रथन्तर रसह पृथिव्या। उपं मा रथन्तर सह पृथिव्या ह्वंयताम्। उपंहूतं वामदेव्य सहान्तिरक्षेण। उपं मा वामदेव्य सहान्तिरिक्षेण ह्वयताम्। उपंहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपंहूताः सप्त होत्रौः। उपं मा सप्त होत्रौ ह्वयन्ताम्। उपंहूता धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥१६॥

उपहूतो भृक्षः सर्खां। उपं मा भृक्षः सर्खां ह्वयताम्। उपहूताँ(४)हो। इडोपहूता। उपहूतेडां। उपो अस्मा इडां ह्वयताम्। इडोपहूता। उपहूतेडां। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहृतम्॥१७॥

दैव्यां अध्वर्यव् उपंहृताः। उपंहृता मनुष्याः। य इमं

यज्ञमवान्। ये यज्ञपंतिं वर्धान्। उपहूते द्यावापृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपहूतोऽयं यजंमानः। उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपहूतः। भूयंसि हिवष्करंण उपहूतः। दिव्ये धामृन्नुपहूतः। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति तस्मिन्नुपहूतः। विश्वंमस्य प्रियमुपहूतम्। विश्वंस्य प्रियस्योपहूतस्योपहूतः॥१८॥

सहर्षंभा ह्वयतामुपंहूत हिवेष्करंण उपंहूतश्चत्वारिं च॥

-[८]

देवं ब्र्हिः। व्सुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो नराशरसंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मन्द्रः कृविः। सृत्यमंन्मायजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। यार अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्सत। तार संसुनुषीर होत्रांन्देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवनं वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि॥१९॥

अपिप्रेः पश्चं च॥

-[3]

ड्दं द्यांवापृथिवी भूद्रमंभूत्। आर्ध्मं सूक्तवाकम्। उत नंमोवाकम्। ऋध्यास्मं सूक्तोच्यंमग्ने। त्व॰ सूक्तवागंसि। उपिश्रतो दिवः पृथिव्योः। ओमंन्वती तेऽस्मिन् युज्ञे यंजमान् द्यावांपृथिवी स्ताम्। शृङ्गये जीरदान्। अत्रंस्रू अप्रंवेदे। उरुगंव्यूती अभयं कृतौं॥२०॥ वृष्टिद्यांवा रीत्यांपा। शम्भुवौं मयोभुवौं। ऊर्जस्वती च् पर्यस्वती च। सूप्चरणा चं स्वधिचरणा चं। तयोराविदिं। अग्निरिद हिवरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। सोमं इद १ ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्निरिद १ हविरंजुषत॥ २१॥

अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। प्रजापंतिरिदश् ह्विरंजुषत। अवीवृधत् महो ज्यायोऽकृत। अग्नीषोमांविदश् ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायौऽकाताम्। इन्द्राग्नी इदश् ह्विरंजुषेताम्। अवीवृधेतां महो ज्यायौऽकाताम्। इन्द्रं इदश् ह्विरंजुषत। अवीवृधतां महो ज्यायोऽकृत। महेन्द्र इदश् ह्विरंजुषत॥२२॥

अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। देवा आंज्यपा आज्यंमजुषन्त। अवींवृधन्त महो ज्यायोंऽकृत। अग्निरहोत्रेणेद हिवरंजुषत। अवींवृधत् महो ज्यायोंऽकृत। अस्यामृध्छोत्रांयान्देवङ्गमायांम्। आशांस्तेऽयं यजंमानोऽसौ। आयुरा शांस्ते। सुप्रजास्त्वमा शांस्ते। सजात्वनस्यामा शांस्ते॥२३॥

उत्तरान्देवयुज्यामा शाँस्ते। भूयों हिव्ष्करंणमा शाँस्ते। दिव्यं धामा शाँस्ते। विश्वं प्रियमा शाँस्ते। यद्नेनं ह्विषाऽऽशाँस्ते। तदंश्यात्तदंध्यात्। तदंस्मै देवा रांसन्ताम्। तद्ग्निर्देवो देवेभ्यो वनंते। व्यमुग्नेर्मानुषाः। इष्टं चं वीतं चं। उभे चं नो द्यावांपृथिवी अश्हंसस्पाताम्। इह गतिंर्वामस्येदं चं। नमों देवेभ्यं:॥२४॥

अभ्m uं कृतांवकृताग्निरिदश हुविरंजुषत महेन्द्र <u>इ</u>दश हुविरंजुषत सजातवनुस्यामा शाँस्ते वीतं च त्रीणिं च॥ $\left[igrte O
ight]$

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीं स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुंषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे॥२५॥

तच्छुं योर्ष्टो॥————[११]

आप्यायस्व सन्तें। इह त्वष्टांरमग्रियं तन्नंस्तुरीपम्ं। देवानां पत्नीरुश्तीरंवन्तु नः। प्रावंन्तु नस्तुजये वार्जसातये। याः पार्थिवासो या अपामिषं व्रते। ता नों देवीः सुहवाः शर्म यच्छत। उत ग्ना वियन्तु देवपंत्नीः। इन्द्राण्यंग्नाय्यश्विनी राट्। आ रोदंसी वरुणानी श्रंणोतु। वियन्तुं देवीर्य ऋतुर्जनीनाम्॥२६॥

अग्निर्होतां गृहपंतिः स राजां। विश्वां वेद् जिनेमा जातवंदाः। देवानांमुत यो मर्त्यांनाम्। यिजेष्टः स प्र यंजतामृतावां। व्यम् त्वा गृहपते जनांनाम्। अग्ने अकंर्म समिधां बृहन्तम्। अस्थूिर णो गार्हंपत्यानि सन्तु। तिग्मेनं नस्तेजंसा सर्शिशाधि॥२७॥

जनीनामुष्टौ चं॥———[१२]

उपंहूत रथन्त्र सह पृथिव्या। उपं मा रथन्त्र सह

पृथिव्या ह्वंयताम्। उपहूतं वामदेव्य र सहान्तरिक्षेण। उपं मा वामदेव्य र सहान्तरिक्षेण ह्वयताम्। उपहूतं बृहथ्सह दिवा। उपं मा बृहथ्सह दिवा ह्वंयताम्। उपहूताः सप्त होत्राः। उपं मा सप्त होत्रां ह्वयन्ताम्। उपहूताः धेनुः सहर्षंभा। उपं मा धेनुः सहर्षंभा ह्वयताम्॥२८॥

उपहूतो भृक्षः सखाँ। उपं मा भृक्षः सखाँ ह्वयताम्। उपंहूताँ(४)हो। इडोपंहूता। उपंहूतेडाँ। उपो अस्मा । इडौपंहूता। उपंहूतेडाँ। मान्वी घृतपंदी मैत्रावरुणी। ब्रह्मं देवकृत्मुपंहूतम्॥२९॥

देव्यां अध्वर्यव उपंहूताः। उपंहूता मनुष्याः।
य इमं यज्ञमवान्। ये यज्ञपंत्रीं वर्धान्। उपंहूते
द्यावांपृथिवी। पूर्वजे ऋतावंरी। देवी देवपुंत्रे। उपंहूतेयं
यज्ञमाना। इन्द्राणीवांऽविध्वा। अदितिरिव सुपुत्रा।
उत्तरस्यान्देवयुज्यायामुपंहूता। भूयंसि हिव्ष्करंण उपंहूता।
दिव्ये धामनुपंहूता। इदं में देवा ह्विर्जुषन्तामिति
तिस्मनुपंहूता। विश्वमस्याः प्रियमुपंहूतम्। विश्वंस्य
प्रियस्योपंहूतस्योपंहूता॥३०॥

स्हर्पंभा ह्रयत्ममुपंहूत स्पुत्रा पद्वं॥————[१३]

सुत्यं प्रवोऽग्ने मुहानुभ्रिर्होतां सुमिथोऽभ्निर्वृत्राण्युभ्निर्भूर्थोपहूतं देवं बुर्हिरिदं द्यावापृथिवी तच्छुं योरा

प्यांयुस्वोपंहूत्त्रयोदश॥१३॥

सत्यं वयः स्यांम वृष्टिद्यांवा त्रिरशत्॥३०॥

पश्चमः प्रश्नः 383

सृत्यमुपंहूता॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके पश्चमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥षष्ठमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्टः प्रपाठकः॥

अञ्जन्ति त्वामंध्वरे देवयन्तः। वनस्पते मध्ना दैव्येन। यदूर्ध्वस्तिष्ठाद्वविणेह धंत्तात्। यद्वा क्षयो मातुरस्या उपस्थै। उच्छ्रेयस्व वनस्पते। वर्ष्मन्पृथिव्या अधि। सुमिती मीयमानः। वर्चोधा यज्ञवाहसे। समिद्धस्य श्रयंमाणः पुरस्तात्। ब्रह्मं वन्वानो अजर ५ सुवीरम्॥१॥

आरे अस्मदमंतिं बाधमानः। उच्छ्रंयस्व मह्ते सौभंगाय। ऊर्ध्व ऊषुणं ऊतयें। तिष्ठां देवो न संविता। ऊर्ध्वो वाजंस्य सनिता यदिक्षिभिः। वाघिद्विर्विह्वयांमहे। ऊर्ध्वो नः पाह्य १ हंसो नि केतुनां। विश्व १ सम्त्रिणन्दह। कृधी नं ऊर्ध्वां च रथांय जीवसें। विदा देवेषुं नो दुवंः॥२॥

जातो जांयते सुदिन्त्वे अह्राँम्। सम्पर्य आ विदथे वर्धमानः। पुनन्ति धीरां अपसों मनीषा। देवया विप्र उदियर्ति वाचम्ं। युवां सुवासाः परिवीत् आगांत्। स उ श्रेयांन्भवित् जायंमानः। तं धीरांसः क्वय उन्नयन्ति। स्वाधियो मनंसा देवयन्तः। पृथुपाजा अमंत्र्यः। घृतनिंणिंख्स्वांहुतः। अग्निर्यज्ञस्यं हव्यवाद। त॰ स्वाधों यतः स्रुंचः। इत्था धिया यज्ञवंन्तः। आचंकुर्ग्निमूत्यें। त्वं वर्रण उत मित्रो अग्ने। त्वां वंधन्ति मृतिभिर्वसिष्ठाः। त्वे वसुं सुषण्नानिं

सन्तु। यूयं पांत स्वस्तिभिः सदां नः॥३॥

सुवीरं दुवः स्वांहुतोऽष्टौ चं॥———[१]

होतां यक्षद्ग्निः स्मिधां सुष्मिधा समिद्धं नाभां पृथिव्याः संङ्ग्थे वामस्यं। वर्ष्मन्दिव इडस्पदे वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्ष्मतनूनपात्मिदितेर्गर्भं भुवंनस्य गोपाम्। मध्वाद्य देवो देवेभ्यो देवयानांन्प्यो अनक्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षन्नराशः सं नृश्कां नृः प्रणेत्रम्। गोभिर्वपावान्थ्स्याद्वीरैः शक्तीवान्नथैः प्रथमया वा हिरंण्येश्चन्द्री वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्गिमिड ईिडतो देवो देवाः आविक्षद्तो हेव्यवाडमूरः। उपेमं यज्ञम्पेमां देवो देवहूंतिमवतु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्वर्रहिः सुष्टरीमोर्णमदा अस्मिन् यज्ञे वि च प्र च प्रथताः स्वास्थ्यं देवेभ्यः। एमेनद्द्य वस्वो रुद्रा आदित्याः संदन्तु प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्र्यजं॥४॥

होतां यक्षद्द्रं ऋष्वाः कंवष्यो कोषधावनीरुदातांभीर्जिहंतां विपक्षोंभिः श्रयन्ताम्। सुप्रायणा अस्मिन् यज्ञे विश्रयन्तामृतावृधों वियन्त्वाज्यस्य होत्र्यजं। होतां यक्षदुषासानक्तां बृह्ती सुपेशंसा नृशः पितिभ्यो योनिं कृण्वाने। स्र्रस्मयंमाने इन्द्रंण देवैरेदं ब्र्हिः सींदतां वीतामाज्यंस्य होत्र्यजं। होतां यक्षद्देव्या होतांरा

मन्द्रा पोतारा कवी प्रचेतसा। स्विष्टमद्यान्यः करदिषा स्वंभिगूर्तमन्य ऊर्जा सतंवसेमं यज्ञं दिवि देवेषुं धत्तां वीतामाज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षत्तिस्रो देवीरपसांमपस्तंमा अच्छिंद्रमद्येदमपंस्तन्वताम्। देवेभ्यों देवीर्देवमपों वियन्त्वाज्यंस्य होत्रयंजं। होतां यक्षुत्त्वष्टांर्मचिष्टुमपांक १ रेतोधां विश्रवसं यशोधाम्। पुरुरूपुमकांमकर्शन १ सुपोषः पोषैः स्याथ्सुवीरों वीरैर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षद्वनस्पतिमुपावंस्रक्षद्धियो जोष्टार ५ शुशमुन्नरंः। स्वदाथ्स्वधितिर्ऋतुथाद्य देवो देवेभ्यों हव्यावाङ्गेत्वाऽऽज्यंस्य होतर्यजं। होतां यक्षदग्निः स्वाहाऽऽज्यंस्य स्वाहा मेदंसः स्वाहाँ स्तोकाना इं स्वाहा स्वाहां कृतीना इं स्वाहां हव्यसूँक्तीनाम्। स्वाहां देवार आंज्युपान्थ्स्वाहाऽग्निर होत्राज्जुंषाणा अग्न आज्यंस्य वियन्तु होत्र्यजं॥५॥

प्रियमिन्द्रंस्यास्तु वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्वर्यंजं सुवीरों वीरेर्वेत्वाऽऽज्यंस्य होत्वर्यंजं चृत्वारिं च (अभ्रिन्तनूनपांतृत्रग्रशश्संमृग्निमिड इंडितो ब्रुहिर्द्र्यं उपासानक्ता दैव्यां तिम्रस्त्वष्टांगुं वनस्पतिमृग्निम्। पश्च वेत्वेको वियन्तु द्विर्वीतामेको वियन्तु द्विर्वेत्वेको वियन्तु हिर्वेत्वेको वियन्तु हिर्वेत्वे

सिमिंद्धो अद्य मनुषो दुरोणे। देवो देवान् यंजिसि जातवेदः। आ च वहं मित्रमहिश्चिकित्वान्। त्वं दूतः कृविरंसि प्रचेताः। तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान्। मध्वां सम्आन्थ्स्वंदया सुजिह्व। मन्मांनि धीभिरुत यज्ञमृन्धन्। देवत्रा चं कृणुह्यध्वरं नंः। नराशश्संस्य महिमानंमेषाम्। उपं स्तोषाम यजतस्यं यज्ञैः॥६॥

ते सुक्रतंवः शुचंयो धियन्थाः। स्वदंन्तु देवा उभयांनि ह्व्या। आजुह्वांन् ईड्यो वन्द्यंश्च। आयाँह्यग्ने वसुंभिः सजोषाः। त्वं देवानांमिस यह्व होताः। स एनान् यक्षीषितो यजीयान्। प्राचीनं बर्हिः प्रदिशां पृथिव्याः। वस्तोर्स्या वृंज्यते अग्रे अहाँम्। व्यं प्रथते वित्रं वरीयः। देवेभ्यो अदितये स्योनम्॥७॥

व्यचंस्वतीरुर्विया विश्रंयन्ताम्। पतिंभ्यो न जनंयः शुम्भंमानाः। देवींर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वाः। देवेभ्यो भवथ सुप्रायणाः। आसुष्वयंन्ती यज्तते उपांके। उषासानक्तां सदतां नि योनौं। दिव्ये योषंणे बृहती सुरुक्ये। अधि श्रियर् शुक्रपिशं दर्धाने। दैव्या होर्तारा प्रथमा सुवाचौ। मिमाना यज्ञं मनुषो यजंध्ये॥८॥

प्रचोदयंन्ता विदर्थेषु कारू। प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशां दिशन्तां। आ नो यज्ञं भारती तूर्यमेतु। इडां मनुष्वदिह चेतर्यन्ती। तिस्रो देवीर्बर्हिरेद स्योनम्। सरंस्वती स्वपंसः सदन्तु। य इमे द्यावांपृथिवी जिनेत्री। रूपैरिपर्श्यद्भवंनानि विश्वां। तमुद्य होतिरिषितो यजीयान्। देवं त्वष्टांरिमेह यंक्षि विद्वान्॥९॥

उपावंसृज्तमन्यां सम्अन्। देवानां पार्थं ऋतुथा ह्वी १ षिं। वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः। स्वदंन्तु हव्यं मधुंना घृतेनं। सुद्यो जातो व्यंमिमीत यज्ञम्। अग्निर्देवानांमभवत्पुरोगाः। अस्य होतुंः प्रदिश्यृतस्यं वाचि। स्वाहांकृतः ह्विरंदन्तु देवाः॥१०॥

युज्ञैः स्योनं यर्जध्यै विद्वानृष्टौ चं॥——————————[3]

अग्निर्होतां नो अध्वरे। वाजी सन्परिणीयते। देवो देवेषुं यज्ञियः। परित्रिविष्ट्यंध्वरम्। यात्यग्नी र्थीरिव। आ देवेषु प्रयो दर्धत्। परि वाजंपतिः कविः। अग्निर्ह्व्यान्यंक्रमीत्। दधद्रत्नांनि दाशुषे॥११॥

अभिरहोतां नो नवं॥———[४]

अजैंद्गिः। असंनुद्वाज्ञिः। देवो देवेभ्यों हुव्यावाँट्। प्राञ्जोभिर्हिन्वानः। धेनांभिः कल्पंमानः। यज्ञस्यायुः प्रतिरन्। उप प्रेष्यं होतः। हव्या देवेभ्यः॥१२॥

अजैद्ष्टो॥-------[५]

दैव्याः शमितार उत मंनुष्या आरंभध्वम्। उपंनयत् मेध्या दुरंः। आशासांना मेधंपतिभ्यां मेधम्। प्रास्मां अग्निं भंरत। स्तृणीत बुर्हिः। अन्वेनं माता मंन्यताम्। अनुं पिता। अनु भ्राता सर्गर्भ्यः। अनु सखा सयूँथ्यः। उदीचीनार् अस्य पदो निधंत्तात्॥१३॥

सूर्यं चक्षुंर्गमयतात्। वातं प्राणम्नववंसृजतात्। दिशः श्रोत्रम्। अन्तरिक्षमसुम्। पृथिवी शरीरम्। एक्धाऽस्य त्वचमाच्छ्यंतात्। पुरा नाभ्यां अपिशसों वपामुत्खिंदतात्। अन्तरेवोष्माणं वारयतात्। श्येनमंस्य वक्षः कृणुतात्। प्रशसां बाह्॥१४॥

श्रुला दोषणीं। कृश्यपेवारसां। अच्छिंद्रे श्रोणीं। कृवषोरू स्रेकपंणिष्ठीवन्तां। षड्विर्शातिरस्य वङ्क्ष्यः। ता अनुष्ठ्योच्यांवयतात्। गात्रं गात्रमस्यानूंनं कृणुतात्। ऊवध्यगोहं पार्थिवं खनतात्। अस्रा रक्षः सरसृंजतात्। वनिष्ठमस्य मा रांविष्ट॥१५॥

उर्रूकं मन्यंमानाः। नेद्वंस्तोके तनये। रवितारवेच्छमितारः। अधिगो शमीध्वम्। सुशमि शमीध्वम्। शुमीध्वमंधिगो। अधिगुश्चापापश्च। उभौ देवानार् शमितारौँ। ताविमं पृशू ॥ श्रंपयतां प्रविद्वारसौँ। यथायथाऽस्य श्रपंणन्तथांतथा॥१६॥

धृत्ताद्वाह् मा रांविष्ट् तथांतथा॥

—[٤]

जुषस्वं स्प्रथंस्तमम्। वचो देवपसंरस्तमम्। ह्व्या जुह्वांन आसिनं। इमं नो यज्ञम्मृतेषु धेहि। इमा ह्व्या जांतवेदो जुषस्व। स्तोकानांमग्ने मेदंसो घृतस्यं। होतः प्राशांन प्रथमो निषद्यं। घृतवंन्तः पावक ते। स्तोकाः श्चोतन्ति मेदंसः। स्वधंमं देववींतये॥१७॥

श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्। तुभ्य ई स्तोका घृंतश्चतंः। अग्ने विप्राय सन्त्य। ऋषिः श्रेष्ठः समिध्यसे। यज्ञस्यं प्राविता भंव। तुभ्य ई श्चोतन्त्यिप्रगो शचीवः। स्तोकासो अग्ने मेदसो घृतस्यं। कृविश्वस्तो बृंहृता भानुनागाः। हृव्या जुंषस्व मेधिर। ओजिंष्ठन्ते मध्यतो मेद् उद्गृतम्। प्र ते वयं दंदामहे। श्लोतंन्ति ते वसो स्तोका अधित्वचि। प्रति तान्देवशोविंहि॥१८॥

आवृंत्रहणा वृत्रहिमः शुष्तैः। इन्द्रं यातन्नमोभिरग्ने अर्वाक्। युव र राधोभिरकंविभिरिन्द्र। अग्ने अस्मे भंवतमुत्तमेभिः। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागंस्य वृपाया मेदंसः। जुषेता हित्रां होत्र्यजं। विह्यख्यन्मनंसा वस्यं इच्छन्। इन्द्रौग्नी ज्ञास उत वां सजातान्॥१९॥

नान्या युवत्प्रमंतिरस्ति मह्यम्। स वां धियं वाज्यन्तीमतक्षम्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। पुरोडाशंस्य जुषेता हिवः। होत्र्यजं। त्वामींडते अजिरं दूत्यांय। हिविष्मंन्तः सदमिन्मानुंषासः। यस्यं देवैरासंदो बर्हिरंग्ने। अहाँन्यस्मे सुदिनां भवन्तु। होतां यक्षदिग्नम्। पुरोडाशंस्य जुषता हिवः। होत्र्यजं॥२०॥

गीर्मिर्विप्रः प्रमंतिमिच्छमानः। ईट्टे र्यिं यशसं पूर्वभाजम्। इन्द्रांग्नी वृत्रहणा सुवज्रा। प्र णो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः। माच्छेंद्म रश्मीश्रिति नाधंमानाः। पितृणाश् शक्तीरनु-यच्छंमानाः। इन्द्राग्निभ्यां कं वृषंणो मदन्ति। ताह्यद्रीधिषणांया उपस्थै। अग्निश् सुंदीतिश् सुदृशं गृणन्तः।

नमस्यामस्त्वेड्यं जातवेदः। त्वां दूतमंर्तिः हंव्यवाहम्। देवा अंकृण्वन्नमृतंस्य नाभिम्॥२१॥

जातवेदो हे चं॥------[९]

त्व इ ह्यंग्ने प्रथमो मनोताँ। अस्या धियो अभेवो दस्महोताँ। त्व सीं वृषन्नकृणोर्दुष्टरीत्। सहो विश्वंसमै सहंसे सहंध्ये। अधा होता न्यंसीदो यजीयान्। इडस्पद इषयन्नीड्यः सन्। तं त्वा नरंः प्रथमं देवयन्तंः। महो राये चितयंन्तो अनुंग्मन्। वृतेव यन्तं बहुभिर्वस्व्यैः। त्वे र्यिं जांगृवा सो अनुंग्मन्॥२२॥

रुशन्तम्भिं दंर्शतं बृहन्तम्। वृपावन्तं विश्वहां दीदिवा सम्। पदं देवस्य नमंसा वियन्तः। श्रवस्यवः श्रवं आपृत्रमृक्तम्। नामानि चिद्दिधिरे यृज्ञियानि। भृद्रायां ते रणयन्त सन्दंष्टौ। त्वां वंधन्ति क्षितयः पृथिव्याम्। त्व रायं उभयांसो जनांनाम्। त्वं त्राता तंरणे चेत्यों ऽभूः। पिता माता सदिमन्मानुंषाणाम्॥२३॥

सप्र्येण्यः स प्रियो विक्ष्वंग्निः। होतां मृन्द्रो निषंसादा यजीयान्। तं त्वां वयं दम् आ दीदिवा स्मम्। उपंज्ञुबाधो नमंसा सदेम। तं त्वां वय स्पुधियो नव्यंमग्ने। सुम्नायवं ईमहे देवयन्तः। त्वं विशो अनयो दीद्यानः। दिवो अंग्ने बृह्ता रोचनेनं। विशां कृविं विश्पति शर्श्वतीनाम्। नितोशंनं वृष्मं चंर्षणीनाम्॥२४॥ प्रेतीषणि मिषयंन्तं पावकम्। राजंन्तमृग्निं यंज्तरः रंयीणाम्। सो अंग्न ईजे शशुमे च मर्तः। यस्त आनंदथ्समिधां ह्व्यदांतिम्। य आहुंतिं परि वेदा नमोंभिः। विश्वेथ्सवामा दंधते त्वोतः। अस्मा उं ते मिहं मृहे विधेम। नमोंभिरग्ने समिधोत ह्व्यैः। वेदीसूनो सहसो गीर्भिरुक्थैः। आ ते भद्रायार् सुमतौ यंतेम॥२५॥

आ यस्तृतन्थ रोदंसी विभासा। श्रवोभिश्च श्रवस्यंस्तरुंत्रः। बृहद्भिवांजैः स्थविरेभिर्स्मे। रेवद्भिरग्ने वित्रं वि भाहि। नृवद्धंसो सद्मिद्धेंह्यस्मे। भूरितोकाय तनयाय पृश्वः। पूर्वीरिषो बृहतीरारे अंघाः। अस्मे भूद्रा सौश्रवसानि सन्तु। पुरूण्यंग्ने पुरुधा त्वाया। वसूनि राजन्वसुतांते अश्याम्। पुरूणि हि त्वे पुरुवार सन्ति। अग्ने वसुं विधृते राजनित्वे॥२६॥

आभेरत शक्षितं वज्रबाहू। अस्मा ईन्द्राग्नी अवत श्र् शचींभिः। इमे नु ते र्श्मयः सूर्यस्य। येभिः सिपृत्वं पितरी न आयन्। होतां यक्षदिन्द्राग्नी। छागस्य ह्विष् आत्तांम्द्य। मध्यतो मेद उद्गृतम्। पुरा द्वेषींभ्यः। पुरा पौरुषेय्या गृभः। घस्तांन्नूनम्॥२७॥

घासे अंज्राणां यवंसप्रथमानाम्। सुमत्क्षंराणाः शतरुद्रि-याणाम्। अग्निष्वात्तानां पीवोपवसनानाम्। पार्श्वतः श्रोणितः शितामृत उथ्साद्तः। अङ्गादङ्गादवंत्तानाम्। करंत एवेन्द्राग्नी। जुषेता १ हिविः। होत्र्यर्जं। देवेभ्यों वनस्पते ह्वी १ षिं। हिरंण्यपर्ण प्रदिवंस्ते अर्थम्॥ २८॥

प्रदक्षिणिद्रंशनयां नियूयं। ऋतस्यं विक्षे पृथिभी रिजिष्ठेः। होतां यक्षद्वनस्पितंमभिहि। पिष्ठतंमया रिभेष्ठया रश्नयाधित। यत्रैन्द्राग्नियोश्छागंस्य ह्विषंः प्रिया धामांनि। यत्र वनस्पतेः प्रिया पाथाः सि। यत्रं देवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यत्राग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। तत्रैतं प्रस्तुत्येवोप्स्तुत्ये वोपावंस्रक्षत्। रभीयाः समिव कृत्वी॥२९॥

करंदेवं देवो वनस्पतिः। जुषता हिवः। होत्र्यजी पिप्रीहि देवा उष्ट्रातो यविष्ठ। विद्वा ऋतू र्रऋतुपते यजेह। ये देव्यां ऋत्विज्सतेभिरग्ने। त्व होतृणामस्यायिजिष्ठः। होतां यक्षद्ग्रि स्विष्ट्रकृतम्। अयांड्रग्निरिन्द्राग्नियोष्ठागंस्य हिवषंः प्रिया धामांनि। अयाङ्गनस्पतैः प्रिया पाथा सि। अयाङ्ग्वेवानांमाज्यपानां प्रिया धामांनि। यक्षंद्ग्नेरहोतुः प्रिया धामांनि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवेदाः। जुषता हिवः। होतर्यजं॥३०॥

उपों हु यद्विदर्थं वाजिनो गूः। गीर्भिर्विप्राः प्रमंतिमिच्छमानाः। अर्वन्तो न काष्ठान्नक्षंमाणाः। इन्द्राग्नी जोहुंवतो नर्स्ते। वनंस्पते रश्नयांऽभिधायं। पिष्टतंमया वयुनांनि विद्वान्। वहं देवत्रा दिधिषो ह्वी १ षिं। प्र चंदातारंम्मृतेषु वोचः। अग्नि १ स्विष्टकृतम्। अयांडग्निरिन्द्राग्नियोश्छागंस्य हविषंः प्रिया धामांनि॥३१॥

अयाङ्गन्स्पतेः प्रिया पाथा १सि। अयाङ्ग्वानां माज्यपानां प्रिया धामानि। यक्षंद्ग्रेर्होतुः प्रिया धामानि। यक्ष्यस्वं महिमानम्। आयंजतामेज्या इषः। कृणोतु सो अध्वरा जातवंदाः। जुषता १ हिवः। अग्ने यदद्य विशो अध्वरस्य होतः। पावंक शोचे वेष्व १ हि यज्वां। ऋता यंजासि महिना वियद्भः। हव्या वंह यविष्ठ या ते अद्या ३२॥

धार्मानि भूरेकं च॥——[१२]

देवं ब्र्हिः सुंदेवं देवैः स्याथ्सुवीरं वीरैर्वस्तौर्वृज्येतात्ताः प्रिभ्रेयेतात्यन्यात्राया ब्र्हिष्मंतो मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवीर्द्वारंः सङ्घाते विड्वीर्यामञ्छिथिरा ध्रुवा देवहूंतौ व्यस ईमेनास्तरुण आमिंमीयात्कुमारो वा नवंजातो मैना अर्वा रेणुकंकाटः पृणंग्वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवी उषासानक्ताऽद्यास्मिन् यज्ञे प्रयत्यंह्वेतामपि नूनं दैवीर्विशः प्रायांसिष्टार् सुप्रीते सुधिते वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी जोष्टी वसुंधिती ययोर्न्याऽघाद्देषा सि युयवदान्यावंक्षद्वसु

वार्याणि यजंमानाय वसुवनं वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवी ऊर्जाहुंती इषुमूर्जम्नयावंक्षथ्मिण्यः सपीतिमन्या नवेन पूर्वन्दयंमानाः स्यामं पुराणेन नवन्तामूर्जमूर्जाहुती ऊर्जयमाने अधातां वसुवने वसुधेयस्य वीतां यजे। देवा दैव्या होतांरा नेष्टांरा पोतांरा हताघंश सावाभ्रद्वंसू वसुवने वसुधेयंस्य वीतां यजं। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीरिडा सर्खती भारती द्यां भारत्यादित्यैरंस्पृक्षथ्सरंस्वतीम र रुद्रैर्यज्ञमांवीदिहैवेडंया वसुंमत्या सधुमादं मदेम वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु यजं। देवो नराश १ संस्निशीर्षा षंडक्षः शतमिदंन शितिपृष्ठा आदंधति सहस्रंमीं प्रवंहन्ति मित्रावरुणेदंस्य होत्रमर्हंतो बृहस्पतिः स्तोत्रमश्विना-ऽऽध्वंर्यवं वसुवनं वसुधेयस्यं वेतु यर्जा। देवो वनस्पतिंर्वर्षप्रांवा घृतिनिंणिंग्द्यामग्रेणास्पृक्षदान्तिरक्षं मध्यंनाप्राः पृथिवीमुपंरेणादः हीद्वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु यजं। देवं बर्हिर्वारितीनां निधेधांऽसि प्रच्युंतीनामप्रं-च्युतन्निकाम्धरेणं पुरुस्पार्हं यशस्वदेना बुर्हिषाऽन्या ब्रही इप्यमि प्याम वसुवने वसुधेयस्य वेतु यर्जा। देवो अग्निः स्विष्टकृथ्सुद्रविणा मन्द्रः कविः सत्यमन्माऽऽयजी होता होतुंर्होतुरायंजीयानम् यान्देवानयाँड्या अपिप्रेर्ये तें होत्रे अमंध्सत तार संसनुषीर होत्रां देवङ्गमान्दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमङ् स्विष्टकृचाग्ने होता अर्वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहि यजं॥३३॥

यजैर्क च॥-----[१३]

देवं ब्रहिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवीर्द्वारंः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवी उषासानक्तां। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी जोष्ट्रीं। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवी ऊर्जाहुंती। वसुवनं वसुधेयस्य वीताम्॥ ३४॥

देवा दैव्या होतांरा। वसुवनं वसुधेयंस्य वीताम्। देवीस्तिस्रस्तिस्रो देवीः। वसुवनं वसुधेयंस्य वियन्तु। देवो नराशक्षः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवो वनस्पतिः। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु। देवं बर्हिवीरितीनाम्। वसुवनं वसुधेयंस्य वेतु॥३५॥

देवो अग्निः स्विष्टकृत्। सुद्रविणा मृन्द्रः कृविः। स्त्यमंन्मायुजी होतां। होतुंर्होतुरायंजीयान्। अग्ने यान्देवानयांट। या अपिप्रेः। ये ते होत्रे अमंध्सत। ता स्संसनुषी होतां-देवङ्गमाम्। दिवि देवेषुं यज्ञमेरंयेमम्। स्विष्टकृचाग्ने होताऽभूः। वसुवने वसुधेयंस्य नमोवाके वीहिं॥३६॥

बीतां वेत्वभूरेकं च॥lacksquare

अग्निमुद्य होतारमवृणीतायं यजमानः पर्चन्यक्तीः

पर्चन्पुरोडाशं बृध्ननिन्द्राग्निभ्यां छाग्रं सूप्स्था अद्य देवो वनस्पतिरभवदिन्द्राग्निभ्यां छाग्नाधंस्तान्तं मेंद्स्तः प्रतिपचताग्रंभीष्टामवीवृधेतां पुरोडाशेन त्वामद्यर्षं आर्षेय ऋषीणान्नपादवृणीतायं यजमानो बहुभ्य आ सङ्गतेभ्य एष में देवेषु वसु वार्या यंक्ष्यत् इति ता या देवा देवदानान्यदुस्तान्यंस्मा आ च शास्वा चं गुरस्वेषितश्चं होत्रसि भद्रवाच्यांय प्रेषितो मानुषः सूक्तवाकायं सूक्ता ब्रूंहि॥३७॥

अग्निम्द्येकम्॥————[१५]

अञ्चन्ति होतां यक्ष्रथ्ममिद्धो अद्याग्निरजेदेव्यां जुपस्वा वृत्रहणा गीर्मिस्त्वः ह्याभरतमुपोह यद्देवं बुर्हिः सुदेवं देवं बुर्हिर्गित्रमुद्य पञ्चंदश॥१५॥

अञ्जन्त्युग्निरहोतां नो गीर्भिरुपों हु यद्विदर्थं वाजिनः सप्तित्रिरशत्॥३७॥

अञ्जन्तिं सूक्ताब्रूंहि॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके षष्ठः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ सप्तमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः॥

सर्वान् वा एषों ऽग्नौ कामान्प्रवेशयति। यों ऽग्नीनंन्वाधायं व्रतमुपैति। सयदिनेष्ट्वा प्रयायात्। अकांमप्रीता एनं कामा नानुप्रयायुः। अतेजा अवीर्यः स्यात्। स जुंहुयात्। तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम। विश्वाः सुिक्षतयः पृथंक्। अग्ने कामांय येमिर् इति। कामांनेवास्मिन्दधाति॥१॥

कामंप्रीता एनं कामा अनु प्रयांन्ति। तेज्स्वी वीर्यावान्भवति। सन्तंतिर्वा एषा यज्ञस्यं। योंऽग्रीनंन्वाधायं व्रतमुपैतिं। स यदुद्वायंति। विच्छिंत्तिरेवास्य सा। तं प्राश्चंमुद्धृत्यं। मन्सोपतिष्ठेत। मनो वै प्रजापंतिः। प्राजापत्यो यज्ञः॥२॥

मनंसैव युज्ञ स्तिनोति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजा-पंतिः। भूतिमेवोपैति। वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणर्ध्यते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्ग्निरंपक्षायंति। यावच्छम्यया प्रविध्येत। यदि तावंदपक्षायेत्। तर सम्भरेत्। इदं त एकं प्र उं त एकम्॥३॥

तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तनुवै चारुरेधि। प्रिये देवानां पर्मे जनित्र इति। ब्रह्मणैवैन्र् सम्भरित। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। यदि परस्तरामंपृक्षायेत्।

अनुप्रयायावंस्येत्। सो एव ततः प्रायंश्चित्तिः। ओषंधीवां एतस्यं पृशून्पयः प्रविंशति। यस्यं ह्विषं वृथ्सा अपार्कृता धर्यन्ति॥४॥

तान् यद्दुह्यात्। यातयांमा ह्विषां यजेत। यन्न दुह्यात्। यज्ञपुरुरुन्तरियात्। वायव्यां यवागून्निर्वपेत्। वायुर्वे पर्यसः प्रदापयिता। स एवास्मै पयः प्रदापयति। पयो वा ओषंधयः। पयः पर्यः। पर्यसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे॥५॥

अथोत्तंरस्मे ह्विषं वृथ्सान्पार्कुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तः। अन्यत्रान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यर्जमानस्य सायं गृहमा गच्छंन्ति। यस्यं सायं दुग्धः ह्विरार्तिमार्च्छति। इन्द्रांय ब्रीहीन्निरुप्योपं वसेत्। पयो वा ओषंधयः। पयं प्वारभ्यं गृहीत्वोपं वसति। यत्प्रातः स्यात्। तच्छृतं कुर्यात्॥६॥

अथेतंर ऐन्द्रः पुरोडाशंः स्यात्। इन्द्रिये एवास्मैं समीचीं दधाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयो-ऽवं रुन्धे। अथोत्तंरस्मै ह्विषं वृथ्सान्पाकुर्यात्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। उभयान् वा एष देवान्भांगुधेयेन् व्यर्धयति। ये यजंमानस्य सायं चं प्रातश्चं गृहमा गच्छंन्ति। यस्योभयर् ह्विरार्तिमार्च्छतिं॥७॥

पुन्द्रं पश्चंशरावमोदनं निर्वपेत्। अग्निं देवतानां प्रथमं

यंजेत्। अग्निमुंखा एव देवताः प्रीणाति। अग्निं वा अन्वन्या देवताः। इन्द्रमन्वन्याः। ता एवोभर्याः प्रीणाति। पयो वा ओषंधयः। पयः पयंः। पयंसैवास्मै पयोऽवं रुन्धे। अथोत्तरस्मे हिवषं वथ्सान्पाकुर्यात्॥८॥

सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। अर्धो वा एतस्यं यज्ञस्यं मीयते। यस्य व्रत्येऽह्न्यल्यंनालम्भुका भवंति। तामंप्रुध्यं यजेत। सर्वेणेव यज्ञेनं यजते। तामिष्ट्वोपं ह्वयेत। अमूहमंस्मि। सा त्वम्। द्यौर्हम्। पृथिवी त्वम्। सामाहम्। ऋक्तम्। तावेहि सम्भवाव। सह रेतों दधावहै। पुर्से पुत्राय वेत्तंवै। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्यायेति। अर्ध एवैनामुपं ह्वयते। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥९॥

द्रधाति यज्ञ उत् एक-धर्यन्ति रुन्धे कुर्यादार्च्छत्यपार्कुर्यात्पृथिवी त्वमृष्टौ चं (सर्वान् वि वै यदिं परस्तरामोपंधीरन्यत्रानुभयांनुर्धो

वे॥)॥————[१]

यद्विष्यंण्णेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयेत्। अनायतनः स्यात्। प्राजापृत्ययुर्चा वंल्मीकवृपायामवं नयेत्। प्राजापृत्यो वै वृल्मीकः। युज्ञः प्रजापंतिः। प्रजापंतावेव युज्ञं प्रतिष्ठापयति। भूरित्यांह। भूतो वै प्रजापंतिः॥१०॥

भूतिंमेवोपैंति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्कीटावंपन्नेन जुहुयात्। अप्रंजा अपृशुर्यजंमानः स्यात्। यदनांयतने निनयैत्। अनायतनः स्यौत्। मध्यमेनं पूर्णेनं द्यावापृथिव्यय्याऽन्तः परिधि निनंयेत्। द्यावापृथिव्योरेवैनत्प्रतिष्ठापयति॥११॥

तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनेर्होत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यदवेवृष्टेन जुहुयात्। अपंरूपमस्याऽऽत्मञ्जायेत। किलासो वास्यादंर्श्यसो वा। यत्प्रत्येयात्। यृज्ञं विच्छिन्द्यात्। स जुंहुयात्। मित्रो जनौन्कल्पयति प्रजानन्॥१२॥

मित्रो दांधार पृथिवीमुत द्याम्। मित्रः कृष्टीरिनंमिषाऽभि चंष्टे। स्त्यायं हृव्यं घृतवंज्जहोतेतिं। मित्रेणैवैनंत्कल्पयति। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनंरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पूर्वंस्यामाहृत्या १ हृतायामुत्तराऽऽहृतिः स्कन्देंत्। द्विपाद्भिः पृश्मिर्यजंमानो व्यृध्येत। यदुत्तंरयाऽभि जुंहुयात्॥१३॥

चतुंष्पाद्भिः पृशुभिर्यजंमानो व्यृध्येत। यत्र वेत्थं वनस्पते देवानां गृह्या नामानि। तत्रं ह्व्यानिं गामयेतिं वानस्पत्ययुर्चा स्मिधंमाधायं। तूष्णीमेव पुनर्जुहुयात्। वनस्पतिनैव यज्ञस्यातां चानांतां चाऽऽहुंती वि दांधार। तत्कृत्वा। अन्यां दुग्ध्वा पुनरहोत्व्यम्। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः। यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारः स्कन्देंत्। अध्वर्यवे च यजंमानाय चाक इं स्यात्॥१४॥

यद्दंक्षिणा। ब्रुह्मणे च यजंमानाय चाक ए स्यात्। यत्प्रत्यक्। होत्रें च पत्नियै च यजंमानाय चाक ए स्यात्। यदुदर्इः। अग्नीधे च पृशुभ्यंश्च यजंमानाय चाकई स्यात्। यदंभिजुहुयात्। रुद्रौऽस्य पृशून्धातुंकः स्यात्। यन्नाभिजुहुयात्। अशौन्तः प्रह्नियेत॥१५॥

स्रुवस्य बुध्रेनाभिनिदेध्यात्। मा तंमो मा यज्ञस्तंमन्मा यजंमानस्तमत्। नमंस्ते अस्त्वायते। नमों रुद्र परायते। नमो यत्रं निषीदंसि। अमुं मा हिर्ंसीरमुं मा हिर्ंसीरिति येन स्कन्देंत्। तं प्रहंरेत्। सहस्रंश्रङ्गो वृष्मो जातवेदाः। स्तोमंपृष्ठो घृतवान्थ्सुप्रतीकः। मा नो हासीन्मेत्थितो नेत्त्वा जहांम। गोपोषं नो वीरपोषं चं यच्छेति। ब्रह्मंणैवैनं प्र हंरति। सेव ततः प्रायंश्चित्तिः॥१६॥

वै प्रजापंतिः स्थापयित प्रजानञ्जभि जुंहुयाथस्याँद्भियेत् जहांम् त्रीणि च (यद्विष्यंण्णेन प्राजापुत्यया् यत्कीटा मध्यमेन् यदवंबृष्टेन् यत्पूर्वस्यां यत्पुरा प्रयाजेभ्यः प्राङङ्गारो यद्विष्यणा यत्प्रत्यग्यदुदङ्गा॥

[2]

वि वा एष इंन्द्रियेणं वीर्येणध्यते। यस्याऽऽहिंताग्ने-रिग्नर्मध्यमानो न जायंते। यत्रान्यं पश्येत्। ततं आहृत्यं होत्व्यम्। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति। यद्यन्यन्न विन्देत्। अजाया होत्व्यम्। आग्नेयी वा एषा। यद्जा। अग्नावेवास्यांग्निहोत्र हुतं भविति॥१७॥

अजस्य तु नाश्नीयात्। यद्जस्याँश्नीयात्। यामेवाग्नावाहुंतिं जुहुयात्। तामंद्यात्। तस्मांद्जस्य नाश्यम्। यद्यजान्न विन्देत्। ब्राह्मणस्य दक्षिणे हस्तें होत्व्यम्। एष वा अग्निर्वैश्वान्रः। यद्ग्रौह्मणः। अग्नावेवास्यौग्निहोत्रः हुतं भवति॥१८॥

ब्राह्मणं तु वंस्त्यै नापं रुन्ध्यात्। यद्वाँह्मणं वंस्त्या अपरुन्ध्यात्। यस्मिन्नेवाग्नावाहंतिं जुहुयात्। तं भांगधेयेन् व्यर्धयेत्। तस्माँद्वाह्मणो वंस्त्यै नाप्रध्यः। यदिं ब्राह्मणं न विन्देत्। दुर्भस्तम्बे होत्व्यम्। अग्निवान् वै दंर्भस्तम्बः। अग्नावेवास्याँग्निहोत्र हुतं भवति। दुर्भाङ्स्तु नाध्यांसीत॥१९॥

यद्भान्ध्यासीत। यामेवाग्नावाहंतिं जुहुयात्। तामध्यांसीत। तस्माँद्भां नाध्यांसित्व्याः। यदिं दर्भान्न विन्देत्। अपसु होत्व्यम्। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांस्वेवास्यांग्निहोत्र॰ हुतं भविति। आपुस्तु न परिचक्षीत। यदापः परिचक्षीत॥२०॥

यामेवापस्वाहुंतिं जुहुयात्। तां परिचक्षीत। तस्मादापो न परिचक्ष्याः। मेध्यां च वा एतस्यामेध्या चं तनुवौ सर् सृज्येते। यस्याऽऽहिंताग्नेर्न्यैर्ग्निभिर्ग्नयः सर्मुज्यन्तै। अग्नये विविचये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निवंपेत्। मेध्यां चैवास्यामेध्यां चं तनुवौ व्यावंत्यति। अग्नये व्रतपंतये पुरोडाशंम्ष्टाकंपालं निवंपेत्। अग्निमेव व्रतपंतिङ् स्वेनं भाग्धेयेनोपं धावति। स एवैनं व्रतमा लम्भयति॥२१॥ गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकः। अग्निरिन्द्रस्त्वष्टा बृह्स्पतिः। पृथिव्यामवं चुश्चोतैतत्। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचैः। रेतो वा एतद्वाजिनमाहिताग्नेः। यदिग्निहोत्रम्। तद्यथ्सवेत। रेतोऽस्य वाजिन्ड् स्रवेत्। गर्भ्ड् स्रवंन्तमग्दमंकुरित्यांह। रेते एवास्मिन्वाजिनं दधाति॥२२॥

अग्निरित्यांह। अग्निर्वे रेतोधाः। रेतं एव तर्द्दधाति। इन्द्र् इत्यांह। इन्द्रियमेवास्मिन्दधाति। त्वष्टेत्यांह। त्वष्टा वै पंशूनां मिथुनाना रे रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। बृह्स्पितिरित्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पितिः। ब्रह्मणैवास्मै प्रजाः प्र जनयित। पृथिव्यामव चुश्चोतैतिदत्यांह। अस्यामेवैन्त्प्रतिष्ठापयित। नाभिप्राप्नोति निर्ऋतिं पराचेरित्यांह। रक्षंसामपंहत्यै॥२३॥

अजाऽग्नावेवास्याँग्निहोत्रः हुतं भेविति भवत्यासीत परिचक्षीत लम्भयित दधाति देवानां बृह्स्पतिः पश्चं च (वि वै यद्यन्यमुजायां ब्राह्मणस्यं दर्भस्तम्बें'ऽपसु होत्व्यम्॥)॥

याः पुरस्तांत्प्रस्रवंन्ति। उपरिष्टाध्सर्वतंश्च याः। ताभी रश्मिपंवित्राभिः। श्रृद्धां यज्ञमा रंभे। देवां गातुविदः। गातुं यज्ञायं विन्दत। मनस्स्पतिना देवेनं। वातांद्यज्ञः प्र युज्यताम्। तृतीयंस्यै दिवः। गायत्रिया सोम् आभृंतः॥२४॥

सोमपीथाय सन्नंयितुम्। वर्कलमन्तरमा दंदे। आपों देवीः शुद्धाः स्थं। इमा पात्राणि शुन्धत। उपातुङ्क्यांय देवानांम्। पूर्णवल्कमुत शुन्धत। पयों गृहेषु पयों अघ्नियासुं। पयों वृथ्सेषु पय इन्द्रांय ह्विषे ध्रियस्व। गायत्री पंर्णवृत्केनं। पयः सोमं करोत्विमम्॥२५॥

अग्निं गृह्णामि सुरथं यो मंयोभूः। य उद्यन्तंमारोहंति सूर्यमहें। आदित्यं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्। श्वो यज्ञायं रमतां देवतांभ्यः। वसूत्रुद्रानादित्यान्। इन्द्रेण सह देवताः। ताः पूर्वः परि गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाः। इमामूर्जं पश्चद्शीं ये प्रविष्टाः। तान्देवान्परि गृह्णामि पूर्वः॥२६॥

अग्निर्हंव्यवाडिह ताना वंहतु। पौर्णमास हिविरिदमेंषां मिये। आमावास्य हिविरिदमेंषां मिये। अन्तराऽग्नी पृशवंः। देवस् सदमा गंमन्। तान्पूर्वः पिरं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयां। इह प्रजा विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। ताः पूर्वः पिरं गृह्णामि॥२७॥

स्व आयतंने मनीषयाँ। इह पृशवों विश्वरूपा रमन्ताम्। अग्निं गृहपंतिम्भि संवसानाः। तान्पूर्वः परिं गृह्णामि। स्व आयतंने मनीषयाँ। अयं पिंतृणाम्ग्निः। अवाङ्ख्या पितृभ्य आ। तं पूर्वः परिं गृह्णामि। अविषन्नः पितुं करत्। अजस्त्रं त्वा संभापालाः॥२८॥

विज्ञयभांगुर् सिमंन्धताम्। अग्नं दीदांय मे सभ्य। विजित्ये श्रदः श्तम्। अन्नमावस्थीयम्। अभि हंराणि श्रदः श्तम्। आवस्थे श्रियं मन्नम्। अहिर्बुध्नियो नि यंच्छतु। इदम्हम्ग्रिज्येष्ठेभ्यः। वसुभ्यो युज्ञं प्रब्नंवीमि। इदम्हमिन्द्रंज्येष्ठेभ्यः॥२९॥

रुद्रेभ्यो यज्ञं प्र ब्रंबीमि। इदम्हं वर्रणज्येष्ठेभ्यः। आदित्येभ्यो यज्ञं प्र ब्रंबीमि। पर्यस्वतीरोषंधयः। पर्यस्वद्वीरुधां पर्यः। अपां पर्यसो यत्पर्यः। तेन् मामिन्द्र स॰ सृंज। अग्नै व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्मे राध्यताम्। वार्यौ व्रतपत् आदित्य व्रतपते॥३०॥

वृतानां व्रतपते वृतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। इमां प्राचीमुदीचीम्। इष्मूर्जमिभ सङ्स्कृताम्। बहुपूर्णामशुष्काग्राम्। हरामि पशुपामहम्। यत्कृष्णो रूपं कृत्वा। प्राविश्वस्त्वं वनस्पतीन्। तत्स्त्वामेकविश्शित्धा। सम्भेरामि सुसम्भृतां॥३१॥

त्रीन्परिधी इस्तिम्नः समिधः। यज्ञायुरनुसश्चरान्। उपवेषं मेक्षणं धृष्टिम्। सं भेरामि सुसम्भृता। या जाता ओषधयः। देवेभ्यंस्त्रियुगं पुरा। तासां पर्व राध्यासम्। परिस्तरमाहरन्। अपां मेध्यं यज्ञियम्। सदेव इशिवमंस्तु मे॥३२॥

आच्छेत्ता वो मा रिषम्। जीवांनि श्ररदेः श्तम्। अपेरिमितानां परिमिताः। सन्नेह्ये सुकृताय कम्। एनो मा निगांङ्कतमच्चनाहम्। पुनंरुत्थायं बहुला भंवन्तु। स्कृदाच्छिन्नं ब्रुहिरूणांमृदु। स्योनं पितृभ्यंस्त्वा भराम्यहम्। अस्मिन्थ्सीदन्तु मे पितर्रः सोम्याः। पितामहाः प्रिपितामहाश्चानुगैः सह॥३३॥

त्रिवृत्पंलाशे दर्भः। इयाँन्प्रादेशसंम्मितः। यज्ञे प्वित्रं पोतृंतमम्। पयो हृव्यं करोतु मे। इमौ प्राणापानौ। यज्ञस्याङ्गांनि सर्वृशः। आप्याययंन्तौ सश्चरताम्। प्वित्रे हव्यशोधंने। प्वित्रे स्थो वैष्ण्वी। वायुर्वां मनंसा पुनातु॥३४॥

अयं प्राणश्चापानश्चं। यजमान्मपिं गच्छताम्। यज्ञे ह्यभूतां पोतारौ। पवित्रे हव्यशोधने। त्वया वेदिं विविदुः पृथिवीम्। त्वयां यज्ञो जांयते विश्वदानिः। अच्छिद्रं यज्ञमन्वेषि विद्वान्। त्वया होता सन्तनोत्यर्धमासान्। त्रयस्त्रिष्शोऽसि तन्तूनाम्। पवित्रेण सहागिहि॥३५॥

शिवय र चुंरिभ्धानीं। अघ्नियामुपं सेवताम्। अप्रेम्न स्साय यज्ञस्यं। उखे उपद्धाम्यहम्। पृशुभिः सन्नीतं बिभृताम्। इन्द्रांय शृतं दिधं। उपवेषोऽसि यज्ञायं। त्वां परिवेषमधारयन्। इन्द्रांय हिवः कृण्वन्तः। शिवः शृग्मो भेवासि नः॥३६॥

अमृंन्मयन्देवपात्रम्। यज्ञस्याऽऽयुंषि प्र युंज्यताम्। तिरः पिवत्रमितनिताः। आपो धारय मातिगः। देवेनं सिवतोत्पूताः। वसोः सूर्यस्य रिश्मिभिः। गां दोहपिवते रज्जुम्। सर्वा पात्राणि शुन्धत। पृता आ चंरन्ति मधुंमहुहानाः। प्रजावतीर्यशसो विश्वरूपाः॥३७॥ बह्वीर्भवंन्तीरुप्जायंमानाः। इह व इन्द्रों रमयतु गावः। पूषा स्थं। अयुक्ष्मा वंः प्रजया सः सृंजािम। रायस्पोषंण बहुलाभवंन्तीः। ऊर्जं पयः पिन्वंमाना घृतं चं। जीवो जीवंन्तीरुपंवः सदेयम्। द्यौश्चेमं युज्ञं पृथिवी च सन्दुंहाताम्। धाता सोमेन सह वातेन वायुः। यर्जमानाय द्रविणं दधातु॥३८॥

उथ्सं दुहन्ति कुलशं चतुंर्बिलम्। इडाँ देवीं मधुंमती १ सुवर्विदम्। तदिन्द्राग्नी जिन्वत १ सूनृतांवत्। तद्यजंमान-ममृतत्वे देधातु। कामधुक्षः प्र णौ ब्रूहि। इन्द्रांय हुविरिन्द्रियम्। अमूं यस्यां देवानांम्। मृनुष्यांणां पयो हितम्। बहु दुग्धीन्द्रांय देवेभ्यः। हुव्यमा प्यांयतां पुनः॥३९॥

वृथ्सेभ्यों मनुष्येंभ्यः। पुनर्दोहायं कल्पताम्। यज्ञस्य सन्तंतिरसि। यज्ञस्यं त्वा सन्तंतिमनु सन्तंनोमि। अदंस्तमिस् विष्णंवे त्वा। यज्ञायापि दधाम्यहम्। अद्भिरिक्तेन पात्रेण। याः पूताः परिशेरते। अयं पयः सोमं कृत्वा। स्वां योनिमिपं गच्छतु॥४०॥

पूर्णवल्कः प्वित्रम्। सौम्यः सोमाद्धि निर्मितः। इमौ पूर्णं चं दुर्भं चं। देवाना र हव्यशोधंनौ। प्रातुर्वेषायं गोपाय। विष्णों ह्व्यर हि रक्षंसि। उभावृग्नी उपस्तृणते। देवता उपवसन्तु मे। अहं ग्राम्यानुपं वसामि। मह्यं गोपंतये पृशून्॥४१॥

आर्भृत हुमं गृह्णाम् पूर्वस्ताः पूर्वः परिंगृह्णामि सभापाला इन्द्रंज्येष्ठेभ्य आर्दित्य व्रतपते सुसम्भृतां मे सह पुंनातु गहि नो विश्वरूपा दधातु पुनर्गच्छतु पृश्न्न (याः पुरस्तांदिमामूर्जीमह प्रजा हुह पृशवोऽयं पिंतृणामृक्रिः।)॥———[४]

देवां देवेषु पराँकमध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु। द्वितीयास्तृतीयेषु। त्रिरंकादशा इह मांऽवत। इदश् शंकेयं यदिदं क्रोमिं। आत्मा करोत्वात्मनें। इदं केरिष्ये भेषजम्। इदं में विश्वभेषजा। अश्विना प्रावंतं युवम्। इदमृहश् सेनांया अभीत्वंये॥४२॥

मुख्नपोंहामि। सूर्यं ज्योतिर्वि भांहि। महुत इंन्द्रियायं। आ प्यायतां घृतयोंनिः। अग्निर्हृव्याऽनुं मन्यताम्। खर्मङ्क्ष् त्वचंमङ्क्षा सुरूपं त्वां वसुविदम्। पृशूनां तेजंसा। अग्नये जुष्टंमभि घारयामि। स्योनं ते सदेनं करोमि॥४३॥

घृतस्य धारंया सुशेवं कल्पयामि। तस्मिन्थ्सीदामृते प्रतिं तिष्ठ। ब्रीहीणां मेध सुमन्स्यमानः। आर्द्रः प्रथसुर्भुवंनस्य गोपाः। शृत उथ्स्नांति जनिता मंतीनाम्। यस्तं आत्मा पशुषु प्रविष्टः। देवानां विष्ठामनु यो वितस्थे। आत्मन्वान्थ्सोम घृतवान् हि भूत्वा। देवान्गंच्छ सुवंविन्द यजमानाय मह्मम्। इरा भूतिः पृथिव्ये रसो मोत्क्रंमीत्॥४४॥

देवाः पितरः पितंरो देवाः। योऽहमंस्मि स सन् यंजे। यस्यांस्मि न तम्नतरेमि। स्वं मं इष्टश् स्वं दत्तम्। स्वं पूर्तश् स्वश् श्रान्तम्। स्वश् हुतम्। तस्यं मेऽग्निरुंपद्रष्टा। वायुरुंपश्रोता। आदित्यों ऽनुख्याता। द्यौः पिता॥४५॥

पृथिवी माता। प्रजापंतिर्बन्धुः। य एवास्मि स सन् यंजे। मा भेर्मा संविक्था मा त्वां हिश्सिषम्। मा ते तेजोऽपं क्रमीत्। भरतमुद्धेरेमनुंषिश्च। अवदानांनि ते प्रत्यवदास्यामि। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। यदंवदानांनि तेऽवद्यन्। विलोमाकांर्षमात्मनंः॥४६॥

आज्येन प्रत्यंनज्म्येनत्। तत्त् आ प्यायतां पुनेः। अज्यायो यवमात्रात्। आव्याधात्कृत्यतामिदम्। मा रूरुपाम यज्ञस्यं। शुद्ध स्वष्टिमिद हिवः। मनुना दृष्टां घृतपंदीम्। मित्रावरुणसमीरिताम्। दक्षिणार्धादसंम्भिन्दन्। अवंद्याम्येकतोमुंखाम्॥४७॥

इडें भागं जुंषस्व नः। जिन्व गा जिन्वार्वतः। तस्याँस्ते भक्षिवाणः स्याम। सर्वात्मानः सर्वगंणाः। ब्रध्न पिन्वंस्व। ददंतो मे मा क्षांयि। कुर्वतो मे मोपंदसत्। दिशां क्रुप्तिंरिस। दिशों मे कल्पन्ताम्। कल्पंन्तां मे दिशः॥४८॥

देवींश्च मानुंषिश्च। अहोरात्रे में कल्पेताम्। अर्धमासा में कल्पन्ताम्। मासां मे कल्पन्ताम्। ऋतवों मे कल्पन्ताम्। सुंवृथ्यरो में कल्पताम्। क्रृप्तिरिस् कल्पंतां मे। आशांनां त्वाऽऽशापालेभ्यः। चृतुभ्यों अमृतेभ्यः। इदं भूतस्याध्यंक्षेभ्यः॥४९॥ विधेमं ह्विषां वयम्। भजंतां भागी भागम्। मा भागोऽभंक्ता निरंभागं भंजामः। अपस्पिन्व। ओषंधीर्जिन्व। द्विपात्पांहि। चतुंष्पादव। दिवो वृष्टिमेरंय। ब्राह्मणानांमिद॰ हविः॥५०॥

सोम्यानारं सोमपीथिनाम्। निर्भक्तो ब्राह्मणः। नेहा ब्राह्मणस्यास्ति। समंङ्कां ब्रह्मरह्विषां घृतेनं। समादित्यैर्वस्ंभिः सं मुरुद्भिः। समिन्द्रेण विश्वेभिर्देवभिरङ्काम्। दिव्यं नभो गच्छतु यथ्स्वाहाँ। इन्द्राणीवांविधवा भूयासम्। अदितिरिव सुपुत्रा। अस्थूरि त्वां गार्हपत्य॥५१॥

उपनिषंदे सुप्रजास्त्वायं। सं पत्नी पत्यां सुकृतेनं गच्छताम्। यज्ञस्यं युक्तौ धुर्यावभूताम्। सञ्जानानौ विजंहतामरांतीः। दिवि ज्योतिरजरमा रंभेताम्। दशंते तनुवो यज्ञ यज्ञियाः। ताः प्रीणातु यजंमानो घृतेनं। नारिष्ठयौः प्रिशिषमीडंमानः। देवानां दैव्येऽपि यजंमानोऽमृतोऽभूत्। यं वां देवा अंकल्पयन्॥५२॥

ऊर्जी भाग श्रांतऋतू। एतद्वां तेनं प्रीणानि। तेनं तृप्यतम १ हहै। अहं देवाना रे सुकृतांमस्मि लोके। ममेदिम् छं न मिथुर्भवाति। अहं नारिष्ठावनं यजामि विद्वान्। यदांभ्यामिन्द्रो अदंधाद्वाग्धेयम्। अदांरसृद्भवत देवसोम। अस्मिन् यज्ञे मंरुतो मृडता नः। मा नो विदद्भिभामो अशंस्तिः॥ ५३॥

मा नो विदद्धुजना द्वेष्या या। ऋष्मं वाजिनं वयम्। पूर्णमांसं यजामहे। स नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष स्वाहाँ। प्राणायं सुराधंसे। पूर्णमांसाय स्वाहाँ। अमावास्यां सुभगां सुशेवाँ। धेनुरिव भूयं आप्यायंमाना। सा नो दोहता स्वीर्यम्। रायस्पोष सहस्रिणम्। अपानायं सुराधंसे। अमावास्यांये स्वाहाँ। अभि स्तृणीहि परि धेहि वेदिम्। जामिं मा हि सीरमुया शयांना। होतृषदंना हरिताः सुवर्णाः। निष्का इमे यजंमानस्य ब्रिश्ने॥ ५४॥

अभीत्वंर्ये करोमि क्रमीत्पिताऽऽत्मनं एकतो मुंखां में दिशोऽध्यंक्षेभ्यो ह्विर्गार्हपत्या कल्पयुत्रशस्तिः सा नौ दोहतार सुवीर्यर्थं सप्त चं॥———[५]

परिस्तृणीत् परिधत्ताग्निम्। परिहितोऽग्निर्यजंमानं भुनक्तु। अपा रस् ओषंधीना र सुवर्णः। निष्का इमे यजंमानस्य सन्तु कामदुर्घाः। अमुत्रामुष्मिं क्षोके। भूपंते भुवंनपते। महुतो भूतस्यं पते। ब्रह्माणं त्वा वृणीमहे। अहं भूपंतिरहं भुवंनपतिः। अहं महुतो भूतस्य पतिः॥५५॥

देवनं सिवता प्रसूत् आर्त्वं ज्यं करिष्यामि। देवं सिवतरेतं त्वां वृणते। बृह्स्पितं दैव्यं ब्रह्माणम्। तदहं मनसे प्र ब्रंवीमि। मनों गायित्रये। गायत्री त्रिष्टुभाँ। त्रिष्टुज्जगंत्ये। जगंत्यनुष्टुभाँ। अनुष्टुक्पुङ्क्षी। पुङ्किः प्रजापंतये॥५६॥

प्रजापंतिर्विश्वेंभ्यो देवभ्यः। विश्वे देवा बृह्स्पतंये। बृह्स्पतिर्ब्रह्मणे। ब्रह्म भूर्भुवः सुवंः। बृह्स्पतिर्देवानां ब्रह्मा। अहं मनुष्याणाम्। बृहंस्पते युज्ञं गोपाय। इदं तस्मै हुम्यं करोमि। यो वो देवाश्चरंति ब्रह्मचर्यम्। मेधावी दिक्षु मनसा तपस्वी॥५७॥

अन्तर्दूतश्चरित मानुंषीषु। चतुंः शिखण्डा युवतिः सुपेशाँः। घृतप्रतीका भुवनस्य मध्यें। मुर्मृज्यमाना मह्ते सौभंगाय। मह्यं धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। भूमिर्भूत्वा महिमानं पुपोष। ततो देवी वर्धयते पया सि। यज्ञियां यज्ञं वि च यन्ति शं चं। ओषंधीरापं इह शक्वरिश्च। यो मां हृदा मनसा यश्चं वाचा॥५८॥

यो ब्रह्मणा कर्मणा द्वेष्टिं देवाः। यः श्रुतेन् हृदंयेनेष्णृता चं। तस्यैन्द्र वज्रेण शिरंश्छिनद्मि। ऊर्णामृदु प्रथमानः स्योनम्। देवेभ्यो जुष्ट्र सदंनाय ब्रुहिः। सुवर्गे लोके यर्जमान्र हि धेहि। मां नाकस्य पृष्ठे पंरमे व्योमन्। चर्तुः शिखण्डा युवृतिः सुपेशाः। घृतप्रतीका व्युनानि वस्ते। साऽऽस्तीर्यमाणा मह्ते सौभंगाय॥५९॥

सा में धुक्ष्व यजंमानाय कामान्। शिवा चं मे शृग्मा चैधि। स्योना चं मे सुषदां चैधि। ऊर्जस्वती च मे पर्यस्वती चैधि। इषमूर्जं मे पिन्वस्व। ब्रह्म तेजों मे पिन्वस्व। क्षत्रमोजों मे पिन्वस्व। विश्वं पृष्टिं मे पिन्वस्व। आयुंर्न्नाद्यं मे पिन्वस्व। प्रजां पुशून्में पिन्वस्व॥६०॥

अस्मिन् यज्ञ उप भूय इन्नु में। अविक्षोभाय परिधीं देधामि। धूर्ता धुरुणो धरीयान्। अग्निर्द्वेषा १ सि निरितो नुंदाते। विच्छिनिद्यो विधृतीभ्या १ सपत्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। विशो यन्नाभ्यां विध्माम्येनान्। अह १ स्वानां मृत्तमो ऽसानि देवाः। विशो यन्ने नुदमां ने अरांतिम्। विश्वं पाप्मान् ममंतिं दुर्मरायुम्॥ ६१॥

सीदंन्ती देवी सुंकृतस्यं लोके। धृतीं स्थो विधृंती स्वधृंती। प्राणान्मियं धारयतम्। प्रजां मियं धारयतम्। पश्नमियं धारयतम्। अयं प्रस्तर उभयंस्य धृतां। धृतां प्रयाजानांमुतानूंयाजानांम्। स दांधार समिधो विश्वरूपाः। तस्मिन्थ्सुचो अध्या सांदयामि। आ रोह पृथो जुंहु देवयानान्॥६२॥

यत्रर्षयः प्रथम्जा ये पुराणाः। हिरंण्यपक्षाऽजिरा सम्भृंताङ्गा। वहांसि मा सुकृतां यत्रं लोकाः। अवाहं बांध उपभृतां सपत्नान्। जातान्त्रातृंच्यान् ये चं जिन्ष्यमाणाः। दोहें यज्ञ सुद्धांमिव धेनुम्। अहमुत्तंरो भूयासम्। अधेरे मथ्सपत्नाः। यो मा वाचा मनंसा दुर्मरायुः। हृदाऽरांतीयादंभिदासंदग्ने॥६३॥

इदमंस्य चित्तमधंरं ध्रुवायाः। अहमुत्तरो भूयासम्।

अधेरे मथ्सपत्नाः। ऋष्भोऽसि शाक्तरः। घृताचीनाः सूनुः। प्रियेण नाम्नां प्रिये सदिस सीद। स्योनो में सीद सुषदः पृथिव्याम्। प्रथंयि प्रजयां पृश्भिः सुवर्गे लोके। दिवि सीद पृथिव्याम्नतिरक्षे। अहमुत्तरो भूयासम्॥६४॥

अधेरे मथ्सपत्नाः। इयः स्थाली घृतस्यं पूर्णा। अच्छिन्नपयाः शतधार उथ्सः। मारुतेन शर्मणा दैव्येन। यज्ञोऽसि सर्वतः श्रितः। सर्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। शतं में सन्त्वाशिषः। सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः। प्रजापंतिरसि सर्वतः श्रितः॥६५॥

स्वतो मां भूतं भविष्यच्छ्रंयताम्। श्वतं में सन्त्वाशिषंः।
सहस्रं मे सन्तु सूनृताः। इरावतीः पशुमतीः।
इदिमिन्द्रियम्मृतंं वीर्यम्। अनेनेन्द्रांय पृशवोऽचिकिथ्सन्।
तेनं देवा अवतोप् माम्। इहेष्मूर्जं यशः सह ओजः सनेयम्।
श्वतं मियं श्रयताम्। यत्पृंथिवीमचंर्त्तत्प्रविष्टम्॥६६॥

येनासिश्रुद्धल्मिन्द्रैं प्रजापंतिः। इदं तच्छुकं मधुं वाजिनीवत्। येनोपरिष्टादिधेनोन्महेन्द्रम्। दिध् मां धिनोत्। अयं वेदः पृथिवीमन्विविन्दत्। गृहां सतीं गहेने गह्वरेषु। स विन्दतु यर्जमानाय लोकम्। अच्छिदं युज्ञं भूरिकर्मा करोत्। अयं युज्ञः समसदद्धविष्मान्। ऋचा साम्रा यर्जुषा देवतांभिः॥६७॥ तेनं लोकान्थ्सूर्यंवतो जयेम। इन्द्रंस्य सुख्यमंमृत्त्वमं-श्याम्। यो नः कनीय इह कामयाते। अस्मिन् युज्ञे यजमानाय मह्यम्। अप तिमेन्द्राग्नी भुवनान्नुदेताम्। अहं प्रजां वीरवंतीं विदेय। अग्ने वाजजित्। वाजं त्वा सरिष्यन्तम्। वाजं जेष्यन्तम्। वाजिनं वाजजितम्॥६८॥

वाज्जित्यायै सं मौजिर्म। अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। उपंहूतो द्योः पिता। उप मां द्यौः पिता ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्। आयुंषे वर्चसे। जीवात्वै पुण्यांय। उपंहूता पृथिवी माता। उप मां माता पृथिवी ह्वंयताम्। अग्निराग्नींप्रात्॥६९॥

आयुंषे वर्चसे। जीवात्वे पुण्यांय। मनो ज्योतिंर्जुषतामा-ज्यम्। विच्छिन्नं युज्ञ र सिम्मं दंधातु। बृह्स्पतिंस्तनुतािम्मं नंः। विश्वे देवा इह मांदयन्ताम्। यन्ते अग्न आवृश्वािमं। अहं वा क्षिपितश्चरन्। प्रजां च तस्य मूलं च। नीचैर्देवा नि वृश्वत॥७०॥

अग्ने यो नोंऽभिदासंति। समानो यश्च निष्ट्यः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदः। यं चाऽऽहं द्वेष्मि यश्च माम्। सर्वाङ्स्तानंग्ने सन्दंह। याङ्श्चाहं द्वेष्मि ये च माम्। अग्ने वाजजित्। वाजंं त्वा सस्वा॰सम्॥७१॥

वाजं जिगिवा रसम्। वाजिनं वाज्जितम्। वाज्जित्यायै

सम्मां जिर्म। अग्निमंत्रादम्त्राद्यांय। वेदिंर्बृर्हः शृतः हृविः। इध्मः परिधयः सुर्चः। आज्यं यज्ञ ऋचो यर्जुः। याज्यांश्च वषद्वाराः। सं मे सन्नंतयो नमन्ताम्। इध्मसन्नहंने हुते॥७२॥

दिवः खीलोऽवंततः। पृथिव्या अध्युत्थितः। तेनां सहस्रंकाण्डेन। द्विषन्तः शोचयामिस। द्विषन्मं बहु शोंचतु। ओषंधे मो अह १ शुंचम्। यज्ञ नमंस्ते यज्ञ। नमो नमंश्च ते यज्ञ। शिवेनं मे सन्तिष्ठस्व। स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व॥७३॥

सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व। ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व। यज्ञस्यर्ष्ट्विमनु सन्तिष्ठस्व। उपं ते यज्ञ नमः। उपं ते नमः। उपं ते नमः। त्रिष्फलीक्रियमाणानाम्। यो न्यङ्गो अवशिष्यंते। रक्षंसां भाग्धेयम्। आपुस्तत्प्र वंहतादितः॥७४॥

उलूखंले मुसंले यच् शूर्पं। आशिश्लेषं दृषि यत्कपालैं। अवप्रुषों विप्रुषः संयंजािम। विश्वे देवा ह्विरिदं जुंषन्ताम्। यज्ञे या विप्रुषः सन्तिं बह्वीः। अग्नौ ताः सर्वाः स्विष्टाः सुहुंता जुहोिम। उद्यन्नद्यमित्र महः। सपत्नांन्मे अनीनशः। दिवैनान् विद्युतां जिहा निम्रोचन्नधंरान्कृिध॥७५॥

उद्यन्नद्य वि नों भज। पिता पुत्रेभ्यो यथाँ। दीर्घायुत्वस्यं हेशिषे। तस्यं नो देहि सूर्य। उद्यन्नद्य मित्रमहः। आरोह्नन्नत्तंरां दिवम्ं। हुद्रोगं ममं सूर्य। हुरिमाणं च नाशय। शुकेषु मे हरिमाणम्। रोपणाकांसु दध्मसि॥७६॥ अथों हारिद्रवेषुं मे। हुरिमाणुं नि देध्मसि। उदंगाद्यमांदित्यः। विश्वेन सहसा सह। द्विषन्तुं ममं रन्थयन्। मो अहं द्विष्तो रंधम्। यो नः शपादशंपतः। यश्चे नः शपंतः शपात। उषाश्च तस्मै निम्नुक्रं। सर्वं पापः समूहताम्॥७७॥

यो नेः स्पत्नो यो रणंः। मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतः। मा तस्योच्छेषि किश्चन। अवसृष्टुः पर्यापत। शरो ब्रह्मंस॰शितः। गच्छाऽमित्रान्प्र विंश। मैषां कश्चनोच्छिषः॥७८॥

पतिः प्रजापंतये तपुस्वी वाचा सौभंगाय पुश्न्में पिन्वस्व दुर्मरायुं देवयानांनग्नेऽन्तरिक्षेऽहमुत्तरो भूयासं प्रजापंतिरिस सुर्वतः श्रितः प्रविष्टं देवतांभिर्वाज्ञजितं पृथिवी ह्वंयतामुग्निराश्रीप्राद्वश्चत ससृवाश्सरं हुते स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्वेतः कृषि दथ्मस्यूहतामुष्टौ चं॥————[६]

सक्षेदं पंश्य। विधंतिरिदं पंश्य। नाकेदं पंश्य। रमितः पिनेष्ठा। ऋतं वर्षिष्ठम्। अमृतायान्याहुः। सूर्यो विरेष्ठो अक्षिभिविभाति। अनु द्यावापृथिवी देवपुत्रे। दीक्षाऽसि तपंसो योनिः। तपोऽसि ब्रह्मणो योनिः॥७९॥

ब्रह्मांसि क्ष्रतस्य योनिः। क्ष्रत्रमंस्यृतस्य योनिः। क्ष्रतमंसि भूरा रंभे। श्रद्धां मनंसा। दीक्षां तपंसा। विश्वंस्य भुवंनस्याधिपत्नीम्। सर्वे कामा यजंमानस्य सन्तु। वातं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे। प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नो मृत्योस्रायतां पात्व १ हंसः॥८०॥

ज्योग्जीवा ज्रामंशीमिह। इन्द्रं शाकर गायतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर त्रिष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर् जगंतीं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकरानुष्टुम्ं प्र पंद्ये। तान्ते युनज्मि। इन्द्रं शाकर पृङ्किं प्रपंद्ये॥८१॥

तान्ते युनज्मि। आऽहं दीक्षामंरुहमृतस्य पत्नीम्। गायत्रेण् छन्दंसा ब्रह्मणा च। ऋतः सत्येऽधायि। सत्यमृतेऽधायि। ऋतं च मे सत्यं चाभूताम्। ज्योतिरभूवः सुवरगमम्। सुवर्गं लोकं नाकंस्य पृष्ठम्। ब्र्ष्नस्यं विष्टपंमगमम्। पृथिवी दीक्षा॥८२॥

तयाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। ययाऽग्निर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। अन्तिरिक्षं दीक्षा। तयां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। ययां वायुर्दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। द्यौर्दीक्षा। तयांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः। ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितः॥८३॥

तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। दिशों दीक्षा। तयां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। ययां चुन्द्रमां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। आपों दीक्षा। तया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया वरुणो राजां दीक्षयां दीक्षितः। तयाँ त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। ओषंधयो दीक्षा॥८४॥

तया सोमो राजां दीक्षयां दीक्षितः। यया सोमो राजां

दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। वाग्दीक्षा। तयां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। ययां प्राणो दीक्षयां दीक्षितः। तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयामि। पृथिवी त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। अन्तरिक्षं त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। द्योस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्॥८५॥

दिशंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। आपंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। ओषंधयस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। वाक्का दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षताम्। ऋचंस्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। सामानि त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। अहंश्च रात्रिंश्च। कृषिश्च वृष्टिंश्च। त्विषिश्चापंचितिश्च॥८६॥

आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्च सूनृतां च। तास्त्वा दीक्षंमाणमनुं दीक्षन्ताम्। स्वे दक्षे दक्षंपितृह सींद। देवाना र्रं सुम्नो महते रणांय। स्वास्स्थस्तनुवा संविंशस्व। पितेवैधि सूनव आ सुशेवंः। शिवो मां शिवमा विंश। सृत्यं मं आत्मा। श्रद्धा मेऽक्षिंतिः॥८७॥

तपों मे प्रतिष्ठा। स्वितृप्रंस्ता मा दिशों दीक्षयन्तु। स्त्यमंस्मि। अहं त्वदंस्मि मदंसि त्वमेतत्। ममांसि योनिस्तव योनिरस्मि। ममैव सन्वहं ह्व्यान्यंग्ने। पुत्रः पित्रे लोंककृञ्जांतवेदः। आजुह्वांनः सुप्रतींकः पुरस्तांत्। अग्ने स्वां योनिमा सींद साध्या। अस्मिन्थ्स्थस्थे अध्युत्तंरस्मिन्॥८८॥ विश्वं देवा यजंमानश्च सीदत। एकंमिषे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। च्रत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। पश्चं पृशुभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। षड्रायस्पोषांय विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सप्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। स्प्त स्प्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वाऽन्वंतु। सखांयः स्प्तपंदा अभूम। सख्यं ते गमेयम्॥८९॥

स्ख्याते मा योषम्। स्ख्यान्मे मा योष्ठाः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते पृथिवी पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्तेऽन्तिरक्षं पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते द्यौः पार्दः। साऽसिं सुब्रह्मण्ये। तस्याँस्ते दिशः पार्दः॥९०॥

प्रोरंजास्ते पश्चमः पादंः। सा न इष्मूर्जं धुक्ष्व। तेर्जं इिन्द्रियम्। ब्रह्मवर्चसम्न्नाद्यम्। वि मिमे त्वा पर्यस्वतीम्। देवानां धेनु सुद्धामनंपस्फुरन्तीम्। इन्द्रः सोमं पिबत्। क्षेमो अस्तु नः। इमान्नराः कृणुत् वेदिमेत्यं। वसुंमती रूद्रवंतीमादित्यवंतीम्॥९१॥

वर्ष्मन्दिवः। नामां पृथिव्याः। यथाऽयं यजंमानो न रिष्येत्। देवस्यं सिवतुः स्वे। चतुः शिखण्डा युवतिः सुपेशाः। घृतप्रंतीका भुवंनस्य मध्ये। तस्यारं सुपूर्णाविध् यो निविष्टो। तयोदिवानामिधं भाग्धेयम्। अप जन्यं भ्यं नुंद। अपं चुक्राणि वर्तय। गृहर सोमंस्य गच्छतम्। न वा उं वेतिन्त्रियसे न रिष्यसि। देवा इदेषि पृथिभिः सुगेभिः। यत्र यन्ति सुकृतो नापिं दुष्कृतः। तत्रं त्वा देवः संविता देधातु॥९२॥

ब्रह्मणो योनिर॰हंसः पृङ्कि प्रपंद्ये दीक्षा ययांऽऽदित्यो दीक्षयां दीक्षितस्तयां त्वा दीक्षयां दीक्षयाम्योपंधयो दीक्षा द्यौस्त्वा दीक्षमाणमन् दीक्षतामपंचितिश्वाक्षिंति्रुत्तरस्मिन्गमेयं दिशः पादं आदित्यवंतीं वर्तय पश्चं च

यदस्य पारे रर्जसः। शुक्रं ज्योतिरजायत। तन्नः पर्षदित द्विषंः। अग्ने वैश्वानर् स्वाहाँ। यस्माँद्भीषाऽवांशिष्ठाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीदुषें। यस्माँद्भीषा न्यषंदः। ततों नो अभयं कृधि॥९३॥

प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषें। उद्गंस्र तिष्ठ् प्रति तिष्ठ् मारिषः। मेमं युज्ञं यज्ञमानं च रीरिषः। सुव्गें लोके यज्ञमान् हि धेहि। शन्नं एधि द्विपदे शं चतुंष्पदे। यस्माद्भीषाऽवेपिष्ठाः पुलायिष्ठाः समज्ञांस्थाः। ततों नो अभयं कृधि। प्रजाभ्यः सर्वाभ्यो मृड। नमों रुद्रायं मीढुषे॥९४॥

य इदमकंः। तस्मै नमंः। तस्मै स्वाहाँ। न वा उंवेतिन्प्रंयसे। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। यज्ञस्य हि स्थ ऋत्वियौं। इन्द्रांग्री चेतंनस्य च। हुताहुतस्यं तृप्यतम्। अहंतस्य हुतस्यं च। हुतस्यं च। अहंतस्य हुतस्यं च। इन्द्रांग्री अस्य सोमंस्य। वीतं पिंबतं जुषेथांम्। मा यजंमानं तमों विदत्। मर्त्विजो मो इमाः प्रजाः। मा यः

सोमंमिमं पिबात्। स॰सृष्टमुभयं कृतम्॥९५॥

कृधि मीुढुषेऽहुंतस्य च सप्त चं॥

-[८]

अनागसंस्त्वा वयम्। इन्द्रंण् प्रेषिता उपं। वायुष्टं अस्त्वरश्माः। मित्रस्तं अस्त्वरश्माः। वर्रणस्ते अस्त्वरश्माः। वर्रणस्ते अस्त्वरश्माः। अपाङ्क्षया ऋतंस्य गर्भाः। भुवंनस्य गोपाः श्येनां अतिथयः। पर्वतानां ककुभः प्रयुतों नपातारः। व्युनेन्द्रई ह्वयत। घोषेणामींवाइश्चातयत॥९६॥

युक्ताः स्थ वहंत। देवा ग्रावांण इन्दुरिन्द्र इत्यंवादिषुः। एन्द्रंमचुच्यवुः पर्मस्याः परावतः। आऽस्माथ्स्धस्थात्। ओरोर्न्तरिक्षात्। आ सुंभूतमंसुषवुः। ब्रह्मवर्चसं म् आसुंषवुः। समरे रक्षाः स्यविषषुः। अपंहतं ब्रह्मज्यस्यं। वाक्रं त्वा मनेश्च श्रीणीताम्॥९७॥

प्राणश्चं त्वाऽपानश्चं श्रीणीताम्। चक्षुंश्च त्वा श्रोत्रं च श्रीणीताम्। दक्षंश्चत्वा बलं च श्रीणीताम्। ओजंश्च त्वा सहंश्च श्रीणीताम्। आयुंश्च त्वाऽज्ञरा चं श्रीणीताम्। आत्मा चं त्वा तुनूश्चं श्रीणीताम्। शृतोऽसि शृतं कृंतः। शृतायं त्वा शृतेभ्यंस्त्वा। यमिन्द्रंमाहुर्वरुणं यमाहुः। यं मित्रमाहुर्यमुं स्त्यमाहुः॥९८॥

यो देवानां देवतंमस्तपोजाः। तस्मै त्वा तेभ्यंस्त्वा। मिय त्यदिन्द्रियं महत्। मिय दक्षो मिय ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्घर्मो वि भांतु मे। आकूँत्या मनंसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। तस्य दोहंमशीमहि॥९९॥

तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भृक्षमंशीमिह। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यत्। मित्रो जनान्त्र स मित्र। यस्मान्न जातः परो अन्यो अस्ति। य आंविवेश भुवंनािन विश्वां। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। त्रीणि ज्योती १षि सचते स षोंडशी। एष ब्रह्मा य ऋत्वियः। इन्द्रो नामं श्रुतो गुणे॥१००॥

प्रते महे विदथे शश्सिष्ट् हरीं। य ऋत्वियः प्रते वन्वे। वनुषों हर्यतं मदम्ं। इन्द्रो नामं घृतं नयः। हरिभिश्चारु सेचंते। श्रुतो गण आ त्वां विशन्तु। हरिवर्पसङ्गिरेः। इन्द्राधिपतेऽधिपतिस्त्वं देवानांमिस। अधिपतिं माम्। आयुंष्मन्तं वर्चस्वन्तं मनुष्येषु कुरु॥१०१॥

इन्द्रंश्च सम्राङ्वरुंणश्च राजां। तो ते भृक्षं चंक्रतुरग्नं एतम्। तयोरन् भृक्षं भंक्षयामि। वाग्जुंषाणा सोमंस्य तृप्यतु। प्रजापंतिर्विश्वकर्मा। तस्य मनो देवं युज्ञेनं राध्यासम्। अर्थेगा अस्य जंहितः। अवसानंपतेऽवसानं मे विन्द। नमों रुद्रायं वास्तोष्पतंये। आयने विद्रवंणे॥१०२॥

उद्याने यत्परायंणे। आवर्तने विवर्तने। यो गोपायित तः हुवे। यान्यंपामित्यान्यप्रंतीत्तान्यस्मि। यमस्यं बुलिना चरामि। इहैव सन्तः प्रति तद्यांतयामः। जीवा जीवेभ्यो नि हंराम एनत्। अनुणा अस्मिन्नंनृणाः पर्रस्मिन्। तृतीयें लोके अनुणाः स्यांम। ये देवयानां उत पितृयाणाः॥१०३॥

सर्वान्यथे अंनृणा आक्षीयम। इदमूनु श्रेयी-ऽवसान्मा गंन्म। शिवे नो द्यावांपृथिवी उभे इमे। गोम्द्धनंवदश्वंवदूर्जस्वत्। सुवीरां वीरैरनु सश्चरेम। अर्कः प्वित्र रजंसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। द्यावांपृथिवी पर्यसा संविदाने। घृतं दुहाते अमृतं प्रपीने। प्वित्रंमकों रजंसो विमानः। पुनातिं देवानां भुवंनानि विश्वां। स्वज्योतिर्यशों महत्। अशीमहिं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥ स्वज्योतिर्यशों महत्। अशीमहिं गाधमुत प्रतिष्ठाम्॥१०४॥

उदंस्ताम्फ्सीथ्सिवता मित्रो अंर्यमा। सर्वान्मित्रांन-वधीद्युगेनं। बृहन्तं मामंकरद्वीरवंन्तम्। रथन्तरे श्रंयस्व स्वाहां पृथिव्याम्। वामदेव्ये श्रंयस्व स्वाहाऽन्तिरक्षे। बृह्ति श्रंयस्व स्वाहां दिवि। बृह्ता त्वोपंस्तभ्रोमि। आ त्वां ददे यशंसे वीर्याय च। अस्मास्वंिष्नया यूयं दंधाथेन्द्रियं पर्यः। यस्ते द्रुप्सो यस्तं उदुर्षः॥१०५॥

दैव्यः केतुर्विश्वं भुवंनमाविवेशं। स नः पाह्यरिष्ट्यै स्वाहां। अनुं मा सर्वो यज्ञोऽयमेतु। विश्वं देवा मुरुतः सामार्कः। आप्रियश्छन्दार्श्स निविदो यजूर्श्ष। अस्यै पृंथिव्यै यद्यज्ञियम्। प्रजापंतेर्वर्तिनमन् वर्तस्व। अनुंवीरैरन् राध्याम् गोभिः। अन्वश्वेरन् सर्वेरु पुष्टेः। अनुं प्रजया-ऽन्विन्द्रियेणं॥१०६॥

देवा नो यज्ञमृंजुधा नंयन्तु। प्रतिक्षत्रे प्रति तिष्ठामि राष्ट्रे। प्रत्यश्वेषु प्रति तिष्ठामि गोष्। प्रति प्रजायां प्रति तिष्ठामि भव्यै। विश्वंमन्याऽभि वावृधे। तद्न्यस्यामधिश्रितम्। दिवे चं विश्वंमंगे। पृथिव्यै चांकरं नमः। अस्कान्द्योः पृथिवीम्। अस्कांनृष्भो युवागाः॥१०७॥

स्कन्नेमा विश्वा भुवंना। स्कन्नो युज्ञः प्र जंनयतु। अस्कानजंनि प्राजंनि। आ स्कन्नाज्ञायते वृषां। स्कन्नात्प्र जंनिषीमहि। ये देवा येषांमिदं भागधेयं बभूवं। येषां प्रयाजा उतानूयाजाः। इन्द्रंज्येष्ठेभ्यो वरुणराजभ्यः। अग्निहोतृभ्यो देवेभ्यः स्वाहां। उत त्या नो दिवां मृतिः॥१०८॥

अदितिरूत्या गंमत्। सा शन्तांची मयंस्करत्। अप् स्निधंः। उत त्या दैव्यां भिषजां। शन्नंस्करतो अश्विनां। यूयातांम्स्मद्रपंः। अप् स्निधंः। शम्भिर्म्निर्मिस्करत्। शन्नंस्तपतु सूर्यः। शं वातों वात्वरुपाः॥१०९॥

अप स्निधंः। तदित्पदं न विचिकेत विद्वान्। यन्मृतः पुनंरप्येतिं जीवान्। त्रिवृद्यद्भुवंनस्य रथवृत्। जीवो गर्भो न मृतः स जीवात्। प्रत्यंस्मै पिपीषते। विश्वांनि विदुषे भर। अर्ङ्गमाय जग्मेवे। अपश्चाद्दघ्वने नरें। इन्दुरिन्दुमवांगात्। इन्दोरिन्द्रोऽपात्। तस्यं त इन्द्विन्द्रंपीतस्य मधुंमतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि॥११०॥

उदुर्ष इंन्द्रियेण गा मृतिरंर्पा अंगात्रीणिं च॥━—————————[१०]

ब्रह्मं प्रतिष्ठा मनंसो ब्रह्मं वाचः। ब्रह्मं युज्ञानारं हिविषामाज्यंस्य। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृत्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्। आश्रांवितमृत्याश्रांवितम्। वषंद्वृतमृत्यनूँक्तं च युज्ञे। अतिरिक्तं कर्मणो यचं हीनम्। युज्ञः पर्वाणि प्रतिरन्नेति कृत्पयन्। स्वाहांकृताऽऽहुंतिरेतु देवान्॥१११॥

यद्वो देवा अतिपादयांनि। वाचा चित्प्रयंतं देवहेर्डनम्। अरायो अस्मा १ अभिदुंच्छुनायतें। अन्यत्रास्मन्मं रुतस्तिन्निधेन्तन। ततं म् आपस्तदुं तायते पुनः। स्वादिष्ठा धीतिरुचथाय शस्यते। अय १ संमुद्र उत विश्वभेषजः। स्वाहांकृतस्य समृतृण्णुतर्भुवः। उद्वयं तमस्परि। उदुत्यं चित्रम्॥११२॥

ड्मं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासि प्रजापते। इमं जीवेभ्यः परिधिं दंधामि। मैषान्नुंगादपंरो अर्धमेतम्। शतं जीवन्तु श्ररदः पुरूचीः। तिरो मृत्युं दंधतां पर्वतेन। इष्टेभ्यः स्वाहा वषडिनिष्टेभ्यः स्वाहाँ। भेषजं दुरिष्ट्यै स्वाहा निष्कृत्यै स्वाहाँ। दौराँध्यै स्वाहा

दैवीभ्यस्तनूभ्यः स्वाहाँ॥११३॥

ऋद्धै स्वाह्य समृद्धै स्वाहाँ। यतं इन्द्र भयांमहे। ततों नो अभयं कृषि। मघंवञ्छ्गि तव तन्नं ऊतयेँ। वि द्विषो वि मृधो जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिः। वृत्रहा वि मृधो वृशी। वृषेन्द्रः पुर एतु नः। स्वस्तिदा अभयङ्करः। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्॥११४॥

आप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। अनौज्ञातं यदाज्ञांतम्। यज्ञस्यं क्रियते मिथुं। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। पुरुषसम्मितो युज्ञः। युज्ञः पुरुषसम्मितः। अग्ने तदंस्य कल्पय। त्व॰ हि वेत्थं यथात्थम्। यत्पांकत्रा मनसा दीनदंक्षा न। यज्ञस्यं मन्वते मर्तासः। अग्निष्टद्धोतौ क्रतुविद्विजानन्। यजिष्ठो देवा॰ ऋंतुशो यंजाति॥११५॥

देवाङ्श्चित्रं तुनूभ्यः स्वाहोनं पुर्रुषसम्मितोऽग्ने तर्दस्य कल्पय् पर्श्वं च॥=================================

यद्वेवा देव्हेडंनम्। देवांसश्चकृमा वयम्। आदित्या-स्तस्मांन्मा मुश्चत। ऋतस्यर्तेन् मामुत। देवां जीवनकाम्या यत्। वाचाऽनृंतमूदिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मामनेनसम्॥११६॥

ऋतेनं द्यावापृथिवी। ऋतेन् त्वः संरस्वति। ऋतान्मां मुश्रुताः हंसः। यद्न्यकृतमारिम। सृजात्शृः सादुत वां जामिशः सात्। ज्यायंसः शः सांदुत वा कनीयसः।

अनौज्ञातं देवकृतं यदेनंः। तस्मात्त्वम्स्माञ्जातवेदो मुमुग्धि। यद्वाचा यन्मनंसा। बाहुभ्यांमूरुभ्यांमष्ठीवज्ञांम्॥११७॥

शिश्त्रैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यद्धस्ताम्यां चकर् किल्बिषाणि। अक्षाणां व्युम्पिजिन्नेमानः। दूरेप्श्या चे राष्ट्रभृचं। तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानि। अदीव्यत्रृणं यदहं चकारं। यद्वादांस्यन्थ्सञ्ज्ञगारा जनेम्यः। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यन्मयि माता गर्भे स्ति॥११८॥

एनंश्चकार् यत्पता। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदां पिपेषं मातरं पितरम्। पुत्रः प्रमुंदितो धयन्। अहि स्तितौ पितरौ मया तत्। तदंग्ने अनृणो भंवामि। यदन्तिरक्षं पृथिवीमुत द्याम्। यन्मातरं पितरं वा जिहि स्मिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसः। यदाशसां निशसा यत्पराशसां॥११९॥

यदेनश्चकृमा नूर्तनं यत्पुराणम्। अग्निर्मा तस्मादेनसः। अति क्रामामि दुर्ति यदेनः। जहांमि रिप्रं पर्मे स्थस्थै। यत्र यन्ति सुकृतो नापि दुष्कृतः। तमा रोहामि सुकृतां नु लोकम्। त्रिते देवा अमृजतैतदेनः। त्रित एतन्मंनुष्येषु मामृजे। ततो मा यदि किश्चिदानुशे। अग्निर्मा तस्मादेनसः॥१२०॥

गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु। दुरिता यानिं चकृम। करोतु मार्मनेनसम्। दिवि जाता अफ्सु जाताः। या जाता ओषंधीभ्यः। अथो या अंग्रिजा आपंः। ता नेः शुन्धन्तु शुन्धंनीः। यदापो नक्तं दुरितं चर्राम। यद्वा दिवा नूतंनं यत्पुराणम्। हिरण्यवर्णास्तत् उत्पुनीत नः। इमं मे वरुण तत्त्वां यामि। त्वन्नों अग्ने स त्वन्नों अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं॥१२१॥

अनेनसंमधीवद्यारं सृति पंराशसांऽऽन्शेंऽग्निर्मा तस्मादेनंसः पुनीत नृत्तीणिं च (यहेवा देवां ऋतेनं सजातशृध्साद्यहाचा
यद्धस्तां-यामदींव्यं यन्मियं माता यदां पिपेष यद्नतिरंक्षं यदाशसाऽतिं क्रामामि त्रिते देवा दिवि जाता अपसु जाता
यदापं हुमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वत्रों अग्रे स त्वत्रों अग्रे त्वमंग्ने अयासिं।)॥————[१२]

यत्ते ग्राव्णां चिच्छिद्ः सोम राजन्। प्रियाण्यङ्गांनि स्विधिता परूर्षेष। तथ्मन्ध्रथ्स्वाज्येनोत वर्धयस्व। अनागसो अधिमथ्सङ्क्षयेम। यत्ते ग्रावां बाहुच्युंतो अचुंच्यवः। नरो यत्ते दुदुहुर्दक्षिणेन। तत्त आप्यायतां तत्ते। निष्ट्यायतां देव सोम। यत्ते त्वचं बिभिदुर्यच् योनिम्। यदास्थानात्प्रच्युंतो वेनसि त्मनां॥१२२॥

त्वया तथ्सोम गुप्तमंस्तु नः। सा नः सुन्धासंत्पर्मे व्योमन्। अहाच्छरीरं पर्यसा समेत्यं। अन्योन्यो भवति वर्णो अस्य। तस्मिन्वयमुपंहृतास्तवं स्मः। आ नो भज सदंसि विश्वरूपे। नृचक्षाः सोमं उत शुश्रुगंस्तु। मा नो वि हांसीद्गिरं आवृणानः। अनांगास्तनुवो वावृधानः। आ नो रूपं वहतु जायंमानः॥१२३॥

उपं क्षरन्ति जुह्वों घृतेनं। प्रियाण्यङ्गानि तवं वर्धयंन्तीः।

तस्मै ते सोम् नम् इद्वषंद्व। उपं मा राजन्थ्सुकृते ह्वंयस्व। सं प्राणापानाभ्या समु चक्षुंषा त्वम्। सङ् श्रोत्रेण गच्छस्व सोम राजन्। यत्त आस्थित शम् तत्ते अस्तु। जानीतान्नः सङ्गमेने पथीनाम्। एतं जानीतात्पर्मे व्योमन्। वृकाः सधस्था विद रूपमंस्य॥१२४॥

यदागच्छांत्पथिभिर्देवयानैः। इष्टापूर्ते कृणुतादाविरस्मे। अरिष्टो राजन्नगदः परेहि। नमस्ते अस्तु चक्षंसे रघूयते। नाकुमारोह सह यजंमानेन। सूर्यं गच्छतात्पर्मे व्योमन्। अभूद्देवः संविता वन्द्योनु नंः। इदानीमह्रं उपवाच्यो नृभिः। वि यो रत्ना भर्जति मानवेभ्यः। श्रेष्ठं नो अत्र द्रविणं यथा दर्धत्। उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादीध्याथामिह नंः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा श्तापाष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। आप्यांयस्व सन्ते॥१२५॥

त्मना जार्यमानोऽस्य दधृत्पश्चं च॥————[१३]

यिंदि से मनसा यर्च वाचा। यद्वा प्राणेश्वक्षंषा यत्र श्रोत्रेण। यद्रेतंसा मिथुनेनाप्यात्मनां। अद्भो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीर्मिये तेजं इन्द्रियम्। यद्वा साम्रा यजुंषा। पृशूनां चर्मन् ह्विषां दिदीक्षे। यच्छन्दों भिरोषं धी भिर्वन्स्पतौं। अद्भो लोका देधिरे तेजं इन्द्रियम्॥१२६॥ शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेर्ज इन्द्रियम्। येन् ब्रह्म येनं क्ष्रित्रम्। येनेंन्द्राग्नी प्रजा-पंतिः सोमो वर्रुणो येन् राजां। विश्वे देवा ऋषयो येनं प्राणाः। अन्द्यो लोका देधिरे तेर्ज इन्द्रियम्। शुक्रा दीक्षायै तपंसो विमोर्चनीः। आपो विमोक्रीमीय तेर्ज इन्द्रियम्। अपा पुष्पंमस्योषंधीना रूर्सः। सोमंस्य प्रियं धामं॥१२७॥

अग्नेः प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। इन्द्रंस्य प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। अपां पुष्पंमस्योषंधीना १ रसंः। सोमस्य प्रियं धामं। विश्वेषां देवानां प्रियतंम १ ह्विः स्वाहाँ। वय १ सोम व्रते तवं। मनस्तुनूषु पिप्रंतः। प्रजावंन्तो अशीमहि॥१२८॥

देवेभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। सोम्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। कृव्येभ्यः पितृभ्यः स्वाहाँ। देवांस इह मादयध्वम्। सोम्यांस इह मादयध्वम्। कव्यांस इह मादयध्वम्। अनंन्तरिताः पितरः सोम्याः सोमपीथात्। अपैतु मृत्युर्मृतं न आगन्। वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु। पर्णं वनस्पतिरिव॥१२९॥

अभि नंः शीयता १ र्यिः। सर्चतां नः शचीपतिः। परं मृत्यो अनु परेंहि पन्थांम्। यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नंः प्रजा १ रीरिषो मोत वीरान्। इदमूनु श्रेयोवसानमार्गन्म। यद्गोजिद्धनजिदेश्वजिद्यत्। पूर्णं वनस्पतेरिव। अभि नंः शीयता १ र्यिः। सर्चतां नः

शचीपतिः॥१३०॥

वनस्पतांबुद्धो लोका दंधिरे तेजं इन्द्रियं धामांशीमहीवाभिनः शीयता॰ रियरेकं च॥————[१४]

सर्वान् यद्विष्यंण्णेन् वि वै याः पुरस्ता्देवां देवेषु परिस्तृणीत् सक्षेदं यदस्य पारेंऽनागस् उदंस्ताम्प्रसीद्वहां प्रतिष्ठा यदेवा यत्ते ग्राव्ण्णा यदिंदीक्षे चतुंदंश॥१४॥ सर्वान्भूतिंमेव यामेवाप्स्वाहृंतिं ब्रुतानां पर्णवल्कः सोम्यानांमुस्मिन् युज्ञेऽग्रे यो नो ज्योग्जीवाः पुरोरंजाः प्रतेमहे ब्रह्मं प्रतिष्ठा गार्हंपत्यस्त्रिष्शदंत्तरश्रुतम्॥१३०॥ सर्वाञ्क्ष्वीपतिः॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके सप्तमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ अष्टमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः॥

साङ्ग्रहण्येष्ट्यां यजते। इमाञ्चनता सङ्गृह्णानीति। द्वादंशारत्नी रश्ना भंवति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावं रुन्धे। मौञ्जी भंवति। ऊर्ग्वे मुञ्जाः। ऊर्ज-मेवावं रुन्धे। चित्रा नक्षंत्रं भवति। चित्रं वा एतत्कर्म॥१॥

यदंश्वमेधः समृद्धौ। पुण्यंनाम देवयजंनम्ध्यवंस्यति। पुण्यांमेव तेनं कीर्तिम्भि जंयति। अपंदातीनृत्विजंः समावंहन्त्या सुंब्रह्मण्यायाः। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यौ। केश्रश्मश्रु वंपते। नुखानि नि कृन्तते। द्तो धांवते। स्नातिं। अहंतं वासः परिधत्ते। पाप्मनोऽपंहत्यै। वाचं यत्वोपं वसति। सुवर्गस्यं लोकस्य गुप्त्यै। रात्रिं जाग्रयंन्त आसते। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्यै॥२॥

कर्म धत्ते पर्श्व च॥—————[१]

चतुंष्टय्य आपों भवन्ति। चतुंः शफो वा अश्वंः प्राजापृत्यः समृंद्धौ। ता दिग्भ्यः समाभृंता भवन्ति। दिक्षु वा आपंः। अत्रं वा आपंः। अत्रो वा अत्रं जायते। यदेवाद्योऽत्रं जायते। तदवं रुन्थे। तासुं ब्रह्मौद्नं पंचति। रेतं एव तद्दंधाति॥३॥

चतुः शरावो भवति। दिक्ष्वेव प्रतिं तिष्ठति। उभयतोरुक्मौ भवतः। उभयतं पुवास्मिन्नुचं दधाति। उद्धंरित शृतत्वायं। सूर्पिष्वांन्भवति मेध्यत्वायं। चृत्वारं आर्षेयाः प्राश्ञंन्ति। दिशामेव ज्योतिषि जुहोति। चृत्वारि हिरंण्यानि ददाति। दिशामेव ज्योतीङ्ष्यवं रुन्धे॥४॥

यदाज्यंमुच्छिष्यंते। तस्मिन्नश्नान्युंनत्ति। प्रजापंतिर्वा ओंद्नः। रेत् आज्यम्। यदाज्यें रश्नान्युनत्तिं। प्रजापंतिमेव रेतंसा समर्धयति। दुर्भमयीं रश्ना भवति। बहु वा एष कुंचरों मेध्यमुपंगच्छति। यदश्वः। प्वित्रं वै दुर्भाः॥५॥

यद्देर्भमयीं रश्ना भवंति। पुनात्येवैनम्ं। पूतमेंनं मेध्यमा लेभते। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मिह्मोदंक्रामत्। स महर्त्विजः प्राविंशत्। तन्महर्त्विजां महर्त्विक्तम्। यन्महर्त्विजः प्राश्वनितं। मृहिमानंमेवास्मिन्तद्दंधित। अश्वंस्य वा आलंब्यस्य रेत उदंक्रामत्। तथ्सुवर्ण्रं हिरंण्यमभवत्। यथ्सुवर्ण्रं हिरंण्यं ददांति। रेतं एव तद्दंधाति। ओद्ने दंदाति। रेतो वा ओद्नः। रेतो हिरंण्यम्। रेतंसैवास्मिन्नेतो दधाति॥६॥

द्धाति रुन्धे दुर्भा अभवुष्यद चं॥=

·[२]

यो वै ब्रह्मणे देवेभ्यः प्रजापंतयेऽप्रंतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बृध्नाति। आ देवताभ्यो वृश्च्यते। पापीयान्भवति। यः प्रंतिप्रोच्यं। न देवताभ्य आवृश्च्यते। वसीयान्भवति। यदाहं। ब्रह्मन्नश्वं मेध्यं भन्थस्यामि देवेभ्यः प्रजापंतये तेनं राध्यास्मितिं। ब्रह्म वै ब्रह्मा। ब्रह्मण एव देवेभ्यः प्रजापंतये प्रतिप्रोच्याश्वं मेध्यं बध्नाति॥७॥

न देवतांभ्य आ वृंश्च्यते। वसीयान्भवति। देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति रश्नामादंत्ते प्रसूत्यै। अश्विनोंबर्गहभ्यामित्याह। अश्विनों हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्याह यत्यै। व्यृंद्धं वा एतद्यज्ञस्यं। यदंयजुष्केण क्रियतें। इमामंगृभ्णत्रश्नामृतस्ये-त्यिं वदित् यजुंष्कृत्यै। युज्ञस्य समृंद्धे॥८॥

तदांहुः। द्वादंशारत्नी रश्ना कंर्त्व्या(३) त्रयोदशार्त्नी(३)-रितिं। ऋष्मो वा एष ऋंतूनाम्। यथ्संवथ्सरः। तस्यं त्रयोदशो मासो विष्टपम्। ऋष्म एष यज्ञानाम्। यदंश्वमेधः। यथा वा ऋष्मस्यं विष्टपम्। एवमेतस्यं विष्टपम्। त्रयोदशमंरत्निः रंश्नायांमुपा दंधाति॥९॥

यथंर्षभस्यं विष्टपर्श्य सङ्स्करोतिं। ताहगेव तत्। पूर्व आयुंषि विदथेषु क्वयेत्यांह। आयुंरेवास्मिन्दधाति। तयां देवाः सुतमा बंभूवुरित्यांह। भूतिंमेवोपावंति। ऋतस्य सामन्थ्यरमारपन्तीत्यांह। सृत्यं वा ऋतम्। सृत्येनैवनंमृतेनारंभते। अभिधा असीत्यांह॥१०॥

तस्मांदश्वमेधयाजी सर्वाणि भूतान्यभि भंवति। भुवंनमुसीत्यांह। भूमानंमेवोपैति। युन्ताऽसीत्यांह। यन्तारंमेवेनं करोति। धृर्ताऽसीत्यांह। धृर्तारंमेवेनं करोति। सौंऽग्निं वैश्वानरमित्यांह। अग्नावेवेनं वैश्वानरे जुंहोति। सप्रथस्मित्यांह॥११॥

प्रजयैवेनं पृश्निः प्रथयित। स्वाहांकृत् इत्यांह। होमं पृवास्यैषः। पृथिव्यामित्यांह। अस्यामेवेनं प्रतिष्ठापयित। यन्ता राड्यन्ताऽसि यमंनो धर्ताऽसि ध्रुण् इत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचेष्टे। कृष्ये त्वा क्षेमांय त्वा रय्ये त्वा पोषांय त्वेत्यांह। आमेवेतामा शांस्ते। स्वगा त्वां देवेभ्य इत्यांह। देवेभ्यं पृवेनई स्वगा करोति। स्वाहां त्वा प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। यस्यां पृव देवतांया आलभ्यतें। तयैवेन समर्धयित॥१२॥

बुभूगति समृद्धा उपार्दधात्यसीत्यांह सप्रथस्मित्यांह देवेभ्य इत्यांह पश्चं च॥————[3]

यः पितुरंनुजायाः पुत्रः। स पुरस्ताःत्रयति। यो मातुरंनुजायाः पुत्रः। स पृश्चान्नंयति। विष्वंश्चमेवास्मांत्पाप्मानं विवृंहतः। यो अर्वन्तं जिघारंसित् तम्भ्यंमीति वरुण इति श्वानं चतुरक्षं प्रसौति। पूरो मर्तः पुरः श्वेति शुनंश्चतुरक्षस्य प्रहंन्ति। श्वेव वै पाप्मा भ्रातृंव्यः। पाप्मानंमेवास्य भ्रातृंव्यः हन्ति। सै्पुकं मुसंलं भवति॥१३॥

कर्मकर्मेवास्में साधयति। पौ्ड्श्वलेयो हंन्ति। पुड्श्वल्वां वै देवाः शुचं न्यंदधुः। शुचैवास्य शुचर् हन्ति। पाप्मा वा एतमींफ्स्तीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन् यजंत् इति। अश्वंस्याधस्पदमुपास्यित। वृज्ञी वा अश्वंः प्राजापत्यः। वञ्जेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यमवंक्रामित। दक्षिणाऽपं प्रावयित॥१४॥

पाप्मानंमेवास्माच्छमंलमपं प्रावयति। ऐषीक उंदूहो भंवति। आयुर्वा इषीकाः। आयुरेवास्मिन्दधित। अमृतं वा इषीकाः। अमृतंमेवास्मिन्दधित। वेतस्शाखोपसम्बद्धा भवति। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेतसः। स्वादेवैनं योनेर्निर्मिमीते। पुरस्तांत्प्रत्यश्चंमभ्युदूंहित। पुरस्तांदेवास्मिन्प्रतीच्यमृतं दधाति। अहं च त्वं चं वृत्रहृत्रितिं ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। ब्रह्मक्षत्रे एव सन्दंधाति। अभिक्रत्वेन्द्र भूरध्जमन्नित्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजित्यै॥१५॥

भुवति प्रावयति मिमीते पश्चं च॥=

चृत्वारं ऋत्विजः समुंक्षन्ति। आभ्य एवैनं चत्सभ्यों दिग्भ्योंऽभि समीरयन्ति। शृतेनं राजपुत्रैः सहाध्वर्यः। पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गष्टम्प्रोक्षंति। अनेनाश्वेन् मेध्येनेष्ट्वा। अयश्र राजां वृत्रं वध्यादिति। राज्यं वा अध्वर्यः। क्षत्रश्र राजपुत्रः। राज्येनैवास्मिन्क्षत्रं दंधाति। शृतेनां राजभिरुग्रैः सह ब्रह्मा॥१६॥

दक्षिणत उद्द्विष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्यंनेष्ट्वा। अय॰ राजांप्रतिधृष्यों ऽस्त्विति। बलं वे ब्रह्मा। बलंमराजोग्रः। बलंनेवास्मिन्बलं दधाति। शतेनं सूतग्रामणिभिः सह होतां। पृश्चात्प्राङ्विष्ठन्प्रोक्षंति। अनेनाश्वंन मेध्येनेष्ट्वा। अय॰ राजाऽस्ये विशः॥१७॥

बहुग्वे बंह्नश्वायें बहुजाविकायें। बहुद्रीहियवायें बहुमाष-तिलायें। बहुहिर्ण्यायें बहुह्स्तिकाये। बहुद्रास्पूरुषायें रियमत्ये पृष्टिमत्ये। बहुर्गयस्पोषाये राजास्त्विति। भूमा वे होतां। भूमा सूंतग्रामण्यः। भूम्नेवास्मिन्भूमानं दधाति। श्रतेनं क्षत्तसङ्ग्रहीतृभिः सहोद्गाता। उत्तर्तो दंक्षिणा तिष्ठन्त्रोक्षंति॥१८॥

अनेनाश्वेन मेध्येनेष्ठा। अयर राजा सर्वमायेरेत्विति। आयुर्वा उद्गाता। आयुंः क्षत्तसङ्ग्रहीतारंः। आयुंषैवास्मिन्नायुंदि-धाति। श्तरशंतं भवन्ति। श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। चृतुः श्ता भंवन्ति। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वेंव प्रतिं तिष्ठति॥१९॥

ब्रह्मा विश उक्षिति दिश एकं च॥

-[৬]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दिति। एवं वा एतदश्वस्य स्कन्दित। यित्रक्तमनालब्धमुथ्मृजन्ति। यथ्स्तोक्यां अन्वाही। सर्वहुतमेवैनं करोत्यस्कन्दाय। अस्केन्न् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। सहस्रमन्वांह। सहस्रंसिम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजित्यै॥२०॥

यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवं रुन्धीत। अपिरिमिता अन्वाह। अपिरिमितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समष्टिये। स्तोक्यां जुहोति। या एव वर्ष्या आपः। ता अव रुन्धे। अस्यां जुंहोति। इयं वा अग्निवैश्वानुरः॥२१॥

अस्यामेवेनाः प्रतिष्ठापयति। उवाचं ह प्रजापितः। स्तोक्यांसु वा अहमंश्वमेधः सङ्स्थांपयामि। तेन ततः सङ्स्थितेन चरामीति। अग्नये स्वाहेत्यांह। अग्नयं एवैनं जुहोति। सोमाय स्वाहेत्यांह। सोमायैवैनं जुहोति। स्वित्र एवैनं जुहोति॥२२॥

सरंस्वत्ये स्वाहेत्यांह। सरंस्वत्या पृवैनं जुहोति। पूष्णे स्वाहेत्यांह। पूष्ण पृवैनं जुहोति। बृह्स्पतंये स्वाहेत्यांह। बृह्स्पतंय पृवैनं जुहोति। अपां मोदांय स्वाहेत्यांह। अद्भा पृवैनं जुहोति। वायवे स्वाहेत्यांह। वायवं पृवैनं जुहोति॥२३॥

मित्राय स्वाहेत्यांह। मित्रायैवैनं जुहोति। वर्रुणाय स्वाहेत्यांह। वर्रुणायैवैनं जुहोति। एताभ्यं एवैनं देवताभ्यो जुहोति। दशंदश सम्पादं जुहोति। दशाक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजेवात्राद्यमवं रुन्थे। प्र वा एषौं- ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः परांचीराहुंतीर्जुहोति। पुनंः

पुनरभ्यावर्तं जुहोति। अस्मिन्नेव लोके प्रतिं तिष्ठति। पुता ह वाव सो ऽश्वमेधस्य सङ्स्थितिमुवाचास्केन्दाय। अस्केन्न ह हि तत्। यद्यज्ञस्य सङ्स्थितस्य स्कन्दिति॥२४॥ अस्किन् वेश्वनः संवित्र एवेनं जुहोति वायवं एवेनं जुहोति व्यवते पद चं॥———[8]

प्रजापंतये त्वा जुष्टं प्रोक्षामीतिं पुरस्तांत्प्रत्यिङ्गछन्प्रोक्षंति। प्रजापंतिर्वे देवानांमन्नादो वीर्यावान्। अन्नाद्यंमेवास्मिन्वीर्यं दधाति। तस्मादश्वः पश्नामंन्नादो वीर्यावत्तमः। इन्द्राग्निभ्यां त्वेतिं दक्षिणतः। इन्द्राग्नी व देवानामोजिष्ठौ बिर्लेष्ठौ। ओजं प्रवास्मिन्बलं दधाति। तस्मादश्वः पश्नामोजिष्ठो बिर्लिष्ठः। वायवे त्वेतिं पृश्चात्। वायुर्वे देवानांमाशः सारसारितंमः॥२५॥

ज्वमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामाशः सारसारितंमः। विश्वेभ्यस्त्वा देवभ्य इत्यंत्तर्तः। विश्वे व देवा देवानां यशस्वितंमाः। यशं एवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनां यशस्वितंमः। देवभ्यस्त्वेत्यधस्तांत्। देवा व देवानामपंचिततमाः। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वः पशूनामपंचिततमः॥२६॥

सर्वेभ्यस्त्वा देवेभ्य इत्युपरिष्टात्। सर्वे वै देवास्त्विषिमन्तो हर्स्वनः। त्विषिमेवास्मिन् हरो दधाति। तस्मादश्वः पशूनां त्विषिमान् हर्स्वितंमः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षाय त्वा पृथिव्यै त्वेत्यांह। पृभ्य पृवैनं लोकभ्यः प्रोक्षंति। स्ते त्वाऽसंते त्वाऽद्धस्त्वौषंधीभ्यस्त्वा विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इत्यांह। तस्मांदश्वमेधयाजिन् सर्वाणि भूतान्युपंजीवन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। यत्प्रांजापृत्योऽश्वंः। अथ् कस्मांदेनमृन्याभ्यों देवताभ्योऽपि प्रोक्षतीतिं। अश्वे वै सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः। तं यद्विश्वैभ्यस्त्वा भूतेभ्य इतिं प्रोक्षतिं। देवतां पृवास्मिन्नन्वा यांतयित। तस्मादश्वे सर्वा देवतां अन्वायंत्ताः॥२७॥

सार्सारितमोऽपंचिततमः प्राजापुत्योऽश्वः पश्चं च॥——————[😉]

यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दंति। एवं वा एतदश्वंस्य स्कन्दति। यत्प्रोक्षित्मनांलब्धमृथ्मृजन्ति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। सूर्वहृतंमेवैनं करोत्यस्कंन्दाय। अस्कंन्नर् हि तत्। यद्धुतस्य स्कन्दंति। ईङ्काराय स्वाहेङ्कृताय स्वाहेत्यांह। एतानि वा अंश्वचिर्तानिं। चरितेरेवैन् समर्धयति॥२८॥

तदांहुः। अनांहुतयो वा अश्वचिर्तानि। नैता होंत्व्यां इति। अथो खल्बांहुः। होत्व्यां एव। अत्र वावैवं विद्वानंश्वमेधः सङ्स्थांपयति। यदंश्वचिर्तानिं जुहोतिं। तस्मांद्वोत्व्यां इति। बृहिर्धा वा एनमेतदायतंनाद्दधाति। भ्रातृंव्यमस्मै जनयति॥२९॥

यस्यांनायत्ने ऽन्यत्राग्नेराहुंतीर्जुहोतिं। सावित्रिया इष्ट्याः

पुरस्तांध्स्वष्टकृतः। आह्वनीयेंऽश्वचिर्तानिं जुहोति। आयतंन एवास्याऽऽहुंतीर्जुहोति। नास्मै भ्रातृंव्यं जनयित। तदांहुः। यज्ञमुखेयंज्ञमुखे होत्व्याः। यज्ञस्य क्रृष्ट्यें। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्या इतिं। अथो खल्वांहुः॥३०॥

यद्यंज्ञमुखेयंज्ञमुखे जुहुयात्। पृशुभियंजंमानं व्यंधेयेत्। अवं सुवर्गाल्लोकात्पंद्येत। पापीयान्थ्स्यादितिं। स्कृदेव होत्व्याः। न यजंमानं पृशुभिर्व्यर्धयति। अभि सुंवर्गं लोकं जंयित। न पापीयान्भवति। अष्टाचंत्वारि शतमश्वरूपाणि जुहोति। अष्टाचंत्वारि श्रवस्य जगंती। जाग्तोऽश्वंः प्राजापृत्यः समृद्धे। एक्मितिरिक्तं जुहोति। तस्मादेकंः प्रजास्वर्धुकः॥३१॥

अर्ध्यति जन्यति खल्बांहुर्जगंती त्रीणि च॥

-[2]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवेनं परिददाति। अश्वोऽिस हयोऽसीत्यांह। शास्त्येवेनंमेतत्। तस्मांच्छिष्टाः प्रजा जांयन्ते। अत्यो-ऽसीत्यांह। तस्मादश्वः सर्वान्यशूनत्येति। तस्मादश्वः सर्वेषां पशूनाः श्रेष्ठ्यं गच्छति॥३२॥

प्र यशः श्रेष्ठांमाप्नोति। य एवं वेदं। नरोऽस्यवांऽसि सप्तिरिस वाज्यंसीत्यांह। रूपमेवास्यैतन्मंहिमानं व्याचंष्टे। ययुर्नामाऽसीत्यांह। एतद्वा अश्वंस्य प्रियं नांमधेयम्। प्रियेणैवैनं नाम्धेयेंनाभि वंदति। तस्मादप्यांमित्रौ सङ्गत्यं। नाम्ना चेद्ध्वयेंते। मित्रमेव भंवतः॥३३॥

आदित्यानां पत्वाऽन्विहीत्यांह। आदित्यानेवेनं गमयित। अग्नये स्वाहा स्वाहेंन्द्राग्निभ्यामितिं पूर्वहोमां जुंहोति। पूर्व पृव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। भूरंसि भुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्युथ्मृंजित सर्वत्वायं। देवां आशापाला पृतं देवेभ्योऽश्वं मेधांय प्रोक्षितं गोपायतेत्यांह। शृतं वे तत्त्र्यां राजपुत्रा देवा आंशापालाः। तेभ्यं पृवेनं पिरं ददाति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमृंक्तः परां परावतं गन्तौः। इह धृतिः स्वाहेह विधृंतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमितः स्वाहेह रान्तिः स्वाहेह रान्तिः स्वाहेह रान्तिः स्वाहेह रान्तिः स्वाहेति चतृषु पृथ्मु जुंहोति॥३४॥

पुता वा अश्वंस्य बन्धंनम्। ताभिरेवैनं बध्नाति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनमा गंच्छति। तस्मादश्वः प्रमुंक्तो बन्धंनं न जहाति। राष्ट्रं वा अश्वमेधः। राष्ट्रे खलु वा एते व्यायंच्छन्ते। येऽश्वं मेध्य रक्षंन्ति। तेषां य उद्दं गच्छंन्ति। राष्ट्रादेव ते राष्ट्रं गंच्छन्ति। अथ य उद्दं न गच्छंन्ति॥३५॥

राष्ट्रादेव ते व्यवंच्छिद्यन्ते। परा वा एष सिंच्यते। योऽबुलोऽश्वमेधेन यजेते। यदमित्रा अश्वं विन्देरन्। हुन्येतांस्य युज्ञः। चृतुः शृता रक्षिन्ति। युज्ञस्याघांताय। अथान्यमानीय प्रोक्षेयुः। सैव ततः प्रायंश्चित्तिः॥३६॥ गुच्छति भुवतः पृथ्सु जुंहोति न गच्छंन्ति नवं च॥

_[२]

प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं यजेयेतिं। स तपोंऽतप्यत। तस्यं तेपानस्यं। सप्तात्मनों देवता उदंक्रामन्। सा दीक्षाऽभंवत्। स एतानिं वैश्वदेवान्यंपश्यत्। तान्यंजुहोत्। तैर्वे स दीक्षामवांरुन्थ। यद्वैश्वदेवानिं जुहोतिं। दीक्षामेव तैर्यजंमानोऽवं रुन्थे॥३७॥

स्प्त जुंहोति। स्प्त हि ता देवतां उदक्रांमन्। अन्वहं जुंहोति। अन्वहम् व दीक्षामवं रुन्धे। त्रीणिं वैश्वदेवानिं जुहोति। चत्वायौद्धहुणानिं। स्प्त सम्पंद्यन्ते। स्प्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्धे॥३८॥

एकंवि श्वातं वैश्वदेवानि जुहोति। एकंवि श्वातिर्वे देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पञ्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकवि श्वाः। एष सुंवर्गो लोकः। तद्दैव्यं क्षत्रम्। सा श्रीः। तद्वप्नस्यं विष्टपम्। तथ्स्वाराज्यमुच्यते॥ ३९॥

त्रिष्शतंमोद्गहणानि जुहोति। त्रिष्शदंक्षरा विराट। अन्नं विराट। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्थे। त्रेधा विभज्यं देवतां जुहोति। त्र्यांवृतो वै देवाः। त्र्यांवृत इमे लोकाः। एषां लोकानामार्थे। एषां लोकानां क्रुस्यै। अप वा एतस्मात्प्राणाः क्रांमन्ति॥४०॥

यो दीक्षामंतिरेचयंति। सप्ताहं प्रचंरन्ति। सप्त वै

शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणा दीक्षा। प्राणेरेव प्राणान्दीक्षामवं रुन्थे। पूर्णाहुतिमंत्तमां जुंहोति। सर्वं वै पूर्णाहुतिः। सर्वमेवाप्नोति। अथो इयं वै पूर्णाहुतिः। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति॥४१॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्टं न किश्चनोदंयच्छत्। तं वैश्वदेवान्येवोदंयच्छन्। यद्वैश्वदेवानि जुहोति। यज्ञस्योद्यंत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहाँ। स्वाहा-ऽधीतं मनसे स्वाहाँ। स्वाहा मनः प्रजापंतये स्वाहाँ। काय् स्वाहा कस्मै स्वाहां कत्मस्मै स्वाहेति प्राजापृत्ये मुख्ये भवतः। प्रजापंतिमुखाभिरेवैनं देवतांभिरुद्यंच्छते॥४२॥

अदित्ये स्वाहाऽदित्ये मृह्यै स्वाहाऽदित्ये सुमृडीकाये स्वाहेत्यांह। इयं वा अदितिः। अस्या पृवैनं प्रतिष्ठायोद्यंच्छते। सर्रस्वत्ये स्वाहा सर्रस्वत्ये वृह्त्यै स्वाहा सर्रस्वत्ये पावकाये स्वाहेत्यांह। वाग्वे सर्रस्वती। वाचैवेनमुद्यंच्छते। पूष्णे स्वाहां पूष्णे प्रपृथ्यांय स्वाहां पूष्णे न्रन्धिषाय स्वाहेत्यांह। पृश्वो वे पूषा। पृश्विनेमुद्यंच्छते। त्वष्टे स्वाहा त्वष्टे तुरीपांय स्वाहा त्वष्टे पुरुरूपांय स्वाहेत्यांह। त्वष्टा वे पंशूनां मिथुनाना रूपकृत्। रूपमेव पृशुषुं दधाति। अथों रूपैरेवैनमुद्यंच्छते। विष्णंवे स्वाहा विष्णंवे निखुर्यपाय स्वाहा विष्णंवे निसूयपाय स्वाहेत्यांह। युज्ञो वे विष्णंः।

यज्ञायैवैनमुद्यंच्छते। पूर्णाहुतिम्त्मां जुंहोति। प्रत्युत्तं ब्ये सयत्वायं॥४३॥

युच्छुते पुरुरूपांय स्वाहेत्यांहाष्टो चं॥———[११]

सावित्रमृष्टाकंपालं प्रातिर्निवंपति। अष्टाक्षंरा गायत्री। गायत्रं प्रांतः सवनम्। प्रातः सवनादेवैनं गायित्रयाश्छन्दसो-ऽिष् निर्मिमीते। अथौ प्रातः सवनमेव तेनौऽऽप्रोति। गायत्रीं छन्दंः। सवित्रे प्रंसवित्र एकांदशकपालं मध्यन्दिने। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रेष्टुंभं माध्यं दिन् सवंनम्। माध्यं दिनादेवेन् सवंनाित्रष्टुभृश्छन्दसोऽिष् निर्मिमीते॥४४॥

अथो माध्यं दिनमेव सर्वनं तेनाँऽऽप्नोति। त्रिष्ठुमं छन्दं। स्वित्र आंसवित्रे द्वादंशकपालमपराह्ने। द्वादंशाक्षरा जगती। जागतं तृतीयसवनम्। तृतीयसवनादेवैनं जगत्याश्छन्दसोऽधि निर्मिमीते। अथो तृतीयसवनमेव तेनाँऽऽप्नोति। जगतीं छन्दं। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तौं। इह धृतिः स्वाहेह विधृतिः स्वाहेह रन्तिः स्वाहेह रमीतः स्वाहेति चर्तस्र आहुंतीर्जुहोति॥४५॥

चर्तस्रो दिर्शः। दिग्भिरेवैनं परिगृह्णाति। आश्वंत्थो व्रजो भवति। प्रजापंतिर्देवेभ्यो निलायत। अश्वां रूपं कृत्वा। सौंऽश्वत्थे संवथ्स्रमंतिष्ठत्। तदंश्वत्थस्यांश्वत्थत्वम्। यदाश्वंत्थो व्रजो भवंति। स्व पृवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥४६॥ त्रिष्टुभुश्छन्दुसोऽधि निर्मिमीते जुहोति नवं च॥

[१२]

आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयतामित्यांह। ब्राह्मण एव ब्रह्मवर्च्सं दंधाति। तस्मौत्पुरा ब्रौह्मणो ब्रह्मवर्च्स्यंजायत। आऽस्मित्राष्ट्रे रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थो जांयतामित्यांह। राजन्यं एव शौर्यं मंहिमानं दधाति। तस्मौत्पुरा रांजन्यं इष्व्यः शूरों महार्थोऽजायत। दोग्ध्रीं धेनुरित्यांह। धेन्वामेव पयों दधाति। तस्मौत्पुरा दोग्ध्रीं धेनुरंजायत। वोढांऽनङ्वानित्यांह॥४७॥

अनुडुह्येव वीर्यं दधाति। तस्मांत्पुरा वोढांऽनुङ्गानंजायत। आशुः सिप्तिरित्यांह। अश्वं एव जवं दंधाति। तस्मांत्पुरा-ऽऽशुरश्वोंऽजायत। पुरेन्धियोंषेत्यांह। योषित्येव रूपं दंधाति। तस्माथ्स्री युवतिः प्रिया भावंका। जिष्णू रंथेष्ठा इत्यांह। आ ह वै तत्रं जिष्णू रंथेष्ठा जांयते॥४८॥

यत्रैतनं यज्ञेन यजंन्ते। स्भेयो युवेत्यांह। यो वै पूँववयसी। स स्भेयो युवा। तस्माद्युवा पुमान्त्रियो भावुंकः। आऽस्य यजंमानस्य वीरो जांयतामित्यांह। आ हु वै तत्र यजंमानस्य वीरो जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। निकामेनिंकामे नः पर्जन्यो वर्षित्वत्यांह। निकामेनिंकामे हु वै तत्रं पर्जन्यों वर्षित। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। फिलन्यों न ओषंधयः पच्यन्तामित्यांह। फिलन्यों हु वै तत्रौषंधयः पच्यन्ते। यत्रैतेनं यज्ञेन यजंन्ते। योगुक्षेमो नंः कल्पतामित्यांह। कल्पंते हु वै

तत्रं प्रजाभ्यो योगक्षेमः। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते॥४९॥

अनुङ्गानित्यांह जायते वर्षित सुप्त चं॥ $lue{f \xi}$

प्रजापितिर्देवेभ्यो यज्ञान्व्यादिशत्। स आत्मन्नेश्वमेधमधत्त। तं देवा अंब्रुवन्। एष वाव यज्ञः। यदेश्वमेधः। अप्येव नोऽत्रास्त्विति। तेभ्यं एतानंन्नहोमान्प्रायंच्छत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स देवानंप्रीणात्। यदंन्नहोमां जुहोति॥५०॥

देवानेव तैर्यजंमानः प्रीणाति। आज्येंन जुहोति। अग्नेर्वा एतद्रूपम्। यदाज्यम्। यदाज्येन जुहोतिं। अग्निमेव तत्प्रीणाति। मधुंना जुहोति। मृहृत्यै वा एतद्देवतांयै रूपम्। यन्मधुं। यन्मधुंना जुहोति॥५१॥

मह्तीमेव तद्देवतां प्रीणाति। तृण्डुलैर्जुहोति। वसूनां वा एतद्रूपम्। यत्तंण्डुलाः। यत्तंण्डुलैर्जुहोतिं। वसूनेव तत्प्रीणाति। पृथुंकैर्जुहोति। रुद्राणां वा एतद्रूपम्। यत्पृथुंकाः। यत्पृथुंकैर्जुहोति॥५२॥

रुद्रानेव तत्प्रींणाति। लाजैर्जुहोति। आदित्यानां वा एतद्रूपम्। यक्षाजाः। यक्षाजैर्जुहोतिं। आदित्यानेव तत्प्रींणाति। क्रम्बैंर्जुहोति। विश्वेषां वा एतद्देवानार्थं रूपम्। यत्करम्बौः। यत्करम्बैंर्जुहोतिं॥५३॥

विश्वांनेव तद्देवान्प्रींणाति। धानाभिंर्जुहोति। नक्षंत्राणां वा एतद्रूपम्। यद्धानाः। यद्धानाभिंर्जुहोतिं। नक्षंत्राण्येव तत्त्रींणाति। सक्तुंभिर्जुहोति। प्रजापंतेर्वा एतद्रूपम्। यथ्सक्तंवः। यथ्सक्तुंभिर्जुहोतिं॥५४॥

प्रजांपितमेव तत्प्रींणाति। मृसूस्यैंर्जुहोति। सर्वांसां वा एतद्देवतांना रूपम्। यन्मसूस्यांनि। यन्मसूस्यैंर्जुहोति। सर्वा एव तद्देवताः प्रीणाति। प्रियङ्गुतण्डुलैर्जुहोति। प्रियङ्गा ह व नामैते। एतैर्वे देवा अश्वस्याङ्गांनि समंदधः। यित्रंयङ्गृतण्डुलैर्जुहोति। अश्वंस्यैवाङ्गांनि सन्दंधाति। दशान्नांनि जुहोति। दशांक्षरा वि्राट्। विराद्घृथ्स्रस्यान्नाद्यस्यावंरुद्धौ॥५५॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। त॰ सृष्ट॰ रक्षा ईस्यजिघा॰सन्। स पृतान्प्रजापंतिर्नक्त॰ होमानंपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स यज्ञाद्रक्षा इस्यपंहन्। यन्नक्त॰ होमां जुहोतिं। यज्ञादेव तैर्यजंमानो रक्षा इस्यपंहिन्त। आज्येन जुहोति। वज्रो वा आज्यम्। वज्रेणैव यज्ञाद्रक्षा इस्यपंहिन्त॥५६॥

आज्यंस्य प्रतिपदं करोति। प्राणो वा आज्यम्। मुख्त एवास्यं प्राणं दंधाति। अन्नहोमाञ्जंहोति। शरीरवदेवावं रुन्थे। व्यत्यासं जुहोति। उभयस्यावंरुद्धै। नक्तं जुहोति। रक्षंसामपहत्यै। आज्यंनान्ततो जुंहोति॥५७॥ प्राणो वा आज्यम्। उभयतं एवास्यं प्राणं दंधाति। पुरस्तां चोपरिष्टा च। एकंस्मे स्वाहेत्यांह। अस्मिन्नेव लोकं प्रतिं तिष्ठति। द्वाभ्या इं स्वाहेत्यांह। अमुष्मिन्नेव लोकं प्रतिं तिष्ठति। उभयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। अस्मि इश्चामुष्मि ईश्च। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीं यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। सर्वस्मे स्वाहेत्यांह। अपरिमितमेवावं रुन्धे॥५८॥

पुव युज्ञाद्रक्षा्र्ङ्स्यपंहन्त्यन्तुतो जुंहोति शृताय स्वाहेत्यांह सप्त चं॥ \blacksquare

प्रजापंतिं वा एष ईंप्सतीत्यांहुः। योंऽश्वमेधेन यजंत इतिं। अथो आहुः। सर्वाणि भूतानीतिं। एकंस्मै स्वाहेत्यांह। प्रजापंतिर्वा एकंः। तमेवाऽऽप्नोति। एकंस्मै स्वाहा द्वाभ्याङ् स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। अभिपूर्वमेव सुंवर्गं लोकमेति। एकोत्तरं जुंहोति॥५९॥

पुक्वदेव सुंवर्गं लोकमेति। सन्तंतं जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै। श्वाय स्वाहेत्यांह। श्वायुर्वे पुरुषः श्वावीर्यः। आयुरेव वीर्यमवं रुन्धे। सहस्राय स्वाहेत्यांह। आयुर्वे सहस्रम्। आयुरेवावं रुन्धे। अयुतांय स्वाहां नियुतांय स्वाहां प्रयुतांय स्वाहेत्यांह॥६०॥

त्रयं इमे लोकाः। इमानेव लोकानवं रुन्धे। अर्बुदाय

स्वाहेत्यांह। वाग्वा अर्बुदम्। वाचंमेवावं रुन्थे। न्यंर्बुदाय स्वाहेत्यांह। यो वै वाचो भूमा। तन्त्र्यंर्बुदम्। वाच एव भूमानुमवं रुन्थे। सुमुद्राय स्वाहेत्यांह॥६१॥

समुद्रमेवाऽऽप्नोति। मध्याय स्वाहेत्यांह। मध्यंमेवाऽऽप्नोति। अन्ताय स्वाहेत्यांह। अन्तमेवाऽऽप्नोति। प्रार्धाय स्वाहेत्यांह। प्रार्धमेवाऽऽप्नोति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहेत्यांह। रात्रिर्वा उषाः। अहुर्व्युष्टिः। अहोरात्रे प्वावं रुन्धे। अथो अहोरात्रयोरेव प्रति तिष्ठति। ता यदुभयीर्दिवां वा नक्तं वा जुहुयात्। अहोरात्रे मोहयेत्। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहोदेष्यते स्वाहोद्यते स्वाहोत्यनंदिते जुहोति। उदिताय स्वाहां सुवर्गाय स्वाहां लोकाय स्वाहेत्युदिते जुहोति। अहोरात्रयोरव्यंतिमोहाय॥६२॥

एकोत्तरं जुंहोति प्रयुतांय स्वाहेत्यांह समुद्राय स्वाहेत्याहाहुर्व्युष्टिः सप्त चं॥---------------------------[१६]

विभूर्मात्रा प्रभूः पित्रेत्यंश्वनामानि जुहोति। उभयोरेवैनं लोकयौर्नामधेयं गमयति। आयंनाय स्वाहा प्रायंणाय स्वाहेत्यंद्वावाञ्चंहोति। सर्वमेवैन्मस्कंत्रः सुवर्गं लोकं गंमयति। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वहोमाञ्चंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं क्रामित। पृथिव्ये स्वाहा- उन्तरिक्षाय स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अग्नये स्वाहा सोमाय स्वाहेति पूर्वदीक्षा जुंहोति। पूर्व पुव द्विषन्तं

भ्रातृंव्यमितं क्रामित॥६३॥

पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरिक्षाय स्वाहेत्येकिविश्विनीं दीक्षां जुंहोति। एकिविश्विति देवलोकाः। द्वादेश मासाः पश्चर्तवः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकिविश्वः। एष सुंवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्ये। भुवो देवानां कर्मणेत्यृंतुदीक्षा जुंहोति। ऋत्नेवास्में कल्पयति। अग्नये स्वाहां वायवे स्वाहेतिं जुहोत्यनंन्तिरत्ये॥६४॥

अर्वाङ्मज्ञः सङ्गांमृत्वित्याप्तींर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याप्त्यै। भूतं भव्यं भिवष्यदिति पर्याप्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य पर्याप्त्ये। आ में गृहा भेवन्त्वित्याभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्याभूत्ये। अग्निना तपोऽन्वंभवदित्यंनुभूर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंभूत्ये। स्वाहाऽऽधिमाधीताय स्वाहेति समस्तानि वैश्वदेवानिं जुहोति। समस्तमेव द्विषन्तं भ्रातृंव्यमितं कामित॥६५॥

दुद्धः स्वाह्य हर्न्मैभ्या्ड् स्वाहेत्यंङ्गहोमाञ्जहोति। अङ्गंअङ्गं वै पुरुषस्य पाप्मोपंश्लिष्टः। अङ्गांदङ्गादेवैनं पाप्मनस्तेनं मुञ्जति। अञ्चेताय स्वाहां कृष्णाय स्वाहां श्वेताय स्वाहेत्यंश्वरूपाणि जुहोति। रूपेरेवैन्ड् समर्धयति। ओषंधीभ्यः स्वाह्य मूलेभ्यः स्वाहेत्यांषधिहोमाञ्जहोति। द्वय्यो वा ओषंधयः। पुष्पेभ्योऽन्याः फलं गृह्णन्ति। मूलेभ्योऽन्याः।

ता एवोभयीरवं रुन्धे॥६६॥

वन्स्पतिंभ्यः स्वाहेतिं वनस्पतिहोमाञ्जंहोति। आरुण्यस्या-न्नाद्यस्यावंरुद्धे। मेषस्त्वां पचतेरंवृत्वित्यपाँच्यानि जुहोति। प्राणा वै देवा अपाँच्याः। प्राणानेवावं रुन्धे। कूप्याँभ्यः स्वाहाऽद्धः स्वाहेत्यपा होमाँ ञ्जहोति। अपसु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अद्भो वा अन्नं जायते। यदेवाद्योऽन्नं जायते। तदवं रुन्धे॥६७॥

पूर्विदीक्षा जुंहोति पूर्व पुव द्विपन्तुं भ्रातृंब्यमितं कामृत्यनंन्तरित्यै कामित रुन्थे जायंत एकं च॥———[१७]

अम्भार्शस जुहोति। अयं वै लोकोऽम्भार्शस। तस्य वस्वोऽधिपतयः। अग्निज्योतिः। यदम्भार्शसे जुहोति। इममेव लोकमवं रुन्थे। वसूनार्श्वसायुंज्यं गच्छति। अग्निं ज्योतिरवं रुन्थे। नभार्शसे जुहोति। अन्तरिक्षं वै नभार्शसे॥६८॥

तस्यं रुद्रा अधिपतयः। वायुर्ज्योतिः। यन्नभारेसि जुहोति। अन्तिरक्षमेवावं रुन्धे। रुद्राणार् सायुंज्यं गच्छति। वायुं ज्योतिरवं रुन्धे। महारेसि जुहोति। असौ वै लोको महारेसि। तस्यांदित्या अधिपतयः। सूर्यो ज्योतिः॥६९॥

यन्महा १सि जुहोतिं। अमुमेव लोकमवं रुन्थे। आदित्याना १ सायुंज्यं गच्छति। सूर्यं ज्योतिरवं रुन्थे। नमो राज्ञे नमो वर्रुणायेतिं यव्यानिं जुहोति। अन्नाद्यस्यावंरुद्धे। मुयोभूर्वातों अभि वांतूस्ना इतिं गुव्यानिं जुहोति। पृशूनामवंरुद्धै। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं सन्ततिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्तंत्यै॥७०॥

स्वात्यं स्वाहाऽसितायं स्वाहेति प्रमुंक्तीर्जुहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रमुंक्त्ये। पृथिव्ये स्वाहाऽन्तिरक्षायं स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। दत्वते स्वाहाऽदन्तकायं स्वाहेति शरीरहोमाञ्जंहोति। पितृलोकमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। कस्त्वां युनक्ति स त्वां युनक्विति परिधीन् युनक्ति। इमे वे लोकाः परिधयः। इमानेवास्में लोकान् युनक्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये॥७१॥

यः प्रांणतो य आंत्मदा इति महिमानौ जुहोति। सुवर्गो वै लोको महंः। सुवर्गमेव ताभ्यां लोकं यर्जमानोऽवं रुन्थे। आ ब्रह्मंन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जांयतामिति समस्तानि ब्रह्मवर्चसानि जुहोति। ब्रह्मवर्चसमेव तैर्यजमानोऽवं रुन्थे। जित्र बीजमिति जुहोत्यनंन्तरित्यै। अग्नये समनमत्पृथिव्यै समनमदिति सन्नतिहोमाञ्जहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य सन्नत्यै। भूताय स्वाहां भिवष्यते स्वाहेति भूताम्व्यौ होमौ जुहोति। अयं वै लोको भूतम्॥७२॥

असौ भंविष्यत्। अनयोरेव लोकयोः प्रतिं तिष्ठति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धे। यदक्रेन्दः प्रथमं जायंमान् इत्यंश्वस्तोमीयं जुहोति। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्य जित्यै। सर्वमेव तेनाँऽऽप्रोति। सर्वं जयति। योँऽश्वमेधेन

यजंते॥७३॥

य उं चैनमेवं वेदं। युज्ञश् रक्षाईस्यजिघाश्सन्। स एतान्प्रजापंतिर्नक्तश्होमानपश्यत्। तानंजुहोत्। तैर्वे स युज्ञाद्रक्षाङ्स्यपाहन्। यन्नंकश्होमाञ्जुहोति। युज्ञादेव तैर्यजमानो रक्षाङ्स्यपहिन्ति। उषसे स्वाहा व्यंष्ट्ये स्वाहेत्यन्त्तो जुंहोति। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये॥७४॥

वे नभारंसि सूर्यो ज्योतिः सन्तंत्यै समंष्ट्यै भूतं यज्ञंते नवं च॥—————[१८]

पुक्यूपो वैंकाद्शिनीं वा। अन्येषां यज्ञानां यूपां भवन्ति। पुक्विश्शिन्यंश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्ये। बैल्वो वां खादिरो वां पालाशो वां। अन्येषां यज्ञकतूनां यूपां भवन्ति। राज्ञंदाल एकविश्शत्यरिवरश्वमेधस्यं। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये। नान्येषां पशूनां तेजन्या अवद्यन्ति। अवंद्यन्त्यश्वंस्य॥७५॥

पाप्मा वै तेजनी। पाप्मनोऽपंहत्यै। प्रक्षशाखायांमन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। वृत्सशाखायामश्वंस्य। अपसुयोनिर्वा अश्वंः। अपसुजो वेत्सः। स्व एवास्य योनाववं द्यति। यूपेषु ग्राम्यान्पशून्नियुञ्जन्ति। आरोकेष्वांरण्यान्धांरयन्ति। पशूनां व्यावृत्त्यै। आ ग्राम्यान्पशूङ्गंभन्ते। प्रार्ण्यान्थ्सृंजन्ति। पाप्मनोऽपंहत्यै॥७६॥

अश्वंस्य व्यावृंत्त्यै त्रीणि च॥

राञ्चंदालमग्निष्ठं मिनोति। भ्रूणहृत्याया अपंहत्यै। पौतुंद्रवावृभितों भवतः। पुण्यंस्य गुन्धस्यावंरुद्धौ। भ्रूणहृत्या-मेवास्मांदपहत्यं। पुण्यंन गुन्धेनोंभ्यतः परि गृह्णाति। षङ्कैल्वा भवन्ति। ब्रह्मवर्चसस्यावंरुद्धौ। षद्धांदिराः। तेजसोऽवंरुद्धौ॥७७॥

षद्वांलाशाः। सोमपीथस्यावंरुद्धौ। एकंविश्शितः सम्पंद्यन्ते। एकंविश्शितिवै देवलोकाः। द्वादंश् मासाः पश्चर्तवंः। त्रयं इमे लोकाः। असावादित्य एकंविश्शः। एष सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्य समण्ट्यौ। शृतं पृशवों भवन्ति॥७८॥

श्तायुः पुरुषः श्तेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिं तिष्ठति। सर्वं वा अश्वमेध्याप्नोति। अपंरिमिता भवन्ति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धे। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मांध्मत्यात्। दक्षिणतोंऽन्येषां पशूनामंवद्यन्ति। उत्तर्तोऽश्वस्येति। वारुणो वा अश्वंः॥७९॥

पुषा वै वर्रणस्य दिक्। स्वायांमेवास्यं दिश्यवंद्यति। यदितंरेषां पशूनामंवद्यतिं। शृतदेवत्यं तेनावं रुन्थे। चितेंऽग्नाविधं वैत्से कटेऽश्वं चिनोति। अपसुयोंनिर्वा अश्वः। अपसुजो वेत्सः। स्व पुवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति। पुरस्तांत्प्रत्यश्चं तूप्रं चिनोति। पृश्चात्प्राचीनं गोमृगम्॥८०॥ प्राणापानावेवास्मिन्थ्सम्यश्चौ दधाति। अर्श्वं तूप्रं गोमृगिमितिं सर्वहृतं पृताञ्चंहोति। पृषां लोकानांमभिजित्यै। आत्मनाऽभि जुंहोति। सात्मानमेवेन् सत्नं करोति। सात्माऽमुष्मिं लोके भवति। य पृवं वेदं। अथो वसोरेव धारां तेनावं रुन्थे। इलुवर्दाय स्वाहां बलिवर्दाय स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वा इंलुवर्दः। परिवथ्सरो बंलिवर्दः। संवथ्सरादेव परिवथ्सरादायुर्व रुन्थे। आयुरेवास्मिन्दधाति। तस्मादश्वमेधयाजी जरसां विस्नसामुं लोकमेति॥८१॥

तेज्ञसोऽवंरुद्धौ भवुन्त्यर्थो गोमृगमिंलुवर्दश्चलारि च॥——————[२०]

पुक्वि शौं ऽग्निर्भवित। पुक्वि श्वाः स्तोमः। एकं-विश्वतिर्यूपाः। यथा वा अश्वां वर्षमा वा वृषांणः सङ्स्फुरेरन्। पुवमेव तथ्स्तोमाः सङ्स्फुरेन्ते। यदेकिवि श्वाः। ते यथ्ममृच्छेरन्। हुन्येतांस्य यज्ञः। द्वाद्वश पुवाग्निः स्यादित्यांहुः। द्वाद्वशः स्तोमः॥८२॥

एकांदश् यूपाँः। यद्वांदशौँऽग्निर्भवंति। द्वादंश् मासाँः संवथ्सरः। संवथ्सरेणैवास्मा अन्नमवं रुन्धे। यद्दश् यूपा भवंन्ति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। य एंकादशः। स्तनं एवास्यै सः॥८३॥

दुह एवैनां तेनं। तदांहुः। यद्वांदशौंऽग्निः स्यांद्वादशः स्तोम् एकांदश् यूपौंः। यथा स्थूरिंणा यायात्। तादक्तत्। एकवि १ श एवाग्निः स्यादित्यां हुः। एकवि १ शः स्तो मः। एकवि १ शतिर्यूपाः। यथा प्रष्टिभियातिं। तादगेव तत्॥८४॥

यो वा अंश्वमेधे तिस्रः कुकुभो वेदे। कुकुद्ध राज्ञां भवति। एकुविर्शां ऽग्निर्भवति। एकविर्शाः स्तोमंः। एकंविर्शित्यूपाः। एता वा अंश्वमेधे तिस्रः कुकुभंः। य एवं वेदे। कुकुद्ध राज्ञां भवति। यो वा अंश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाण् वेदे। शिरों हु राज्ञां भवति। एकविर्शांऽग्निर्भवति। एकविर्शः स्तोमंः। एकंविर्शतिर्यूपाः। एतानि वा अंश्वमेधे त्रीणिं शीर्षाणे। य एवं वेदे। शिरों हु राज्ञां भवति॥८५॥

ह्यादुशः स्तोमः स एव तिब्छरौं हु राज्ञाँ भविति पद चं॥ $lue{f Q}$

देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यदश्वमेधेऽश्वेन मेध्येनोदश्चो बहिष्पवमानः सर्पन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। न वै मंनुष्यः सुवर्गं लोकमञ्जसा वेद। अश्वो वै सुंवर्गं लोकमञ्जसा वेद। यदुंद्गातोद्गायेत्। यथा क्षेत्रज्ञोऽन्येनं पृथा प्रतिपादयेत्। तादक्तत्॥८६॥

उद्गातारंमप्रध्यं। अश्वंमुद्गीथायं वृणीते। यथां क्षेत्रज्ञो-ऽञ्जंसा नयंति। एवमेवैन्मश्वंः सुवर्गं लोकमञ्जंसा नयति। पुच्छंमन्वा रंभन्ते। सुवर्गस्यं लोकस्य समेष्ट्यै। हिं करोति। सामैवाकंः। हिं करोति। उद्गीथ एवास्य सः॥८७॥ वर्डबा उपं रुन्धन्ति। मिथुन्त्वाय प्रजाँत्यै। अथो यथोपगातारं उपगायंन्ति। ताहगेव तत्। उदंगासीदश्वो मध्य इत्यांह। प्राजापत्यो वा अश्वः। प्रजापंतिरुद्गीथः। उद्गीथमेवावं रुन्धे। अथों ऋख्सामयोंग्व प्रतिं तिष्ठति। हिरंण्येनोपाकंरोति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। ज्योतिंग्व मुंखतो दंधाति। यजंमाने च प्रजासुं च। अथो हिरंण्यज्योतिग्व यजंमानः सुवर्गं लोकमेति॥८८॥

पुरुषो वै यज्ञः। यज्ञः प्रजापंतिः। यदश्वं पृश्नियुञ्जन्ति। यज्ञादेव तद्यज्ञं प्रयुङ्के। अश्वं तूपरं गोमृगम्। तानिग्निष्ठ आलंभते। सेनामुखमेव तथ्सङ्श्यंति। तस्माद्राजमुखं भीष्मं भावुंकम्। आग्नेयं कृष्णग्रींवं पुरस्तां हुलाटें। पूर्वाग्निमेव तं कुरुते॥८९॥

तस्मौत्पूर्वाभ्रिं पुरस्तौथ्स्थापयन्ति। पौष्णम्नवश्रम्ँ। अत्रुं वे पूषा। तस्मौत्पूर्वाभ्रावांहार्यमा हंरन्ति। ऐन्द्रापौष्णमुपरिष्टात्। ऐन्द्रो वे रांजन्योऽत्रं पूषा। अन्नाद्येनैवेनंमुभ्यतः परि गृह्णाति। तस्मौद्राजन्यौऽन्नादो भावुंकः। आ्रभ्रेयौ कृष्णग्रीवौ बाहुवोः। बाहुवोरेव वीर्यं धत्ते॥९०॥

तस्मौद्राज्ञन्यों बाहुब्लीभावुंकः। त्वाष्ट्रौ लोमशस्वथौ सुक्थ्योः। सुक्थ्योरेव वीर्यं धत्ते। तस्मौद्राज्नन्यं ऊरुब्लीभावुंकः। शितिपृष्ठौ बांर्हस्पृत्यौ पृष्ठे। ब्रह्मवर्चसमेवोपरिष्टाद्धत्ते। अथां क्वचें एवैते अभितः पर्यूहते। तस्माँद्राजन्यः सन्नद्धो वीर्यं करोति। धात्रे पृषोद्रस्मधस्ताँत्। प्रतिष्ठामेवैतां कुरुते। अथां इयं वै धाता। अस्यामेव प्रतिं तिष्ठति। सौर्यं बलक्षं पुच्छें। उथ्सेधमेव तं कुरुते। तस्मांदुथ्सेधं भये प्रजा अभिसङ्श्रंयन्ति॥९१॥

साङ्ग्रहण्या चतुष्टय्यो यो वै यः पितुश्चत्वारो यथां निक्तं प्रजापंतये त्वा यथा प्रोक्षितं विभूरांह प्रजापंतिरकामयताश्वमेधेनं प्रजापंतिर्न किश्चन सांवित्रमा ब्रह्मंन्य्रजापंतिर्देवेभ्यः प्रजापंती रक्षारंसि प्रजापंतिमीपसति विभूरंश्वनामान्यम्भार्थस्येकयूपो रार्श्वदालमेकविष्शो देवाः पुरुषस्रवांविश्शतिः॥२३॥

साङ्गहुण्या तस्मादश्वमेधयाजी यत्परिंमिता यद्यंज्ञमुखे यो दीक्षां देवानेव त्रयं इमे सितायं प्राणापानावेवास्मिन्तस्माँद्राजन्यं एकंनवतिः॥९१॥

साङ्गृहुण्या सङ्श्रंयन्ति॥

हरिः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके अष्टमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥ नवमः प्रश्नः॥

॥ तैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः॥

प्रजापंतिरश्वमेधमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपाँकामत्। तमंष्टाद्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तमाँप्नोत्। तमास्वाऽष्टांद्शिभिरवां-रुन्ध। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। युज्ञमेव तैरास्वा यजंमानो-ऽवं रुन्धे। सुंव्थ्सरस्य वा एषा प्रतिमा। यदंष्टाद्शिनंः। द्वादंशु मासाः पञ्चर्तवंः॥१॥

संवथ्सरों ऽष्टाद्शः। यदंष्टाद्शिनं आलुभ्यन्तें। संवथ्सरमेव तैरास्वा यजंमानोऽवं रुन्धे। अग्निष्ठें ऽन्यान्पशून्ंपाकरोतिं। इतरेषु यूपेष्वष्टाद्शिनोऽजांमित्वाय। नवंनवालभ्यन्ते सवीर्यत्वायं। यदांरुण्यैः सर्इस्थापयेंत्। व्यवंस्येतां पितापुत्रौ। व्यध्वांनः क्रामेयुः। विदूरं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ स्यांताम्॥२॥

ऋक्षीकाः पुरुषव्याघाः परिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजायरन्। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदांर्ण्याः। यदांर्ण्येः सर्इस्थापयेत्। क्षिप्रे यजमानमरंण्यं मृत १ हरियुः। अरंण्यायतना ह्यांर्ण्याः पृशव इति। यत्पृश्नालभेत। अनंवरुद्धा अस्य पृशवंः स्युः। यत्पर्यग्निकृतानुथ्मृजेत्॥३॥

यज्ञवेशमं कुर्यात्। यत्पशूनालभेते। तेनैव पृशूनवे रुन्धे। यत्पर्यप्रिकृतानुथ्मुजत्ययंज्ञवेशसाय। अवंरुद्धा अस्य पृशवो भवन्ति। न यंज्ञवेशसम्भविति। न यजमान्मरंण्यं मृतः हंरन्ति। ग्राम्येः सः स्थापयिति। पृते वै पृशवः क्षेमो नामं। सं पितापुत्राववंस्यतः। समध्यानः क्रामन्ति। सम्निन्तकं ग्रामंयोर्ग्रामान्तौ भवतः। नक्षीकाः पुरुषव्याघ्राः पंरिमोषिणं आव्याधिनीस्तस्करा अरंण्येष्वाजांयन्ते॥४॥

ऋतवंः स्यातामुथ्सृजेथ्स्यंतुस्रीणिं च॥

[8]

प्रजापंतिरकामयतोभौ लोकाववं रुन्धीयेति। स एतानुभयान्पशूनंपश्यत्। ग्राम्याङ्श्चांरुण्याङ्श्चं। तानालंभता तैर्वे स उभौ लोकाववांरुन्ध। ग्राम्येरेव पृशुभिरिमं लोकमवांरुन्ध। आरुण्येरुमुम्। यद्ग्राम्यान्पशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्धे। यदांरण्यान्॥५॥

अमुं तैः। अनेवरुद्धो वा एतस्यं संवथ्सर इत्यांहुः। य इतइतश्चातुर्मास्यानि संवथ्सरं प्रयुङ्क इति। एतावान् वै संवथ्सरः। यचातुर्मास्यानि। यदेते चातुर्मास्याः पृशवं आलुभ्यन्तै। प्रत्यक्षंमेव तैः संवथ्सरं यजमानोऽवं रुन्थे। वि वा एष प्रजयां पृशुभिर्ऋध्यते। यः संवथ्सरं प्रयुङ्के। संवथ्सरः सुंवर्गो लोकः॥६॥

सुवर्गं तु लोकं नापंराध्नोति। प्रजा वै प्शवं एकाद्शिनीं। यदेत ऐकादशिनाः पृशवं आलभ्यन्तें। साक्षादेव प्रजां पृशून् यजमानोऽवं रुन्थे। प्रजापंतिर्विराजमसृजत। सा सृष्टाऽश्वंमेधं प्राविंशत्। तान्द्शिभिरनु प्रायुंङ्कः। तामाप्रोत्। तामाष्ट्रा द्शिभिरवारुन्ध। यद्द्शिनं आलुभ्यन्ते॥७॥

विराजंमेव तैराह्वा यजंमानोऽवं रुन्धे। एकांदश दृशत् आलंभ्यन्ते। एकांदशाक्षरा त्रिष्टुप्। त्रैष्टुंभाः पृशवंः। पृशूनेवावं रुन्धे। वैश्वदेवो वा अश्वंः। नानादेवत्याः पृशवो भवन्ति। अश्वंस्य सर्वृत्वायं। नानांरूपा भवन्ति। तस्मान्नानांरूपाः पृशवंः। बहुरूपा भवन्ति। तस्मांद्वहरूपाः पृशवः समृंद्धौ॥८॥

अस्मै वै लोकायं ग्राम्याः पृशव आलंभ्यन्ते। अमुष्मां आरुण्याः। यद्ग्राम्यान्पृशूनालभंते। इममेव तैर्लोकमवं रुन्थे। यदांरुण्यान्। अमुं तैः। उभयांन्पृशूनालंभते। गाम्या ॥ श्वांरुण्या ॥ अयों लीक्योरवं रुद्धै। उभयांन्पृशूना-लंभते॥ ९॥

ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयंस्या न्ना द्यावं रुद्धे। उभयां न्पृशूनालंभते। ग्राम्या इश्वांरण्या इश्वं। उभयंषां पशूनामवं रुद्धे। त्रयं स्त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामास्ये। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। कस्मां ध्यत्यात्॥१०॥

अस्मिँ होते। यथ्संमानीभ्यों देवताभ्योऽन्यें ऽन्ये पृशवं आलुभ्यन्तें। अस्मिन्नेव तह्नोके कामान्दधाति। तस्माद्स्मिँ ह्लोके बहुवः कामाः। त्रयाणां त्रंयाणाः सह वपा जुंहोति। त्र्यांवृतो व देवाः। त्र्यांवृत हुमे लोकाः। पृषां लोकानामास्यै। पृषां लोकानां कृस्यै।

पर्यभ्रिकृतानारुण्यानुथ्मृंजुन्त्यहि ५ंसायै॥११॥

युअन्तिं ब्रध्नमित्यांह। असौ वा आंदित्यो ब्रध्नः। आदित्यमेवास्मै युनक्ति। अरुषमित्यांह। अग्निर्वा अंरुषः। अग्निमेवास्मै युनक्ति। चर्रन्तमित्यांह। वायुर्वे चरन्ं। वायुमेवास्मै युनक्ति। परितस्थुष इत्यांह॥१२॥

ड्मे वै लोकाः परितस्थुषः। इमानेवास्मै लोकान् यंनक्ति। रोचंन्ते रोचना दिवीत्यांह। नक्षंत्राणि वै रोंचना दिवि। नक्षंत्राण्येवास्मै रोचयति। युअन्त्यंस्य काम्येत्यांह। कामांनेवास्मै युनक्ति। हरी विपंक्षसेत्यांह। इमे वै हरी विपंक्षसा। इमे एवास्मै युनक्ति॥१३॥

शोणां धृष्णू नृवाह्सेत्यांह। अहोरात्रे वै नृवाहंसा। अहोरात्रे एवास्में युनिक्त। एता एवास्में देवतां युनिक्त। सुवर्गस्यं लोकस्य समंष्ट्ये। केतुं कृण्वन्नंकेतव इति ध्वजं प्रतिमुश्चति। यशं एवैन् र राज्ञां गमयति। जीमूतंस्येव भवति प्रतींकमित्यांह। यथायजुरेवैतत्। ये ते पन्थांनः सवितः पूर्व्यास् इत्यंध्वर्युर्यजमानं वाचयत्यभिजिंत्ये॥१४॥

परा वा एतस्यं यज्ञ एंति। यस्यं पृशुरुपार्कृतोऽन्यत्र वेद्या एति। एत इस्तोतरेतेनं पृथा पुन्रश्वमावंर्तयासि न् इत्यांह। वायुर्वे स्तोतां। वायुमेवास्यं पुरस्तां द्वधात्यावृत्त्यै। यथा वै ह्विषों गृहीतस्य स्कन्दिति। एवं वा एतदश्वस्य स्कन्दित। यदस्योपाकृतस्य लोमानि शीयन्ते। यद्वालेषु काचानावयन्ति। लोमान्येवास्य तथ्सम्भरन्ति॥१५॥

भूर्भुवः सुवरितिं प्राजापत्याभिरावंयन्ति। प्राजापत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयन्ति। भूरिति महिषी। भुव इति वावातां। सुवरितिं परिवृक्ती। एषां लोकानांम्भिजिंत्ये। हिर्ण्ययाः काचा भवन्ति। ज्योतिर्वे हिरंण्यम्। राष्ट्रमंश्वमेधः॥१६॥

ज्योतिंश्चैवास्मै राष्ट्रं चं समीची दधाति। सहस्रं भवन्ति। सहस्रंसम्मितः सुवर्गो लोकः। सुवर्गस्यं लोकस्याभिजिंत्यै। अप वा एतस्मात्तेजं इन्द्रियं पृशवः श्रीः ऋांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन यजंते। वसंवस्त्वाऽअन्तु गायत्रेण छन्दसेति महिष्यभ्यंनक्ति। तेजो वा आज्यम्। तेजों गायत्री। तेजंसैवास्मै तेजोऽवं रुन्धे॥१७॥

रुद्रास्त्वां अन्तु त्रेष्टुंभेन् छन्द्सेतिं वावातां। तेजो वा आज्यम्। इन्द्रियं त्रिष्टुप्। तेजंसैवास्मां इन्द्रियमवं रुन्थे। आदित्यास्त्वां ऽअन्तु जागंतेन् छन्द्सेतिं परिवृक्ती। तेजो वा आज्यम्। पृशवो जगंती। तेजंसैवास्में पृशूनवं रुन्थे। पत्नंयो ऽभ्यं अन्ति। श्रिया वा एतद्रूपम्॥१८॥

यत्पत्नयः। श्रियंमेवास्मिन्तद्दंधित। नास्मात्तेर्जं इन्द्रियं पुशवः श्रीरपं क्रामन्ति। लाजी(३)ञ्छाची(३)न् यशोममाँ(४) इत्यतिरिक्तमन्नमश्वायोपाहंरन्ति। प्रजामेवान्नादीं कुर्वते। एतद्देवा अन्नमत्तैतदन्नमिद्धे प्रजापत् इत्यांह। प्रजायांमेवान्नाद्यं दधते। यदि नाविजिघ्रेत्। अग्निः पृशुरांसीदित्यवंघ्रापयेत्। अवं हैव जिंघ्रति। आक्रान्ं वाजी क्रमैरत्यंक्रमीद्वाजी द्यौस्ते पृष्ठं पृथिवी स्थस्थमित्यश्वमनुंमन्नयते। पृषां लोकानांमभिजित्ये। समिद्धो अञ्जन्कृदंरं मतीनामित्यश्वंस्याप्रियों भवन्ति सरूपत्वायं॥१९॥

परिंतुस्थुष इत्यांहुमे एवास्मै युनक्त्यभिजिंत्यै भरन्त्यश्वमेधो रुंन्थे रूपक्षिंप्रति त्रीणि च॥————[४]

तेजंसा वा एष ब्रंह्मवर्चसेन व्यृंद्धते। योंऽश्वमेधेन यजंते। होतां च ब्रह्मा चं ब्रह्मोद्यं वदतः। तेजंसा चैवैनं ब्रह्मवर्चसेनं च समर्धयतः। दक्षिणतो ब्रह्मा भंवति। दक्षिणत आंयतनो वै ब्रह्मा। बार्ह्स्पत्यो वै ब्रह्मा। ब्रह्मवर्चसमेवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधीं ब्रह्मवर्चसितंरः। उत्तरतो होतां भवति॥२०॥

उत्तर्त आंयतनो वै होताँ। आग्नेयो वै होताँ। तेजो वा अग्निः। तेजं एवास्योंत्तर्तो दंधाति। तस्मादुत्त्रो- ऽर्धस्तेज्स्वितंरः। यूपंमभितों वदतः। युज्मानदेवत्यों वै यूपंः। यजंमानमेव तेजंसा च ब्रह्मवर्चसेनं च् समंध्यतः। किङ् स्विदासीत्पूर्विचित्तिरित्यांह। द्यौर्वे वृष्टिः पूर्विचित्तिः॥२१॥

दिवंमेव वृष्टिमवं रुन्धे। कि स्वंदासीद्भृहद्वय

इत्याह। अश्वो वै बृहद्वयः। अश्वमेवावं रुन्थे। किश् स्विदासीत्पिशङ्गिलेत्याह। रात्रिवै पिशङ्गिला। रात्रिमेवावं रुन्थे। किश् स्विदासीत्पिलिप्पिलेत्याह। श्रीवै पिलिप्पिला। अन्नाद्यमेवावं रुन्थे॥२२॥

कः स्विदेकाकी चंरतीत्यांह। असौ वा आंदित्य एंकाकी चंरति। तेजं एवावं रुन्धे। क उंस्विज्ञायते पुन्रित्यांह। चन्द्रमा वै जांयते पुनंः। आयुरेवावं रुन्धे। किङ् स्विद्धिमस्यं भेषजमित्यांह। अग्निर्वे हिमस्यं भेषजम्। ब्रह्मवर्चसमेवावं रुन्धे। किङ् स्विदावपंनं महदित्यांह॥२३॥

अयं वै लोक आवर्पनं महत्। अस्मिन्नेव लोके प्रति तिष्ठति। पृच्छामिं त्वा पर्मन्तं पृथिव्या इत्याह। वेदिवें परो-ऽन्तः पृथिव्याः। वेदिमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा भुवंनस्य नाभिमित्याह। यज्ञो वै भुवंनस्य नाभिः। यज्ञमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं त्वा वृष्णो अश्वंस्य रेत इत्याह। सोमो वै वृष्णो अश्वंस्य रेतः। सोमपीथमेवावं रुन्थे। पृच्छामिं वाचः पर्मं व्योमेत्याह। ब्रह्म वै वाचः पर्मं व्योम। ब्रह्मवर्च्समेवावं रुन्थे॥२४॥

होतां भवित वे वृष्टिः पूर्वचित्तिरुत्राद्यंमेवावं रुन्थे मृहिदित्यांहु सोमो वे वृष्णो अश्वंस्य रेतंश्चत्वारिं च॥ $lue{oldsymbol{arphi}}$

अप वा एतस्मौत्राणाः ऋांमन्ति। यौंऽश्वमेधेन् यजेते। प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहेतिं संज्ञप्यमान् आहुंतीर्जुहोति। प्राणानेवास्मिन्दधाति। नास्मौत्राणा अपंक्रामन्ति। अवंन्तीः स्थावंन्तीस्त्वाऽवन्तु। प्रियं त्वाँ प्रियाणाँम्। वर्षिष्टमाप्यांनाम्। निधीनां त्वां निधिपति र् हवामहे वसो ममेत्यांह। अपैवास्मै तद्भुंवते॥२५॥

अथो धुवन्त्येवैनम्। अथो न्येवास्मै हुवते। त्रिः परियन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एवैनं लोकेभ्यो धुवते। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवैनं धुवते। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति॥२६॥

ये यज्ञे धुवंनं तुन्वतें। नुवकृत्वः परियन्ति। नव् वै पुरुषे प्राणाः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपेक्रामन्ति। अम्बे अम्बाल्यम्बिक् इति पत्नीमुदानंयति। अह्वंतैवैनाम्। सुभगे काम्पीलवासिनीत्याह। तपं एवैनामुपंनयति। सुवर्गे लोके सम्प्रोण्वांथामित्यांह॥२७॥

सुवर्गमेवेनां लोकं गंमयति। आऽहमंजानि गर्भधमा त्वमंजाऽसि गर्भधमित्यांह। प्रजा वै पृशवो गर्भः। प्रजामेव पृश्नात्मन्धंत्ते। देवा वा अश्वमेधे पर्वमाने। सुवर्गं लोकं न प्राजानन्। तमश्वः प्राजानात्। यथ्सूचीभिरसिप्थान्कल्पयंन्ति। सुवर्गस्यं लोकस्य प्रज्ञात्यै। गायुत्री त्रिष्टुङगुतीत्यांह॥२८॥

यथायजुरेवैतत्। त्रय्यः सूच्यों भवन्ति। अयस्मय्यों रजता हरिण्यः। अस्य वै लोकस्यं रूपमंयस्मय्यः। अन्तरिक्षस्य रज्ताः। दिवो हरिण्यः। दिशो वा अयस्मय्यः। अवान्त्रिष्टशा रंज्ताः। ऊर्ध्वा हरिण्यः। दिशं पुवास्मै कल्पयति। कस्त्वौ छाति कस्त्वा विशास्तीत्याहाहि ईसायै॥२९॥

ह्रुवते कामन्त्यूर्ण्वाथामित्यांह जगुतीत्यांह कल्पयृत्येकं च॥—————————————————[ह्

अप वा एतस्माच्छी राष्ट्रं ऋांमित। योंऽश्वमेधेन् यजंते। ऊर्ध्वामेनामुच्छ्रंयतादित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रमंश्वमेधः। श्रियंमेवास्मे राष्ट्रमूर्ध्वमुच्छ्रंयित। वेणुभारिङ्गराविवेत्यांह। राष्ट्रं वै भारः। राष्ट्रमेवास्मे पर्यूहिति। अथांस्या मध्यंमेधतामित्यांह। श्रीर्वे राष्ट्रस्य मध्यम्॥३०॥

श्रियंमेवावं रुन्थे। शीते वातं पुनन्निवेत्यांह। क्षेमो वै राष्ट्रस्यं शीतो वातंः। क्षेमंमेवावं रुन्थे। यद्धंरिणी यवमत्तीत्यांह। विड्वे हंरिणी। राष्ट्रं यवंः। विशं चैवास्मैं राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। न पुष्टं पृशु मन्यत् इत्यांह। तस्माद्राजां पृशून्न पृष्यंति॥३१॥

शूद्रा यदर्यजारा न पोषांय धनायतीत्यांह। तस्माँद्वैशीपुत्रं नाभिषिश्चन्ते। इयं यका शंकुन्तिकेत्यांह। विड्वे शंकुन्तिका। राष्ट्रमश्वमेधः। विशं चैवास्में राष्ट्रं चं समीचीं दधाति। आहलमिति सर्पतीत्यांह। तस्माँद्राष्ट्राय विशं सर्पन्ति। आहंतं गुभे पस इत्यांह। विड्वे गर्भः॥३२॥

राष्ट्रं पसंः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्ं

घातुंकम्। माता चं ते पिता चं त इत्यांह। इयं वै माता। असौ पिता। आभ्यामेवैनं परिंददाति। अग्रं वृक्षस्यं रोहत इत्यांह। श्रीवैं वृक्षस्याग्रम्। श्रियंमेवावं रुन्धे॥३३॥

प्रसृंलामीति ते पिता गुभे मुष्टिमंत श्सयदित्यांह। विश्वे गर्भः। राष्ट्रं मुष्टिः। राष्ट्रमेव विश्याहंन्ति। तस्माँद्राष्ट्रं विश्वं घातुंकम्। अप वा एतेभ्यः प्राणाः क्रांमन्ति। ये यज्ञेऽपूंतं वदंन्ति। दिधकाळणों अकारिष्मिति सुरिभमतीमृचं वदन्ति। प्राणा वै सुर्भयः। प्राणानेवाऽऽत्मन्दंधते। नैभ्यः प्राणा अपंक्रामन्ति। आपो हि ष्ठा मंयोभुव इत्यद्भिर्मार्जयन्ते। आपो वै सर्वा देवताः। देवतांभिरेवाऽऽत्मानं पवयन्ते॥३४॥

गृष्टस्य मध्यं प्रयाति गर्मे रूथे वक्षे व्यवारं वा [७]

प्रजापंतिः प्रजाः सृष्ट्वा प्रेणाऽनु प्राविंशत्। ताभ्यः पुनः सम्भवितुं नाशंक्रोत्। सौंऽब्रवीत्। ऋध्नवदिथ्सः। यो मेतः पुनः सम्भर्दिति। तं देवा अश्वमेधेनैव समंभरन्। ततो वै त

अपर्धुवन्। यो ऽश्वमेधेन् यजंते। प्रजापंतिमेव सम्भंरत्यृध्नोतिं।

पुरुषमालंभते॥३५॥

वैराजो वै पुरुषः। विराजमिवार्लभते। अथो अत्रं वै विराट्। अत्रमेवार्व रुन्थे। अश्वमार्लभते। प्राजापत्यो वा अर्थः। प्रजापंतिमेवार्लभते। अथो श्रीर्वा एकंशफम्। श्रियंमेवार्व रुन्थे। गामार्लभते॥३६॥ युज्ञो वै गौः। युज्ञमेवालंभते। अथो अन्नुं वै गौः। अन्नमेवावं रुन्थे। अजावी आलंभते भूम्ने। अथो पृष्टिवें भूमा। पृष्टिंमेवावं रुन्थे। पर्यम्निकृतं पुरुषं चार्ण्या इक्षोध्सृंजन्त्यहि सायै। उमौ वा एतौ पृशू आलंभ्येते। यश्चांवमो यश्चं पर्मः। तें उस्योभये युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिंता अभिहंता भवन्ति। नैनं दुङ्क्षवंः पृशवों युज्ञे बुद्धाः। अभीष्टां अभिप्रींताः। अभिजिंता अभिहंता हि स्मन्ति। यों ऽश्वमेधेन यज्ञंते। य उं चैनमेवं वेदं॥३७॥

लभते गामालंभते परमौंऽष्टौ चं॥=

٦

प्रथमेन वा एष स्तोमेन राध्वा। चतुष्टोमेनं कृतेनायांनामुत्तरेहन्। एकविश्शे प्रतिष्ठायां प्रति तिष्ठति। एकविश्शात्प्रतिष्ठायां ऋतूनन्वारोहित। ऋतवो वै पृष्ठानि। ऋतवेः संवथ्सरः। ऋतुष्वेव संवथ्सरे प्रतिष्ठायं। देवतां अभ्यारोहित। शक्वरयः पृष्ठं भवन्त्यन्यदेन्यच्छन्देः। अन्येऽन्ये वा एते पृशव आलंभ्यन्ते॥३८॥

उतेवं ग्राम्याः। उतेवांरण्याः। अहंरेव रूपेण समर्धयति। अथो अहं एवेष बिलिर्ह्हियते। तदांहुः। अपंशवो वा एते। यदंजावयंश्वारण्याश्चं। एते वै सर्वे पृशवंः। यद्गव्या इतिं। गृव्यान्पृशूनुंत्तमेऽहं नालंभते॥३९॥

तेनैवोभयाँन्पृशूनवं रुन्थे। प्राजापृत्या भंवन्ति। अनंभि-जितस्याभिजिंत्यै। सौरीर्नवं श्वेता वृशा अंनूबन्ध्यां भवन्ति। अन्तत एव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्धे। सोमांय स्वराज्ञेंऽनोवाहावंनुङ्घाहावितिं द्वन्द्वनः पृश्नालंभते। अहोरात्राणांमभिजित्ये। पृश्भिर्वा एष व्यृध्यते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। छुगलं कल्मापं किकिदीविं विदीगयमितिं त्वाष्ट्रान्पृश्ना लंभते। पृश्भिरेवाऽऽत्मान् समर्धयित। ऋतुभिर्वा एष व्यृध्यते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। पृशङ्गास्त्रयों वासन्ता इत्यृत्पृश्नालंभते। ऋतुभिरेवाऽऽत्मान् समर्धयित। आ वा एष पृश्भयों वृश्च्यते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। पर्यग्निकृता उथ्मृजन्त्यनांव्रस्काय॥४०॥

लुभ्युन्ते लुभुत् त्वाष्ट्रान्यशूनालंभतेऽष्टौ चं॥============[९]

प्रजापंतिरकामयत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानांवपश्यत्। तावंगृह्णीत। ततो वै स महानंत्रादों- ऽभवत्। यः कामयेत महानंत्रादः स्यामिति। स एतावंश्वमेधे मंहिमानौं गृह्णीत। महानेवात्रादो भंवति। यज्ञमानदेवत्यां वै वपा। राजां महिमा। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। यज्जमानमेव राज्येनोभ्यतः परिगृह्णाति। पुरस्तांथ्स्वाहाकारा वा अन्ये देवाः। उपरिष्टाथ्स्वाहाकारा अन्ये। ते वा एतेऽश्वं एव मेध्यं उभयेऽवंरुध्यन्ते। यद्धपां मंहिम्रोभ्यतः परियजंति। तानेवोभयांन्प्रीणाति॥४१॥

पुरियजंति पद्गाः———[१०]

वैश्वदेवो वा अर्थः। तं यत्प्रांजापृत्यं कुर्यात्। या

देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन व्यर्धयेत्। देवताभ्यः समदं दध्यात्। स्तेगान्दङ्ष्ट्राभ्यां मृण्डूकां जम्भ्येभिरिति। आज्यमवदानं कृत्वा प्रतिसङ्ख्यायमाहुंतीर्जुहोति। या एव देवता अपिभागाः। ता भागधेयेन समर्धयति। न देवताभ्यः समदं दधाति॥४२॥

चतुंर्दशैतानंनुवाकाञ्जंहोत्यनंन्तरित्यै। प्रयासाय स्वाहेतिं पश्चदशम्। पश्चंदश् वा अर्धमासस्य रात्रयः। अर्धमासशः संवथ्सर आप्यते। देवासुराः संयंत्ता आसन्। तेंऽब्रुवन्नग्नयः स्विष्टकृतः। अर्श्वस्य मेध्यंस्य वयमुंद्धारमुद्धंरामहै। अथैतान्भि भंवामेतिं। ते लोहिंत्मुदंहरन्त। ततों देवा अभवन्॥४३॥

पराऽसुंराः। यथ्स्विष्टकृद्धो लोहितं जुहोति भ्रातृंव्याऽभिभूत्यै। भवंत्यात्मनाँ। पराँऽस्य भ्रातृंव्यो भवति। गोमृग्कुण्ठेनं प्रथमामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वै गोमृगः। रुद्रौंऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिरहृयतें। न तत्रं रुद्रः पृशूनभिमंन्यते॥४४॥

अश्वश्रफेनं द्वितीयामाहुंतिं जुहोति। पृशवो वा एकंशफम्। रुद्रौंऽग्निः स्विंष्टकृत्। रुद्रादेव पृशूनन्तर्दधाति। अथो यत्रैषा-ऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः पृशून्भिमंन्यते। अयस्मयेन कमण्डलुंना तृतीयांम्। आहुंतिं जुहोत्यायास्यों वै प्रजाः। रुद्रौऽग्निः स्विष्टकृत्। रुद्रादेव प्रजा अन्तर्दधाति। अथो यत्रैषाऽऽहुंतिर्हूयतें। न तत्रं रुद्रः प्रजा अभिमन्यते॥४५॥

दुधात्यभंवनमन्यते प्रजा अन्तर्दधाति द्वे चं ॥======[११]

अश्वंस्य वा आलंब्यस्य मेध् उदंक्रामत्। तदंश्वस्तोमीयं-मभवत्। यदंश्वस्तोमीयं जुहोतिं। समेधमेवेनमालंभते। आज्यंन जुहोति। मेधो वा आज्यम्। मेधोंऽश्वस्तोमीयम्। मेधेनैवास्मिन्मेधं दधाति। षद्गिरंशतं जुहोति। षद्गिरंशदक्षरा बृहती॥४६॥

बार्ह्ताः प्शवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृश्नेव मात्रया समर्धयित। तायद्भ्यंसीर्वा कनीयसीर्वा जुहुयात्। पृश्नमात्रया व्यंधयेत्। षद्गिर्श्शतं जुहोति। षद्गिर्श्शदक्षरा बृह्ती। बार्ह्ताः पृशवंः। सा पंशूनां मात्रां। पृश्नेव मात्रया समर्धयित॥४७॥

अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। द्विपाद्वे पुरुषो द्विप्रतिष्ठः। तदेनं प्रतिष्ठया समर्धयति। तदांहुः। अश्वस्तोमीयं पूर्व होत्व्याँ(३)न्द्विपदा(३) इति। अश्वो वा अश्वस्तोमीयम्। पुरुषो द्विपदाः। अश्वस्तोमीय हुत्वा द्विपदां जुहोति। तस्मांद्विपाचतुंष्पादमत्ति। अथौं द्विपद्येव चतुंष्पदः प्रतिष्ठापयति। द्विपदां हुत्वा। नान्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। यदन्यामुत्तंरामाहुंतिं जुहुयात्। प्रप्रतिष्ठायांश्च्यवेत।

द्विपदां अन्तुतो जुंहोति प्रतिष्ठित्यै॥४८॥

बृह्त्यंर्धयति स्थापयति पश्चं च॥ \blacksquare

प्रजापंतिरश्वम्धमंसृजत। सौंऽस्माथ्सृष्टोऽपांत्रामत्। तं यंज्ञकृतुभिरन्वैंच्छत्। तं यंज्ञकृतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैंच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। यथ्संवथ्सरमिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदन्विंच्छति। सावित्रियों भवन्ति॥४९॥

ड्यं वै संविता। यो वा अस्यान्नश्यंति यो निलयंते। अस्यां वाव तं विन्दन्ति। न वा इमां कश्चनेत्यांहुः। तिर्यङ्गोर्ध्वोत्यंतुमर्ह्तीतिं। यथ्सांवित्रियो भवंन्ति। स्वितृ-प्रंसूत एवैनंमिच्छति। ईश्वरो वा अश्वः प्रमुंक्तः परां परावतं गन्तोः। यथ्सायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्य यत्ये धृत्यैं।॥५०॥

यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छिति। यथ्मायं धृतींर्जुहोतिं। अश्वंस्यैव यत्यै धृत्यैं। तस्मांथ्मायं प्रजाः क्षेम्यां भवन्ति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते। अश्वंमेव तदिन्वंच्छिति। तस्मादिवां नष्टेष एति। यत्प्रातिरिष्टिंभिर्यजंते सायं धृतींर्जुहोतिं। अहोरात्राभ्यांमेवेन्मन्वंच्छिति। अथों अहोरात्राभ्यांमेवास्मैं योगक्षेमं कंत्पयित॥५१॥

भुवन्ति धृत्यां एन्मन्विंच्छुत्येकं च॥———[१३

अप वा एतस्माच्छ्री राष्ट्रं ऋामिति। योंऽश्वमेधेन यजिते। ब्राह्मणौ वीणागाथिनौ गायतः। श्रिया वा एतद्रूपम्। यद्वीणाँ। श्रियंमेवास्मिन्तद्धंत्तः। यदा खलु वै पुरुषः श्रियंमश्जुते। वीणाँऽस्मै वाद्यते। तदांहुः। यदुभौ ब्राँह्मणौ गायंताम्॥५२॥

प्रभःशुंकास्माच्छीः स्यात्। न वै ब्राँह्मणे श्री रंमत् इति। ब्राह्मणाँऽन्यो गायेत्। राजन्योंऽन्यः। ब्रह्म वै ब्राँह्मणः। क्षत्रः राजन्यः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्षत्रेणं चोभ्यतः श्रीः परिंगृहीता भवति। तदांहुः। यदुभौ दिवा गायेताम्। अपाँस्माद्राष्ट्रं क्रांमेत्॥५३॥

न वै ब्राँह्मणे राष्ट्र रंमत् इतिं। यदा खलु वै राजां कामयंते। अर्थ ब्राह्मणं जिनाति। दिवाँ ब्राह्मणो गांयेत्। नक्तरं राजन्यः। ब्रह्मणो वै रूपमहंः। क्ष्रत्रस्य रात्रिः। तथां हास्य ब्रह्मणा च क्ष्रत्रेणं चोभ्यतो राष्ट्रं परिगृहीतं भवति। इत्यंददा इत्यंयजथा इत्यंपच इतिं ब्राह्मणो गायेत्। इष्टापूर्तं वै ब्राँह्मणस्यं॥५४॥

ड्ष्टापूर्तेनैवेन् स समर्धयित। इत्यंजिना इत्यंयुध्यथा इत्यम् संङ्गाममंहिन्निति राजन्यः। युद्धं व राजन्यंस्य। युद्धेनैवेन् स समर्धयित। अक्रुप्ता वा एतस्यत्व इत्यांहुः। यौऽश्वमेधेन् यजंत इति। तिस्रौऽन्यो गायंति तिस्रौऽन्यः। षट्थ्सम्पंचन्ते। षड्वा ऋतवः। ऋतूनेवास्मैं कल्पयतः। ताभ्या स् स्इस्थायाम्। अनोयुक्ते च शते च ददाति। शतायुः पुरुषः शतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रति तिष्ठति॥५५॥

•[8 8 <u>]</u>

सर्वेषु वा एषु लोकेषुं मृत्यवोऽन्वायंत्ताः। तेभ्यो यदाहुंतीर्न जुंहुयात्। लोकेलोंक एनं मृत्युर्विन्देत्। मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहेत्यंभिपूर्वमाहुंतीर्जुहोति। लोकाल्लोंकादेव मृत्युमवंयजते। नैनं लोकेलोंके मृत्युर्विन्दित। यदमुष्मे स्वाहाऽमुष्मे स्वाहेति जुह्वंथ्मश्रक्षीत। बहुं मृत्युम्मित्रं कुर्वीत। मृत्यवे स्वाहेत्येकंस्मा एवैकां जुहुयात्। एको वा अमुष्मिंलोंके मृत्युः॥५६॥

अशन्या मृत्युरेव। तमेवामुष्मिं ह्लोके ऽवंयजते। भ्रूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोति। भ्रूणहृत्यामेवावं यजते। तदांहुः। यद्भूणहृत्या पात्र्याऽथं। कस्मां द्यज्ञेऽपिं क्रियत् इतिं। अमृत्युर्वा अन्यो भ्रूणहृत्याया इत्यांहुः। भ्रूणहृत्या वाव मृत्युरितिं। यद्भूणहृत्यायै स्वाहेत्यंवभृथ आहुंतिं जुहोतिं॥५७॥

मृत्युमेवाऽऽहुंत्या तर्पयित्वा पंरिपाणं कृत्वा। भ्रूण्घ्रे भेषुजं करोति। एता हु वै मृण्डिम औदन्यवः। भ्रूण्हृत्यायै प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार। यो हास्यापि प्रजायां ब्राह्मण हिन्ते। सर्वस्मै तस्मै भेषुजं करोति। जुम्बकाय स्वाहेत्यंवभृथ उत्तमामाहुंतिं जुहोति। वर्रुणो वै जुम्बकः। अन्तत एव वर्रुणमवयजते। खुलुतेर्विक्टिधस्यं शुक्कस्यं पिङ्गाक्षस्यं मूर्धं जुंहोति। एतद्वे वर्रुणस्य रूपम्। रूपेणैव वर्रुणमवयजते॥५८॥

लोके मृत्युर्जुहोति मूर्धं जुहोति द्वे चं॥lacktriangle

वारुणो वा अर्थः। तं देवतंया व्यर्धयति। यत्प्रांजापृत्यं करोति। नमो राज्ञे नमो वरुणायेत्यांह। वारुणो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽश्वांय नमः प्रजापंतय इत्यांह। प्राजापत्यो वा अर्थः। स्वयैवैनं देवतंया समर्धयति। नमोऽधिपतय इत्यांह॥५९॥

धर्मो वा अधिपतिः। धर्ममेवावं रुन्धे। अधिपतिर्स्यधिपतिं मा कुर्विधिपतिर्हं प्रजानां भूयासमित्यांह। अधिपतिमेवेन रे समानानां करोति। मां धेहि मियं धेहीत्यांह। आशिषं-मेवेतामा शांस्ते। उपाकृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति। आलंब्याय स्वाहेति नियुंक्ते जुहोति। हुताय स्वाहेतिं हुते जुंहोति। एषां लोकानांमभिजिंत्यै॥६०॥

प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यंश्च्यवते। योंऽश्वमेधेन् यजंते। आग्नेयमैंन्द्राग्नमांश्विनम्। तान्पशूनालंभते प्रतिष्ठित्यै। यदांग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतां एवावं रुन्थे। ब्रह्म वा अग्निः। क्षुत्रमिन्द्रः। यदैन्द्राग्नो भवंति॥६१॥

ब्रह्मक्षत्रे एवावं रुन्धे। यदाँश्विनो भवंति। आशिषामवंरुद्धै। त्रयो भवन्ति। त्रयं इमे लोकाः। एष्वंव लोकेषु प्रतिं तिष्ठति। अग्नयेऽ रहोम्चेऽष्टाकंपाल इति दर्शहिवष्मिष्टिं निर्वपति। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवं रुन्धे। अग्नेर्मन्वे प्रथमस्य प्रचेतस् इति याज्यानुवाक्यां भवन्ति सर्वत्वायं॥६२॥

अधिपतय इत्यांहार्मिजित्या ऐन्द्राग्नो भवंति रून्य एकं च॥————[१६]

यद्यश्वंमुप्तपंद्विन्देत्। आग्नेयम्ष्टाकंपालं निर्वपेत्। सौम्यं चरुम्। सावित्रमृष्टाकंपालम्। यदाँग्नेयो भवंति। अग्निः सर्वा देवताः। देवतांभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सौम्यो भवंति। सोमो वा ओषंधीना राजाः। याभ्यं एवैनं विन्दति॥६३॥

ताभिरेवैनं भिषज्यति। यथ्सांवित्रो भवंति। स्वितृप्रंसूत पृवैनं भिषज्यति। पृताभिरेवैनं देवतांभिर्भिषज्यति। अगदो हैव भवति। पौष्णां च्रुं निर्विपेत्। यदि श्लोणः स्यात्। पूषा वै श्लौण्यंस्य भिषक्। स पृवैनं भिषज्यति। अश्लोणो हैव भवति॥६४॥

रौद्रं चुरुं निर्विपेत्। यदिं महुती देवतांऽभिमन्येत। एत्द्देवत्यो वा अश्वः। स्वयैवैनं देवतंया भिषज्यति। अगदो हैव भेवति। वैश्वानुरं द्वादंशकपालं निर्विपेन्मृगाख्रे यदि नाऽऽगच्छैत्। इयं वा अग्निवैश्वानुरः। इयमेवैनंमुर्चिभ्यां परिरोधमानंयति। आहैव सुत्यमहंर्गच्छति। यद्यंधीयात्॥६५॥ अग्नयेऽ रहोमुचेऽष्टाकंपालः। सौर्यं पर्यः। वायव्यं आज्यंभागः। यजंमानो वा अश्वः। अरहंसा वा एष गृहीतः। यस्याश्वो मेधाय प्रोक्षितोऽध्येति। यद रहोमुचे निर्वपंति। अरहंस एव तेनं मुच्यते। यजंमानो वा अश्वः। रतंसा वा एष व्यृध्यते॥ ६६॥

यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। सौर्य रेतः। यथ्सौर्यं पयो भवंति। रेतंसैवन् ससमध्यति। यजमानो वा अश्वः। गर्भैवा एष व्यृध्यते। यस्याश्वो मेधांय प्रोक्षितोऽध्येति। वायव्यां गर्भाः। यद्वांयव्यं आज्यंभागो भवंति। गर्भेरेवैन् ससमध्यति। अथो यस्यैषाऽश्वंमेधे प्रायंश्वित्तः क्रियते। इष्ट्वा वसीयान्भवति॥६७॥

विन्दत्यश्लांणो हैव भंवत्यधीयाद्दंध्यते गर्भेरेवेन्ष् स समंधंयति द्वे चं॥—————[१७]

तदांहुः। द्वादंश ब्रह्मौद्नान्थ्स इस्थिते निर्वपेत्। द्वादशिभवें विष्टिंभियं जेति। यदिष्टिंभियं जेत। उपनामुंक एनं युज्ञः स्यात्। पापीया इस्तु स्यात्। आप्तानि वा एतस्य छन्दा स्मि। य ई जानः। तानि क एतावंदाशु पुनः प्रयुं श्चीतेति। सर्वा व स इस्थिते युज्ञे वागां प्यते॥ ६८॥

साप्ता भंवति यातयाँम्नी। ऋूरीकृतेव हि भवत्यरुष्कृता। सा न पुनंः प्रयुज्येत्यांहुः। द्वादंशैव ब्रंह्मौद्नान्थ्सङ्स्थिंते निर्वपेत्। प्रजापंतिर्वा ओद्नः। युज्ञः प्रजापंतिः। उपनामुंक एनं युज्ञो भंवति। न पापीयान्भवति। द्वादेश भवन्ति। द्वादेशमासाः संवथ्सरः। संवथ्सर एव प्रतिं तिष्ठति॥६९॥

आप्यते संबंध्सर एकं च॥———[१८]

पृष वै विभूनामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं विभु भंवति। युत्रेतनं युज्ञेन युज्ञंनते। पृष वै प्रभूनामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रं प्रभु भंवति। युत्रेतनं युज्ञेन युज्ञंनते। पृष वा ऊर्ज्ञस्वान्नामं युज्ञः। सर्वरं हु वै तत्रोर्ज्ञस्वद्भवति। युत्रेतनं युज्ञेन युज्ञंनते। पृष व पर्यस्वान्नामं युज्ञः॥७०॥

सर्वर्ष हु वै तत्र पर्यस्वद्भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै विधृतो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र विधृतं भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै व्यावृत्तो नामं युज्ञः। सर्वर्ष हु वै तत्र व्यावृत्तो भवति। यत्रैतेनं युज्ञेन् यर्जन्ते। एष वै प्रतिष्ठितो नामं युज्ञः। सर्वर्ष ह वै तत्र प्रतिष्ठितं भवति॥७१॥

यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वै तेंज्ञस्वी नामं यज्ञः। सर्वर्ष् ह् वै तत्रं तेज्ञस्वि भंवति। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वै ब्रह्मवर्च्सी नामं यज्ञः। आ ह् वै तत्रं ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्सी जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वा अंतिव्याधी नामं यज्ञः। आ ह् वै तत्रं राज्ञन्योंऽतिव्याधी जांयते। यत्रैतेनं यज्ञेन् यजंन्ते। एष वै दीर्घो नामं यज्ञः। दीर्घायुंषो ह् वै तत्रं मनुष्यां भवन्ति। यत्रैतेनं यज्ञेन् यज्ञंन्ते। एष वै क्रुप्तो नामं यज्ञः। कल्पंते ह् वै तत्रं प्रजाभ्यों योगक्षेमः। यत्रैतेनं यज्ञेन् यज्ञंन

यर्जन्ते॥७२॥

तार्प्येणाश्वर् संज्ञंपयन्ति। यज्ञो वै तार्प्यम्। यज्ञेनेवेन्र् समर्थयन्ति। यामेन् साम्नां प्रस्तोताऽनूपंतिष्ठते। यमुलोकमेवेनं गमयति। तार्प्ये चं कृत्यधीवासे चाश्वर् संज्ञंपयन्ति। एतद्वै पंशूनार रूपम्। रूपेणेव पृशूनवं रुन्थे। हिर्ण्यकृशिपु भविति। तेजुसोऽवंरु छै॥७३॥

रुक्नो भंवति। सुवर्गस्यं लोकस्यानुंख्यात्यै। अश्वीं भवति। प्रजापंतेराह्यैं। अस्य वै लोकस्यं रूपं तार्प्यम्। अन्तरिक्षस्य कृत्यधीवासः। दिवो हिरण्यकशिपु। आदित्यस्यं रुक्नः। प्रजापंतेरश्वः। इममेव लोकं तार्प्यणांऽऽप्नोति॥७४॥

अन्तरिक्षं कृत्यधीवासेनं। दिवर्ं हिरण्यकशिपुनां। आदित्यर रुक्नेणं। अश्वेनैव मेध्येन प्रजापंतेः सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। एतासांमेव देवतांनार् सायुंज्यम्। सार्षितारं समानलोकतांमाप्नोति। योंऽश्वमेधेन यजंते। य उं चैनमेवं वेदं॥७५॥

अवंरुध्या आप्रोत्यृष्टौ चं॥————[२०]

आदित्याश्चाङ्गिरसश्च सुवर्गे लोकैंऽस्पर्धन्त। तेऽङ्गिरस आदित्येभ्यः। अमुमादित्यमश्वई श्वेतं भूतं दक्षिणामनयन्। तेंऽब्रुवन्। यन्नो नेष्ट। स वर्यो भूदितिं। तस्मादश्व<u>ड</u> सवर्येत्याह्वंयन्ति। तस्माँ द्यञ्जे वरों दीयते। यत्प्रजापंतिरा-लुब्धोऽश्वोऽभंवत्। तस्मादश्वो नामं॥७६॥

यच्छ्वयदरुरासींत्। तस्मादर्वा नामं। यथ्सद्यो वाजाँन्थ्समजंयत्। तस्माद्वाजी नामं। यदसुराणां लोकानादत्ता तस्मादादित्यो नामं। अग्निर्वा अंश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधेंऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिमुंपवपंति। योनिमन्तमेवैनंमायतंनवन्तं करोति॥७७॥

योनिमानायतंनवान्भवति। य एवं वेदं। प्राणापानौ वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। प्राणापानावेवावं रुन्धे। ओजो बलं वा एतौ देवानाम्। यदंर्काश्वमेधौ। ओजो बलंमेवावं रुन्धे। अग्निर्वा अश्वमेधस्य योनिरायतंनम्। सूर्योऽग्नेर्योनिरायतंनम्। यदंश्वमेधौऽग्नौ चित्यं उत्तरवेदिं चिनोतिं। तावंर्काश्वमेधौ। अर्काश्वमेधावेवावं रुन्धे। अथो अर्काश्वमेधयोरेव प्रतिं तिष्ठति॥७८॥

प्रजापंतिं वै देवाः पितरम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलेभन्त। तमालभ्योपावसन्। प्रातर्यष्टांस्मह् इति। एकं वा एतद्देवानामहंः। यथ्संवथ्सरः। तस्मादर्श्वः पुरस्तांथ्संवथ्सर आलेभ्यते। यत्प्रजापंतिरालुब्धोऽश्वोऽभवत्। तस्मादर्श्वः। यथ्सद्यो मेधोऽभवत्॥७९॥ तस्मादश्वम्धः। वेदुकोऽश्वमाशुं भेवति। य एवं वेदे। यद्वै तत्प्रजापंतिरालुब्योऽश्वोऽभेवत्। तस्मादश्वः प्रजापंतेः पशूनामनुंरूपतमः। आऽस्यं पुत्रः प्रतिंरूपो जायते। य एवं वेदे। सर्वाणि भूतानि सम्भृत्यालभते। समेनं देवास्तेजंसे ब्रह्मवर्चसायं भरन्ति। यौऽश्वमेधेन यजंते॥८०॥

य उं चैनमेवं वेदं। एतद्वै तद्देवा एतान्देवतांम्। पृशुं भूतं मेधायाऽऽऽलंभन्त। यज्ञमेव। यज्ञेनं यज्ञमंयजन्त देवाः। कामप्रं यज्ञमंकुर्वत। तेऽमृतृत्वमंकामयन्त। तेऽमृतृत्वमंगच्छन्। योऽश्वमेधेन् यज्ञंते। देवानांमेवायंनेनैति॥८१॥

प्राजापत्येनैव यज्ञेनं यजते काम्प्रेणं। अपुनर्मारमेव गंच्छति। एतस्य वै रूपेणं पुरस्तांत्प्राजापत्यमृष्मं तूंपरं बंहुरूपमालंभते। सर्वेभ्यः कामेभ्यः। सर्वस्याऽऽस्ये। सर्वस्य जित्ये। सर्वमेव तेनांऽऽप्रोति। सर्वं जयति। योंऽश्वमेधेन् यजते। य उं चैनमेवं वेदं॥८२॥

यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। अहोरात्रे वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमंनी। यथ्मायं प्रांतर्जुहोति। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य लोमं लोमं जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अर्श्वस्य मेध्यंस्य लोमं लोमं जुह्वति। यो वा अर्श्वस्य मेध्यंस्य पदे वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य पुदेपंदे जुहोति। दुर्शपूर्णमासौ वा अश्वंस्य मेध्यंस्य पदे॥८३॥

यद्दंर्शपूर्णमासौ यजंते। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य पुदेपंदे जुहोति। पुतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वंस्य मेध्यंस्य पदेपंदे जुह्नति। यो वा अश्वंस्य मेध्यंस्य विवर्तनं वेदं। अर्श्वस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। असौ वा आंदित्योऽश्वंः। स आंहवनीयमागंच्छति। तद्विवंर्तते। यदंग्निहोत्रं जुहोतिं। अश्वंस्यैव मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुहोति। एतदंनुकृति ह स्म वै पुरा। अश्वस्य मेध्यंस्य विवर्तनेविवर्तने जुह्नति॥८४॥

पुदे अग्निहोत्रं जुहोति त्रीणि -[२३]

प्रजापंतिस्तमंष्टादिशिभिः प्रजापंतिरकामयतोभावस्मै युअन्ति तेजुसाऽपंप्राणा अपृश्रीरूर्धां प्रजापंतिः प्रेणाऽनुं प्रथमनं प्रजापंतिरकामयत महान्वैश्वदेवो वा अश्वोऽर्श्वस्य प्रजापंतिस्तं यंज्ञकृतुभिरपुश्रीर्ब्रांह्यणौ सर्वेषु वारुणो यद्यश्वन्तदांहुरेष वै विभूस्तार्प्येणांदित्याः प्रजापंतिं पितरं यो वा अर्श्वस्य मेध्यस्य लोमंनी त्रयोवि १ शतिः ॥ २३॥ प्रजापंतिरस्मिँ श्लोक उत्तर्तः श्रियंमेव प्रजापंतिरकामयत महान्यत्प्रातः प्र वा एष एभ्यो लोकेभ्यः सर्वर् ह वै तत्र पर्यः स्वद्य उं चैनमेवं वेदं चुत्वार्यशीतिः॥८४॥ प्रजापंतिरश्वमेधं जुंह्वति॥

हरिंः ओम्॥ ॥इति श्रीकृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयब्राह्मणे तृतीयाष्टके नवमः प्रपाठकः समाप्तः॥

॥तैत्तिरीय आरण्यकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः — अरुणप्रश्नः॥

ॐ भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैंस्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेभिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृद्रं कर्णिभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षिभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैस्तुष्टुवा स्र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पितिर्दधातु। आपंमापामुपः सर्वाः। अस्मादस्मादितोऽमुतः॥१॥

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्रहिंया। वाय्वश्वां रिम्पित्यः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः। देवीः पंर्जन्युसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत॥२॥

अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पा रघमं। अपाँघामपं चावर्तिम्। अपदेवीरितो हित। वर्ज्नं देवीरजीता श्वः। भुवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका

सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दर्शि॥३॥

[8]

स्मृतिः प्रत्यक्षंमैतिह्यम्। अनुंमानश्चतुष्ट्यम्। एतैरादित्य-मण्डलम्। सर्वेरेव विधास्यते। सूर्यो मरीचिमादंत्ते। सर्वस्माद्भवंनाद्धि। तस्याः पाकविंशेषेण। स्मृतं काल-विशेषंणम्। नदीव प्रभवात्काचित्। अक्षय्याध्स्यन्दते यथा॥४॥

तां नद्योऽभि संमायन्ति। सो्रुः सतीं न निवंति। एवं नानासंमुत्थानाः। कालाः संवथ्सर् श्रिताः। अणुशश्च महश्वश्च। सर्वे समव्यत्रितम्। सतैः सूर्वेः संमाविष्टः। ऊरुः संत्र निवर्तते। अधिसंवथ्सरं विद्यात्। तदेवं लक्षणे॥५॥

अणुभिश्च महिद्धिश्च। समार्रूढः प्रदृश्यंते। संवथ्सरः प्रत्यक्षेण। नाधिसंत्वः प्रदृश्यंते। पृटरों विक्लिधः पिङ्गः। पृतद्वंरुणलक्षंणम्। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। सहस्रं तत्र नीयंते। एक १ हि शिरो नाना मुखे। कृथ्स्रं तंदतुलक्षंणम्॥६॥

उभयतः सप्तैन्द्रियाणि। जित्यतं त्वेव दिह्यंते। शुक्रकृष्णे संवंध्सर्स्य। दक्षिणवामंयोः पार्श्वयोः। तस्यैषा भवंति। शुक्रं ते अन्यद्यंजतं ते अन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिर्स्तिवितं। नात्र भुवंनम्। न पूषा। न पृशवंः। नाऽऽदित्यः संवध्सर

एव प्रत्यक्षेण प्रियतंमं विद्यात्। एतद्वै संवथ्सरस्य प्रियतंम र रूपम्। योऽस्य महानर्थ उत्पथ्स्यमानो भ्वति। इदं पुण्यं कुरुष्वेति। तमाहरंणं दद्यात्॥ ७॥

-[२]

साकुआना र स्प्रथंमाहुरेक जम्। षडुं द्यमा ऋषंयो देवजा इतिं। तेषांमिष्टानि विहिंतानि धामुशः। स्थात्रे रेजन्ते विकृतानि रूपशः। को नुं मर्या अमिंथितः। सखा सखांयमब्रवीत्। जहांको अस्मदीषते। यस्तित्याजं सखिविद् सखांयम्। न तस्यं वाच्यपि भागो अस्ति। यदी रे शृणोत्यलक रे शृणोति॥८॥

न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामितिं। ऋतुर्ऋतुना नुद्यमानः। विनेनादाभिधावः। षष्टिश्च त्रिश्शंका वृत्गाः। शुक्लकृष्णौ च षाष्टिंकौ। साराग्वस्नेर्ज्ररदेक्षः। वस्नतो वसुंभिः सह। संवथ्सरस्यं सिवतुः। प्रैषकृत्प्रंथमः स्मृतः। अमूनादयंतेत्यन्यान्॥९॥

अमू इश्चं परिरक्षंतः। एता वाचः प्रंयुज्यन्ते। यत्रैतंदुपृदृश्यंते। एतदेव विंजानीयात्। प्रमाणं कालपर्यये। विशेषणं तुं वक्ष्यामः। ऋतूनां तिन्नबोधंत। शुक्लवासां रुद्रगणः। ग्रीष्मेणांऽऽवर्तते संह। निजहंन् पृथिंवी स् सर्वाम्॥१०॥

ज्योतिषाँ ऽप्रतिख्येनं सः। विश्वरूपाणिं वासा ५सि।

आदित्यानां निबोधंत। संवथ्सरीणं कर्मफलम्। वर्षाभिदंदता सह। अदुःखो दुःखचंक्षुरिव। तद्मांऽऽपीत इव दश्यंते। शीतेनांव्यथंयन्निव। रुरुदंक्ष इव दश्यंते। ह्रादयतें ज्वलंतश्चेव। शाम्यतंश्चास्य चक्षुंषी। या वै प्रजा भ्रंड्श्यन्ते। संवथ्सरात्ता भ्रंड्श्यन्ते। याः प्रतितिष्ठन्ति। संवथ्सरे ताः प्रतितिष्ठन्ति। वर्षाभ्यं इत्यर्थः॥११॥

[३]

अक्षिंदुःखोत्थितस्यैव। विप्रसंत्रे क्नीनिके। आङ्के चार्द्गणं नास्ति। ऋभूणां तित्रबोधंत। कनकाभानि वासार्सा। अहतांनि निबोधंत। अन्नमश्रीतं मृज्मीत। अहं वो जीवनप्रदः। पुता वाचः प्रयुज्यन्ते। शुरद्यंत्रोपदृश्यंते॥१२॥

अभिधून्वन्तोऽभिघ्नंन्त इव। वातवंन्तो मुरुद्गंणाः। अमुतो जेतुमिषुमुंखिम्व। सन्नद्धाः सह दंदशे ह। अपध्वस्तैवंस्तिवंर्णेरिव। विशिखासंः कप्रदिनः। अनुद्धस्य योथ्स्यंमान्स्य। नुद्धस्यंव लोहिंनी। हेमतश्रक्षंषी विद्यात्। अक्ष्णयोः क्षिपणोरिंव॥१३॥

दुर्भिक्षं देवेलोकेषु। मनूनांमुद्कं गृहे। एता वाचः प्रंवद्न्तीः। वैद्युतों यान्ति शैशिंरीः। ता अग्निः पवंमना अन्वैक्षत। इह जीविकामपंरिपश्यन्। तस्यैषा भवंति। इहेहंवः स्वतपसः। मरुतः सूर्यत्वचः। शर्म सप्रथा आवृंणे॥१४॥

[8]

अतिताम्राणि वासार्सा। अष्टिवंजिशतिष्ठें च। विश्वे देवा विप्रहर्नता अग्निजिंह्वा असश्चेता नैव देवों न मृत्यः। न राजा वंरुणो विभुः। नाग्निर्नेन्द्रो न पंवमानः। मातृक्कंचन् विद्यंते। दिव्यस्यैका धनुंरार्तिः। पृथिव्यामपंरा श्रिता॥१५॥

तस्येन्द्रो विम्नेरूपेण। धनुज्यांमिछिनथ्स्वंयम्। तिदंन्द्र्धनं-रित्युज्यम्। अभवंणेषु चक्षंते। एतदेव शंयोर्बार्ह्स्पत्यस्य। एतद्रुद्रस्य धनुः। रुद्रस्यं त्वेव धनुंरार्बिः। शिर् उत्पिपेष। स प्रवृग्योऽभवत्। तस्माद्यः सप्रवृग्येणं युज्ञेन यजंते। रुद्रस्य स शिर्ः प्रतिद्धाति। नैन र् रुद्र आरुको भवति। य पुवं वेदं॥१६॥

[لع]

अत्यूर्ध्वाक्षोऽतिरश्चात्। शिशिंरः प्रदृश्यंते। नैव रूपं नं वासार्सा। न चक्षुः प्रतिदृश्यंते। अन्योन्यं तु नं हिङ्स्रातः। सृतस्तंद्देवलक्षणम्। लोहितोऽक्ष्णि शारशीर्ष्णिः। सूर्यस्योदयनं प्रंति। त्वं करोषिं न्यञ्जलिकाम्। त्वं करोषि निजानुंकाम्॥१७॥

निजानुका में न्यञ्जलिका। अमी वाचमुपासंतामिति। तस्मै सर्व ऋतवों नम्नते। मर्यादाकरत्वात्प्रंपुरोधाम्। ब्राह्मणं आप्रोति। य एवं वेद। स खलु संवथ्सर एतैः सेनानीभिः सह। इन्द्राय सर्वान्कामानिभेवहति। स द्रफ्सः। तस्यैषा

भवंति॥१८॥

अवंद्रफ्सो अर्श्युमतीमितिष्ठत्। इयानः कृष्णो द्शिभिः सहस्रैः। आवर्तिमिन्द्रः शच्या धर्मन्तम्। उपस्रुहि तं नृमणामथंद्रामिति। एतयैवेन्द्रः सलावृंक्या सह। असुरान् परिवृश्चति। पृथिंव्यर्शुमंती। तामन्ववंस्थितः संवथ्सरो दिवं चं। नैवं विदुषाऽऽचार्यान्तेवासिनौ। अन्योन्यस्मै द्रुह्याताम्। यो द्रुह्यति। भ्रश्यते स्वर्गाल्लोकात्। इत्यृतुमंण्डलानि। सूर्यमण्डलान्याख्यायिकाः। अत ऊर्ध्वर संनिर्वृचनाः॥१९॥

आरोगो भ्राजः पटरंः पत्ङ्गः। स्वर्णरो ज्योतिषीमान्ं विभासः। ते अस्मै सर्वे दिवमांतपृन्ति। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। कश्यंपोऽष्ट्रमः। स महामेरुं नं जहाति। तस्यैषा भवंति। यत्ते शिल्पं कश्यप रोचनावंत्। इन्द्रियावंतपुष्कुलं चित्रभांनु। यस्मिन्थ्सूर्या अर्पिताः सप्त साकम्॥२०॥

तस्मिन् राजानमधिविश्रयेमिमृति। ते अस्मै सर्वे कश्यपाञ्चोतिर्लभृन्ते। तान्थ्योमः कश्यपादिधिनिर्धमित। भ्रस्ताकर्मकृदिवैवम्। प्राणो जीवानीन्द्रियंजीवानि। सप्त शीर्षण्याः प्राणाः। सूर्या इंत्याचार्याः। अपश्यमहमेतान्थ्यप्त सूर्यानिति। पञ्चकर्णो वाथ्स्यायनः। सप्तकर्णश्च प्राक्षिः॥२१॥

आनुश्रविक एव नौ कश्यंप इति। उभौ वेद्यिते। न हि शेकुमिव महामेंश्रं गुन्तुम्। अपश्यमहमेथ्सूर्यमण्डलं परिवर्तमानम्। गार्ग्यः प्राणत्रातः। गच्छन्त महामेश्म्। एकं चाजहतम्। भ्राजपटरपतंङ्गा निहने। तिष्ठन्नांतपन्ति। तस्मांदिह तिष्ठितपाः॥२२॥

अमुत्रेतरे। तस्मांदिहातिष्रितपाः। तेषांमेषा भवंति। सप्त सूर्या दिव्मनुप्रविष्टाः। तान्-वेति पृथिभिदिक्षिणावान्। ते अस्मै सर्वे घृतमांतप्नि। ऊर्जं दुहाना अनपस्फुरंन्त इति। सप्तर्त्विजः सूर्या इंत्याचार्याः। तेषांमेषा भवंति। स्प्त दिशो नानांसूर्याः॥२३॥

स्प्त होतांर ऋत्विजंः। देवा आदित्यां ये स्प्ता। तेभिः सोमाभी रक्षण इति। तदंण्याम्नायः। दिग्भाज ऋतूँन् करोति। एतंयैवावृता सहस्रसूर्यताया इति वैशम्पायनः। तस्यैषा भवंति। यद्यावं इन्द्र ते शृत शृतं भूमीः। उतस्युः। नत्वां विज्ञन्थ्सहस्र सूर्याः॥२४॥

अनु न जातमष्ट रोदंसी इति। नानालिङ्गत्वादतूनां नानांसूर्यत्वम्। अष्टौ तु व्यवसिता इति। सूर्यमण्डलान्यष्टांत ऊर्ध्वम्। तेषांमेषा भवंति। चित्रं देवानामुदंगादनीकम्। चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्षम्। सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुंषश्चेति॥२५॥ क्वेदमभ्रं निविशते। क्वायरं संवथ्सरो मिथः। क्वाहः क्वेयं देव रात्री। क्व मासा ऋतवः श्रिताः। अर्धमासां मुहूर्ताः। निमेषास्त्रंटिभिः सह। क्वेमा आपो निविशन्ते। यदीतों यान्ति सम्प्रंति। काला अफ्सु निविशन्ते। आपः सूर्ये समाहिताः॥२६॥

अभ्राण्यपः प्रंपद्यन्ते। विद्युथ्सूर्ये स्माहिता। अनवर्णे इंमे भूमी। इयं चांऽसौ च रोदंसी। किङ्स्विदत्रान्तंरा भूतम्। येनेमे विंधृते उभे। विष्णुनां विधृते भूमी। इति वंध्सस्य वेदंना। इरावती धेनुमती हि भूतम्। सूयवसिनी मनुषे दशस्यै॥२७॥

व्यष्टभ्राद्रोदंसी विष्णंवृते। दाधर्थं पृथिवीम्भितों म्यूखैंः। किं तिद्वष्णोर्बलमाहुः। का दीप्तिः किं प्रायणम्। एको युद्धार्यद्देवः। रेजती रोद्सी उभे। वाताद्विष्णोर्बलमाहुः। अक्षराद्दीप्तिरुच्यंते। त्रिपदाद्धार्यद्देवः। यद्विष्णोरेकुमृत्तंमम्॥२८॥

अग्नयो वायंवश्चैव। एतदंस्य प्रायंणम्। पृच्छामि त्वा पंरं मृत्युम्। अवमं मध्यमश्चंतुम्। लोकं च पुण्यंपापानाम्। एतत्पृच्छामि सम्प्रंति। अमुमांहुः पंरं मृत्युम्। प्वमानं तु मध्यंमम्। अग्निरेवावंमो मृत्युः। चन्द्रमाश्चतुरुच्यंते॥२९॥

अनाभोगाः पंरं मृत्युम्। पापाः संयन्ति सर्वदा।

आभोगास्त्वेवं संयन्ति। यत्र पुंण्यकृतो जंनाः। ततो मध्यमंमायन्ति। चृतुमंग्निं च सम्प्रंति। पृच्छामि त्वां पापकृतः। यत्र यातयते यमः। त्वं नस्तद्वह्मंन् प्रब्रूहि। यदि वैतथाऽसतो गृंहान्॥३०॥

कृश्यपांदुदिताः सूर्याः। पापान्निर्प्रान्ति सर्वदा। रोदस्योन्तर्देशेषु। तत्र न्यस्यन्ते वास्वैः। तेऽशरीराः प्रंपद्यन्ते। यथाऽपुंण्यस्य कर्मणः। अपाँण्यपादंकेशासः। तत्र तेऽयोनिजा जनाः। मृत्वा पुनर्मृत्युमांपद्यन्ते। अद्यमानाः स्वकर्मभिः॥३१॥

आशातिकाः क्रिमंय इव। ततः पूयन्तं वास्रवैः। अपैतं मृत्युं जंयित। य एवं वेदं। स खल्वैवं विद्वाह्मणः। दीर्घश्रुंत्तमो भवंति। कश्यंपस्यातिंथिः सिद्धगंमनः सिद्धागंमनः। तस्यैषा भवंति। आयस्मिन्थ्सप्त वास्रवाः। रोहंन्ति पूर्व्या रुहंः॥३२॥

ऋषिंर्ह दीर्घश्रुत्तंमः। इन्द्रस्य घर्मो अतिथिरित। कश्यपः पश्यंको भ्वति। यथ्सवं परिपश्यतीति सौक्ष्म्यात्। अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। तस्यैषा भवंति। अग्ने नयं सुपथां राये अस्मान्। विश्वांनि देव वयुनांनि विद्वान्। युयोध्यंस्मज्जंहुराणमेनः। भूयिष्ठां ते नम उक्तिं विधेमेति॥३३॥ अग्निश्च जातंवेदाश्च। सहोजा अंजिराप्रभुः। वैश्वानरो नंयांपाश्च। पङ्किरांधाश्च सप्तंमः। विसर्पेवाऽष्टंमोऽग्नीनाम्। एतेऽष्टौ वसवः, क्षिंता इति। यथर्त्ववाग्नेरिचिर्वर्णविशेषाः। नीलार्चिश्च पीतकांर्चिश्चेति। अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैका-दशंस्रीकस्य। प्रभ्राजमाना व्यंवदाताः॥३४॥

याश्च वासुंकिवैद्युताः। रजताः पर्रुषाः श्यामाः। कपिला अतिलोहिताः। ऊर्ध्वा अवपंतन्ताश्च। वैद्युत इंत्येकादश। नैनं वैद्युतों हिनुस्ति। य एवं वेद। स होवाच व्यासः पांराश्नर्यः। विद्युद्वधमेवाहं मृत्युमैंच्छमिति। न त्वकांम १ हन्ति॥३५॥

य एवं वेद। अथ गंन्धर्वगणाः। स्वानुभ्राट्। अङ्घारिकम्भारिः। हस्तः सुहंस्तः। कृशांनुर्विश्वावंसुः। मूर्धन्वान्थ्सूँर्यव्चाः। कृतिरित्येकादश गंन्धर्वगणाः। देवाश्च महादेवाः। रश्मयश्च देवां गर्गिरः॥३६॥

नैनं गरों हिन्स्ति। य एंवं वेद। गौरी मिंमाय सिल्लानि तक्षंती। एकंपदी द्विपदी सा चतुंष्पदी। अष्टापंदी नवंपदी बभूवुषीं। सहस्राक्षरा परमे व्योमन्निति। वाचों विशेषणम्। अथ निगदंव्याख्याताः। ताननुर्क्रमिष्यामः। व्राहवंः स्वतपसः॥३७॥

विद्युन्मंहसो धूपंयः। श्वापयो गृहमेधाँश्चेत्येते। ये चेमेऽशिमिविद्विषः। पर्जन्याः सप्त पृथिवीमभिवंर्षन्ति। वृष्टिंभिरिति। एतयैव विभक्तिविंपरीताः। सप्तभिवीं तैंरुदीरिताः। अमूँ ल्लोकानभिवंर्षन्ति। तेषांमेषा भवंति। समानमेतदुदंकम्॥३८॥

उचैत्यंवचाहंभिः। भूमिं पूर्जन्या जिन्वंन्ति। दिवं जिन्वन्त्यग्रय इति। यदक्षरं भूतकृतम्। विश्वं देवा उपासंते। महर्षिमस्य गोप्तारम्। जुमदंग्निमकुंवत। जुमदंग्निराप्यांयते। छन्दोंभिश्चतुरुत्तरेः। राज्ञः सोमंस्य तृप्तासंः॥३९॥

ब्रह्मणा वीर्यावता। शिवा नेः प्रदिशो दिशेः। तच्छुं योरावृणीमहे। गातुं यज्ञायं। गातुं यज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। सोमपा (३) असोमपा (३) इति निगदंव्याख्याताः॥४०॥

[8]

सहस्रवृदियं भूमिः। परं व्योम सहस्रवृत्। अश्विनां भुज्यूनास्त्या। विश्वस्यं जगतस्पंती। जाया भूमिः पंतिर्व्योम। मिथुनंन्ता अतुर्यथुः। पुत्रो बृहस्पंती रुद्रः। स्रमां इतिं स्रीपुमम्। शुक्रं वांमन्यद्यंज्तं वांमन्यत्। विषुंरूपे अहंनी द्यौरिव स्थः॥४१॥

विश्वा हि माया अवंथः स्वधावन्तौ। भुद्रा वाँ पूषणाविह रातिरंस्तु। वासाँत्यौ चित्रौ जगंतो निधानौँ। द्यावांभूमी चुरथंः स्थ सर्खायौ। ताविश्वनां रासभौश्वा हवंं मे। शुभस्पती आगतर् सूर्ययां सह। त्युग्रोह भुज्युमंश्विनोदमेघे। र्यिं न कश्चिन्ममृवां (२) अवांहाः। तमूहथुनौंभिरांत्मन्वतींभिः। अन्तरिक्षप्रिङ्मिरपोदकाभिः॥४२॥

तिस्रः, क्षप्स्तिरहांतिव्रजिद्धिः। नासंत्या भुज्युमूंहथुः पतुङ्गेः। समुद्रस्य धन्वंत्रार्द्रस्यं पारे। त्रिभीरथैंः श्तपंद्धिः षडिश्वेः। सवितारं वितन्वन्तम्। अनुंबध्नाति शाम्बरः। आपपूर्षम्बरश्चेव। सवितारेप्सोऽभवत्। त्यः सुतृप्तं विदित्वेव। बहुसोम गिरं वंशी॥४३॥

अन्वेति तुग्रो वंक्रियान्तम्। आयसूयान्थ्सोमंतृपसुषु। स सङ्ग्रामस्तमों द्योऽत्योतः। वाचो गाः पिपाति तत्। स तद्गोभिः स्तवां ऽत्येत्यन्ये। रक्षसांनन्विताश्चं ये। अन्वेति परिवृत्याऽस्तः। एवमेतौ स्थां अश्विना। ते एते द्युंः पृथिव्योः। अहंरहर्गर्भं दधाथे॥४४॥

तयोरेतौ वथ्सावंहोरात्रे। पृथिव्या अहंः। दिवो रात्रिः। ता अविंसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वथ्सौ। अग्निश्चांऽऽदित्यश्चं। रात्रेर्वथ्सः। श्वेत आंदित्यः। अह्योऽग्निः॥४५॥

ताम्रो अंरुणः। ता अविसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ। वृत्रश्चं वैद्युतश्चं। अग्नेर्वृत्रः। वैद्युतं आदित्यस्यं। ता अविसृष्टौ। दम्पंती एव भंवतः। तयोरेतौ वृथ्सौ॥४६॥ उष्मा चं नीहारश्चं। वृत्रस्योष्मा। वैद्युतस्यं नीहारः। तो तावेव प्रतिपद्येत। सेय॰ रात्रीं गुर्भिणीं पुत्रेण संवंसित। तस्या वा एतदुल्बणम्। यद्रात्रौं रृष्टमयः। यथा गोर्गिभिण्यां उल्बणम्। एवमेतस्यां उल्बणम्। प्रजियष्णुः प्रजया च पशुभिश्च भ्वति। य एवं वेद। एतमुद्यन्तमिपयंन्तं चेति। आदित्यः पुण्यंस्य वथ्मः। अथ पवित्राङ्गिरसः॥४७॥

-[१०]

प्वित्रंवन्तः परिवाज्ञमासंते। पितैषां प्रत्नो अभिरंक्षिति व्रतम्। मृहः संमुद्रं वर्रणस्तिरोदंधे। धीरां इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम्। प्वित्रं ते वितंतं ब्रह्मणस्पतें। प्रभुगित्रांणि पर्येषिविश्वतः। अतंप्ततनूर्न तदामो अंश्रुते। शृतास् इद्वहंन्तस्तथ्समांशत। ब्रह्मा देवानांम्। असंतः सुद्ये ततंक्षुः॥४८॥

ऋषंयः स्प्तात्रिश्च यत्। सर्वेऽत्रयो अंगस्त्यश्च। नक्षेत्रैः शङ्कृतोऽवसन्। अथं सवितुः श्यावाश्वस्याऽवर्तिकामस्य। अमी य ऋक्षा निहितास उचा। नक्तं दर्दश्चे कुहंचिद्दिवेयुः। अदंब्यानि वरुणस्य व्रतानि। विचाकशंचन्द्रमा नक्षंत्रमेति। तथ्संवितुर्वरेण्यम्। भर्गो देवस्यं धीमहि॥४९॥

धियो यो नंः प्रचोदयाँत्। तथ्संवितुर्वृणीमहे। व्यं देवस्य भोजनम्। श्रेष्ठ र् सर्वधातमम्। तुरं भगस्य धीमहि। अपांगूहत सविता तृभीन्। सर्वान्दिवो अन्धंसः। नक्तं तान्यंभवन्दृशे। अस्थ्यस्थ्रा सम्भविष्यामः। नाम् नामैव नाम मै॥५०॥

नपुरसंकं पुमाङ्क्यंस्मि। स्थावंरोऽस्म्यथ् जङ्गंमः। यजेऽयिक्षे यष्टाहे चं। मयां भूतान्यंयक्षत। पृशवों ममं भूतानि। अनूबन्ध्योऽस्म्यंहं विभुः। स्त्रियंः स्तीः। ता उंमे पुर्स आंहुः। पश्यंदक्षण्वान्नविचेतद्न्यः। कृविर्यः पुत्रः स इमा चिकेत॥५१॥

यस्ता विजानाथ्मंवितुः पितासंत्। अन्धो मणिमंविन्दत्। तमनङ्गुलिरावंयत्। अग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्। तमजिह्वा असश्चंत। ऊर्ध्वमूलमंवाक्छाखम्। वृक्षं यो वेद सम्प्रंति। न स जातु जनः श्रद्द्ध्यात्। मृत्युर्मा मार्यादितिः। हसित १ रुदितं गीतम्॥५२॥

वीर्णापणवलासितम्। मृतं जीवं चं यत्किश्चित्। अङ्गानिं स्नेव विद्धिं तत्। अतृष्यु इस्तृष्यंध्यायत्। अस्माञ्चाता में मिथू चरत्रं। पुत्रो निर्ऋत्यां वैदेहः। अचेतां यश्च चेतनः। स् तं मणिमंविन्दत्। सोऽनङ्गुलिरावंयत्। सोऽग्रीवः प्रत्यंमुश्चत्॥५३॥

सोऽजिंह्वो असश्चंत। नैतमृषिं विदित्वा नगरं प्रविशेत्। यंदि प्रविशेत्। मिथौ चरित्वा प्रविशेत्। तथ्सम्भवंस्य व्रतम्। आतमग्ने रथं तिष्ठ। एकांश्वमेक्योजनम्। एकचक्रमेक्धुरम्। वातध्रांजिगृतिं विभो। नृ रिष्यतिं न व्यथते॥५४॥ नास्याक्षों यातु सर्ज्ञति। यच्छ्वेतांन् रोहिंताङ्श्चाग्नेः। र्थे युंकाऽधितिष्ठंति। एकया च दशिश्चं स्वभूते। द्वाभ्यामिष्टये विर्शरया च। तिसृभिश्च वहसे त्रिरंशता च। नियुद्धिर्वायविह तां विमुश्च॥५५॥

[88]

आतंनुष्व प्रतंनुष्व। उद्धमाऽऽधंम् सन्धंम। आदित्ये चन्द्रंवर्णानाम्। गर्भमाधेहि यः पुमान्। इतः सिक्तः सूर्यगतम्। चन्द्रमंसे रसं कृधि। वारादं जनयाग्रेऽग्निम्। य एको रुद्र उच्यंते। असङ्ख्याताः संहस्राणि। स्मर्यते न च दृश्यंते॥५६॥

पुवमेतं निंबोधत। आम्न्द्रैरिन्द्र हरिंभिः। याहि म्यूररोमभिः। मा त्वा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। द्धन्वेव ता इंहि। मा म्न्द्रैरिन्द्र हरिंभिः। यामि म्यूररोमभिः। मा मा केचिन्नियेमुरिन्न पाशिनः। नि्धन्वेव तां (२) इंमि। अण्भिश्च महद्भिश्च॥५७॥

निघृष्वैरस्मायुंतैः। कालैर्हरित्वंमापृन्नैः। इन्द्राऽऽयांहि स्हस्रयुक्। अग्निर्विभ्राष्टिंवसनः। वायुः श्वेतंसिकद्रुकः। संवथ्सरो विषूवर्णैः। नित्यास्तेऽनुचंरास्त्व। सुब्रह्मण्योश् सुब्रह्मण्योश् सुब्रह्मण्योम्। इन्द्राऽऽगच्छ हरिव आगच्छ मेधातिथेः। मेष वृषणश्वंस्य मेने॥५८॥

गौरावस्कन्दिन्नहल्यांये जार। कौशिकब्राह्मण

गौतमंब्रुवाण। अरुणाश्वां इहागंताः। वसंवः पृथिविक्षितंः। अष्टौदिग्वासंसोऽग्नयंः। अग्निश्च जातवेदांश्चेत्येते। ताम्राश्वांस्ताम्रूरथाः। ताम्रवर्णांस्तथाऽसिताः। दण्डहस्ताः खाद्ग्दतः। इतो रुद्राः पराङ्गताः॥५९॥

उक्त स्थानं प्रमाणं चं पुर् इत। बृह्स्पतिश्च सिवता चं। विश्वरूपेरिहाऽऽगंताम्। रथेनोदक्वर्त्मना। अपसुषां इति तद्वंयोः। उक्तो वेषो वासार्स च। कालावयवानामितंः प्रतीच्या। वासात्यां इत्यश्विनोः। कोऽन्तिरक्षे शब्दं करोतीति। वासिष्टो रौहिणो मीमार्स्सां चुक्रे। तस्यैषा भवंति। वाश्रेवं विद्युदितिं। ब्रह्मण उदरणमिस। ब्रह्मण उदीरणंमिस। ब्रह्मण आस्तरंणमिस। ब्रह्मण उपस्तरंणमिस॥६०॥

·[१२]

[अपंक्रामत गर्भिण्यः]

अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मां महींम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहरत्। अष्टयोन्यृष्टपुंत्रम्। अष्टपंदिदम्नतिरक्षम्। अहं वेद् न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहरत्। अष्टयोनीम्ष्टपुंत्राम्। अष्टपंत्रीम्मूं दिवम्॥६१॥

अहं वेद न में मृत्युः। न चामृत्युर्घाऽऽहंरत्। सुत्रामाणं महीमू षु। अदितिचौरिदितिर्न्तिरक्षिम्। अदितिर्माता स पिता स पुत्रः। विश्वे देवा अदितिः पश्चजनाः। अदिंतिर्जातमदिंतिर्जनिंत्वम्। अष्टौ पुत्रासो अदिंतेः। ये जातास्तुन्वः परिं। देवां (२) उपप्रैथ्सप्तभिः॥६२॥

प्रा मार्ताण्डमास्यंत्। सप्तिभिः पुत्रेरिदंतिः। उपप्रैत्पूर्वं युगम्। प्रजायं मृत्यवे तंत्। प्रा मार्ताण्डमाभरदिति। ताननुक्रमिष्यामः। मित्रश्च वर्रणश्च। धाता चाँर्यमा च। अश्रशंश्च भगंश्च। इन्द्रश्च विवस्वाईश्चेत्येते। हिर्ण्यगर्भो ह्रसः शुंचिषत्। ब्रह्मंजज्ञानं तदित्पदिमिति। गर्भः प्रांजापृत्यः। अथु पुरुषः सप्त पुरुषः॥६३॥

[यथास्थानं गंर्भिण्यः]

·[83]

योऽसौ तपत्रुदेति। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायोदेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायोदंगाः। असौ यौऽस्तमेति। स सर्वेषां भूतानां प्राणानादायाऽस्तमेति। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणानादायाऽस्तंङ्गाः। असौ य आपूर्यति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरापूर्यति॥६४॥

मा में प्रजाया मा पंश्नाम्। मा ममं प्राणेरापूरिष्ठाः। असौ योऽपक्षीयंति। स सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंक्षीयति। मा में प्रजाया मा पंश्नाम्। मा ममं प्राणेरपंक्षेष्ठाः। अमूनि नक्षंत्राणि। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणैरपंप्रसृपत् मोथ्सृंपत॥६५॥

ड्रमे मासाँश्चार्थमासाश्चं। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। इम ऋतवंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पन्ति चोथ्संपन्ति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृपत् मोथ्संपत। अय॰ संवथ्सरः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च॥६६॥

मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इदमहंः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। इय॰ रात्रिः। सर्वेषां भूतानां प्राणेरपंप्रसर्पति चोथ्संपति च। मा में प्रजाया मा पंशूनाम्। मा ममं प्राणेरपंप्रसृप् मोथ्सृंप। ॐ भूर्भुवः स्वंः। एतद्वो मिथुनं मा नो मिथुन॰ रीद्वम्॥६७॥

-[88]

अथाऽऽदित्यस्याष्टपुंरुषस्य। वसूनामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रुद्राणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। आदित्यानामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। सताः सत्यानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अभिधून्वतांमभिष्नताम्। वातवंतां मुरुताम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऋभूणामादित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। विश्वेषां देवानाम्। आदित्यानाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। संवथ्सरंस्य स्वितुः। आदित्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। रश्मयो वो मिथुनं मा नो मिथुनः रीढ्वम्॥६८॥

-[१५]

आरोगस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। भ्राजस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। पतङ्गस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। स्वर्णरस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ज्योतिषीमतस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। विभासस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। कश्यपस्य स्थाने स्वतेर्जंसा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। आपो वो मिथुनं मा नो मिथुनं रीृढ्वम्॥६९॥

•[१६]

अथ वायोरेकादशपुरुषस्यैकादशंस्रीक्स्य। प्रभ्राजमानानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। व्यवदातानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। वासुिकवैद्युतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। रजतानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। परुषाणाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। श्यामानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। किपिलानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। अतिलोहितानाः

रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि। ऊर्ध्वानाः रुद्राणाः स्थाने स्वतेजंसा भानि॥७०॥

अवपतन्ताना १ रुद्राणा इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वैद्युताना १ रुद्राणा इ स्थाने स्वते जंसा भानि। प्रभ्राजमानीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। व्यवदातीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। वासु कि वैद्युतीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। रजताना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। परुषाणा १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। किपलाना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अतिलोहितीना १ रुद्राणीना इ स्थाने स्वते जंसा भानि। अधिला स्थाने स्थाने स्वते जंसा भानि। अधिला स्थाने स्थाने स्वते जंसा भानि। अधिला स्थाने स्थाने। ॐ भूर्भुवः स्थाने स्थाने वो मिथुनं मा नो मिथुनं १ रीद्वम्॥७१॥

-[१७]

अथाग्नेरष्टपुंरुष्स्य। अग्नेः पूर्विदश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। जातवेदस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। सहोजसो दक्षिणदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। अजिराप्रभव उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। वैश्वानरस्यापरदिश्यस्य स्थाने स्वतेजंसा भानि। नर्यापस उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। पङ्किराधस उदग्दिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। विसर्पिण उपदिश्यस्य स्थाने स्वतेर्जमा भानि। ॐ भूर्भुवः स्वंः। दिशो वो मिथुनं मा नो मिथुन शिद्वम्॥७२॥

[१८]

दक्षिणपूर्वस्यां दिशि विसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। दक्षिणापरस्यां दिश्यविसंपी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरपूर्वस्यां दिशि विषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। उत्तरापरस्यां दिश्यविषादी न्रकः। तस्मान्नः पंरिपाहि। आ यस्मिन्थ्सप्त वासवा इन्द्रियाणि शतक्रतंवित्येते॥७३॥

-[88]

इन्द्रघोषा वो वसुंभिः पुरस्तादुपंदधताम्। मनोजवसो वः पितृभिंदिक्षिण्त उपंदधताम्। प्रचेता वो रुद्रैः पश्चादुपंदधताम्। विश्वकंमां व आदित्यैरुंत्तर्त उपंदधताम्। त्वष्टां वो रूपैरुपरिष्टादुपंदधताम्। संज्ञानं वः पश्चादिति। आदित्यः सर्वोऽग्निः पृथिव्याम्। वायुर्न्तिशे। सूर्यो दिवि। चन्द्रमां दिक्षु। नक्षंत्राणि स्वलोके। पुवा ह्यंव। पुवा ह्यंग्ने। पुवा हि वांयो। पुवा हींन्द्र। पुवा हि पूंषन्। पुवा हि देवाः॥७४॥

-[२०]

आपंमापामुपः सर्वाः। अस्मादुस्माद्वितोऽमुर्तः।

अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्करिर्द्धिया। वाय्वश्वां रिम्पित्यः। मरींच्यात्मानो अद्रुंहः। देवीर्भुवनसूर्वरीः। पुत्रवत्वायं मे सुत। महानाम्नीर्महामानाः। महुसो महसः स्वः॥७५॥

देवीः पंर्जन्यसूवंरीः। पुत्रवृत्वायं मे सुत। अपाश्चंिष्णम्पा रक्षः। अपाश्चंिष्णम्पा रघम्। अपाँघामपंचावर्तिम्। अपंदेवीरितो हित। वर्ज्ञं देवीरजीता ॥ भूवंनं देवसूवंरीः। आदित्यानदितिं देवीम्। योनिनोर्ध्वमुदीषंत॥ ७६॥

भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षिभ्यंजंत्राः। स्थिरेरङ्गेंस्तुष्टुवाः संस्तुनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो वृह्स्पतिर्दधातु। केतवो अर्रुणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः शृतधां हि। समाहितासो सहस्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप् ओषंधयः। सुमृडीका सर्रस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे॥७७॥

[२१]

योऽपां पुष्पं वेदं। पुष्पंवान् प्रजावाँन् पशुमान् भंवति। चन्द्रमा वा अपां पुष्पम्। पुष्पंवान् प्रजावाँन् पशुमान् भंवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। अग्निर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽग्नेरायतंनं वेदं॥७८॥

आयतंनवान् भवति। आपो वा अग्नेरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। वायुर्वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो वायोरायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति॥७९॥

आपो वै वायोरायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। असौ वै तपंत्रपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। योऽमुष्य तपंत आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वा अमुष्य तपंत आयतंनम्॥८०॥

आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। चन्द्रमा वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यश्चन्द्रमंस आयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै चन्द्रमंस आयतंनम्। आयतंनवान् भवति॥८१॥

य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। नक्षंत्राणि वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यो नक्षंत्राणामायतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै नक्षंत्राणामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं॥८२॥

योऽपामायतंनुं वेदं। आयतंनवान् भवति। पूर्जन्यो वा

अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै पूर्जन्यंस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। योऽपामायतंनं वेदं॥८३॥

आयतंनवान् भवति। संवथ्सरो वा अपामायतंनम्। आयतंनवान् भवति। यः संवथ्सरस्याऽऽयतंनं वेदं। आयतंनवान् भवति। आपो वै संवथ्सरस्याऽऽयतंनम्। आयतंनवान् भवति। य एवं वेदं। यौऽपसु नावं प्रतिष्ठितां वेदं। प्रत्येव तिष्ठति॥८४॥

इमे वै लोका अपस् प्रतिष्ठिताः। तदेषाऽभ्यनूँक्ता। अपार रस्मुदंयरसन्। सूर्ये शुक्रर स्मार्भृतम्। अपार रसंस्य यो रसंः। तं वो गृह्णाम्युत्तममितिं। इमे वै लोका अपार रसंः। तेऽमुष्मिन्नादित्ये स्मार्भृताः। जानुद्व्रीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरियत्वा गुल्फद्व्रम्॥८५॥

पुष्करपर्णेः पुष्करदण्डैः पुष्करैश्चं सङ्स्तीर्य। तस्मिन्विहायसे। अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। ब्रह्मवादिनों वदन्ति।
कस्मौत्प्रणीतेऽयम्ग्निश्चीयतें। साप्रणीतेऽयम्पस् ह्ययं
चीयतें। असौ भुवंनेऽप्यनांहिताग्निरेताः। तम्भितं एता
अबीष्टंका उपंदधाति। अग्निहोत्रे दंर्शपूर्णमासयोः। पृशुबन्धे
चौतुर्मास्येषुं॥८६॥

अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञऋतुष्वितिं। पृतद्धं स्मृ वा

आहुः शण्डिलाः। कम्भिं चिनुते। सृत्रियम्भिं चिन्वानः। स्वथ्स्रं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते। सावित्रम्भिं चिन्वानः। अमुमादित्यं प्रत्यक्षेण। कम्भिं चिनुते॥८७॥

नाचिकेतम् ग्निं चिन्वानः। प्राणान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। चातुर्होत्रियम् ग्निं चिन्वानः। ब्रह्मं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। वैश्वसृजम् ग्निं चिन्वानः। शरीरं प्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। उपानुवाक्यमाशुम् ग्निं चिन्वानः॥८८॥

ड्माँ ह्यो कान्य्रत्यक्षेण। कम् ग्निं चिनुते। ड्ममां रूणकेतुकम् ग्निं चिन्वान इति। य एवासौ। इतश्चा ऽमृतंश्चा ऽव्यतीपाती। तिमितिं। यौं ऽग्नेर्मिं थूया वेदं। मिथुन्वान्भंवति। आपो वा अग्नेर्मिं थूयाः। मिथुन्वान्भंवति। य एवं वेदं॥८९॥

[२२]

आपो वा इदमांसन्थ्सिल्लमेव। स प्रजापंतिरेकः पुष्करपूर्णे सम्भवत्। तस्यान्तुर्मनंसि कामः सम्वर्तत। इदः सृंजेयमिति। तस्माद्यत्पुरुषो मनसाऽभिगच्छंति। तद्वाचा वंदति। तत्कर्मणा करोति। तदेषाऽभ्यनूक्ता। कामस्तदग्रे समंवर्तताधि। मनसो रेतः प्रथमं यदासीत्॥९०॥

स्तो बन्धुमसंति निरंविन्दन्। हृदि प्रतीष्यां क्वयों मनीषेतिं। उपैनन्तदुपंनमित। यत्कामो भवंति। य एवं वेदं। स तपोंऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा। शरीरमधूनुत। तस्य यन्मा १ समासीत्। ततो ऽरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंय उदंतिष्ठन्॥९१॥

ये नखाः। ते वैखान्साः। ये वालाः। ते वालखिल्याः। यो रसः। सोऽपाम्। अन्तर्तः कूर्मं भूतः सर्पन्तम्। तमंब्रवीत्। मम् वैत्वङ्गार्सा। समंभूत्॥९२॥

नेत्यंब्रवीत्। पूर्वमेवाहिम्हास्मितिं। तत्पुरुंषस्य पुरुष्त्वम्। स सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। भूत्वोदंतिष्ठत्। तमंब्रवीत्। त्वं वै पूर्वर्रं समंभूः। त्विम्दं पूर्वः कुरुष्वेतिं। स इत आदायाऽऽपः॥९३॥

अञ्चलिनां पुरस्तांदुपादंधात्। एवाह्येवेतिं। ततं आदित्य उदंतिष्ठत्। सा प्राची दिक्। अथांरुणः केतुर्दक्षिणत उपादंधात्। एवाह्यग्र इतिं। ततो वा अग्निरुदंतिष्ठत्। सा दक्षिणा दिक्। अथांरुणः केतुः पृश्चादुपादंधात्। एवा हि वायो इतिं॥९४॥

ततों वायुरुदंतिष्ठत्। सा प्रतीची दिक्। अथारुणः केतुरुंत्तर्त उपादंधात्। एवाहीन्द्रेति। ततो वा इन्द्र उदंतिष्ठत्। सोदींची दिक्। अथारुणः केतुर्मध्यं उपादंधात्। एवा हि पूषित्रितिं। ततो वै पूषोदंतिष्ठत्। सेयं दिक्॥९५॥

अथांरुणः केतुरुपरिष्टादुपादंधात्। एवा हि देवा इतिं। ततों देवमनुष्याः पितरंः। गृन्धर्वापसुरसुश्चोदंतिष्ठन्। सोर्ध्वा दिक्। या विप्रुषों विपरांपतन्। ताभ्योऽसुंरा रक्षा रेसि पिशाचाश्चोदंतिष्ठन्। तस्मात्ते परांभवन्। विप्रुङ्ग्रो हि ते समंभवन्। तदेषाऽभ्यनूंक्ता॥९६॥

आपो ह् यहृंहतीर्गर्भमायत्रं। दक्ष्वं दर्धाना जनर्यन्तीः स्वयम्भुम्। ततं इमेध्यसृंज्यन्त् सर्गाः। अद्भो वा इदश् सम्भूत्। तस्मादिदश् सर्वं ब्रह्मं स्वयम्भिवतिं। तस्मादिदश् सर्वश् शिथिलम्वाऽध्रुवंमिवाभवत्। प्रजापंतिर्वाव तत्। आत्मनाऽऽत्मानं विधायं। तदेवानुप्राविशत्। तदेषाऽभ्यनूँक्ता॥९७॥

विधायं लोकान् विधायं भूतानि। विधाय सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। आत्मनाऽऽत्मानंमभि संविवेशेतिं। सर्वमेवेदमास्वा। सर्वमवरुद्धं। तदेवानुप्रविंशिति। य एवं वेदं॥९८॥

[२३]

चतुंष्टय्य आपों गृह्णाति। चत्वारि वा अपा र रूपाणि। मेघों विद्युत्। स्तुन्यिलुर्वृष्टिः। तान्येवावं रुन्थे। आतपंति वर्ष्यां गृह्णाति। ताः पुरस्तादुपंदधाति। पृता वे ब्रह्मवर्चस्या आपः। मुख्त एव ब्रह्मवर्चसमवं रुन्थे। तस्मान्मुख्तो ब्रह्मवर्चसितंरः॥९९॥

कूप्यां गृह्णाति। ता दंक्षिण्त उपंदधाति। पुता

वै तेज्ञस्विनीरापंः। तेजं एवास्यं दक्षिणतो दंधाति। तस्माद्दक्षिणोऽधंस्तेज्ञस्वितंरः। स्थावरा गृंह्णाति। ताः पश्चादुपंदधाति। प्रतिष्ठिता वै स्थावराः। पश्चादेव प्रतितिष्ठति। वहंन्तीर्गृह्णाति॥१००॥

ता उत्तरत उपंदधाति। ओर्जसा वा एता वहंन्तीरिवोद्गंतीरिव आकूर्जतीरिव धावंन्तीः। ओर्ज एवास्यौत्तरतो दंधाति। तस्मादुत्तरोऽर्धं ओर्जस्वितंरः। सम्भार्या गृंह्णाति। ता मध्य उपंदधाति। इयं वै संम्भार्याः। अस्यामेव प्रतितिष्ठति। पुल्वल्या गृंह्णाति। ता उपरिष्टादुपादंधाति॥१०१॥

असौ वै पंल्वयाः। अमुष्यांमेव प्रतितिष्ठति। दिक्षूपंदधाति। दिक्षु वा आपंः। अन्नं वा आपंः। अन्द्र्यो वा अन्नं जायते। यदेवान्द्र्योऽन्नं जायते। तदवंरुन्थे। तं वा एतमंरुणाः केतवो वातंरश्ना ऋषंयोऽचिन्वन्। तस्मांदारुणकेतुकंः॥१०२॥

तदेषाऽभ्यनूँक्ता। केतवो अरुंणासश्च। ऋष्यो वातंरश्नाः। प्रतिष्ठाः श्रत्थां हि। समाहितासो सहस्र्धायंस्मिति। श्रतशंश्चेव सहस्रंशश्च प्रतितिष्ठति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०३॥

-[૨૪]

जानुद्व्रीम्तरवेदीं खात्वा। अपां पूरयति। अपाः सर्वत्वाये। पुष्करुपुर्णः रुकां पुरुषमित्युपंदधाति। तपो वै पुष्करपूर्णम्। सृत्यः रुकाः। अमृतं पुर्रुषः। पृतावृद्वा वाऽस्ति। यावदेतत्। यावदेवास्ति॥१०४॥

तदवंरुन्थे। कूर्ममुपंदधाति। अपामेव मेध्मवंरुन्थे। अथौं स्वर्गस्यं लोकस्य समेष्ठौ। आपंमापामपः सर्वाः। अस्मा-दस्मादितोऽमुतः। अग्निर्वायुश्च सूर्यश्च। सह संश्चस्क्ररिद्धंया इति। वाय्वश्वां रिश्मपत्यः। लोकं पृणच्छिद्रं पृण॥१०५॥

यास्तिस्रः पंरम्जाः। इन्द्रघोषा वो वसुंभिरेवाह्येवेतिं। पश्च-चितंय उपंदधाति। पाङ्कोऽग्निः। यावांनेवाग्निः। तं चिंनुते। लोकं पृणया द्वितीयामुपंदधाति। पश्चं पदा वै विराट्। तस्या वा इयं पादः। अन्तरिक्षं पादः। द्यौः पादः। दिशः पादः। प्रोरंजाः पादः। विराज्येव प्रतितिष्ठति। य पृतमृग्निं चिंनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥१०६॥

[२५]

अग्निं प्रणीयोपसमाधायं। तम्भित पृता अबीष्टका उपद्याति। अग्निहोत्रे देशपूर्णमासयोः। पृशुब्न्धे चांतुर्मास्येषुं। अथो आहुः। सर्वेषुं यज्ञऋतुष्वितिं। अथं ह स्माहारुणः स्वांयम्भुवंः। सावित्रः सर्वोऽग्निरित्यनंनुषङ्गं मन्यामहे। नाना वा पृतेषां वीर्याणि। कम्ग्निं चिनुते॥१०७॥

स्त्रियम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। सावित्रम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिन्ते। नाचिकेतम्ग्निं चिन्वानः। कम्ग्निं चिनुते। चातुर्होत्रियम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते। वैश्वसृजम्भिं चिन्वानः। कम्भिं चिनुते॥१०८॥

उपानुवाक्यंमाशुम्भिं चिंन्वानः। कम्भिं चिंनुते। इममारुणकेतुकम्भिं चिंन्वान इतिं। वृषा वा अभिः। वृषांणौ सङ्स्फांलयेत्। हुन्येतांस्य युज्ञः। तस्मान्नानुषज्यः। सोत्तंरवेदिषुं ऋतुषुं चिन्वीत। उत्तर्वेद्याङ् ह्यंभिश्चीयतें। प्रजाकांमश्चिन्वीत॥१०९॥

प्राजापत्यो वा पृषौंऽग्निः। प्राजापत्याः प्रजाः। प्रजावांन् भवति। य एवं वेदं। पृशुकांमिश्चिन्वीत। संज्ञानं वा एतत् पंशूनाम्। यदापंः। पृशूनामेव संज्ञानेऽग्निं चिंनुते। पृशुमान् भंवति। य एवं वेदं॥११०॥

वृष्टिंकामश्चिन्वीत। आपो वै वृष्टिः। पूर्जन्यो वर्षुंको भवति। य एवं वेदं। आमयावी चिन्वीत। आपो वै भेषजम्। भेषजमेवास्मैं करोति। सर्वमायुरिति। अभिचर श्विन्वीत। वज्रो वा आपंः॥१११॥

वर्ज्रमेव भ्रातृं व्येभ्यः प्रहंरित। स्तृणुत एनम्। तेजंस्कामो यशंस्कामः। ब्रह्मवर्ज्यसकामः स्वर्गकामश्चिन्वीत। एतावृद्वा वाँऽस्ति। यावंदेतत्। यावंदेवास्ति। तदवंरुन्थे। तस्यैतद्वृतम्। वर्षित न धांवेत्॥११२॥

अमृतं वा आपंः। अमृतस्यानंन्तरित्यै। नाफ्सु मूत्रंपुरीषं कुर्यात्। न निष्ठीवेत्। न विवसंनः स्नायात्। गृह्यो वा पृषों ऽग्निः। पृतस्याग्नेरनंतिदाहाय। न पृष्करपृणानि हिरंण्यं वाऽधितिष्ठेंत्। पृतस्याग्नेरनंभ्यारोहाय। न कूर्मस्याश्नीयात्। नोदकस्याघातुंकान्येनंमोदकानिं भवन्ति। अघातुंका आपः। य पृतमृग्निं चिनुते। य उंचैनमेवं वेदं॥११३॥

[२६]

ड्मानुंकं भुंबना सीषधेम। इन्द्रंश्च विश्वं च देवाः। यज्ञं चं नस्तन्वं चं प्रजां चं। आदित्यैरिन्द्रंः सह सीषधातु। आदित्यैरिन्द्रः सगंणो मुरुद्धिः। अस्माकं भूत्विवता तनूनाम्। आप्रंवस्व प्रप्लंबस्व। आण्डीभंवज्ञ मा मुहुः। सुखादीन्दुंःखनिधनाम्। प्रतिमुश्चस्व स्वां पुरम्॥११४॥

मरींचयः स्वायम्भुवाः। ये शरीराण्यंकल्पयन्। ते तें देहं केल्पयन्तु। मा चं ते ख्यास्मं तीरिषत्। उत्तिंष्ठत् मा स्वंप्त। अग्निमिच्छध्वं भारताः। राज्ञः सोमस्य तृप्तासः। सूर्येण स्युजोषसः। युवां सुवासाः। अष्टाचंक्रा नवंद्वारा॥११५॥

देवानां पूर्ययोध्या। तस्यार् हिरण्मयः कोशः। स्वर्गी लोको ज्योतिषाऽऽवृंतः। यो वै तां ब्रह्मणो वेद। अमृतेनाऽऽवृतां पुरीम्। तस्मै ब्रह्म चं ब्रह्मा च। आयुः कीर्तिं प्रजां दंदः। विभाजनानार् हरिणीम्। यशसां सम्परीवृंताम्। पुर्रं हिरण्मयीं ब्रह्मा॥११६॥

विवेशांऽपुराजिंता। पराङेत्यंज्यामुयी। पराङेत्यंनाशुकी।

इह चांमुत्रं चान्वेति। विद्वान्देवासुरानुंभ्यान्। यत्कुंमारी मन्द्रयंते। यद्योषिद्यत्पंतिव्रतां। अरिष्टं यत्किं चं क्रियतें। अग्निस्तदनुंवेधति। अशृतांसः शृंतास्श्व॥११७॥

युज्वानो येऽप्यंयुज्वनंः। स्वंर्यन्तो नापेंक्षन्ते। इन्द्रंमुग्निं ये विदुः। सिकंता इव संयन्तिं। रृश्मिभिः समुदीरिताः। अस्माल्लोकादंमुष्माच। ऋषिभिरदात्पृश्निभिः। अपेत् वीत् वि चं सर्पतातः। येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिर्त्तु-भिर्व्यक्तम्॥११८॥

यमो दंदात्ववसानंमस्मै। नृ मुंणन्तु नृपात्वर्यः। अकृष्टा ये च कृष्टंजाः। कुमारीषु कनीनीषु। जारिणीषु च ये हिताः। रेतः पीता आण्डंपीताः। अङ्गारेषु च ये हुताः। उभयान् पुत्रंपौत्रकान्। युवेऽहं यमराजंगान्। शतिमन्नु श्ररदंः॥११९॥

अदो यद्वहां विल्बम्। पितृणां चं यमस्यं च। वर्रुणस्याश्विनोर्ग्नेः। मुरुतां च विहायंसाम्। काम्प्रयवंणं मे अस्तु। स ह्येवास्मि स्नातंनः। इति नाको ब्रह्मिश्रवो रायो धनम्। पुत्रानापो देवीरिहाऽऽहिंत॥१२०॥

-[२७]

विशींर्ष्णीं गृध्रंशीर्ष्णीं च। अपेतों निर्ऋति हैथः। परिबाध क्षेतकुक्षम्। निजङ्घ शब्लोदेरम्। स् तान् वाच्यायया सह। अग्रे नाश्य सन्दर्शः। ईर्ष्यासूये बुंभुक्षाम्। मृन्युं कृत्यां चं दीधिरे। रथेन कि॰शुकावंता। अग्ने नाशंय सन्दर्शः॥१२१॥

•[२८]

पूर्जन्यांय प्रगांयत। दिवस्पुत्रायं मीढुषें। स नो यवसंमिच्छतु। इदं वचेः पूर्जन्यांय स्वराजें। हृदो अस्त्वन्तंर्न्तद्यंयोत। मृयोभूर्वातो विश्वकृष्टयः सन्त्वस्मे। सुपिप्पूला ओषंधीर्देवगोपाः। यो गर्भमोषंधीनाम्। गवौं कृणोत्यर्वताम्। पूर्जन्यः पुरुषीणांम्॥१२२॥

-[२९]

पुनंमांमैत्विन्द्रियम्। पुन्रायुः पुन्भगंः। पुनुर्बाह्मणमैतु मा। पुनुर्द्रविणमैतु मा। यन्मेऽद्य रेतंः पृथिवीमस्कान्। यदोषंधीर्प्यसंर्द्यदापंः। इदं तत्पुन्रादंदे। दीर्घायुत्वाय् वर्चसे। यन्मे रेतः प्रसिच्यते। यन्म् आजांयते पुनंः। तेनं माम्मृतंं कुरु। तेनं सुप्रजसंं कुरु॥१२३॥

.[३०]

अद्यस्तिरोऽधाऽजांयत। तवं वैश्रवणः संदा। तिरोंऽधेहि सप्त्नान्नंः। ये अपोऽश्नन्तिं केचन। त्वाष्ट्रीं मायां वैंश्रवणः। रथर्ं सहस्रवन्धुंरम्। पुरुश्चऋर सहस्राश्वम्। आस्थायायाहि नो बुलिम्। यस्मै भूतानिं बुलिमावंहन्ति। धनं गावो हस्ति हिरंण्यमश्वानं॥१२४॥

असाम सुमृतौ युज्ञियंस्य। श्रियं बिश्रुतोऽन्नंमुखीं विराजम्। सुद्र्शने चं ऋौश्चे चं। मैनागे चं महागिरौ। शृतद्वाट्टारंगम्न्ता। स्र्हार्यं नगरं तवं। इति मन्नाः। कल्पोऽत ऊर्ध्वम्। यदि बलिर् हरेत्। हिर्ण्यनाभये वितुदये कौबेरायायं बंलिः॥१२५॥

सर्वभूताधिपतये नंम इति। अथ बलि॰ ह्रत्वोपंतिष्ठेत। क्षत्रं क्षत्रं वैश्वणः। ब्राह्मणां वयु स्मः। नर्मस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। अस्मात्प्रविश्यान्नंमद्धीति। अथ तमग्निमांदधीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः। तिरोऽधा भुवंः॥१२६॥

तिरोऽधाः स्वंः। तिरोऽधा भूर्भुवः स्वंः। सर्वेषां लोकानामाधिपत्यं सीदेति। अथ तमग्निंमिन्धीत। यस्मिन्नेतत्कर्म प्रयुश्चीत। तिरोऽधा भूः स्वाहाँ। तिरोऽधा भुवः स्वाहाँ। तिरोऽधाः स्वंः स्वाहाँ। तिरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। विरोऽधाः भूर्युः स्वाहाँ। यस्मिन्नस्य काले सर्वा आहुतीर्हुतां भवेयुः॥१२७॥

अपि ब्राह्मणंमुखीनाः। तस्मिन्नहः काले प्रंयुश्चीत। परंः सुप्तजंनाद्वेपि। मास्म प्रमाद्यन्तंमाध्यापयेत्। सर्वार्थाः सिद्धान्ते। य एवं वेद। क्षुध्यन्निदंमजानताम्। सर्वार्थाः नं सिद्धान्ते। यस्ते विघातुंको भ्राता। ममान्तर्हृंदये श्रितः॥१२८॥

तस्मां इममग्रपिण्डं जुहोमि। स मैंऽर्थान्मा विवंधीत्।

मिय स्वाहाँ। राजाधिराजायं प्रसह्यसाहिनें। नमों वयं वैश्वणायं कुर्महे। स मे कामान्कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैश्वणो दंदातु। कुबेरायं वैश्वणायं। महाराजाय नमंः। केतवो अरुणासश्च। ऋषयो वातरशनाः। प्रतिष्ठा श्वात्यां हि। समाहितासो सहस्र्रधायंसम्। शिवा नः शन्तंमा भवन्तु। दिव्या आप ओषंधयः। सुमृडीका सरस्वित। मा ते व्योम सन्दिशी॥१२९॥

[३१]

संवथ्सरमेतंद्वतं चरेत्। द्वौ वा मासौ। नियमः संमासेन। तस्मिन्नियमंविशेषाः। त्रिषवणमुदकोपस्पूर्शी। चतुर्थकालपानंभक्तः स्यात्। अहरहर्वा मैक्षंमश्रीयात्। औदुम्बरीभिः समिद्धिरिग्नं परिचरेत्। पुनर्मामैक्त्विन्द्रियमि-त्येतेनानुंवाकेन। उद्धृतपरिपूताभिरिद्धः कार्यं कुर्वीत॥१३०॥

अंसश्चयवान्। अग्नये वायवें सूर्याय। ब्रह्मणे प्रंजापृतये। चन्द्रमसे नेक्षत्रेभ्यः। ऋतुभ्यः संवंध्सराय। वरुणायारुणायेति व्रंतहोमाः। प्रवर्ग्यवंदादेशः। अरुणाः काण्डऋषयः। अरण्ये-ऽधीयीरन्। भद्रं कर्णेभिरिति द्वं जिपत्वा॥१३१॥

महानाम्नीभिरुदक र सं इस्पृश्यः। तमाचाँयाँ द्द्यात्। शिवा नः शन्तमेत्योषधीं रालुभते। सुमृडीकेंति भूमिम्। एवमंपवृर्गे। धेनुर्दक्षिणा। करसं वासंश्च क्षौमम्। अन्यंद्वा शुक्लम्। यंथाशक्ति वा। एव इस्वाध्यायंधर्मेण। अरण्यं ऽधीयीत।

तपस्वी पुण्यो भवति तपस्वी पुंण्यो भवति॥१३२॥

[३२]

भृद्रं कर्णेभिः शृणुयामं देवाः। भृद्रं पंश्येमाक्षभिर्यजंत्राः। स्थिरेरङ्गैं स्तुष्टुवा र संस्तृनूभिः। व्यशेम देविहेतं यदायुः। स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रंवाः। स्वस्ति नः पूषा विश्ववंदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः। स्वस्ति नो बृह्स्पतिंदिधातु॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सह वे देवानां चास्राणां च युज्ञौ प्रतंतावास्तां वय स्वर्गं लोकमें ष्यामो वयमें ष्याम इति तेऽस्राः सृत्रह्य सहंसैवाचरन् ब्रह्मचर्येण तपंसैव देवास्तेऽस्राः अमुह्य सहंसैवाचरन् ब्रह्मचर्येण तपंसैव देवास्तेऽस्राः अमुह्य स्ते न प्राजांन इस्ते परांऽभवन्ते न स्वर्गं लोकमायन् प्रसृतेन वे युज्ञेनं देवाः स्वर्गं लोकमायन्त्र प्रसृतेनास्रान् परांभावयन् प्रसृतो ह वे यंज्ञोपवीतिनों युज्ञोऽप्रंसृतोऽन्पवीतिनो यिकं चं ब्राह्मणो यंज्ञोपवीत्यधीते यज्ञेत एव तत्तस्मां द्यज्ञोपवीत्येवाधीयीत याजयेद्यजेत वा यज्ञस्य प्रसृत्या अजिनं वासों वा दक्षिणत उपवीय दक्षिणं बाहुमुद्धंरतेऽवं धत्ते स्व्यमितिं यज्ञोपवीतमेतदेव विपंरीतं प्राचीनावीत स्वंवतं मानुषम्॥१॥

[8]

रक्षा रेसि ह वां पुरोऽनुवाके तपोग्रंमितष्ठन्त तान् प्रजापंतिर्वरेणोपामंत्रयत् तानि वरंमवृणीताऽऽदित्यो नो योद्धा इति तान् प्रजापंतिरब्रवीद्योधंयध्वमिति तस्मादुत्तिष्ठन्तर् ह वा तानि रक्षा रेस्यादित्यं योधंयन्ति यावंदस्तमन्वंगात्तानि ह वा प्रतानि रक्षा रेसि गायित्रया- ऽभिमित्रितेनाम्भंसा शाम्यन्ति तद् हु वा एते ब्रह्मवादिनः पूर्वाभिमुखाः सन्ध्यायाँ गायित्रयाऽभिमित्रिता आपं ऊर्ध्वं विक्षिपन्ति ता एता आपं वृज्ञीभूत्वा तानि रक्षाः सि मन्देहारुणे द्वीपे प्रक्षिपन्ति यत्प्रंदिक्षणं प्रक्रमन्ति तेनं पाप्मान्मवंधून्वन्त्युद्यन्तंमस्तं यन्तंम् आदित्यमंभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान्थ्सकलं भृद्रमंश्रुतेऽसावांदित्यो ब्रह्मोति ब्रह्मेव सन् ब्रह्माप्येति य एवं वेदं॥२॥

[२]

यद्देवा देव्हेळंनं देवांसश्चकृमा व्यम्। आदित्यास्तस्मांन्मा मुश्चत्तिस्यतेन् मामित। देवां जीवनकाम्या यद्वाचाऽनृंत-मूदिम। तस्मांन्न इह मुंश्चत् विश्वं देवाः स्जोषंसः। ऋतेनं द्यावापृथिवी ऋतेन् त्व॰ संरस्वति। कृतान्नंः पाह्येनंसो यत्किं चानृंतमूदिम। इन्द्राग्नी मित्रावर्रुणौ सोमो धाता बृह्स्पतिंः। ते नो मुश्चन्त्वेनंसो यद्न्यकृतमारिम। स्जात्श्रू॰सादुत जांमिश्रू॰साज्यायंसः श॰सांदुत वा कनीयसः। अनांधृष्टं देवकृतं यदेन्स्तस्मात् त्वमुस्माञ्जातवेदो मुमुग्धि॥३॥

यद्वाचा यन्मनंसा बाहुभ्यांमूरुभ्यांमश्चीवद्धा १ शिश्वैर्यदर्नृतं चकुमा वयम्। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्यः प्रमुंश्चतु चकुम यानि दुष्कृता। येनं त्रितो अण्वात्रिर्बभूव येन् सूर्यं तमंसो निर्मुमोर्च। येनेन्द्रो विश्वा अजहादरातीस्तेनाहं ज्योतिंषा ज्योतिरानशान आंक्षि। यत्कुसींद्मप्रंतीत्तं मयेह

येनं यमस्यं निधिना चरांमि। एतत्तदंग्ने अनृणो भंवामि जीवंन्नेव प्रति तत्तं दधामि। यन्मियं माता यदां पिपेष् यदन्तिरक्षं यदाशसातिंकामामि त्रिते देवा दिवि जाता यदापं इमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नो अग्ने स त्वं नो अग्ने त्वमंग्ने अयासिं॥४॥

-[३]

यददीं व्यन्नृणमहं बभूवादिं थ्यन्वा सञ्जगर जनें भ्यः। अग्निर्मा तस्मादिन्द्रेश्च संविदानौ प्रमुश्चताम्। यद्धस्तौभ्यां चकर किल्बिषाण्यक्षाणां वसुमुप्जिघ्नमानः। उस्रं पृश्या चं राष्ट्रभृच् तान्यंपस्रसावनुंदत्तामृणानिं। उग्रं पश्ये राष्ट्रंभृत्किल्बिषाणि यदक्षवृंत्तमनुंदत्तमेतत्। नेन्नं ऋणानृणव इथ्समानो युमस्य लोके अधिरज्जराय। अवं ते हेळ उदुंत्तमिमं में वरुण तत्त्वां यामि त्वं नों अग्ने स त्वं नो अग्ने। सङ्कुंसुको विकुंसुको निर्ऋथो यश्चं निस्वनः। तेऽ(१)स्मद्यक्ष्ममनांगसो दूरादूरमंचीचतम्। निर्यक्ष्ममचीचते कृत्यां निर्ऋतिं च। तेन योऽ(१)स्मथ्समृंच्छातै तमंस्मै प्रसुवामसि। दुःशुरुसानुशुरुसाभ्यां घणेनानुघणेनं च। तेनान्योऽ(१)स्मथ्समृच्छातै तमस्मै प्रसुवामसि। सं वर्चसा पर्यसा सन्तनूभिरगन्मिह मनसा सर शिवेनं। त्वष्टां नो अत्र विदंधातु रायोऽनुंमार्षु तन्वो(१) यद्विलिष्टम्॥५॥

[8]

आयंष्टे विश्वतों दधद्यम्ग्निर्वरेण्यः। पुनंस्ते प्राण आयांति परायक्ष्म स्वामि ते। आयुर्दा अंग्ने ह्विषों जुषाणो घृतप्रतीको घृतयोनिरेधि। घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यं पितेवं पुत्रम्भिरंक्षतादिमम्। इममंग्न आयंषे वर्चसे कृधि तिग्ममोजों वरुण सश्रींशाधि। मातेवाँस्मा अदिते शर्म यच्छ् विश्वं देवा जरंदष्ट्रियंथाऽसंत्। अग्न आयूरंषि पवस् आ सुवोर्ज्ञमिषं च नः। आरे बांधस्व दुच्छुनाँम्। अग्ने पवंस्व स्वपां अस्मे वर्चः सुवीर्यम्। दधंद्रियं मिय् पोषम्॥६॥

अग्निर्ऋषिः पर्वमानः पार्श्वजन्यः पुरोहितः। तमीमहे महाग्यम्। अग्ने जातान्प्रणुंदा नः सपलान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अस्मे दीदिहि सुमना अहेळ्ञ्छर्मन्ते स्याम त्रिवरूथ उद्भौ। सहंसा जातान्प्रणुंदा नः सपलान्प्रत्यजांताञ्चातवेदो नुदस्व। अधि नो ब्रूहि सुमन्स्यमानो वयः स्याम प्रणुंदा नः सपलान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सपतान्। अग्ने यो नोऽभितो जनो वृको वारो जिघा सित। ता इस्त्वं वृत्रहं जिह् वस्वस्मभ्यमाभेर। अग्ने यो नोऽभिदासंति समानो यश्च निष्ट्यः। तं वयः समिधं कृत्वा तुभ्यंमग्नेऽपि दध्मसि॥७॥

यो नः शपादशंपतो यश्चं नः शपंतः शपात। उषाश्च

तस्मै निम्रुक्क सर्वं पाप समूहताम्। यो नंः स्पत्नो यो रणो मर्तोऽभिदासंति देवाः। इध्मस्येव प्रक्षायंतो मा तस्योच्छेषि किं चन। यो मां द्वेष्टिं जातवेदो यं चाहं द्वेष्टिम् यश्च माम्। सर्वा्र्इस्तानंग्ने सन्दंह या श्रश्चाहं द्वेष्टिम् ये च माम्। यो अस्मभ्यमरातीयाद्यश्चं नो द्वेषते जनः। निन्दाद्यो अस्मान्दिफ्सांच्च सर्वा्र्इस्तान्मंष्म्षा कुरु। सश्शितं मे ब्रह्म सशीतं वीर्या(१)म्बलम्। सशीतं क्षत्रं में जिष्णु यस्याहमस्मिं पुरोहितः। उदेषां बाहू अतिरमुद्वर्चो अथो बलम्। क्षिणोमि ब्रह्मंणाऽमित्रानुन्नंयामि स्वा(१)म् अहम्। पुनर्मनः पुनरायुर्म् आगात्पुनश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्पुनंः प्राणः पुनराकृतं म् आगात्पुनंश्चित्तं पुनराधीतं म् आगात्प्नं वैश्वानरो मेऽदंब्धस्तनूपा अवंबाधतां दिरतानि विश्वा॥८॥

[٤]

वैश्वान्राय प्रतिवेदयामो यदीनृण संङ्गरो देवतांस्। स एतान्पाशांन प्रमुचन् प्रवेद स नो मुश्चातु दुरितादवद्यात्। वैश्वान्रः पवयात्रः प्वित्रैर्यथ्संङ्गरम्भिधावांम्याशाम्। अनोजान्मनंसा याचंमानो यदत्रैनो अव तथ्संवामि। अमी ये सुभगे दिवि विचृतौ नाम तारंके। प्रेहामृतंस्य यच्छतामेतद्वंद्धक्मोचंनम्। विजिहीष्वं लोकान्कृंधि बन्धान्मंश्चासि बद्धंकम्। योनंरिव प्रच्यंतो गर्भः सर्वांन् प्रथो अनुष्व। स प्रंजानन्प्रतिगृभ्णीत विद्वान्प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्यं। अस्माभिर्दत्तं ज्ररसंः प्रस्तादच्छिन्नं तन्तुंमनुसर्श्वरेम॥९॥

तृतं तन्तुमन्वेके अनु सश्चरिन्त् येषां दत्तं पित्र्यमायंनवत्। अबुन्ध्वेके दर्दतः प्रयच्छाद्वातुं चेच्छुक्रवार्सः स्वर्ग एषाम्। आरंभेथामनु सर्रंभेथार समानं पन्थांमवथो घृतेनं। यहाँ पूर्तं परिविष्टं यदुग्नौ तस्मै गोत्रायेह जायांपती संररेभेथाम्। यदन्तरिक्षं पृथिवीमुत द्यां यन्मातरं पितरं वा जिहिश्सिम। अग्निर्मा तस्मादेनंसो गार्हंपत्य उन्नों नेषद्गुरिता यानिं चकुम। भूमिंमा्ताऽदिंतिनीं जनित्रं भ्राताऽन्तरिंक्षम्भिशंस्त एनः। द्यौर्नः पिता पितृयाच्छं भेवासि जामि मित्वा मा विविध्सि लोकात्। यत्रं सुहार्दः सुकृतो मदन्ते विहाय रोगं तुन्वा(१) इ स्वायाम्। अस्रोणाङ्गेरह्रंताः स्वर्गे तत्रं पश्येम पितरंं च पुत्रम्। यदन्रमद्यनृतेन देवा दास्यन्नदौस्यनुत वा करिष्यन्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं चं प्रतिजग्राहम्भिर्मा तस्मादनृणं कृणोत्। यदन्रमिद्रा बहुधा विरूपं वासो हिरंण्यमुत गामुजामविम्। यद्देवानां चक्षुष्यागो अस्ति यदेव किं च प्रतिजग्राहमग्निर्मा तस्मोदनुणं कृणोतु। यन्मयां मनसा वाचा कृतमेनेः कदाचन। सर्वस्मांत्तस्मांन्मेळिंतो मोग्धि त्वर हि वेत्थं यथातथम्॥१०॥

<u>-</u>[ξ]

वातंरशना ह् वा ऋषंयः श्रम्णा ऊर्ध्वमंन्थिनो बंभूवुस्तानृषंयोऽर्थमांय्र्स्ते निलायंमचर्र्स्तेऽनुंप्रविशः कूश्माण्डानि ताङ्स्तेष्वन्वंविन्दञ्छूद्धयां च तपंसा च तानृषंयोऽब्रुवन्कथा निलायं चर्थेति त ऋषींनब्रुवृत्तमों वोऽस्तु भगवन्तोऽस्मिन्धांमि केनं वः सपर्यामेति तानृषंयोऽब्रुवन्पवित्रं नो ब्रूत् येनारेपसंः स्यामेति त एतानि सूक्तान्यंपश्यन् यद्देवा देवहेळेनं यददीं व्यत्रृणमृहं ब्भूवाऽऽयुंष्टे विश्वतो दधिदत्येतैराज्यं जुहुत वेश्वान्राय प्रतिवेदयाम् इत्युपंतिष्ठत् यदंवीचीन्मेना भ्रूणहृत्याया-स्तस्मान्मोक्ष्यध्व इति त एतैरंजुहवुस्तेऽरेपसो-ऽभवन्कर्मादिष्वेतैर्जुह्यात्पूतो देवलोकान्थ्समंश्रुते॥११॥

[*v*]

कूश्माण्डेर्जुंहुयाद्योऽपूंत इव मन्यंत यथाँ स्तेनो यथाँ भ्रूणहैवमेष भंवति योऽयोनौ रेतः सिञ्चिति यदंर्वाचीनमेनों भ्रूणहृत्यायास्तस्मांन्मुच्यते यावदेनो दीक्षामुपैति दीक्षित एतेः संतित जुंहोति संवथ्सरं दीक्षितो भंवति संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते मासं दीक्षितो भंवति यो मासः स संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते चतुंर्विश्शिति रात्रींदीक्षितो भंवति चतुंर्विश्शितिर्धमासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते द्वादंश रात्रींदीिक्षितो भविति द्वादंश मासाः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते षड्रात्रींदीिक्षितो भविति षड्वा ऋतवः संवथ्सरः संवथ्सरादेवाऽऽत्मानं पुनीते तिस्रो रात्रींदीिक्षितो भविति त्रिपदां गायत्री गांयत्रिया पुवाऽऽत्मानं पुनीते न मा समंश्रीयात्र स्त्रियमुपंयात्रोपर्यासीत जुगुंपसेतानृतात्पयौ ब्राह्मणस्यं व्रतं यवागू राजन्यंस्यामिक्षा वैश्यस्याथो सौम्येप्यंध्वर पृतद्वतं ब्रूयाद्यदि मन्यंतोपदस्यामीत्योदनं धानाः सक्तून घृतमित्यनुव्रतयेदात्मनोऽनुंपदासाय॥१२॥

[८

अजान् ह् वै पृश्नी इंस्तप्स्यमानान् ब्रह्मं स्वयम्भ्वंभ्यानंर्ष्त ऋषंयोऽभवन्तद्दषीणामृषित्वं तां देवतामुपातिष्ठन्त यज्ञकांमास्त एतं ब्रंह्मय्ज्ञमंपश्यन्तमाहंर्न्तेनांयजन्त यद्द्योऽध्यगीषत् ताः पर्यआहृतयो देवानांमभवन् यद्यजू इंषि घृताहुंतयो यध्सामानि सोमांहृतयो यदर्थवीङ्गिरसो मध्याहृतयो यद्घाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश्र सीर्मेदाहृतयो देवानांमभवन्ताभिः क्षुधं पाप्मान्म-पाँघ्रन्नपहतपाप्मानो देवाः स्वर्गं लोकमायन् ब्रह्मणः सायुंज्यमृषंयोऽगच्छन्॥१३॥

पश्च वा पुते मंहायुज्ञाः संतृति प्रतायन्ते सतित सन्तिष्ठन्ते देवयज्ञः पितृयज्ञो भूतयज्ञो मनुष्ययज्ञो ब्रह्मयज्ञ इति यदग्नौ जुहोत्यपि समिधं तद्देवयज्ञः सन्तिष्ठते यत्पितृभ्यः स्वधा करोत्यप्यपस्तित्पंतृयज्ञः सन्तिष्ठते यद्भूतेभ्यों बुलि १ हरित् तद्भंतयज्ञः सन्तिष्ठते यद्वाँह्मणेभ्योऽन्नं ददांति तन्मनुष्ययज्ञः सन्तिष्ठते यथ्स्वाध्यायमधीयीतैकामप्यृचं यजुः सामं वा तद्वंह्मयज्ञः सन्तिष्ठते यदचोऽधीते पर्यसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यद्यजू १षि घृतस्यं कूल्या यथ्सामानि सोमं एभ्यः पवते यदर्थवाङ्गिरसो मधौः कूल्या यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराश १ सीमें दंसः कूल्यां अस्य पितृन्थ्स्वधा अभिवंहन्ति यदचोऽधीते पर्यआहतिभिरेव तद्देवा ईस्तंपयति यद्यजू ईषि घृताहुंतिभिर्यथ्सामानि सोमाहुतिभिर्यदर्थवाङ्गिरसो मध्वां-हृतिभिर्यद्वाँह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गार्था नाराशु रसीर्मेदाहुतिभिरेव तद्देवा इस्तर्पयित त एनं तृप्ता आयुंषा तेर्जमा वर्चमा श्रिया यशंमा ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन च तर्पयन्ति॥१४॥

-[१०]

ब्रह्मयुज्ञेनं युक्ष्यमांणः प्राच्यां दिशि ग्रामादछंदिर्द्रश उदींच्यां प्रागुदीच्यां वोदितं आदित्ये दंक्षिणत उपवीयोपविश्य हस्तांववनिज्य त्रिराचांमेद्दिः पंरिमृज्यं सकृदुंपस्पृश्य शिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभ्य यित्रराचामंति तेन ऋचंः प्रीणाति यद्दिः पंरिमृजंति तेन यजू रेषि यथ्सकृदुंपस्पृशंति तेन सामानि यथ्सव्यं पाणिं पादौ प्रोक्षति यच्छिरश्चक्षुंषी नासिके श्रोत्रे हृदंयमालभंते तेनाथंवाङ्गिरसौ ब्राह्मणानीतिहासान् पुराणानि कल्पान्गाथा नाराश १ सी: प्रीणाति दर्भाणां मृहदुंपुस्तीर्योपस्थं कृत्वा प्राङासीनः स्वाध्यायमधीयीतापां वा एष ओषंधीना रसो यद्दर्भाः सर्रसमेव ब्रह्मं कुरुते दक्षिणोत्तरौ पाणी पादौ कृत्वा सप्वित्रावोमिति प्रतिपद्यत एतद्वै यजुंस्त्रयीं विद्यां प्रत्येषा वागेतत्परममक्षरं तदेतदचा ऽभ्युंक्तमृचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुर्यस्तन्न वेद किमृचा कंरिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समासत् इति त्रीनेव प्रायुंङ्क भूर्भुवः स्वंरित्यांहैतद्दे वाचः सत्यं यदेव वाचः सत्यं तत्प्रायुङ्कार्थ सावित्रीं गांयत्रीं त्रिरन्वांह पच्छौंऽर्धर्चशोऽनवान संविता श्रियंः प्रसविता श्रियंमेवाऽऽप्नोत्यथौं प्रज्ञातंयैव प्रंतिपदा छन्दा ५सि प्रतिपद्यते॥१५॥

-[? ?]

ग्रामे मनंसा स्वाध्यायमधीयीत दिवा नक्तं वेति हं स्माऽऽह शौच आँह्रेय उतारंण्येऽबलं उत वाचोत तिष्ठंन्नुत व्रजन्तुताऽऽसीन उत शयांनोऽधीयीतैव स्वाध्यायं तपंस्वी पुण्यो भवति य एवं विद्वान्थ्स्वाध्यायमधीते नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्व्यये नमंः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृहते कंरोमि॥१६॥

∙[१२]

मध्यन्दिने प्रबल्मधीयीतासौ खलु वावैष आंदित्यो यद्ग्रौह्मणस्तस्मात्तर्हि तेऽक्ष्णिष्ठं तपित् तदेषाऽभ्यंक्ता। चित्रं देवानामुदंगादनीकं चक्षुंर्मित्रस्य वर्रुणस्याग्नेः। आऽप्रा द्यावांपृथिवी अन्तरिक्ष्ण् सूर्यं आत्मा जगंतस्तस्थुषश्चेति स वा एष यज्ञः सद्यः प्रतायते सद्यः सन्तिष्ठते तस्य प्राक् सायमंवभृथो नमो ब्रह्मण इति परिधानीयां त्रिरन्वांहाप उंपस्पृश्यं गृहानेति ततो यत्किं च ददांति सा दक्षिणा॥१७॥

[१३]

तस्य वा एतस्यं यज्ञस्य मेघों हिवधीनं विद्युदिग्निर्वर्षः हिवः स्तंनियृत्वर्षंषद्वारो यदंवस्फूर्जिति सोऽनुंवषद्वारो वायुरात्माऽमांवास्यां स्विष्टकृद्य एवं विद्वान्मेघे वर्षितं विद्योतंमाने स्तनयंत्यवस्फूर्जिति पर्वमाने वायावंमावास्यांयाः स्वाध्यायमधीते तपं एव तत्तंप्यते तपो हि स्वाध्याय इत्यंत्तमं नाकर् रोहत्युत्तमः संमानानां भवित यावंन्तः ह वा इमां वित्तस्यं पूर्णां ददंध्स्वर्गं लोकं जंयित तावंन्तं लोकं जंयित भूयार्सं चाक्ष्य्यं चापं पुनर्मृत्यं जंयित ब्रह्मंणः सायुंज्यं गच्छित॥१८॥

तस्य वा पुतस्यं युज्ञस्य द्वावंनध्यायौ यदात्माऽशुचियंदेशः समृद्धिर्देवतानि य एवं विद्वान्महारात्र उषस्युदिते व्रज्ञ इस्तिष्ठन्नासीनः शयानोऽरण्ये ग्रामे वा यावंत्तरसई स्वाध्यायमधीते सर्वां होका अयित सर्वां होका नेनृणोऽनु-सश्चरित तदेषाभ्यंक्ता। अनृणा अस्मिन्नंनृणाः परेस्मि -स्तृतीये लोके अनृणाः स्योम। ये देवयानां उत पितृयाणाः सर्वान्यथो अनृणा आक्षीयेमेत्यग्निं वै जातं पाप्मा जंग्राह तं देवा आहंतीभिः पाप्मानमपौघ्नन्नाहुंतीनां युज्ञेनं युज्ञस्य दक्षिणाभिदिक्षिणानां ब्राह्मणेन ब्राह्मणस्य छन्दोभिश्छन्देसाङ् स्वाध्यायेनापंहतपाप्मा स्वाध्यायों देवपंवित्रं वा एतत्तं योऽनूंध्सृजत्यभांगो वाचि भंवत्यभांगो नाके तदेषाऽभ्युंक्ता। यस्तित्यां न सखिविदं सखायं न तस्यं वाच्यपिं भागो अस्ति। यदी १ शृणोत्यलक १ शृणोति न हि प्रवेदं सुकृतस्य पन्थामिति तस्मांथ्स्वाध्यायोऽध्येतव्यो यं यं ऋतुमधीते तेनं तेनास्येष्टं भंवत्यग्नेर्वायोरांदित्यस्य सायुंज्यं गच्छति तदेषाऽभ्यंक्ता। ये अविङ्गत वा पुराणे वेदं विद्वा रसंमभिती वदन्त्यादित्यमेव ते परिवदन्ति सर्वे अग्निं द्वितीयं तृतीयं च हर्समिति यावंतीवें देवतास्ताः सर्वा वेदविदिं ब्राह्मणे वंसन्ति तस्माँद्वाह्मणेभ्यों वेदविद्यों दिवे दिवे नर्मस्कुर्यान्नाश्लीलं कीर्तयेदेता एव देवताः प्रीणाति॥१९॥

[१५]

रिच्यंत इव वा एष प्रेव रिच्यते यो याजयंति प्रतिं वा गृह्णाति याजयित्वा प्रतिगृह्य वाऽनंश्वित्रः स्वाध्यायं वेदमधीयीत त्रिरात्रं वां सावित्रीं गांयत्रीम्नवातिरेचयित वरो दक्षिणा वरेणैव वर इंस्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२०॥

[१६]

दुहे हु वा एष छन्दा रेसि यो याजयंति स यनं यज्ञकृतुनां याजयेथ्सोऽरंण्यं प्रेत्यं शुचौ देशे स्वाध्यायमेवेन्मधीयन्नासीत तस्यानशंनं दीक्षा स्थानम्प्सद आसंन स्तृत्या वाग्जुहूर्मनं उप्भृद्धृतिर्भुवा प्राणो ह्विः सामाध्वर्यः स वा एष यज्ञः प्राणदंक्षिणोऽनंन्तदक्षिणः समृद्धतरः॥२१॥

[69]

कृतिधावंकीणीं प्रविशितं चतुर्धेत्यांहुर्ब्रह्मवादिनों मुरुतंः प्राणैरिन्द्रं बलेन बृह्स्पितं ब्रह्मवर्चसेनाग्निमेवतंरेण सर्वेण तस्यैतां प्रायंश्चित्तिं विदां चंकार सुदेवः काँश्यपो यो ब्रह्मचार्यविकरेदमावास्यायाः रात्र्यांमग्निं प्रणीयोपसमाधाय द्विराज्यंस्योपघातं जुहोति कामावंकीर्णोऽस्म्यवंकीर्णोऽस्मि काम कामाय स्वाहा कामाभिंद्रुग्धोऽस्म्यभिंद्रुग्धोऽस्मि काम कामाय स्वाहेत्यमृतं वा आज्यंममृतंमेवाऽऽत्मन्धंते हुत्वा प्रयंताञ्चलिः कवांतिर्यङ्काग्निमिनन्नयेत सं मांऽऽसिञ्चन्तु मुरुतः सिमन्द्रः सं बृहस्पितिः। सं

माऽयम्भिः सिश्चत्वायुंषा च बलेन् चाऽऽयुंष्मन्तं करोत् मेति प्रतिं हास्मै मुरुतः प्राणान्दंधित् प्रतीन्द्रो बलं प्रति बृहुस्पतिर्ब्रह्मवर्चसं प्रत्यग्निरितर्थ्सर्वर् सर्वतनुर्भूत्वा सर्वमायुरिति त्रिर्भिमंत्रयेत् त्रिषंत्या हि देवा योऽपूंत इव मन्येत् स इत्थं जुंहुयादित्थम्भिमंत्रयेत् पुनीत प्वाऽऽत्मान्मायुरेवाऽऽत्मन्धंत्ते वरो दक्षिणा वरंणैव वरई स्पृणोत्यात्मा हि वरंः॥२२॥

-[86]

भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये स्वः प्रपंद्ये भूभुवः स्वः प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये ब्रह्म प्रपंद्ये व्यान् प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवान् प्रपंद्ये देवपुरं प्रपंद्ये परीवृतो वरीवृतो ब्रह्मणा वर्मणाऽहं तेजंसा कश्यंपस्य यस्मै नम्स्तिच्छिरो धर्मो मूर्धानं ब्रह्मोत्तंरा हर्नुर्यज्ञोऽधंरा विष्णुर्हृदंय संवथ्सरः प्रजनंनम्श्विनौ पूर्वपादांवित्रिर्मध्यं मित्रावरुणावपर्पादांवित्रिः पुच्छंस्य प्रथमं काण्डं तत् इन्द्रस्ततः प्रजापंतिरभयं चतुर्थ स वा एष दिव्यः शांक्ररः शिशुंमार्स्त ह य एवं वेदापं पुनर्मृत्यं जयित जयित स्वर्गं लोकं नाध्विन प्रमीयते नापसु प्रमीयते नाग्नौ प्रमीयते नान्पत्यः प्रमीयते लुष्वान्नौ भवित ध्रुवस्त्वमंसि ध्रुवस्य श्रिकेतमस् त्वं भूतानाक्षे श्रेष्ठोऽसि

त्वां भूतान्युपं पूर्यावंर्तन्ते नमंस्ते नमः सर्वं ते नमो नमः शिशुकुमाराय नमः॥२३॥

[88]

नमः प्राच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो दक्षिणाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमः प्रतींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नम् उदींच्ये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमं ऊर्ध्वाये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽधंराये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमोऽवान्त्राये दिशे याश्चं देवतां एतस्यां प्रतिवसन्त्येताभ्यंश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मध्ये ये वसन्ति ते मे प्रसन्नात्मानश्चिरं जीवितं वर्धयन्ति नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमो नमो गङ्गायमुनयोर्मुनिभ्यश्च नमः॥२४॥

-[२०]

ॐ नमो ब्रह्मणे नमों अस्त्वग्नये नमेः पृथिव्यै नम् ओषंधीभ्यः। नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नमो विष्णंवे बृह्ते कंरोमि॥

॥ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

ॐ तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

चित्तिः स्रुक्। चित्तमाज्यम्। वाग्वेदिः। आधीतं ब्र्हिः। केतो अग्निः। विज्ञांतम्ग्निः। वाक्पंतिर्होतां। मनं उपवृक्ता। प्राणो हृविः। सामाध्वर्युः। वाचंस्पते विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमं पिबतु। आऽस्मास् नृम्णन्धाथ्स्वाहां॥१॥

अुष्युर्युः पश्चं च॥—————[१]

पृथिवी होताँ। द्यौरंध्वर्युः। रुद्रौंऽग्नीत्। बृह्स्पतिंरुपवक्ता। वार्चस्पते वाचो वीर्येण। सम्भृततमेनायंक्ष्यसे। यजंमानाय वार्यम्। आसुव्स्करंस्मे। वाचस्पतिः सोमं पिबत्। जजनदिन्द्रंमिन्द्रियाय स्वाहाँ॥२॥

पृथिवी होता दर्श।———[२

अग्निर्होताँ। अश्विनाँऽध्वर्यू। त्वष्टाऽग्नीत्। मित्र उंपवृक्ता। सोमः सोमंस्य पुरोगाः। शुक्रः शुक्रस्यं पुरोगाः। श्रातास्तं इन्द्रं सोमाः। वातांपेर्हवनृश्रुतः स्वाहाँ॥३॥

अग्निहॉताऽष्टो॥————[३]

सूर्यं ते चक्षुः। वातं प्राणः। द्यां पृष्ठम्। अन्तरिक्षमात्मा। अङ्गैर्यज्ञम्। पृथिवी १ शरीरैः। वाचस्पतेऽच्छिंद्रया वाचा। अच्छिद्रया जुह्नां। दिवि देवावृध् होत्रा मेर्यस्व स्वाहां॥४॥

सूर्यं ते नवं॥————[४]

महाहंविरहोतां। स्त्यहंविरध्वर्युः। अच्युंतपाजा अग्नीत्। अच्युंतमना उपवक्ता। अनाधृष्यश्चांप्रतिधृष्यश्चं यज्ञस्यांभिग्रौ। अयास्यं उद्गाता। वाचस्पते हृद्विधे नामन्। विधेमं ते नामं। विधेस्त्वम्स्माकं नामं। वाचस्पतिः सोमंमपात्। मा दैव्यस्तन्तुश्छेदि मा मनुष्यंः। नमों दिवे। नमंः पृथिव्ये स्वाहां॥५॥

अपात्रीणिं च॥—————[५]

वाग्घोताँ। दीक्षा पत्नीं। वातों ऽध्वर्युः। आपों ऽभिग्रः। मनों ह्विः। तपंसि जुहोमि। भूर्भृवः सुवंः। ब्रह्मं स्वयम्भु। ब्रह्मंणे स्वयम्भुवे स्वाहाँ॥६॥

ब्राह्मण एकंहोता। स यज्ञः। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। यज्ञश्चं मे भूयात्। अग्निर्द्विहोता। स भूती। स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। भूती चं मे भूयात्। पृथिवी त्रिहोता। स प्रतिष्ठा॥७॥

स में ददातु प्रजां प्शून्पुष्टिं यशः। प्रतिष्ठा चे मे भूयात्। अन्तरिक्षं चतुरहोता। स विष्ठाः। स में ददातु प्रजां पृशून्पुष्टिं यशंः। विष्ठाश्चं मे भूयात्। वायुः पश्चंहोता। स प्राणः। स में ददातु प्रजां पुशून्पुष्टुं यशंः। प्राणश्चं मे भूयात्॥८॥

चन्द्रमाः षड्ढांता। स ऋतून्कंल्पयाति। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। ऋतवंश्च मे कल्पन्ताम्। अन्नर्रं सप्तहोता। स प्राणस्यं प्राणः। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। प्राणस्यं च मे प्राणो भूयात्। द्यौर्ष्टहोता। सोऽनाधृष्यः॥९॥

स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। अनाधृष्यश्चं भूयासम्। आदित्यो नवहोता। स तेंजस्वी। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। तेजस्वी चं भूयासम्। प्रजापंतिर्दशंहोता। स इदश् सर्वम्। स में ददातु प्रजां पृशून्पृष्टिं यशः। सर्वं च मे भूयात्॥१०॥

प्रतिष्ठा प्राणर्श्व मे भूयादनाधृष्यः सर्वं च मे भूयात्॥ $lue{9}$

अग्निर्यजुंभिः। स्विता स्तोमैः। इन्द्रं उक्थाम्दैः। मित्रावरुणावाशिषाः। अङ्गिरसो धिष्णियैर्ग्निभिः। म्रुतंः सदोहविर्धानाभ्याम्। आपः प्रोक्षणीभिः। ओषंधयो ब्र्हिषाः। अदितिर्वेद्याः। सोमो दीक्षयाः॥११॥

त्वष्टेध्मेनं। विष्णुंर्यज्ञेनं। वसंव आज्येन। आदित्या दक्षिणाभिः। विश्वे देवा ऊर्जा। पूषा स्वंगाकारेणं। बृह्स्पतिः पुरोधयां। प्रजापंतिरुद्गीथेनं। अन्तरिक्षं प्वित्रेण। वायुः पात्रैः। अहङ् श्रद्धयां॥१२॥

दीक्षया पात्रैरकं च॥—————[८]

सेनेन्द्रंस्य। धेना बृह्स्पतेः। पृत्थ्यां पूष्णः। वाग्वायोः। दीक्षा सोमंस्य। पृथिव्यंग्नेः। वसूनां गायत्री। रुद्राणां त्रिष्टुक्। आदित्यानां जगती। विष्णोरनुष्टुक्॥१३॥

वर्रणस्य विराट्। यज्ञस्यं पृङ्किः। प्रजापंतरनुंमितः। मित्रस्यं श्रद्धा। स्वितुः प्रसूतिः। सूर्यस्य मरीचिः। चन्द्रमंसो रोहिणी। ऋषीणामरुन्धती। पूर्जन्यस्य विद्युत्। चतंस्रो दिशः। चतंस्रोऽवान्तरिष्धाः। अहंश्च रात्रिश्च। कृषिश्च वृष्टिश्च। त्विष्श्चापंचितिश्च। आपृश्चौषंधयश्च। ऊर्क्व सूनृतां च देवानां पत्नयः॥१४॥

अनुष्टुग्दिशः पर्द्व॥————[९]

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रसिवं। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तांभ्यां प्रतिंगृह्णामि। राजां त्वा वर्रुणो नयतु देवि दक्षिणेऽग्रये हिर्ण्यम्। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामो दाता॥१५॥

कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमाविंश। कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि। कामैतत्ते। एषा ते काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वाङ्गीर्सः प्रतिगृह्णातु। सोमाय वासः। रुद्राय गाम्। वरुणायाश्वम्। प्रजापंतये पुरुषम्॥१६॥

मनंवे तल्पम्। त्वष्ट्रेऽजाम्। पूष्णेऽविम्। निर्ऋत्या

अश्वतरगर्दभौ। हिमवंतो हुस्तिनम्। गुन्धुर्वाफ्सराभ्यः स्रगलं कर्णे। विश्वेभ्यो देवेभ्यो धान्यम्। वाचेऽन्नम्। ब्रह्मण ओदनम्। सुमुद्रायाऽऽपंः॥१७॥

उत्तानायाँङ्गीर्सायानंः। वैश्वान्राय रथम्ँ। वैश्वान्रः प्रत्नथा नाकमारुहत्। दिवः पृष्ठं भन्दंमानः सुमन्मंभिः। स पूर्ववञ्चनयंञ्चन्तवे धनम्ँ। समानमंज्मा परियाति जागृंविः। राजाँ त्वा वरुणो नयतु देवि दक्षिणे वैश्वान्राय रथम्ँ। तेनांमृत्त्वमंश्याम्। वयो दात्रे। मयो मह्यंमस्तु प्रतिग्रहीत्रे॥१८॥

क इदं कस्मां अदात्। कामः कामांय। कामों दाता। कामः प्रतिग्रहीता। कामः समुद्रमा विंश। कामेंन त्वा प्रतिंगृह्णामि। कामैतत्तें। एषा तें काम् दक्षिणा। उत्तानस्त्वांक्षीर्सः प्रतिंगृह्णातु॥१९॥

दाता पुरुषुमर्पः प्रतिप्रहीत्रे नवं च॥————[१०]

सुवर्णं घुर्मं परिवेद वेनम्। इन्द्रंस्याऽऽत्मानं दश्धा चरंन्तम्। अन्तः संमुद्रे मनंसा चरंन्तम्। ब्रह्मान्वंविन्द्दशंहोतार्मर्णे। अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांनाम्। एकः सन्बंहुधा विचारः। शत्र शुक्राणि यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे वेदा यत्रैकं भवंन्ति। सर्वे होतांरो यत्रैकं भवंन्ति। समानंसीन आत्मा जनांनाम्॥२०॥

अन्तः प्रविष्टः शास्ता जनांना सर्वांत्मा। सर्वाः प्रजा यत्रेकं भवंन्ति। चतुंरहोतारो यत्रं सम्पदं गच्छंन्ति देवैः। समानंसीन आत्मा जनांनाम्। ब्रह्मेन्द्रं मृग्निं जगंतः प्रतिष्ठाम्। दिव आत्मान सवितारं बृह्स्पतिम्। चतुंरहोतारं प्रदिशोऽनं क्रुप्तम्। वाचो वीर्यं तप्साऽन्वंविन्दत्। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। त्वष्टांर रूपाणि विकुर्वन्तं विपश्चिम्॥२१॥

अमृतंस्य प्राणं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। अन्तः प्रविष्टं कर्तारंमेतम्। देवानां बन्धु निहितं गुहांस्। अमृतेन क्रुप्तं यज्ञमेतम्। चतुंर्होतृणामात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। शतं नियुतः परिवेद विश्वां विश्ववांरः। विश्वमिदं वृंणाति। इन्द्रंस्याऽऽत्मा निहितः पश्चंहोता। अमृतं देवानामार्यः प्रजानांम्॥२२॥

इन्द्रभ् राजांनभ् सिवतारंमेतम्। वायोरात्मानं क्वयो निर्चिक्युः। रिश्मभ् रंश्मीनां मध्ये तपंन्तम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निर्पान्ति। य आण्डकोशे भुवंनं बिभर्ति। अनिर्मिण्णः सन्नर्थं लोकान् विचष्टें। यस्याऽऽण्डकोशभ् शुष्मंमाहुः प्राणमुल्बम्। तेनं क्रुप्तोऽमृतेनाहमंस्मि। सुवर्णं कोशभ् रजसा परीवृतम्। देवानां वसुधानीं विराजम्॥२३॥

अमृतंस्य पूर्णान्तामुं कुलां विचेक्षते। पाद् षड्ढोंतुर्न

किलांविविथ्से। येन्तवंः पश्चधोत क्रुप्ताः। उत वां षुड्वा मन्सोत क्रुप्ताः। त॰ षड्ढ्रांतारमृतुभिः कल्पंमानम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपांन्ति। अन्तः प्रविष्टं कुर्तारंमेतम्। अन्तश्चन्द्रमंसि मनसा चरंन्तम्। सहैव सन्तं न विजानित देवाः। इन्द्रंस्याऽऽत्मान शतुधा चरंन्तम्॥२४॥

इन्द्रो राजा जगंतो य ईशैं। सप्तहोता सप्तधा विक्रृंप्तः। परेण तन्तुं परिष्च्यमानम्। अन्तरादित्ये मनसा चरन्तम्। देवाना हदेयं ब्रह्मान्वंविन्दत्। ब्रह्मैतद्वह्मण् उन्नेभार। अर्क श्रियोन्त सरि्रस्य मध्यै। आ यस्मिन्थ्सप्त परेवः। मेहन्ति बहुला श्रियमैं। बहुश्वामिन्द्र गोमंतीम्॥२५॥

अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। स हरिर्वसुवित्तंमः। पे्रिरन्द्रांय पिन्वते। बृह्धामिन्द्रं गोमंतीम्। अर्च्युतां बहुला १ श्रियम्। मह्यमिन्द्रो नियंच्छत्। शृत १ शृता अस्य युक्ता हरीणाम्। अर्वाङा यांतु वसुंभी रश्मिरिन्द्रः। प्रमश्हंमाणो बहुला १ श्रियम्। रश्मिरिन्द्रः सविता मे नियंच्छतु॥२६॥

घृतं तेजो मधुंमदिन्द्रियम्। मय्ययम्ग्निर्दंधातु। हरिः पत्ङ्गः पंट्री सुंपूर्णः। दिविक्षयो नभंसा य एति। स न इन्द्रः कामव्रं दंदातु। पश्चारं चक्रं परिवर्तते पृथु। हिरंण्यज्योतिः सिर्रस्य मध्ये। अजस्तं ज्योतिर्नभंसा सर्पदेति। स न इन्द्रः कामव्रं दंदातु। सप्त युंञ्जन्ति रथमकंचक्रम्॥२७॥

एको अश्वो वहित सप्तनामा। त्रिनाभि च्क्रम्जर्मनंवम्। येनेमा विश्वा भुवनानि तस्थुः। भुद्रं पश्यंन्त उपसेदुरग्रें। तपो दीक्षामृषयः सुवर्विदंः। ततः क्ष्रत्रं बलमोजंश्च जातम्। तदस्मै देवा अभि सन्नमन्तु। श्वेत र रिशमं बोभुज्यमानम्। अपा नेतारं भुवनस्य गोपाम्। इन्द्रं निचिक्यः पर्मे व्योमन्॥२८॥

रोहिंणीः पिङ्गला एकंरूपाः। क्षरंन्तीः पिङ्गला एकंरूपाः। शृत स्रमाणि प्रयुतांनि नाव्यांनाम्। अयं यः श्वेतो र्शिमः। परि सर्वमिदं जगत्। प्रजां प्शून्धनांनि। अस्माकं ददातु। श्वेतो रशिमः परि सर्वं बभूव। सुवन्मह्यं पृशून् विश्वरूपान्। पृतङ्गमृक्तमसुंरस्य माययां॥२९॥

हूदा पंश्यन्ति मनंसा मनीषिणंः। समुद्रे अन्तः क्वयो विचक्षते। मरीचीनां पदिमेच्छन्ति वेधसंः। पत्ङ्गो वाचं मनंसा बिभर्ति। तां गंन्ध्वींऽवद्द्वर्भे अन्तः। तां द्योतंमानाः स्वर्यं मनीषाम्। ऋतस्यं पदे क्वयो निपान्ति। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। अग्निस्ताः अग्रे प्रमुमोक्त देवः॥३०॥

प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। वीतः स्तुंकेस्तुके। युवम्स्मासु नियच्छतम्। प्र प्रं युज्ञपंतिन्तिर। ये ग्राम्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषार्थं सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय। य आंर्ण्याः प्शवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। वायुस्ता अग्रे प्रमुमोक्त देवः। प्रजापंतिः प्रजयां संविदानः। इडाये सृप्तं घृतवंचराचरम्। देवा अन्वंविन्द्न्गुहां हि्तम्। य आंर्ण्याः पृशवो विश्वरूपाः। विरूपाः सन्तो बहुधैकंरूपाः। तेषा सप्तानामिह रन्तिरस्तु। रायस्पोषांय सुप्रजास्त्वायं सुवीर्याय॥३१॥

सहस्रंशीर्षा पुरुषः। सहस्राक्षः सहस्रंपात्। स भूमिं विश्वतो वृत्वा। अत्यंतिष्ठद्दशाङ्गुलम्। पुरुष पुवेद सर्वम्। यद्भूतं यच्च भव्यम्। उतामृतत्वस्येशांनः। यदन्नेनातिरोहंति। पुतावांनस्य महिमा। अतो ज्याया १ श्रु पूरुषः॥३२॥

पादौंऽस्य विश्वां भूतानिं। त्रिपादंस्यामृतंं दिवि। त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः। पादौंऽस्येहाभवात्पुनः। ततो विष्वङ्कांकामत्। साशनानशने अभि। तस्माहिराडंजायत। विराजो अधि पूरुषः। स जातो अत्यंरिच्यत। पृश्वाद्भृमिमथो पुरः॥३३॥

यत्पुरुषेण ह्विषां। देवा यज्ञमतंन्वत। वृस्नतो अस्यासी-दाज्यम्। ग्रीष्म इध्मः श्ररद्धविः। सप्तास्यासन्पर्धियः। त्रिः सप्त स्मिधः कृताः। देवा यद्यज्ञं तंन्वानाः। अबंध्रन्पुरुषं पृशुम्। तं युज्ञं बुर्हिष् प्रौक्षन्। पुरुषं जातमंग्रतः॥३४॥ तेनं देवा अयंजन्त। साध्या ऋषंयश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्सर्वहुतंः। सम्भृतं पृषदाज्यम्। पृशू इस्ता इश्चेक्रे वायव्यान्। आर्ण्यान्ग्राम्याश्च ये। तस्माँ द्यज्ञार्थ्सर्वहुतंः। ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दा इसि जज्ञिरे तस्माँत्। यजुस्तस्मादजायत॥ ३५॥

तस्मादश्वां अजायन्त। ये के चोभ्यादंतः। गावों ह जिज्ञेर् तस्मात्। तस्माजाता अंजावयः। यत्पुरुषं व्यंदधुः। कृतिधा व्यंकल्पयन्। मुखं किमंस्य कौ बाहू। कावूरू पादांवुच्येते। ब्राह्मणौऽस्य मुखंमासीत्। बाहू राजन्यः कृतः॥३६॥

ऊरू तदंस्य यद्वैश्यंः। पुद्धाः शूद्रो अंजायत। चुन्द्रमा मनंसो जातः। चक्षोः सूर्यो अजायत। मुखादिन्द्रेश्चाग्निश्चं। प्राणाद्वायुरंजायत। नाभ्यां आसीदन्तरिक्षम्। शीष्णो द्यौः समंवर्तत। पुद्धां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्। तथां लोकाः अंकल्पयन्॥३७॥

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्। आदित्यवंणं तमंस्सतु पारे। सर्वाणि रूपाणि विचित्य धीरंः। नामानि कृत्वाऽभिवदन् यदास्ते। धाता पुरस्ताद्यमुंदाज्हारं। श्रक्तः प्रविद्वान्प्रदिश्रश्चतंस्रः। तमेवं विद्वान्मृतं इह भविति। नान्यः पन्था अयंनाय विद्यते। युज्ञेनं युज्ञमंयजन्त देवाः। तानि धर्माणि प्रथमान्यांसन्। ते ह नाकं महिमानंः सचन्ते।

यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः॥३८॥

पूर्वषः पुरोँऽप्रुतोंऽजायत कृतोंऽकल्पयन्नामुं द्वे चं (ज्यायानिध् पूर्वषः। अन्यत्र पुर्वषः॥)॥=====[१२]

अद्धः सम्भूतः पृथिव्यै रसाँच। विश्वकंर्मणः समंवर्तताधि। तस्य त्वष्टां विदधंद्रूपमेति। तत्पुरुंषस्य विश्वमाजांनमग्रें। वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम्ं। आदित्यवंणं तमंसः परंस्तात्। तमेवं विद्वानमृतं इह भंवति। नान्यः पन्थां विद्यतेऽयंनाय। प्रजापंतिश्चरित गर्भे अन्तः। अजायंमानो बहुधा विजायते॥३९॥

तस्य धीराः परिजानित् योनिम्। मरीचीनां प्दिमिच्छिन्ति वेधसः। यो देवेभ्य आतंपित। यो देवानां पुरोहितः। पूर्वो यो देवेभ्यो जातः। नमो रुचाय ब्राह्मये। रुचं ब्राह्मं जनयंन्तः। देवा अग्रे तदंब्रवन्। यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्। तस्यं देवा अस्नवशे। हीश्चं ते लक्ष्मीश्च पत्र्यौ। अहोरात्रे पार्श्वे। नक्षंत्राणि रूपम्। अश्विनौ व्यात्तम्। इष्टं मंनिषाण। अमुं मंनिषाण। सर्वं मनिषाण॥४०॥

जायते वर्शे सप्त चं॥————[१३]

भूतां सन्भ्रियमांणो बिभर्ति। एको देवो बंहुधा निर्विष्टः। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। निधायं भारं पुन्रस्तंमेति। तमेव मृत्युम्मृतं तमांहुः। तं भूतारं तम् गोप्तारमाहुः। स भूतो भ्रियमांणो बिभर्ति। य एनं वेदं सृत्येन भर्तुम्। सुद्यो जातमुत जीहात्येषः। उतो जरेन्तं न जीहात्येकम्॥४१॥

उतो बहूनेक्महंर्जहार। अतंन्द्रो देवः सदंमेव प्रार्थः। यस्तद्वेद् यतं आबुभूवं। सुन्धां च याः सन्द्धे ब्रह्मणेषः। रमंते तस्मिन्नुत जीणे शयांने। नैनं जहात्यहंः सु पूर्व्येषुं। त्वामापो अनु सर्वाश्चरन्ति जानृतीः। वृथ्सं पर्यसा पुनानाः। त्वमृग्निः हंव्यवाहुः सिनैन्थ्से। त्वं भूर्ता मातृरिश्वां प्रजानांम्॥४२॥

त्वं यज्ञस्त्वमुंवेवासि सोमंः। तवं देवा हवमायंन्ति सर्वे। त्वमेकोऽसि बहूननुप्रविष्टः। नमस्ते अस्तु सुहवो म एिध। नमो वामस्तु शृणुत १ हवं मे। प्राणांपानावजिर १ स्थरंन्तौ। ह्यांमि वां ब्रह्मणा तूर्तमेतम्। यो मां द्वेष्टि तं जहितं युवाना। प्राणांपानौ संविदानौ जहितम्। अमुष्यासुंनामा सङ्गंसाथाम्॥४३॥

तं में देवा ब्रह्मणा संविदानौ। वधार्य दत्तं तम्ह १ हंनामि। असंज्ञजान सृत आबंभूव। यं यं जुजान स उं गोपो अस्य। यदा भारं तुन्द्रयंते स भर्तुम्। पुरास्यं भारं पुन्रस्तंमिति। तह्रै त्वं प्राणो अभवः। मृहान्भोगः प्रजापंतेः। भुजः करिष्यमाणः। यद्देवान्प्राणयो नवं॥४४॥

एकं प्रजानाँङ्गसाथां नवं॥———[१४]

हरिष् हर्रन्तमनुंयन्ति देवाः। विश्वस्येशानं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सर्रूपमनुंमेदमागात्। अर्यनुं मा विवंधीर्विक्रंमस्व। मा छिंदो मृत्यो मा वंधीः। मा मे बलं विवृंहो मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र। नृचक्षंसं त्वा ह्विषां विधेम। सद्यश्चंकमानायं। प्रवेपानायं मृत्यवे॥४५॥

प्रास्मा आशां अशृण्वन्। कामेनाजनयन्पुनः। कामेन मे काम् आगाँत्। हृदंयाद्धृदंयं मृत्योः। यदमीषांमदः प्रियम्। तदैतूपमाम्भि। परं मृत्यो अनु परेहि पन्थाँम्। यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि। मा नः प्रजाः रीरिषो मोत वीरान्। प्र पूर्वं मनसा वन्दंमानः। नार्थमानो वृष्मं चंर्षणीनाम्। यः प्रजानांमेक्राण्मानुंषीणाम्। मृत्युं यंजे प्रथमजामृतस्यं॥४६॥

मृत्यवें वीरारश्चत्वारिं च॥————[१५]

त्रणिर्विश्वदंर्शतो ज्योतिष्कृदंसि सूर्य। विश्वमा भांसि रोचनम्। उपयामगृहीतोऽसि सूर्याय त्वा भ्राजंस्वत एष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजंस्वते॥४७॥

_____[१ξ]

आ प्यांयस्व मदिन्तम् सोम् विश्वांभिरूतिर्भिः। भवां नः सुप्रथंस्तमः॥४८॥

[88]-

ईयुष्टे ये पूर्वतरामपंश्यन् व्युच्छन्तीमुषसं मर्त्यासः।

अस्माभिंक् नु प्रंतिचक्ष्यांऽभूदो ते यंन्ति ये अंप्रीषु पश्यान्॥४९॥

-[१८]

ज्योतिष्मतीं त्वा सादयामि ज्योतिष्कृतं त्वा सादयामि ज्योतिर्विदं त्वा सादयामि भास्वतीं त्वा सादयामि ज्वलंन्तीं त्वा सादयामि मल्मलाभवंन्तीं त्वा सादयामि दीप्यंमानां त्वा सादयामि रोचंमानां त्वा सादयाम्यजंस्रां त्वा सादयामि बृहज्योतिषं त्वा सादयामि बोधयंन्तीं त्वा सादयामि जाग्रंतीं त्वा सादयामि॥५०॥

[१९]

प्रयासाय स्वाहां ऽऽयासाय स्वाहां वियासाय स्वाहां संयासाय स्वाहों द्यासाय स्वाहां ऽवयासाय स्वाहां शुचे स्वाहा शोकांय स्वाहां तप्यत्वे स्वाहा तपंते स्वाहां ब्रह्महत्याये स्वाहा सर्वस्मै स्वाहां॥५१॥

[२०]

चित्तर संन्तानेनं भवं युक्रा रुद्रन्तनिम्ना पशुपति ई स्थूलहृद्येनाग्निर हृदयेन रुद्रं लोहितेन शुर्वं मर्तस्नाभ्यां महादेवमन्तः पार्श्वेनौषिष्ठहनर् शिङ्गीनिकोश्याभ्याम्॥५२॥

-[२१]

तच्छुं योरावृंणीमहे। गातुं युज्ञायं। गातुं युज्ञपंतये। दैवीः

तृतीयः प्रश्नः

स्वस्तिरंस्तु नः। स्वस्तिर्मानुषेभ्यः। ऊर्ध्वं जिंगातु भेषजम्। शं नो अस्तु द्विपदें। शं चतुंष्पदे। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥चतुर्थः प्रश्नः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नपितभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मत्रुपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये स्तयं वंदिष्ये तस्मां अहमिदमुपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजायै पश्नां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पश्नां भूयासं प्राणांपानौ मृत्योर्मा पातुं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मध् मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं विदष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास १ शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम् ऋषिंभ्यो मत्रकुद्धो मत्रंपतिभ्यो मा मामृषंयो मत्रकृतों मत्रुपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मत्रकृतों मत्रुपतीन्परांदां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं विद्ये तेजों विद्ये यशों विद्ये तपों विद्ये ब्रह्मं विद्ये सत्यं विद्ये तस्मां अहमिदमुंपस्तरंणमुपंस्तृण उपस्तरंणं मे प्रजाये पशूनां भूयादुपस्तरंणमहं प्रजाये पशूनां भूयास् प्राणांपानौ मृत्योमां पातं प्राणांपानौ मा मां हासिष्टं मधुं मिन्छे मधुं जिन्छे मधुं विद्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास शृश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभाये पितरोऽनुंमदन्तु॥१॥

[8]

युञ्जते मनं उत युञ्जते धियः। विप्रा विप्रंस्य बृह्तो विप्रिश्चतः। वि होत्रां दधे वयुनाविदेक इत्। मही देवस्यं सिवृतः परिष्ठतिः। देवस्यं त्वा सिवृतः प्रंस्वे। अश्विनौर्बाहुभ्याम्। पूष्णो हस्ताभ्यामादंदे। अश्विरस्य नारिरसि। अध्वर्कृद्देवभ्यः। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते॥२॥

देवयन्तंस्त्वेमहे। उप प्रयंन्तु मुरुतः सुदानंवः। इन्द्रं प्राशूर्भवा सर्चां। प्रैतु ब्रह्मणस्पतिः। प्र देव्येतु सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधसम्। देवा युज्ञं नंयन्तु नः। देवीं द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथाम्। ऋष्ट्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥३॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णा। इयत्यग्रं आसीः। ऋख्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। देवीविमीर्स्य भूतस्ये प्रथमजा ऋतावरीः। ऋद्यासमुद्य। मुखस्य शिरंः॥४॥

म्खायं त्वा। म्खस्यं त्वा शीर्ष्णे। इन्द्रस्यौजींऽसि। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः। मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीर्ष्णे। अग्निजा असि प्रजापंते रेतंः। ऋद्यासंमुद्य। मुखस्य शिरंः॥५॥

मुखायं त्वा। मुखस्यं त्वा शीष्णें। आयुंधेहि प्राणं धेहि। अपानं धेहि व्यानं धेहि। चक्षुंधेहि श्रोत्रं धेहि। मनों धेहि वाचं धेहि। आत्मानं धेहि प्रतिष्ठां धेहि। मां धेहि मियं धेहि। मधुं त्वा मधुला कंरोतु। मुखस्य शिरोंऽसि॥६॥

यज्ञस्यं पदे स्थंः। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमि। त्रैष्टुंभेन त्वा छन्दंसा करोमि। जागंतेन त्वा छन्दंसा करोमि। मखस्य रास्नांऽसि। अदिंतिस्ते बिलं गृह्णातु। पाङ्केन छन्दंसा। सूर्यस्य हरंसा श्राय। मुखोंऽसि॥७॥

पुते शिरं ऋतावरीर्ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिर्ः शिर्ः शिरांऽसि नवं च॥—————[२]

वृष्णो अश्वंस्य निष्पदंसि। वर्रणस्त्वा धृतव्रंत आधूंपयतु। मित्रावर्रणयोर्धुवेण धर्मणा। अर्चिषै त्वा। शोचिषै त्वा। ज्योतिषे त्वा। तपंसे त्वा। अभीमं मंहिना दिवम्। मित्रो बंभूव सुप्रथाः। उत श्रवंसा पृथिवीम्॥८॥

मित्रस्यं चर्षणी्धृतंः। श्रवों देवस्यं सानुसिम्। द्युम्नं

चित्रश्रंवस्तमम्। सिध्यैं त्वा। देवस्त्वां सिवतोद्वंपतु। सुपाणिः स्वंङ्गुरिः। सुबाहुरुत शक्त्यौ। अपंद्यमानः पृथिव्याम्। आशा दिश आ पृंण। उत्तिष्ठ बृहन्भव॥९॥

ऊर्ध्वस्तिष्ठद्भुवस्त्वम्। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्षे। ऋजवै त्वा। साधवे त्वा। सुक्षित्ये त्वा भूत्यै त्वा। इदमहम्मुमां-मुष्यायणं विशा पृशुभिर्ष्रह्मवर्चसेन् पर्यूहामि। गायत्रेणं त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्म। त्रेष्ट्रंभेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्म। जागंतेन त्वा छन्दसाऽऽच्छृंणिद्म। छृणत्तुं त्वा वाक्। छृणत्तुं त्वा क्विः। छृणत्तुं त्वा ह्विः। छृन्धि वाचम्। छृन्ध्यूर्जम्। छृन्धि ह्विः। देवं पुरश्चर सुग्ध्यासं त्वा॥१०॥

पृथिवीं भंव वाख्यद्वं॥———[३]

ब्रह्मंन् प्रवर्ग्येण प्रचेरिष्यामः। होतंर्घ्मम्भिष्टुंहि। अग्नीद्रौहिणौ पुरोडाशाविधेश्रय। प्रतिप्रस्थात्रविहंर। प्रस्तोतः सामानि गाय। यजुंर्युक्त्रः सामंभिराक्तंखन्त्वा। विश्वैदिवेरनुंमतं मुरुद्भिः। दक्षिणाभिः प्रतंतं पारियृष्णुम्। स्तुभो वहन्तु सुमन्स्यमानम्। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। भूर्भुवः सुवंः। ओमिन्द्रंवन्तः प्रचंरत॥११॥

अहंणीयमानो द्वे चं॥______[४]

ब्रह्मन्प्रचंरिष्यामः। होतंर्धर्मम्भिष्टंहि। यमायं त्वा मुखायं त्वा। सूर्यस्य हरंसे त्वा। प्राणाय स्वाहां व्यानाय स्वाहां ऽपानाय स्वाहां। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहां। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्यै स्वाहां। दक्षांय स्वाहा ऋतंवे स्वाहां। ओजंसे स्वाहा बलांय स्वाहां। देवस्त्वां सिवता मध्यां ऽनक्ता। १२॥

पृथिवीं तपंसस्रायस्व। अर्चिरंसि शोचिरंसि ज्योतिंरसि तपोऽसि। स॰सींदस्व महा॰ असि। शोचंस्व देववीतंमः। विधूममंग्ने अरुषं मियेध्य। सृज प्रंशस्तदर्शतम्। अञ्जन्ति यं प्रथयंन्तो न विप्राः। वपावंन्तं नाग्निना तपंन्तः। पितुर्न पुत्र उपंसि प्रेष्ठः। आ घुर्मी अग्निमृतयंत्रसादीत्॥१३॥

अनाधृष्या पुरस्तांत्। अग्नेराधिपत्ये। आयुंर्मे दाः। पुत्रवंती दक्षिणृतः। इन्द्रस्याऽऽधिपत्ये। प्रजां में दाः। सुषदां पृश्चात्। देवस्यं सिवतुराधिपत्ये। प्राणं में दाः। आश्रुंतिरुत्तर्तः॥१४॥

मित्रावर्रुणयोराधिपत्ये। श्रोत्रं मे दाः। विधृतिरूपरिष्टात्। बृह्स्पतेराधिपत्ये। ब्रह्मं मे दाः क्षत्रं में दाः। तेजों मे धा वर्चों मे धाः। यशों मे धास्तपों मे धाः। मनों मे धाः। मनोरश्वांऽसि भूरिपुत्रा। विश्वांभ्यो मा नाष्ट्राभ्यः पाहि॥१५॥

सूपसदां मे भूया मा मां हिश्सीः। तपोष्वंग्ने अन्तराश् अमित्रान्। तपाशश्संमर्रुषः परंस्य। तपांवसो चिकितानो अचित्तान्। वि तें तिष्ठन्तामुजरां अयासः। चितः स्थ परिचितः। स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्व। मा असि। प्रमा असि। प्रतिमा असि॥१६॥ सम्मा असि। विमा असि। उन्मा असि। अन्तरिक्षस्यान्तर्धि-रेसि। दिवं तपंसस्रायस्व। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनम्। आप्यायय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजासिं। भूयिष्टभाजो अधं ते स्याम। शुक्रं ते अन्यद्यंज्तं ते अन्यत्॥१७॥

विषुंरूपे अहंनी द्यौरिवासि। विश्वा हि माया अवंसि स्वधावः। भुद्रा ते पूषित्रह रातिरंस्तु। अर्हंन्बिभर्षि सायंकानि धन्वं। अर्हं निष्कं यंज्ञतं विश्वरूपम्। अर्हं निदन्दंयसे विश्वमञ्ज्ञंवम्। न वा ओजीयो रुद्र त्वदंस्ति। गायुत्रमंसि। त्रैष्टुंभमिस। जागंतमिस। मधु मधु मधु॥१८॥

दश् प्राचीर्दशं भासि दक्षिणा। दशं प्रतीचीर्दशं भास्युदीचीः। दशोध्वा भांसि सुमन्स्यमानः। स नो रुचं धेह्यहंणीयमानः। अग्निष्ट्वा वसंभिः पुरस्तांद्रोचयतु गाय्त्रेण छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिणतो रोचयतु त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। वर्रणस्त्वादित्यैः पृश्चाद्रोचयतु जागंतेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय॥१९॥

द्युतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तरतो रोचयत्वानुंष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। बृहुस्पतिंस्त्वा

-[६]

विश्वैद्वैरुपरिष्टाद्रोचयतु पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचय। रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसिं। रोचिषीयाहं मनुष्येषु। सम्राह्मम रुचितस्त्वं देवेष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चस्यंसि। रुचितोऽहं मनुष्येष्वायुष्मा इस्तेज्स्वी ब्रह्मवर्चसी भूयासम्। रुगसि। रुचं मियं धेहि॥२०॥

मिय रुक्। दशं पुरस्तांद्रोचसे। दशं दक्षिणा। दशं प्रत्यङ्गः दशोदङ्कं। दशोर्ध्वो भांसि सुमनस्यमानः। स नः सम्राडिष्मूर्जं धेहि। वाजी वाजिने पवस्व। रोचितो घर्मो रुचीय॥२१॥

रोच्य धेहि नर्व च॥━

अपंश्यं गोपामनिपद्यमानम्। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्तम्। स स्प्रीचीः स विषूचीर्वसानः। आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीः। मधु माध्वीभ्यां मधु माधूचीभ्याम्। अनुं वां देववीतये। सम्ग्रिर्ग्निनां गत। सं देवनं सिवता। स॰ सूर्येण रोचते॥२२॥

स्वाहा समग्निस्तपंसा गत। सं देवेनं सिवता। सः सूर्यंणारोचिष्ट। धर्ता दिवो विभांसि रजंसः। पृथिव्या धर्ता। उरोरन्तरिक्षस्य धर्ता। धर्ता देवो देवानाम्। अमर्त्यस्तपोजाः। हृदे त्वा मनंसे त्वा। दिवे त्वा सूर्याय त्वा॥२३॥

ऊर्ध्वमिममंध्वरं कृंधि। दिवि देवेषु होत्रां यच्छ। विश्वांसां भुवां पते। विश्वंस्य भुवनस्पते। विश्वंस्य मनसस्पते। विश्वंस्य वचसस्पते। विश्वंस्य तपसस्पते। विश्वंस्य ब्रह्मणस्पते। देवृश्रस्त्वं देव घर्म देवान्पांहि। तुपोजां वाचंम्स्मे नियंच्छ देवायुवम्॥२४॥

गर्भो देवानाम्। पिता मंतीनाम्। पितः प्रजानाम्। मितः कवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवत्रा यंतिष्ट। सः सूर्येणारुक्त। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं धर्म वर्चोदा असि। पिता नोऽसि पिता नो बोध। आयुर्धास्तंनूधाः पंयोधाः। वर्चोदा वंरिवोदा द्रंविणोदाः॥२५॥

अन्तिरिक्षप्र उरोर्वरीयान्। अशीमिहं त्वा मा मां हिश्सीः। त्वमंग्ने गृहपंतिर्विशामंसि। विश्वांसां मानुंषीणाम्। शृतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यश्हंसः। समेद्धार्श्रं शृतश् हिमाः। तुन्द्राविणश्रं हार्दिवानम्। इहैव रातयः सन्तु। त्वष्टींमती ते सपेय। सुरेता रेतो दर्धाना। वीरं विदेय तवं सुन्हिशी। माऽहश् रायस्पोषंण वि योषम्॥२६॥

देवस्यं त्वा सिवतुः प्रस्वे। अश्विनौंर्बाहुभ्यांम्। पूष्णो हस्तौभ्यामादंदे। अदित्यै रास्नांसि। इड एहिं। अदित एहिं। सरस्वत्येहिं। असावेहिं। असावेहिं। असावेहिं॥२७॥

अदित्या उष्णीषंमसि। वायुरंस्यैडः। पूषा त्वोपावंसृजतु। अश्विभ्यां प्रदापय। यस्ते स्तनंः शशुयो यो मयोभूः। येन विश्वा पुष्यंसि वार्याणि। यो रंत्र्धा वंसुविद्यः सुदर्त्रः। सरंस्वति तिमेह धातंवेकः। उस्रं घुर्मः शिरंष। उस्रं घुर्मं पाहि॥२८॥

घुर्मायं शिश्ष। बृह्स्पतिस्त्वोपंसीदतु। दानंवः स्थ् पेरंवः। विष्वुग्वृतो लोहिंतेन। अश्विभ्यां पिन्वस्व। सरंस्वत्यै पिन्वस्व। पूष्णे पिन्वस्व। बृह्स्पतंये पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व। इन्द्रांय पिन्वस्व॥२९॥

गायत्रोऽसि। त्रैष्टुंभोऽसि। जागंतमिस। सहोर्जो भागेनोपमेहिं। इन्द्रौश्विना मधुंनः सार्घस्यं। घर्मं पांत वसवो यजंता वट। स्वाहौ त्वा सूर्यस्य र्श्मये वृष्टिवनंये जुहोमि। मधुं ह्विरंसि। सूर्यस्य तपंस्तप। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामि॥३०॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामि। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयम्। तेजोऽसि। तेजोऽनु प्रेहिं। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। अन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीः। सुवंरिस् सुवंर्मे यच्छ। दिवं यच्छ दिवो मां पाहि॥३१॥

एहिं पाहि पिन्वस्व गृह्णामि नवं च॥

-[ሪ]

समुद्रायं त्वा वातांय स्वाहाँ। सृतिलायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अनाधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अप्रतिधृष्यायं त्वा वातांय स्वाहाँ। अवस्यवें त्वा वातांय स्वाहाँ। दुवंस्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। शिमिंद्वते त्वा वातांय स्वाहाँ। अग्नयें त्वा वसुंमते स्वाहाँ। सोमांय त्वा रुद्रवंते स्वाहाँ। वरुंणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहाँ॥३२॥

बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहाँ। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहाँ। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहाँ। विश्वा आशां दक्षिणसत्। विश्वां देवानंयाडिह। स्वाहांकृतस्य घुर्मस्यं। मधौः पिबतमिश्वना। स्वाहाऽग्नये युज्ञियांय। शं यजुंिभिः। अश्विना घुर्मं पांत १ हार्दिवानम्॥३३॥

अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी मर्साताम्। स्वाहेन्द्राय। स्वाहेन्द्रावट्। घुर्ममंपातमिश्वना हार्दिवानम्। अहंर्दिवाभिंक्तिभिः। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमर्साताम्। तं प्राव्यं यथा वट्। नमों दिवे। नमः पृथिव्यै॥३४॥

दिवि धां इमं यज्ञम्। यज्ञमिमं दिवि धाः। दिवं गच्छ। अन्तरिक्षं गच्छ। पृथिवीं गच्छ। पश्चं प्रदिशों गच्छ। देवान्धर्मपान्गच्छ। पितृन्धर्मपान्गच्छ॥३५॥

आदित्यवंते स्वाहां हार्दिवानं पृंथिव्या अष्टौ चं॥————[९]

ड्रषे पींपिहि। ऊर्जे पींपिहि। ब्रह्मणे पीपिहि। क्षुत्रायं पीपिहि। अुद्धः पींपिहि। ओषंधीभ्यः पीपिहि। वनुस्पतिंभ्यः पीपिहि। द्यावांपृथिवीभ्यां पीपिहि। सुभूतायं पीपिहि। ब्रह्मवर्चसायं पीपिहि॥३६॥

यजंमानाय पीपिहि। मह्यं ज्यैष्ठांय पीपिहि। त्विष्यैं त्वा। द्युम्नायं त्वा। इन्द्रियायं त्वा भूत्यैं त्वा। धर्मांऽसि सुधर्मा में न्यस्मे। ब्रह्मांणि धारय। क्षुत्राणिं धारय। विशं धारय। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयांत्॥३७॥

अमुष्यं त्वा प्राणे सांदयामि। अमुनां सह निर्धं गंच्छ। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः। पूष्णे शरंसे स्वाहाँ। ग्रावंभ्यः स्वाहाँ। प्रतिरेभ्यः स्वाहाँ। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहाँ। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहाँ। रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाँ॥३८॥

अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। रात्रिर्ज्योतिः केतुनां जुषताम्। सुज्योतिर्ज्योतिषा्ड् स्वाहाँ। अपीपरो माऽह्यो रात्रियै मा पाहि। पृषा तें अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अपीपरो मा रात्रिया अह्यों मा पाहि॥३९॥

पृषा ते अग्ने समित्। तया समिध्यस्व। आयुंर्मे दाः। वर्चसा माञ्जीः। अग्निज्योतिज्योतिरग्निः स्वाहाँ। सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहाँ। भूः स्वाहाँ। हुत हिवः। मधुं हिवः। इन्द्रंतमेऽग्नौ॥४०॥

पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीः। अश्यामं ते देवघर्म।

मधुंमतो वाजंवतः पितुमतः। अङ्गिरस्वतः स्वधाविनः। अशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रश्मिभ्यः। स्वाहाँ त्वा नक्षेत्रेभ्यः॥४१॥

ब्रह्मवर्चुसार्य पीपिहि स्कृन्दर्यांद्रुद्वायं रुद्रहोंत्रे स्वाहाऽह्वां मा पाह्यग्नौ सप्त चं॥======[१०]

घर्म् या ते दिवि शुक्। या गांयत्रे छन्दंसि। या ब्राँह्मणे। या हंविर्धानें। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां। घर्म् या तेऽन्तिरंक्षे शुक्। या त्रैष्टुंभे छन्दंसि। या रांजन्यें। याऽऽग्नींग्रे। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥४२॥

घर्म् या ते पृथिव्या १ शुक्। या जागंते छन्दंसि। या वैश्यैं। या सदंसि। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहाँ। अनुंनोऽद्यानुंमितिः। अन्विदंनुमते त्वम्। दिवस्त्वां पर्स्पायाः। अन्तरिक्षस्य तुनुवंः पाहि। पृथिव्यास्त्वा धर्मणा॥४३॥

व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। ब्रह्मणस्त्वा पर्स्पायाः। क्ष्र्त्रस्यं तनुवंः पाहि। विशस्त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। प्राणस्यं त्वा पर्स्पायः। चक्षुंषस्तनुवंः पाहि। श्रोत्रंस्य त्वा धर्मणा। व्यमनुंक्रामाम सुविताय नव्यंसे। वत्नुरंसि शं युधायाः॥४४॥

शिशुर्जनंधायाः। शं च विश्व पिरं च विश्वं। चतुः स्रिक्तिर्नाभिर्ऋतस्यं। सदो विश्वायुः शर्म सप्रथाः। अप द्वेषो अप ह्वरं। अन्यद्वंतस्य सिश्वम। धर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरीषम्।

तेन् वर्धस्व चाऽऽ चं प्यायस्व। वृधिषीमहिं च वृयम्। आ चं प्यासिषीमहिं॥४५॥

रन्तिर्नामांसि दिव्यो गंन्धर्वः। तस्यं ते पृद्वर्द्धविर्धानम्। अग्निरध्यक्षाः। रुद्रोऽधिपतिः। समृहमायुंषा। सं प्राणेनं। सं वर्चसा। सं पर्यसा। सं गौपत्येनं। स॰ रायस्पोषेण॥४६॥

व्यंसौ। यौंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। अचिंऋदृहृषा हरिः। महान्मित्रो न दंर्शृतः। स॰ सूर्येण रोचते। चिदंसि समुद्रयोनिः। इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावा। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुरण्युः। महान्थ्स्थस्थै ध्रुव आनिषंत्तः॥४७॥

नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंम्। आपो दृहशुषीः। तृहतेनाव्यायन्। तृदन्ववैत्। इन्द्रो रारहाण आंसाम्। परि सूर्यस्य परिधीश रंपश्यत्। विश्वावंसुर्भि तन्नो गृणातु। दिव्यो गन्धवं रजंसो विमानः। यद्वां घा सृत्यमुत यन्न विद्या ४८॥

धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यात्। सिम्नंमिवन्द् चरणे नदीनाम्। अपांवृणोद्दुरो अश्मंत्रजानाम्। प्रासांन्गन्थवीं अमृतांनि वोचत्। इन्द्रो दक्षं परिजानाद् हीनम्। एतत्त्वं देव धर्म देवो देवानुपांगाः। इदमहं मंनुष्यों मनुष्यान्। सोमंपीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषंण। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु॥४९॥ दुर्मित्रास्तस्मै भूयासुः। योंऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः। उद्वयं तमंस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। इममूषुत्यम्स्मभ्यर्थ सनिम्। गायत्रं नवींयारसम्। अग्ने देवेषु प्रवोचः॥५०॥

याऽऽग्रींध्रे तान्तं एतेनावं यज्ञे स्वाहा धर्मणा शुं युधायाः प्यासिषीमहि पोषेणु निर्पत्तो विद्य संन्त्वष्टौ॥🕳 [११]

महीनां पयोऽसि विहितं देवत्रा। ज्योतिर्भा असि वनस्पतीनामोषधीना रसंः। वाजिनं त्वा वाजिनोऽवं नयामः। ऊर्ध्वं मनः सुवर्गम्॥५१॥

[१२]

अस्कान्द्यौः पृथिवीम्। अस्कानिष्मो युवागाः। स्कन्नेमा विश्वा भुवना। स्कन्नो युज्ञः प्रजनयतु। अस्कानजनि प्राजनि। आ स्कन्नाज्ञायते वृषां। स्कन्नात् प्रजनिषीमहि॥५२॥

[१३]

या पुरस्तां द्विद्युदापंतत्। तान्तं पृतेनावं यजे स्वाहां। या दक्षिणतः। या पृश्चात्। योत्तंरतः। योपरिष्टाद्विद्युदापंतत्। तान्तं एतेनावं यजे स्वाहां॥५३॥

[१४]

प्राणाय स्वाहाँ व्यानाय स्वाहांऽपानाय स्वाहाँ। चक्षुंषे स्वाहा श्रोत्रांय स्वाहाँ। मनसे स्वाहां वाचे सरस्वत्यै स्वाहाँ॥५४॥

-[१५]

पूष्णे स्वाहां पूष्णे शरेसे स्वाहां। पूष्णे प्रंपुत्थ्यांय स्वाहां पूष्णे नरिन्धंषाय स्वाहां। पूष्णेऽङ्गंणये स्वाहां पूष्णे नरुणांय स्वाहां। पूष्णे सांकेताय स्वाहां॥५५॥

-[१६]

उदंस्य शुष्माँद्भानुर्नात् बिभंति। भारं पृथिवी न भूमं। प्र शुक्रैतुं देवी मंनीषा। अस्मथ्सुतृष्टो रथो न वाजी। अर्चन्त एके मिह सामंमन्वत। तेन सूर्यमधारयन्। तेन सूर्यमरोचयन्। धर्मः शिर्स्तद्यमुग्निः। पुरीषमिस सं प्रियं प्रजयां पृशुभिभ्वत्। प्रजापितंस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥५६॥

-[१७]

यास्ते अग्न आर्द्रा योनयो याः कुलायिनीः। ये ते अग्न इन्देवो या उ नाभयः। यास्ते अग्ने तनुव ऊर्जो नाम। ताभिस्त्वमुभयीभिः संविदानः। प्रजाभिरग्ने द्रविणेह सीद। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५७॥

-[१८]

अग्निरंसि वैश्वान्रोंऽसि। संवृथ्यरोंऽसि परिवथ्यरोंऽसि। इदावृथ्यरोंऽसीद्वथ्यरोंऽसि। इद्वथ्यरोंऽसि वथ्यरोंऽसि। तस्यं ते वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वृर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चित्तयः। अपुरपृक्षाः पुरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। तस्यं ते मासांश्चार्धमासाश्चं कल्पन्ताम्। ऋतवंस्ते कल्पन्ताम्। संवथ्सरस्ते कल्पताम्। अहोरात्राणि ते कल्पन्ताम्। एति प्रेति वीति समित्युदिति। प्रजापितस्त्वा सादयतु। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवः सीद॥५८॥

चितंयो नवं च।

भूर्भुवः सुवंः। ऊर्ध्व ऊ षु णं ऊतयें। ऊर्ध्वो नंः पाह्यश्हेसः। विधुन्दंद्राणश् समेने बहूनाम्। युवांनुश् सन्तं पितृतो जंगार। देवस्यं पश्य काव्यं मिह्त्वाद्या मुमारं। सह्यः समान। यद्दते चिंदिभिश्लेषंः। पुरा जुर्तृभ्यं आतृदंः। सन्धांता सन्धिं मुघवां पुरोवसुंः॥५९॥

निष्कंर्ता विह्नंतं पुनंः। पुनंक्र्जा सह रय्या। मा नों घर्म व्यथितो विव्यथो नः। मा नः पर्मधंरं मा रजोंऽनैः। मोष्वंस्माः स्तमंस्यन्त्रा धाः। मा रुद्रियांसो अभिगुंर्वृधानः। मा नः ऋतुंभिर्हीडितेभिर्स्मान्। द्विषांसुनीते मा परां दाः। मा नो रुद्रो निर्ऋतिर्मा नो अस्ताः। मा चावांपृथिवी हींडिषाताम्॥६०॥

उपं नो मित्रावरुणाविहावंतम्। अन्वादींध्याथामिह नेः सखाया। आदित्यानां प्रसितिरहेतिः। उग्रा शतापांष्ठा घविषा परिं णो वृणक्तु। इमं में वरुण तत्त्वां यामि। त्वं नो अग्रे स त्वं नो अग्ने। त्वमंग्ने अयासिं। उद्वयं तमस्परिं। उदुत्यं चित्रम्। वर्यः सुपूर्णाः॥६१॥

पुरोवसुंर्हीडिषाता १ सुपर्णाः॥lacktriangle

भूर्भुवः सुवंः। मियं त्यदिन्द्रियं महत्। मियं दक्षो मियं ऋतुंः। मियं धायि सुवीर्यम्। त्रिशुंग्धर्मो विभातु मे। आकूँत्या मनसा सह। विराजा ज्योतिषा सह। यज्ञेन पर्यसा सह। ब्रह्मणा तेजसा सह। क्षत्रेण यशसा सह। सत्येन तपसा सह। तस्य दोहंमशीमिह। तस्यं सुम्नमंशीमिह। तस्यं भूक्षमंशीमिह। तस्यं त इन्द्रेण पीतस्य मधुंमतः। उपहृतस्योपहृतो भक्षयामि॥६२॥

यशंसा सुह षद्वं॥———[२१]

यास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। क्षुच् तृष्णां च। अस्नुक्रानांहुतिश्च। अ्शन्या चं पिपासा चं। सेदिश्चामंतिश्च। एतास्ते अग्ने घोरास्त्नुवंः। ताभिर्मुं गंच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चं व्यं द्विष्मः॥६३॥

-[२२]

स्निक्ष स्नीहिंतिश्च स्निहिंतिश्च। उष्णा चे शीता चे। उग्रा चे भीमा चे। स्दाम्नी सेदिरिनेरा। एतास्ते अग्ने घोरास्तुनुवेः। ताभिरमुं गेच्छ। यौऽस्मान्द्वेष्टिं। यं चे वयं द्विष्मः॥६४॥

[२३]

धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनय ईश्च। निलिम्पश्चं विलिम्पश्चं

विक्षिपः॥६५॥

-[२४]

उग्रश्च धुनिश्च ध्वान्तश्चं ध्वनश्चं ध्वनयःश्चा सह्सह्वाःश्च सहमानश्च सहंस्वाःश्च सहीयाःश्चा एत्य प्रेत्यं विक्षिपः॥६६॥

-[२५]

अहोरात्रे त्वोदीरयताम्। अर्धमासास्त्वोदीं जयन्तु। मासौस्त्वा श्रपयन्तु। ऋतवसत्वा पचन्तु। संवथ्सरस्त्वी हन्त्वसौ॥६७॥

[૨६]

खट् फट् जिहि। छिन्धी भिन्धी हुन्धी कट्। इति वार्चः क्रूराणि॥६८॥

[२७]

विगा इंन्द्र विचरंन्थस्पाशयस्व। स्वपन्तंमिन्द्र पशुमन्तंमिच्छ। वर्त्रणामुं बोधय दुर्विदत्रम्ं। स्वप्तौंऽस्य प्रहंर भोजंनेभ्यः। अग्ने अग्निना संवंदस्व। मृत्यो मृत्युना संवंदस्व। नमंस्ते अस्तु भगवः। स्कृत्ते अग्ने नमंः। द्विस्ते नमंः। त्रिस्ते नमंः। चतुस्ते नमंः। पश्चकृत्वंस्ते नमंः। दशकृत्वंस्ते नमंः। शृतकृत्वंस्ते नमंः। आस्हस्रकृत्वंस्ते नमंः। अपरिमितकृत्वंस्ते नमंः। नमंस्ते अस्तु मा मो हिश्सीः॥६९॥

| त्रिस्ते नमंः सुप्त चं॥₌ | — [२८] |
|--|---------------|
| असृंन्मुखो रुधिरेणाव्यंक्तः। यमस्यं दूतः श्वपाद्वि गृध्रंः सुपूर्णः कुणप्ं निषेवसे। यमस्यं दूतः प्रहितो चोभयोः॥७०॥ | भ्वस्य |
| यदेतद्वृंकसो भूत्वा। वाग्देंव्यभिरायंसि। मेऽभिराय। तं मृत्यो मृत्यवें नय। स आर्त्यार्तिमार्च्छ | - तु॥७१॥ |
| यदींषितो यदि वा स्वकामी। भ्येडंको वाचंमेताम्। तामिन्द्राग्नी ब्रह्मणा संविदानो। शिवा कृणुतं गृहेषुं॥७२॥ | म्सम्य |
| दीर्घमुखि दुर्हणु। मा स्मं दक्षिणुतो वंदः। यदि व वदाँद्विषन्तं मेऽवं बाधासै॥७३॥ | _ |
| ड्रत्थादुलूंक् आपंप्तत्। हिर्ण्याक्षो अयोमुखः। रक्ष आगंतः। तमितो नांशयाग्ने॥७४॥ | _ |
| | — [३३] |

यदेतद्भूतान्यंन्वाविश्यं। दैवीं वाचं वृदसिं। द्विषतीं नः परांवद। तान्मृंत्यो मृत्यवें नय। त आर्त्याऽऽर्तिमार्च्छंन्तु। अग्निनाऽग्निः संवंदताम्॥७५॥

-[३४]

प्रसार्यं सुक्थ्यौं पतंसि। सुव्यमक्षिं निपेपिं च। मेहकंस्य चनामंमत्॥७६॥

[३५]

अत्रिणा त्वा क्रिमे हन्मि। कण्वेन ज्मदेग्निना। विश्वावंसोर्ब्रह्मणा हृतः। क्रिमीणा् र राजाः। अप्येषाः स्थपतिरहृतः। अथो माताऽथो पिता। अथो स्थूरा अथौ श्रुद्राः। अथो कृष्णा अथौ श्रेताः। अथो आशातिका हृताः। श्रेताभिः सह सर्वे हताः॥७७॥

[३६]

आह्रावंद्य। शृतस्यं ह्विषो यथां। तथ्सत्यम्। यद्मुं यमस्य जम्भयोः। आदंधामि तथा हि तत्। खण्फण्म्रसिं॥७८॥

[३७]

ब्रह्मणा त्वा शपामि। ब्रह्मणस्त्वा शपर्थेन शपामि। घोरेणं त्वा भृगूणां चक्षुंषा प्रेक्षें। रौद्रेण त्वाङ्गिरसां मनंसा ध्यायामि। अघस्यं त्वा धारंया विद्धामि। अधंरो मत्पंद्यस्वासौ॥७९॥

[36]

उत्तंद शिमिजावरि। तल्पंजे तल्प उत्तंद। गिरी॰ रनु

प्रवेशय। मरीचीरुप सन्नुद। यावंदितः पुरस्तांदुदयांति सूर्यः। तावंदितों उमुं नांशय। यों उस्मान्द्वेष्टिं। यं चं वयं द्विष्मः॥८०॥

[३९]

भूर्भृवः सुवो भूर्भृवः सुवो भूर्भृवः सुवंः। भुवो उद्घायि भुवो उद्घायि मुगे उद्घायि। नृम्णायि नृम्णम्। निधाय्यो वायि निधाय्यो वायि। ए अस्मे अस्मे। सुवर्न ज्योतीः॥८१॥

[80]

पृथिवी समित्। ताम्गिः सिनन्धे। साऽग्निः सिनन्धे। ताम्हः सिनन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेजसा। वर्चसा श्रिया। यशसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन् सिन्ताः स्वाहां। अन्तरिक्षः समित्॥८२॥

तां वायुः सिनंन्धे। सा वायु सिनंन्धे। ताम्ह सिनंन्धे। सा मा सिनंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चंसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंन्ता स्वाहाँ। द्यौः सिन्त। तामांदित्यः सिनंन्धे॥८३॥

साऽऽदित्य सिनिन्धे। तामह सिनिन्धे। सा मा सिनिद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्येन सिनिन्ता स्वाहाँ। प्राजापत्या में सिनिदंसि सपबृक्षयंणी। भ्रातृब्यहा में ऽसि स्वाहाँ। अग्रैं

व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि॥८४॥

तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। वायों व्रतपत् आदित्य व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतं चेरिष्यामि। तच्छंकेयं तन्में राध्यताम्। द्यौः सुमित्। तामांदित्यः सिमन्धे। साऽऽदित्य सिमन्धे। तामह सिमन्धे। सा मा सिमद्धा। आयुंषा तेजंसा॥८५॥

वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिनंन्ताः स्वाहाँ। अन्तरिक्षः समित्। तां वायुः सिनंन्धे। सा वायुः सिनंन्धे। सा मा सिनंद्या। आयुंषा तेजसा। वर्चसा श्रिया॥८६॥

यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं। अन्नाद्यंन् सिमंन्ता र् स्वाहाँ। पृथिवी सिमत्। ताम्गिः सिमंन्धे। साऽग्निर सिमंन्धे। ताम्हर सिमंन्धे। सा मा सिमंद्धा। आयुंषा तेजंसा। वर्चसा श्रिया। यशंसा ब्रह्मवर्चसेनं॥८७॥

अन्नाद्यंन् सिमंन्ता इस्वाहाँ। प्राजापत्या में सिमदंसि सपत्नक्षयंणी। भ्रातृब्यहा में ऽसि स्वाहाँ। आदित्य व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि। वायौं व्रतपते उग्ने व्रतपते। व्रतानां व्रतपते व्रतमंचारिषम्। तदंशकं तन्में ऽराधि॥८८॥

शं नो वार्तः पवतां मात्रिश्वा शं नंस्तपतु सूर्यः।

अहांनिशं भंवन्तु नः शर रात्रिः प्रतिधीयताम्। शमुषा नो व्यंच्छतु शमांदित्य उदेतु नः। शिवा नः शन्तंमा भव सुमृडीका सरंस्वति। मा ते व्योम सन्दिशे। इडांये वास्त्वंसि वास्तुमद्वांस्तुमन्तों भूयास्म मा वास्तोंशिछथ्स्मह्यवास्तुः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। प्रतिष्ठासिं प्रतिष्ठावंन्तो भूयास्म मा प्रतिष्ठायांशिछथ्स्मह्यप्रतिष्ठः स भूयाद्योंऽस्मान्द्वेष्टि यं चं व्यं द्विष्मः। आ वांत वाहि भेषजं वि वांत वाहि यद्रपंः। त्वर हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयंसे। द्वाविमो वातौं वात आ सिन्धोरा पंरावतः॥८९॥

दक्षं मे अन्य आवातु परान्यो वांतु यद्रपंः। यद्दो वांतते गृहेंऽमृतंस्य निधिर्हितः। ततों नो देहि जीवसे ततों नो धेहि भेषजम्। ततों नो मह आवंह वात आवांतु भेषजम्। श्राम्भूर्मयोभूनों हृदे प्र ण आयूर्षेष तारिषत्। इन्द्रंस्य गृहोंऽसि तं त्वा प्रपंद्ये सगुः सार्श्वः। सह यन्मे अस्ति तेनं। भूः प्रपंद्ये भुवः प्रपंद्ये सुवः प्रपंद्ये भूर्भुवः सुवः प्रपंद्ये वायुं प्रपद्येऽनांतां देवतां प्रपद्येऽश्मानमाखणं प्रपंद्ये प्रजापंतेर्ब्रह्मकोशं ब्रह्म प्रपंद्य ओं प्रपंद्ये। अन्तरिक्षं म उर्वन्तरं बृहद्ग्रयः पर्वताश्च यया वातः स्वस्त्या स्वंस्तिमान्तयां स्वस्त्या स्वंस्तिमानंसानि। प्राणापानौ मृत्योमां पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मियं मेधां मियं

प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मिय् सूर्यो भ्राजों दधातु॥९०॥

द्युभिर्क्तुभिः परिपातम्स्मानिरष्टिभिरिश्वना सौभंगेभिः। तन्नो मित्रो वर्रुणो मामहन्तामिदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः। कयां निश्चित्र आ भुंवदूती सदावृधः सखाँ। कया शिचेष्ठया वृता। कस्त्वां सत्यो मदानां मर्रहेष्ठो मध्सदन्धंसः। दृढाचिदारुजे वसुं। अभी षुणः सखींनामिवता जरितृणाम्। शृतं भंवास्यूतिभिः। वयः सुपूर्णा उपसेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूणुंहि पूर्धि चक्षुंर्मुमुग्ध्यंस्मान्निधयेव बद्धान्॥९१॥

शं नों देवीरिभिष्टंय आपों भवन्तु पीतयें। शं योरिभिस्नंवन्तु नः। ईशांना वार्याणां क्षयंन्तीश्चर्षणीनाम्। अपो यांचामि भेषजम्। सुमित्रा न आप ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान्द्वेष्टि यं चं वयं द्विष्मः। आपो हि ष्ठा मंयोभुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन। महे रणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रस्स्तस्यं भाजयतेह नंः। उश्तीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ॥९२॥

आपों जनयंथा च नः। पृथिवी शान्ता साऽग्निनां शान्ता सा में शान्ता शुचर शमयत्। अन्तरिक्षर

शान्तं तद्वायुनां शान्तं तन्में शान्तः शुच र शमयतु। द्योः शान्ता साऽऽदित्येनं शान्ता सा में शान्ता शुच ५ शमयतु। पृथिवी शान्तिंरन्तरिक्षः शान्तिर्द्यौः शान्तिर्दिशः शान्तिरवान्तरदिशाः शान्तिरग्निः शान्तिर्वायुः शान्तिरादित्यः शान्तिंश्चन्द्रमाः शान्तिर्नक्षंत्राणि शान्तिरापः शान्तिरोषंधयः शान्तिर्वनस्पतंयः शान्तिर्गौः शान्तिरजा शान्तिरश्वः शान्तिः पुरुषः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिं ब्राह्मणः शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः शान्तिमें अस्तु शान्तिः। तयाहर शान्त्या सर्वशान्त्या मह्यं द्विपदे चतुंष्पदे च शान्तिं करोमि शान्तिंमें अस्तु शान्तिः। एह श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपों मेधा प्रतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मोत्तिष्ठन्तुमनूत्तिष्ठन्तु मा माु श्रीश्च हीश्च धृतिश्च तपो मेधा प्रंतिष्ठा श्रद्धा सत्यं धर्मश्चेतानि मा मा हांसिषुः। उदायुंषा स्वायुषोदोषंधीना रसेनोत्पर्जन्यंस्य शुष्मेणोदंस्थाममृता । अनु। तचक्षुंर्देवहितं पुरस्तांच्छुऋमुचरत्। पश्येम श्ररदः शतं जीवेम शरदेः शतं नन्दाम शरदेः शतं मोदाम शरदेः शतं भवीम शरदेः शत १ शृणवीम शरदेः शतं प्रब्रंवाम शरदेः शतमजीताः स्याम शरदेः शतं ज्योक सूर्यं दृशे। य उदंगान्महतोऽर्णवाँद्विभ्राजंमानः सरि्रस्य मध्याथ्स मां वृषभो लोहिताक्षः सूर्यो विपश्चिन्मनंसा पुनातु। ब्रह्मणश्चोतंन्यसि ब्रह्मण आणी स्थो ब्रह्मण आवपंनमसि धारितेयं पृथिवी ब्रह्मणा मही धारितमेनेन मृहद्न्तरिक्षुं दिवं दाधार पृथिवी स्पर्देवां यद्हं वेद् तद्हं धारयाणि मा मद्वेदोऽधिविस्नंसत्। मेधामनीषे माविशता स्मिची भूतस्य भव्यस्यावंरुध्ये सर्वमायंरयाणि सर्वमायंरयाणि। आभिर्गीर्भियंदतों न ऊनमाप्यांयय हरिवो वर्धमानः। यदा स्तोतृभ्यो महिं गोत्रा रुजािसे भूयिष्ठभाजो अधं ते स्याम। ब्रह्म प्रावांदिष्म तन्नो मा हांसीत्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः। १३॥

पुरावतों दधातु बुद्धां जिन्वंथ दृशे सप्त चं॥

-[४२]

नमों वाचे या चोंदिता या चानुंदिता तस्यैं वाचे नमो नमों वाचे नमों वाचस्पतंये नम ऋषिंभ्यो मन्नकृद्धो मन्नंपतिभ्यो मा मामृषंयो मञ्जकृतो मञ्जपतंयः परांदुर्माहमृषींन्मञ्जकृतो मन्नपतीन्परादां वैश्वदेवीं वाचंमुद्यास शिवामदंस्तां जुष्टां देवेभ्यः शर्म मे द्यौः शर्म पृथिवी शर्म विश्वंमिदं जगंत्। शर्म चन्द्रश्च सूर्यश्च शर्म ब्रह्मप्रजापती। भूतं वंदिष्ये भुवंनं वदिष्ये तेजों वदिष्ये यशों वदिष्ये तपों वदिष्ये ब्रह्मं वदिष्ये सत्यं विदिष्ये तस्मा अहमिदमुप्स्तरणमुपंस्तृण उपस्तरणं मे प्रजायै पशूनां भूयादुपस्तरणमहं प्रजायै पशूनां भूयासं प्राणापानौ मृत्योमां पातं प्राणापानौ मा मां हासिष्टं मधुं मनिष्ये मधुं जनिष्ये मधुं वक्ष्यामि मधुं वदिष्यामि मधुंमतीं देवेभ्यो वाचंमुद्यास र शुश्रूषेण्यां मनुष्येभ्यस्तं मां देवा अवन्तु शोभायै पितरोऽनुंमदन्तु। ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥पञ्चमः प्रश्नः॥

ॐ शं न्स्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥ देवा वै स्त्रमांसत। ऋद्धिपरिमितं यशंस्कामाः। तैंऽब्रुवन्। यन्नः प्रथमं यशं ऋच्छात्। सर्वेषां न्स्तथ्सहास्दितिं। तेषां कुरुक्षेत्रं वेदिरासीत्। तस्यै खाण्ड्वो देक्षिणार्ध आंसीत्। तूर्प्रमृत्तरार्धः। परीणज्ञंघनार्धः। मरवं उत्करः॥१॥

तेषां मुखं वैष्णुवं यशं आर्च्छत्। तन्न्यंकामयत। तेनापांकामत्। तं देवा अन्वायन्। यशोऽव्रुरुंध्समानाः। तस्यान्वागंतस्य। सुव्याद्धनुरजायत। दक्षिणादिषंवः। तस्मादिषुधन्वं पुण्यंजन्म। युज्ञजनमा हि॥२॥

तमेक् सन्तम्। बहवो नाभ्यंधृष्णुवन्। तस्मादेकंमिषुधन्व-नम्। बहवोऽनिषुधन्वा नाभिधृंष्णुवन्ति। सोंऽस्मयत। एकं मा सन्तं बहवो नाभ्यंधर्षिषुरितिं। तस्यं सिष्मियाणस्य तेजोऽपाँकामत्। तद्देवा ओषंधीषु न्यंमृजुः। ते श्यामाकां अभवन्। स्मुयाका वै नामैते॥३॥

तथ्सम्याकांना इस्मयाकृत्वम्। तस्माँद्दीक्षितेनांपिगृह्यं स्मेत्व्यम्। तेजंसो धृत्यैं। स धनुंः प्रतिष्कभ्यातिष्ठत्। ता उपदीकां अब्रुवन्वरं वृणामहै। अर्थं व इम इस्याम। यत्र कं च खनांम। तद्पोंऽभितृंणदामेति। तस्मांद्पदीका यत्र कं च खनंन्ति। तद्पोंऽभितृंन्दन्ति॥४॥

वारेवृत् इं ह्यांसाम्। तस्य ज्यामप्यांदन्। तस्य धनुंर्विप्रवंमाण् शिर् उदंवर्तयत्। तद्यावांपृथिवी अनुप्रावंर्तत। यत्प्रावंर्तत। तत्प्रंवर्ग्यस्य प्रवर्ग्यत्वम्। यद्धाँ(४)इत्यपंतत्। तद्धमंस्यं धम्त्वम्। मृह्तो वीर्यमपप्तदिति। तन्मंहावीरस्यं महावीर्त्वम्॥५॥

यद्स्याः स्मर्भरन्। तथ्सम्राज्ञाः सम्राद्वम्। तङ् स्तृतं देवतास्त्रिधा व्यंगृह्णत्। अग्निः प्रांतः सवनम्। इन्द्रो माध्यं दिन् सवनम्। विश्वेदेवास्तृतीयसवनम्। तेनापंशीष्णां यज्ञेन् यजमानाः। नाशिषोऽवारुन्धतः। न सुवर्गं लोकम्भ्यंजयन्। ते देवा अश्विनांवब्रुवन्॥६॥

भिषजौ वै स्थंः। इदं यज्ञस्य शिरः प्रतिधत्तमिति। तावंबूतां वरं वृणावहै। ग्रहं एव नावत्रापि गृह्यतामिति। ताभ्यांमेतमांश्विनमंगृह्णन्। तावेतद्यज्ञस्य शिरः प्रत्यंधत्ताम्। यत्प्रंवर्ग्यः। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानाः। अवाशिषो- उर्रुन्थत। अभि सुंवर्गं लोकमंजयन्। यत्प्रंवर्ग्यं प्रवृणिति। यज्ञस्यैव तिष्ठरः प्रतिद्धाति। तेन सशींष्णां यज्ञेन यजंमानः। अवाशिषों रुन्थे। अभि सुंवर्गं लोकं जंयति। तस्मादेष आंश्विनप्रंवया इव। यत्प्रंवर्ग्यः॥७॥

उुत्कुरो ह्येते तृन्दन्ति महावीर्त्वमंब्रुवन्नजयन्थ्सप्त चं॥—————[१]

सावित्रं जुंहोति प्रसूँत्यै। चतुर्गृहीतेनं जुहोति। चतुंष्पादः

प्शवंः। प्शूनेवावंरुन्थे। चतंस्रो दिशंः। दिक्ष्वंव प्रतिंतिष्ठति। छन्दा एसि देवेभ्योऽपांकामन्। न वोऽभागानिं ह्व्यं वंक्ष्याम् इतिं। तेभ्यं एतचंतुर्गृहीतमंधारयन्। पुरोनुवाक्यांयै याज्यांयै॥८॥

देवतांयै वषद्गारायं। यचंतुर्गृहीतं जुहोतिं। छन्दा इंस्येव तत् प्रीणाति। तान्यंस्य प्रीतानि देवेभ्यों हृव्यं वहन्ति। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। होत्व्यंं दीक्षितस्यं गृहा(३)इ न होत्व्या(३)मितिं। हृविर्वे दीक्षितः। यज्जंहुयात्। हृविष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदेध्यात्। यन्न जुंहुयात्॥९॥

यज्ञपुरुरुन्तरियात्। यजुरेव वंदेत्। न हुविष्कृतं यजमानमुग्नौ प्रदर्धाति। न यज्ञपुरुरुन्तरेति। गायुत्री छन्दाङ्स्यत्यमन्यत। तस्यै वषद्कारौंऽभ्यय्य शिरौंऽच्छिनत्। तस्यै द्वेधा रसः परापतत्। पृथिवीमुर्धः प्राविंशत्। पृशूनुर्धः। यः पृथिवीं प्राविंशत्॥१०॥

स खंदिरों ऽभवत्। यः पृशून्। सों ऽजाम्। यत्खांदिर्यभिर्भ-वंति। छन्दंसामेव रसेन यज्ञस्य शिरः सम्भरित। यदौदुंम्बरी। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः सम्भरित। यद्वैण्वी। तेजो वै वेणुं:॥११॥

तेर्जसैव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। यद्वैकंङ्कती। भा एवावंरुन्धे। देवस्यं त्वा सवितुः प्रसव इत्यभ्रिमादंत्ते प्रसूँत्यै। अश्विनौंर्बाहुभ्यामित्यांह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तौम्। पूष्णो हस्तौभ्यामित्यांहु यत्यै। वज्रं इव वा एषा। यदभ्रिः। अभ्रिरिस् नारिर्सीत्यांह शान्त्यै॥१२॥

अध्वर्कृद्देवेभ्य इत्यांह। यज्ञो वा अध्वरः। यज्ञकृद्देवेभ्य इति वावैतदांह। उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पत् इत्यांह। ब्रह्मणेव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्रेतु ब्रह्मणस्पतिरित्यांह। प्रेत्येव यज्ञस्य शिरोऽच्छैति। प्र देव्येतु सूनृतेत्यांह। यज्ञो वै सूनृतां। अच्छां वीरं नर्यं पङ्किरांधस्मित्यांह॥१३॥

पाङ्क्षो हि युज्ञः। देवा युज्ञं नंयन्तु न इत्यांह। देवानेव यंज्ञिनयः कुरुते। देवी द्यावापृथिवी अनुं मे मश्साथामित्यांह। आभ्यामेवानुंमतो युज्ञस्य शिरः सम्भंरित। ऋद्धासंमुद्य मुखस्य शिर् इत्यांह। युज्ञो वै मुखः। ऋद्धासंमुद्य युज्ञस्य शिर् इति वावैतदांह। मुखायं त्वा मुखस्यं त्वा शीर्ष्णं इत्यांह। निर्दिश्यैवैनंद्धरित॥१४॥

त्रिर्हरित। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यों यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। तूष्णीं चंतुर्थः हंरित। अपंरिमितादेव यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। मृत्खनादग्ने हरित। तस्मान्मृत्खनः कंरुण्यंतरः। इयत्यग्ने आसीरित्यांह। अस्यामेवाछंम्बद्धारं यज्ञस्य शिरः सम्भेरित। ऊर्जं वा एतः रसं पृथिव्या उपदीका उद्दिहन्ति॥१५॥ यद्वल्मीकम्। यद्वल्मीकव्पा संम्भारो भवंति। ऊर्जमेव रसं पृथिव्या अवंरुन्धे। अथो श्रोत्रंमेव। श्रोत्र्र्ष्ट् ह्यंतत्पृंथिव्याः। यद्वल्मीकः। अवंधिरो भवति। य एवं वेदं। इन्द्रों वृत्राय वज्रमुदंयच्छत्। स यत्रं यत्र पराक्रंमत॥१६॥

तन्नाद्धियत। स पूंतीकस्तम्बे पराँक्रमत। सौंऽद्धियत। सौंऽब्रवीत्। ऊतिं वै में धा इतिं। तदूतीकांनामूतीकृत्वम्। यदूतीका भवन्ति। यज्ञायैवोतिं देधति। अग्निजा असि प्रजापंते रेत इत्यांह। य एव रसंः पृशून्प्राविंशत्॥१७॥

तमेवावंरुन्थे। पश्चैते संम्भारा भेवन्ति। पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः सम्भेरति। यद्ग्राम्याणां पश्नां चर्मणा सम्भरेत्। ग्राम्यान्पश्र्ञ्ख्वाऽपेयेत्। कृष्णाजिनेन सम्भेरति। आर्ण्यानेव पश्र्ञ्ख्वार्पयति। तस्मौथ्समावंत्पश्नां प्रजायंमानानाम्॥१८॥

आर्ण्याः पृशवः कनीया सः। शुचा ह्यृंताः। लोमतः सम्भंरति। अतो ह्यंस्य मेध्यम्। पृरिगृह्या यन्ति। रक्षंसामपंहत्ये। बहवों हरन्ति। अपंचितिमेवास्मिन्दधित। उद्धंते सिकंतोपोप्ते परिश्रिते निदंधित शान्त्यै। मदंन्तीभिरुपं सृजित॥१९॥

तेजं पुवास्मिन्दधाति। मधुं त्वा मधुला कंरोत्वित्यांह।

ब्रह्मंणैवास्मिन्तेजो दधाति। यद्ग्राम्याणां पात्रांणां कृपार्तः सश्मुजेत्। ग्राम्याणि पात्रांणि शुचाऽपंयेत्। अर्मकृपार्तः सश्मुजिति। एतानि वा अनुपजीवनीयानि। तान्येव शुचाप्यति। शर्कराभिः सश्मुजिति धृत्यै। अथो शन्त्वाय। अजलोमेः सश्मुजिति। एषा वा अग्नेः प्रिया तृनः। यद्जा। प्रिययैवैनं तृनुवा सश्मुजिति। अथो तेजंसा। कृष्णाजिनस्य लोमंभिः सश्मुजिति। यज्ञो वै कृष्णाजिनम्। यज्ञेनैव यज्ञश्मर्भुजिति॥२०॥

याज्यांयै न जुंहुयादविंशुद्वेणुः शान्त्यै पुङ्किराधसुमित्यांह हरति दिहन्ति पुराक्रमुताविंशत् प्रजायंमानाना सुजति शुन्त्वायाष्टी

परिश्रिते करोति। ब्रह्मवर्चसस्य परिगृहीत्यै। न कुर्वन्निभ प्राण्यात्। यत्कुर्वन्निभ प्राण्यात्। प्राणाञ्छुचार्पयेत्। अपहाय प्राणिति। प्राणानां गोपीथायं। न प्रवग्यं चादित्यं चान्तरेयात्। यदंन्तरेयात्। दुश्चर्मां स्यात्॥२१॥

तस्मान्नान्तराय्यम्। आत्मनो गोपीथायं। वेण्ना करोति। तेजो वे वेणुंः। तेजंः प्रवर्ग्यः। तेजंसैव तेजः समर्धयति। मुखस्य शिरोऽसीत्यांह। युज्ञो वे मुखः। तस्यैतच्छिरंः। यत्प्रवर्ग्यः॥२२॥

तस्मदिवमाह। यज्ञस्यं पदे स्थ इत्याह। यज्ञस्य होते पदे। अथो प्रतिष्ठित्यै। गायत्रेणं त्वा छन्दंसा करोमीत्याह। छन्दोभिरेवैनं करोति। त्र्युंद्धिं करोति। त्रयं इमे लोकाः। एषां लोकानामार्स्ये। छन्दोभिः करोति॥२३॥

वीर्यं वै छन्दा रेसि। वीर्येणैवैनं करोति। यजुंषा बिलं करोति व्यावृंत्यै। इयं तं करोति। प्रजापंतिना यज्ञमुखेन् सम्मितम्। इयं तं करोति। युज्ञपुरुषा सम्मितम्। इयं तं करोति। पुतावृद्धे पुरुषे वीर्यम्। वीर्यसम्मितम्॥२४॥

अपंरिमितं करोति। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। पृरिग्रीवं कंरोति धृत्यैं। सूर्यंस्य हरंसा श्रायेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। अश्वशकेनं धूपयति। प्राजापत्यो वा अर्श्वः सयोनित्वायं। वृष्णो अश्वंस्य निष्पद्सीत्यांह। असौ वा आंदित्यो वृषाऽश्वंः। तस्य छन्दारंसि निष्पत्॥२५॥

छन्दोभिरेवैनं धूपयित। अर्चिषं त्वा शोचिषे त्वेत्यांह। तेजं प्वास्मिन्दधाति। वारुणोऽभीद्धंः। मैत्रियोपैति शान्त्यै। सिद्धौ त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। देवस्त्वां सिवतोद्वंपत्वित्यांह। स्वितृप्रंसूत एवैनं ब्रह्मणा देवतांभिरुद्वंपित। अपंद्यमानः पृथिव्यामाशा दिश आपृणेत्यांह॥२६॥

तस्मांद्गिः सर्वा दिशोऽनु विभांति। उत्तिष्ठ बृहन्भंवोर्ध्वस्तिष्ठ ध्रुवस्त्वमित्यांह् प्रतिष्ठित्यै। ईश्वरो वा एषौऽन्धो भवितोः। यः प्रवृग्यम्नवीक्षंते। सूर्यस्य त्वा चक्षुषाऽन्वीक्ष्व इत्यांह। चक्षुषो गोपीथायं। ऋजवै त्वा

साधवें त्वा सुक्षित्ये त्वा भूत्ये त्वेत्याह। इयं वा ऋजुः। अन्तरिक्षः साधु। असौ सुक्षितिः॥२७॥

दिशो भूतिं। इमानेवास्मैं लोकान्कंल्पयित। अथो प्रतिष्ठित्ये। इदमहम्मुमांमुष्यायणं विशा पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन् पर्यूह्मित्यांह। विशेवनं पृशुभिंब्रह्मवर्चसेन् पर्यूहित। विशेतिं राजन्यंस्य ब्रूयात्। विशेवनं पर्यूहित। पृशुभिरित् वैश्यंस्य। पृशुभिरेवनं पर्यूहित। असुर्यं पात्रमनांच्छृण्णम्॥२८॥

आर्च्छृणित्ति। देव्त्राकः। अज्ञक्षीरेणाऽऽर्च्छृणित्ति। प्रमं वा एतत्पयः। यदंजक्षीरम्। प्रमेणैवैनं पयसाऽऽर्च्छृणित्ति। यज्ञुषा व्यावृत्त्ये। छन्दोभिराच्छृणित्ति। छन्दोभिर्वा एष क्रियते। छन्दोभिरेव छन्दाङ्स्याच्छृणित्ति। छुन्धि वाच्मित्याह। वाचमेवावंरुन्धे। छुन्ध्यूर्ज्मित्याह। ऊर्जमेवावंरुन्धे। छुन्धि ह्विरित्याह। ह्विरेवाकः। देवं पुरश्चर सुघ्यासन्त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्॥२९॥

स्याद्यात्रंबर्ग्यश्खन्दोभिः करोति वीर्यसम्मितं छन्दार्शस निष्पत्पृणेत्यांह सुक्षितिरनाँच्छुण्णुञ्छन्दार्श्वस्याच्छुंणत्त्यष्टौ चं॥🕳 [3]

ब्रह्मन्प्रचेरिष्यामो होतंर्घर्मम्भिष्टुहीत्यांह। एष वा एतर्राहु बृह्स्पतिः। यद्भृह्मा। तस्मां एव प्रंतिप्रोच्य प्रचेरति। आत्मनोऽनांत्र्ये। यमायं त्वा मुखाय त्वेत्यांह। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन् समर्धयति। मदन्तीभिः प्रोक्षंति। तेजं एवास्मिन्दधाति॥३०॥

अभिपूर्वं प्रोक्षंति। अभिपूर्वमेवास्मिन्तेजों दधाति। त्रिः प्रोक्षंति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः। अथों मेध्यत्वायं। होताऽन्वांह। रक्षंसामपहत्यै। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। त्रिष्टुभंः स्तीर्गायत्रीरिवान्वांह॥३१॥

गायत्रो हि प्राणः। प्राणमेव यर्जमाने दधाति। सन्तंतमन्वांह। प्राणानांमन्नाद्यंस्य सन्तंत्यै। अथो रक्षंसामपंहत्यै। यत्परिमिता अनुब्रूयात्। परिमित्मवंरुन्धीत। अपंरिमिता अन्वांह। अपंरिमित्स्यावंरुद्धै। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं॥३२॥

यत्प्रंवर्ग्यः। ऊर्ङ्गुआः। यन्मौओ वेदो भवंति। ऊर्जैव यज्ञस्य शिरः समर्धयति। प्राणाहुतीर्जुहोति। प्राणानेव यजमाने दधाति। सप्त जुहोति। सप्त वै शीर्षण्याः प्राणाः। प्राणानेवास्मिन्दधाति। देवस्त्वां सविता मध्वाऽनिक्कित्यांह॥३३॥

तेजंसैवैनंमनिक्त। पृथिवीं तपंसस्रायस्वेति हिरंण्यमुपाँ-स्यति। अस्या अनंतिदाहाय। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवुग्यंः। अग्निः सर्वा देवताः। प्रल्वानादीप्योपाँस्यति। देवतां स्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति। अप्रतिशीणांग्रं भवति। एतद्वंरहिर्ह्यंषः॥३४॥

अर्चिरंसि शोचिर्सीत्यांह। तेजं एवास्मिन्ब्रह्मवर्चसं

देधाति। स॰सीदस्व महा॰ असीत्यांह। महान् ह्येषः। ब्रह्मवादिनों वदन्ति। एते वाव त ऋत्विजः। ये देर्शपूर्णमासयौः। अर्थ कथा होता यजमानायाऽऽशिषो नाशौस्त इतिं। पुरस्तांदाशीः खलु वा अन्यो यज्ञः। उपरिष्टादाशीरन्यः॥३५॥

अनाधृष्या पुरस्तादिति यदेतानि यजूड्ष्याहै। शीर्षत एव यज्ञस्य यजमान आशिषोऽवंरुन्थे। आयुंः पुरस्तांदाह। प्रजां दक्षिणतः। प्राणं पृश्चात्। श्रोत्रंमुत्तर्तः। विधृतिमुपरिष्टात्। प्राणानेवास्मै समीचो दधाति। ईश्वरो वा एष दिशोऽनून्मंदितोः। यं दिशोऽनुं व्यास्थापयंन्ति॥३६॥

मनोरश्वांसि भूरिंपुत्रेतीमाम्भिमृंशति। इयं वै मनोरश्वा भूरिंपुत्रा। अस्यामेव प्रतितिष्ठत्यनुंन्मादाय। सूप्सदां मे भूया मा मां हि सीरित्याहाहि सायै। चितः स्थ परिचित् इत्याह। अपंचितिमेवास्मिन्दधाति। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तस्यं मुरुतो र्श्मयः॥३७॥

स्वाहां मुरुद्धिः परिश्रयस्वेत्यांह। अमुमेवाऽऽदित्यश्रयस्मिभिः पर्यूहित। तस्मांदसावांदित्योंऽमुष्मिँ छोके रिष्मिभिः पर्यूढः। तस्माद्राजां विषा पर्यूढः। तस्माद्रामणीः संजातैः पर्यूढः। अग्नेः सृष्टस्यं यतः। विकंङ्कतं भा आँच्छत्। यद्वैकंङ्कताः परिधयो भवंन्ति। भा एवावंरुन्धे। द्वादंश

भवन्ति॥३८॥

द्वार्वश मार्साः संवथ्सरः। संवथ्सरमेवावंरुन्धे। अस्ति त्रयोदशो मास् इत्यांहुः। यत्रयोदशः पंरिधिर्भवंति। तेनैव त्रयोदशं मास्मवंरुन्धे। अन्तरिक्षस्यान्तर्धिर्सीत्यांह् व्यावृत्त्यै। दिवं तपंसस्त्रायस्वेत्युपरिष्टाद्धिरंण्यमधि निदंधाति। अमुष्या अनंतिदाहाय। अथों आभ्यामेवैनंमुभ्यतः परिगृह्णाति। अर्हन् विभर्षि सार्यकानि धन्वेत्यांह॥३९॥

स्तौत्येवैनंमेतत्। गायत्रमंसि त्रैष्टुंभमसि जागंतम्सीतिं धवित्राण्यादंत्ते। छन्दोंभिरेवैनान्यादंत्ते। मधु मध्वितिं धूनोति। प्राणो वै मधुं। प्राणमेव यजंमाने दधाति। त्रिः परियन्ति। त्रिवृद्धि प्राणः। त्रिः परियन्ति। त्र्यांवृद्धि युज्ञः॥४०॥

अथो रक्षंसामपंहत्यै। त्रिः पुनः परियन्ति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुष्वेव प्रतितिष्ठन्ति। यो वै घुर्मस्यं प्रियां तनुवंमाक्रामंति। दुश्चर्मा वै स भंवति। एष ह् वा अस्य प्रियां तनुवमाक्रांमति। यित्रिः प्रीत्यं चतुर्थं पर्येति। एता ह वा अस्योग्रदेवो राजंनिराचंक्राम॥४१॥

ततो वै स दुश्चर्मां ऽभवत्। तस्मान्तिः प्रीत्य न चंतुर्थं परीयात्। आत्मनों गोपीथायं। प्राणा वै ध्वित्रांणि। अव्यंतिषङ्गं धून्वन्ति। प्राणानामव्यंतिषङ्गाय क्रृप्त्यै। विनिषद्यं धून्वन्ति। दिक्ष्वेव प्रतिंतिष्ठन्ति। ऊर्ध्वं धून्वन्ति। सुवर्गस्यं

लोकस्य समेध्ये। सुर्वतो धून्वन्ति। तस्माद्य सुर्वतः पवते॥४२॥

द्र्यातीवान्बांह युज्ञस्याहुष उपरिष्टादाशीर्न्या व्यास्थापयन्ति रुश्मयो भवन्ति धन्वेत्यांह युज्ञश्चंक्राम् सम्ष्ट्रे द्वे चं॥ 🎖 🗍

अग्निश्चा वसंभिः पुरस्तांद्रोचयत् गायत्रेण् छन्दसेत्यांह। अग्निरेवैनं वसंभिः पुरस्तांद्रोचयति गायत्रेण् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। इन्द्रंस्त्वा रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दसेत्यांह। इन्द्रं एवैन रे रुद्रैदंक्षिण्तो रोचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयत् त्रैष्टुंभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोचयत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। वर्रुणस्त्वाऽऽदित्यैः पश्चाद्रोचयत् जागंतेन् छन्दंसा॥४३॥

स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। चुतानस्त्वां मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्वानुष्टुभेन् छन्दसेत्यांह। चुतान एवैनं मारुतो मुरुद्धिरुत्तर्तो रोंचयत्यानुष्टुभेन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते। बृह्स्पतिंस्त्वा विश्वैर्देवैरुपरिष्टा-द्रोचयतु पाङ्केन् छन्दसेत्यांह। बृह्स्पतिंरेवैनं विश्वैर्देवै-रुपरिष्टाद्रोचयति पाङ्केन् छन्दंसा। स मां रुचितो रोंच्येत्यांह। आशिषंमेवैतामा शाँस्ते॥४४॥

रोचितस्त्वं देव घर्म देवेष्वसीत्यांह। रोचितो ह्यंष देवेषुं।

रोचिषीयाहं मंनुष्येष्वित्यांह। रोचंत एवेष मंनुष्येषु। सम्राङ्क्षमं रुचितस्त्वं देवेष्वायुंष्माः स्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चस्यंसीत्यांह। रुचितो ह्यंष देवेष्वायुंष्माः स्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी। रुचितो ऽहं मंनुष्येष्वायुंष्माः स्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी। भूयासमित्यांह। रुचित एवेष मंनुष्येष्वायुंष्माः स्तेज्ञस्वी ब्रंह्मवर्चसी भंवति। रुगंसि रुचं मियं धेहि मियं रुगित्यांह। आशिषंमेवेतामा शांस्ते। तं यदेतैर्यजुंभिररोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्रब्रूयात्। अरोचुकोऽध्वर्यः स्यात्। अरोचुको यजंमानः। अथ यदेनमेतैर्यजुंभी रोचियत्वा। रुचितो धर्म इति प्राहं। रोचुंकोऽध्वर्युर्भवंति। रोचुंको यजंमानः॥४५॥

पुश्चाद्रोचयित् जागंतेन छन्दंसा पाङ्केंन छन्दंसा स मां रुचितो रोच्येत्यांहाशिषंमेवैतामाशाँस्ते शास्तेऽष्टो चं॥🕳 [५]

शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। ग्रीवा उंप्सदः। पुरस्तांदुप्सदां प्रवर्ग्यं प्रवृंणिक्ता। ग्रीवास्वेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति। त्रिः प्रवृंणिक्ति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकभ्यों यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्थे। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः॥४६॥

ऋतुभ्यं पुव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। द्वादंशकृत्वः प्रवृंणिक्ति। द्वादंश मासाः संवथ्सरः। संवथ्सरादेव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। चतुंविंश्शितः सम्पंद्यन्ते। चतुंविंश्शितरर्धमासाः। अर्धमासेभ्यं एव यज्ञस्य शिरोऽवंरुन्धे। अथो खलुं। सकृदेव प्रवृज्यः। एक्श् हि शिरंः॥४७॥

अग्निष्टोमे प्रवृंणिक्ति। एतावान् वै यज्ञः। यावानिग्निष्टोमः। यावानेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिदधाति। नोक्थ्ये प्रवृंश्यात्। प्रजा वै प्शवं उक्थानि। यदुक्थ्ये प्रवृश्यात्। प्रजां प्शूनंस्य निर्दहेत्। विश्वजिति सर्वपृष्टे प्रवृंणिक्ति॥४८॥

पृष्ठानि वा अच्युंतं च्यावयन्ति। पृष्ठेरेवास्मा अच्युंतं च्यावियत्वाऽवंरुन्थे। अपंश्यं गोपामित्यांह। प्राणो वै गोपाः। प्राणमेव प्रजासु वियातयित। अपंश्यं गोपामित्यांह। असौ वा आंदित्यो गोपाः। स हीमाः प्रजा गोपायितं। तमेव प्रजानां गोपारं कुरुते। अनिपद्यमानुमित्यांह॥४९॥

न ह्यंष निपद्यंते। आ च परां च पृथिभिश्चरंन्त्रमित्यांह। आ च ह्यंष परां च पृथिभिश्चरंति। स स्प्रीचीः स विषूंचीर्वसान इत्यांह। स्प्रीचींश्च ह्यंष विषूंचीश्च वसानः प्रजा अभि विपश्यंति। आवंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तरित्यांह। आ ह्यंष वंरीवर्ति भुवंनेष्वन्तः। अत्रं प्रावीर्मधु माध्वींभ्यां मधु माधूंचीभ्यामित्यांह। वासंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। समग्निरग्निनां गतेत्यांह॥५०॥

ग्रैष्मविवास्मां ऋतू केल्पयति। सम्ग्रिर्ग्निनां ग्तेत्यांह। अग्निर्ह्यवैषोंऽग्निनां सङ्गच्छंते। स्वाहा सम्ग्निस्तपंसा ग्तेत्यांह। पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। धर्ता दिवो विभांसि रजंसः पृथिव्या इत्यांह। शारदावेवास्मां ऋतू

कंल्पयति॥५१॥

दिवि देवेषु होत्रां यच्छेत्यांह। होत्रांभिरेवेमाँ ह्योकान्थ्सन्दं-धाति। विश्वासां भुवां पत् इत्यांह। हैमंन्तिकावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। देवश्रूस्त्वं देव धर्म देवान्पाहीत्यांह। शैशिरावेवास्मां ऋतू कंल्पयति। तुपोजां वार्चमस्मे नियंच्छ देवायुवमित्यांह। या वै मेध्या वाक्। सा तंपोजाः। तामेवार्वरुत्थे॥५२॥

गर्भो देवानामित्यांह। गर्भो ह्येष देवानांम्। पिता मंतीनामित्यांह। प्रजा वै मृतयः। तासांमेष एव पिता। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मांदेवमांह। पितः प्रजानामित्यांह। पितह्येष प्रजानांम्। मितः कवीनामित्यांह॥५३॥

मितृह्येष केवीनाम्। सं देवो देवेनं सिवृत्रा यंतिष्ट् सर् सूर्येणारुक्तेत्यांह। अमुं चैवाऽऽदित्यं प्रवृग्यं च सर्शांस्ति। आयुर्दास्त्वम्स्मभ्यं घर्म वर्चोदा असीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। पिता नोऽसि पिता नो बोधेत्यांह। बोधयंत्येवैनम्। न वै तेऽवकाशा भवन्ति। पितिये दश्मः। नव वै पुरुषे प्राणाः॥५४॥

नाभिर्दश्मी। प्राणानेव यर्जमाने दधाति। अथो दशाँक्षरा विराट्। अत्रं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्धे। यज्ञस्य शिरौंऽच्छिद्यत। तद्देवा होत्रांभिः प्रत्यंदधुः। ऋत्विजोऽवेंक्षन्ते। एता वै होत्राः। होत्रांभिरेव यज्ञस्य शिरः प्रतिंदधाति॥५५॥

रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे प्रजापंतिः प्रजा अंसृजत। प्रजाना ए सृष्ट्रौं। रुचितमवें क्षन्ते। रुचिताद्वे पूर्जन्यो वर्षित। वर्षुंकः पूर्जन्यो भवति। सं प्रजा एंधन्ते। रुचितमवें क्षन्ते। रुचितं वै ब्रह्मवर्चसम्। ब्रह्मवर्चिसनो भवन्ति॥५६॥

अधीयन्तोऽवेंक्षन्ते। सर्वमायुंर्यन्ति। न पत्यवेंक्षेत। यत्पत्यवेक्षेत। प्रजांयेत। प्रजां त्वंस्यै निर्दहेत्। यन्नावेक्षेत। न प्रजांयेत। नास्यैं प्रजां निर्दहेत्। तिर्स्कृत्य यर्जुर्वाचयित। प्रजांयते। नास्यैं प्रजां निर्दहित। त्वष्टींमती ते सप्येत्यांह। सपाद्धि प्रजाः प्रजायंन्ते॥५७॥

ऋतवो हि शिर्ः सर्वपृष्ठे प्रवृंणुक्तविंपद्यमानुमित्यांह गुतेत्यांह शार्दावेवास्मां ऋतू कंल्पयित रुन्धे कवीनामित्यांह प्राणाः

प्रतिंदधाति भवन्ति वाचयति चृत्वारिं च॥————[६]

देवस्यं त्वा सिवृतुः प्रंस्व इति रश्नामादंते प्रसूँत्यै। अश्विनौर्बाहुभ्यामित्याह। अश्विनौ हि देवानांमध्वर्यू आस्तांम्। पूष्णो हस्तांभ्यामित्यांहृ यत्यैं। आद्देऽदित्यै रास्नाऽसीत्यांहृ यजुंष्कृत्यै। इड एह्यदित एहि सरंस्वृत्येहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै देवनामानि। देवनामेरेवैनामाह्वंयति। असावेह्यसावेह्यसावेहीत्यांह। एतानि वा अंस्यै मनुष्यनामानि॥५८॥

म्नुष्यनामेरेवेनामाह्वंयति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः।

ऋतुभिरेवैनामाह्वयिति। अदित्या उष्णीषंमसीत्यांह। यथायजुरेवैतत्। वायुरंस्यैड इत्यांह। वायुदेवत्यों वै वथ्सः। पूषा त्वोपावंसृजुत्वित्यांह। पौष्णा वै देवतंया पृशवंः॥५९॥

स्वयैवैनं देवतंयोपावंसृजित। अश्विभ्यां प्रदापयेत्यांह। अश्विनौ वै देवानां भिषजौं। ताभ्यांमेवास्में भेषजं कंरोति। यस्ते स्तनः शश्य इत्यांह। स्तौत्येवैनांम्। उस्रं घर्मं शिश्षोस्रं घर्मं पाहि घर्मायं शिश्षेत्यांह। यथां ब्रूयादमुष्में देहीतिं। तादगेव तत्। बृहुस्पितस्त्वोपं सीदित्वत्याह॥६०॥

ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मणैवैनामुपंसीदति। दानंवः स्थ पेर्ग्व इत्यांह। मेध्यांनेवैनांन्करोति। विष्व्ग्वृतो लोहितेनेत्यांह् व्यावृत्त्यै। अश्विभ्यां पिन्वस्व सरंस्वत्यै पिन्वस्व पूष्णे पिन्वस्व बृह्स्पतंये पिन्वस्वेत्यांह। एताभ्यो ह्यंषा देवतांभ्यः पिन्वंते। इन्द्रांय पिन्वस्वेन्द्रांय पिन्वस्वेत्यांह। इन्द्रमेव भाग्धेयेन समर्धयति। द्विरिन्द्रायेत्यांह॥६१॥

तस्मादिन्द्रों देवतांनां भूयिष्ठभाक्तंमः। गायत्रोऽसि त्रैष्ठंभोऽसि जागंतम्सीतिं शफोपयमानादंत्ते। छन्दोंभि-रेवैनानादंत्ते। सहोर्जो भागेनोपमेहीत्यांह। ऊर्ज एवैनं भागमंकः। अश्विनौ वा एतद्यज्ञस्य शिरंः प्रतिदर्धतावब्रूताम्। आवाभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्वियाता इतिं। इन्द्रांश्विना मधुंनः सार्घस्येत्यांह। अश्विभ्यांमेव पूर्वांभ्यां वर्षद्वरोति। अथो अश्विनांवेव भांगुधेयेंन समंध्यति॥६२॥

घुर्मं पात वसवो यजता विहत्याह। वसूनेव भागधेयेन समर्धयित। यद्वेषद्भुर्यात्। यातयामाऽस्य वषद्भारः स्यात्। यन्न वंषद्भुर्यात्। रक्षार्थसे यज्ञर हंन्युः। विहत्याह। प्रोक्षंमेव वषंद्भरोति। नास्यं यातयामा वषद्भारो भवंति। न यज्ञर रक्षार्थसे प्रन्ति॥६३॥

स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य र्षमयं वृष्टिवनंये जुहोमीत्यांह। यो वा अस्य पुण्यो र्षिमः। स वृष्टिवनिः। तस्मां एवैनं जुहोति। मधुं ह्विर्सीत्यांह। स्वदयंत्येवैनम्ं। सूर्यस्य तपंस्तपेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। द्यावांपृथिवीभ्यां त्वा परिगृह्णामीत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं परिगृह्णाति॥६४॥

अन्तिरिक्षेण त्वोपंयच्छामीत्यांह। अन्तिरिक्षेणैवैन्मुपंयच्छित। न वा एतं मंनुष्यों भर्तुमरहित। देवानां त्वा पितृणामनुंमतो भर्तु शकेयमित्यांह। देवैरेवैनं पितृभिरनुंमत् आदंत्ते। वि वा एनमेतदर्धयन्ति। यत्पश्चात्प्रवृज्यं पुरो जुह्नंति। तेजोऽसि तेजोऽनु प्रेहीत्यांह। तेजं एवास्मिन्दधाति। दिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरन्तिरिक्षस्पृङ्गा मां हिश्सीः पृथिविस्पृङ्गा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै॥६५॥

सुवंरिम सुवंर्मे यच्छु दिवं यच्छ दिवो मां पाहीत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। शिरो वा पृतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। आत्मा वायुः। उद्यत्यं वातनामान्यांह। आत्मन्नेव यज्ञस्य शिर्ः प्रतिदधाति। अनंवानम्। प्राणानाः सन्तंत्यै। पश्चांह॥६६॥

पाङ्को यज्ञः। यावांनेव यज्ञः। तस्य शिरः प्रतिंदधाति। अग्नये त्वा वसुमते स्वाहेत्यांह। असौ वा आंदित्योंऽग्निर्वसुं-मान्। तस्मां एवैनं जुहोति। सोमाय त्वा रुद्रवंते स्वाहेत्यांह। चन्द्रमा वै सोमो रुद्रवान्। तस्मां एवैनं जुहोति। वर्रुणाय त्वाऽऽदित्यवंते स्वाहेत्यांह॥६७॥

अपसु वै वर्रण आदित्यवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। बृह्स्पतंये त्वा विश्वदें व्यावते स्वाहेत्यांह। ब्रह्म वै देवानां बृह्स्पतिः। ब्रह्मंणैवैनं जुहोति। स्वित्रे त्वंर्भुमतें विभुमतें प्रभुमते वाजंवते स्वाहेत्यांह। संवथ्सरो वै संवितर्भुमान् विंभुमान्प्रंभुमान् वाजंवान्। तस्मां पृवेनं जुहोति। यमाय त्वाऽङ्गिरस्वते पितृमते स्वाहेत्यांह। प्राणो वै यमोऽङ्गिरस्वान्पितृमान्॥६८॥

तस्मां पृवैनं जुहोति। पृताभ्यं पृवैनं देवताभ्यो जुहोति। दश् सम्पंद्यन्ते। दशाँक्षरा विराट्। अन्नं विराट्। विराजैवान्नाद्यमवंरुन्थे। रौहिणाभ्यां वै देवाः सुंवर्गं लोकमायन्। तद्रौहिणयों रौहिणत्वम्। यद्रौहिणौ भवंतः। रौहिणाभ्यांमेव तद्यजंमानः सुवर्गं लोकमंति। अहुर्ज्योतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्यीतिषा स्वाहा रात्रिज्यीतिः केतुनां जुषता सुज्योतिज्यीतिषा स्वाहेत्यां ह। आदित्य-मेव तदमुष्मिं होकेऽह्नां प्रस्तादाधार। रात्रिया अवस्तात्। तस्मादसावादित्योऽमुष्मिं होकेऽहोरात्राभ्यां धृतः॥६९॥

मुनुष्युनामानिं पुशर्वः सीद्त्वित्याहेन्द्र्ययेत्यांहार्थयति घ्रन्ति गृह्णात्यहि १ सायै पश्चांऽहाद्वित्यवंते स्वाहेत्यांह पितृमानेति चुत्वारि

[*v*]

विश्वा आशां दक्षिण्सिदत्यांह। विश्वांनेव देवान्प्रीणाति। अथो दुरिष्ट्या एवैनं पाति। विश्वां देवानयाडिहेत्यांह। विश्वांनेव देवान्नांग्धेयेन समर्धयति। स्वाहांकृतस्य घर्मस्य मधौः पिबतमिश्वनेत्यांह। अश्विनांवेव भांग्धेयेन समर्धयति। स्वाहाऽग्रये यिज्ञयांय शं यर्जुर्भिरित्यांह। अभ्येवैनं घारयति। अथो हिवरेवाकः॥७०॥

अश्विना घृमं पांत १ हार्दिवानमहंदिवाभिक्तिभिरित्यांह। अश्विनांवेव भागधेयेन समर्धयित। अनुं वां द्यावांपृथिवी म १ सातामित्याहानुंमत्ये। स्वाहेन्द्रांय स्वाहेन्द्राविडित्यांह। इन्द्रांय हि पुरो हूयतें। आश्राव्यांह घृमस्यं युजेतिं। वर्षद्वृते जुहोति। रक्षंसामपंहत्ये। अनुंयजित स्वगाकृंत्ये। घर्ममंपातमश्विनेत्यांह॥ ७१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभिगृणाति। अनुं वां द्यावांपृथिवी अमरसातामित्याहानुंमत्यै। तं प्रार्व्यं यथावण्णमों दिवे नर्मः पृथिव्या इत्याह। यथायजुरेवैतत्। दिविधां इमं यज्ञं यज्ञमिमं दिविधा इत्याह। सुवर्गमेवैनं लोकं गंमयति। दिवं गच्छान्तरिक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छेत्याह। पृष्वेवैनं लोकेषु प्रतिष्ठापयति। पश्चं प्रदिशों गच्छेत्यांह॥७२॥

दिक्ष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। देवान्धंर्मपान्गंच्छ पितॄन्धंर्म-पान्गच्छेत्याह। उभयेँष्वेवैनं प्रतिष्ठापयति। यत्पिन्वंते। वर्षुकः पूर्जन्यो भवति। तस्मात्पिन्वंमानः पुण्यंः। यत्प्राङ्घिन्वंते। तद्देवानांम्। यद्दंक्षिणा। तत्पितृणाम्॥७३॥

यत्प्रत्यक्। तन्मंनुष्यांणाम्। यदुदङ्कं। तद्रुद्राणांम्। प्राश्चमदेश्चं पिन्वयति। देवृत्राकंः। अथो खलुं। सर्वा अनु दिशंः पिन्वयति। सर्वा दिशः समेधन्ते। अन्तःपरिधि पिन्वयति॥७४॥

तेज्सोऽस्कंन्दाय। इषे पीपिह्यूर्जे पीपिहीत्यांह। इषंमेवोर्जं यजंमाने दधाति। यजंमानाय पीपिहीत्यांह। यजंमानायैवैतामाशिषमा शाँस्ते। मह्यं ज्यैष्ठांय पीपिहीत्यांह। आत्मनं एवैतामाशिषमा शाँस्ते। त्विष्यैं त्वा द्युम्नायं त्वेन्द्रियायं त्वा भूत्यै त्वेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। धर्मासि सुधर्मा में न्यस्मे ब्रह्माणि धार्येत्यांह॥७५॥

ब्रह्मंत्रेवैनं प्रतिष्ठापयति। नेत्त्वा वार्तः स्कन्दयादिति यद्यभिचरैत्। अमुष्यं त्वा प्राणे सादयाम्यमुनां सह निर्धं गुच्छेति ब्रूयाद्यं द्विष्यात्। यमेव द्वेष्टिं। तेनैन स्मह निर्धं गमयति। पूष्णे शरसे स्वाहेत्याह। या एव देवतां हुतभांगाः। ताभ्यं एवैनं जुहोति। ग्रावंभ्यः स्वाहेत्यांह। या एवान्तरिक्षे वार्चः॥७६॥

ताभ्यं पुवैनं जुहोति। प्रतिरेभ्यः स्वाहेत्यांह। प्राणा वै देवाः प्रतिराः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति। द्यावांपृथिवीभ्याः स्वाहेत्यांह। द्यावांपृथिवीभ्यांमेवैनं जुहोति। पितृभ्यों धर्मपेभ्यः स्वाहेत्यांह। ये वै यज्वांनः। ते पितरों धर्मपाः। तेभ्यं पुवैनं जुहोति॥७७॥

रुद्रायं रुद्रहोंत्रे स्वाहेत्यांह। रुद्रमेव भांग्धेयेंन् समर्धयति। सर्वतः समनिक्ति। सर्वतं एव रुद्रं निरवंदयते। उदंश्चं निर्रस्यति। एषा वै रुद्रस्य दिक्। स्वायांमेव दिशि रुद्रं निरवंदयते। अप उपस्पृशित मेध्यत्वायं। नान्वींक्षेत। यदन्वीक्षेत॥७८॥

चक्षुंरस्य प्रमायुंक इस्यात्। तस्मान्नान्वीक्ष्यः। अपींपरो माऽह्यो रात्रिये मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वायुंमें दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अपींपरो मा रात्रिया अहां मा पाह्येषा ते अग्ने समित्तया समिध्यस्वाऽऽयुंमें दा वर्चसा माऽऽञ्जीरित्यांह। आयुंरेवास्मिन्वर्चो दधाति। अग्निज्योंतिज्योंतिर्िगः स्वाहा सूर्यो ज्योतिज्योतिः सूर्यः स्वाहेत्यांह। यथायजुरेवैतत्। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। होत्व्यंमग्निहोत्रा(३)न्न होतव्या(३)मिति॥७९॥

यद्यज्ञुषा जुहुयात्। अयथापूर्वमाहुंती जुहुयात्। यन्न जुंहुयात्। अग्निः पराभवेत्। भूः स्वाहेत्येव होत्व्यम्। यथापूर्वमाहुंती जुहोतिं। नाग्निः पराभवति। हुतः ह्विर्मधुं ह्विरित्यांह। स्वदयंत्येवैनम्। इन्द्रंतमेऽग्नावित्यांह॥८०॥

प्राणो वा इन्द्रंतमोऽग्निः। प्राण एवैन्मिन्द्रंतमेऽग्नौ जुंहोति। पिता नोंऽसि मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। अश्यामं ते देव धर्म मधुंमतो वाजंवतः पितुमत् इत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। स्वधाविनोंऽशीमहिं त्वा मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। तेजंसा वा एते व्यृध्यन्ते। ये प्रवृग्येण चरन्ति। प्राश्ञंन्ति। तेजं एवात्मन्दंधते॥८१॥

स्वथ्सरं न मार्समंश्जीयात्। न रामामुपेयात्। न मृन्मर्यन पिबेत्। नास्यं राम उच्छिष्टं पिबेत्। तेज एव तथ्स इश्यंति। देवासुराः संयंत्ता आसन्। ते देवा विजयमुंपयन्तः। विभ्राजि सौर्ये ब्रह्मसन्त्रंदधत। यत्किं चं दिवाकीर्त्यम्। तदेतेनैव ब्रतेनांगोपायत्। तस्मादेतद्वृतं चार्यम्। तेजंसो गोपीथायं। तस्मादेतानि यजूरंषि विभ्राजः सौर्यस्येत्यांहुः। स्वाहाँ त्वा सूर्यस्य रिश्मिभ्य इतिं प्रातः

स॰सांदयति। स्वाहाँ त्वा नक्षंत्रेभ्य इति सायम्। एता वा एतस्यं देवताः। ताभिरेवैन्॰ समर्धयति॥८२॥

घर्म् या ते दिवि शुगिति तिस्र आहुंतीर्जुहोति। छन्दोंभिरेवास्यैभ्यो लोकेभ्यः शुचमवं यजते। इयत्यग्रें जुहोति। अथेयत्यथेयंति। त्रयं इमे लोकाः। अनुं नोऽद्यानुं-मित्रित्याहानुंमत्यै। दिवस्त्वां पर्स्पाया इत्याह। दिव एवेमाँ लोकान्दांधार। ब्रह्मणस्त्वा परस्पाया इत्याह॥८३॥

पृष्वेव लोकेषुं प्रजा दांधार। प्राणस्यं त्वा पर्स्पाया इत्यांह। प्रजास्वेव प्राणान्दांधार। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। असौ खलु वा आंदित्यः प्रंवर्ग्यः। तं यद्दंक्षिणा प्रत्यश्चमुदंश्चमुद्वासयेत्। जि्ह्यं य्ज्ञस्य शिरो हरेत्। प्राश्चमुद्वांसयति। पुरस्तांदेव य्ज्ञस्य शिरः प्रतिद्धाति॥८४॥

प्राश्चमुद्वांसयित। तस्मांद्रसावांदित्यः पुरस्तादुदेति। शफोप्यमान्धवित्रांणि धृष्टी इत्यन्ववंहरन्ति। सात्मांनमेवैन्ध् सतंनुं करोति। सात्माऽमुष्मिँ श्लोके भंवति। य एवं वेदं। औदुंम्बराणि भवन्ति। ऊर्ग्वा उंदुम्बरंः। ऊर्जमेवावंरुन्धे। वर्त्मना वा अन्वित्यं॥८५॥

युज्ञ रक्षा रेसि जिघा रसन्ति। साम्ना प्रस्तोता उन्ववैति।

साम् वै रंक्षोहा। रक्षंसामपंहत्यै। त्रिर्निधन्मुपैति। त्रयं इमे लोकाः। एभ्य एव लोकेभ्यो रक्षाङ्स्यपंहन्ति। पुरुषः पुरुषो निधन्मुपैति। पुरुषः पुरुषो हि रंक्षस्वी। रक्षंसामपंहत्यै॥८६॥

यत्पृंथिव्यामुंद्वासर्यंत्। पृथिवी शुचाऽपंयेत्। यद्फ्सु। अपः शुचार्पयेत्। यदोषंधीषु। ओषंधीः शुचाऽपंयेत्। यद्वन्स्पतिंषु। वन्स्पतीं ञ्छुचार्पयेत्। हिरंण्यं निधायोद्वांसयति। अमृतं वै हिरंण्यम्॥८७॥

अमृतं एवैनं प्रतिष्ठापयति। वृल्गुरंसि शं युधाया इति त्रिः परिषिश्चन्पर्यति। त्रिवृद्वा अग्निः। यावानेवाग्निः। तस्य शुचरं शमयति। त्रिः पुनः पर्यति। षट्थ्सम्पंद्यन्ते। षड्वा ऋतवंः। ऋतुभिरेवास्य शुचरं शमयति। चतुंः स्रक्तिनीभिर्ऋतस्येत्यांह॥८८॥

ड्यं वा ऋतम्। तस्यां एष एव नाभिः। यत्प्रंवर्ग्यः। तस्मादेवमाह। सदो विश्वायुरित्याह। सदो हीयम्। अप द्वेषो अप ह्वर् इत्याह भ्रातृंव्यापनुत्त्यै। घर्मैतत्तेऽन्नंमेतत्पुरींषमिति द्राम मधुमिश्रेणं पूरयति। ऊर्ग्वा अन्नाद्यं दिथे। ऊर्जेवैनंमन्नाद्येन समर्थयति॥८९॥

अनंशनायुको भवति। य एवं वेदं। रन्तिर्नामांसि दिव्यो गन्धर्व इत्याह। रूपमेवास्यैतन्महिमान् रन्तिं बन्धुतां व्याचेष्टे। समहमायुषा सं प्राणेनेत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। व्यंसौ योंऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं वयं द्विष्म इत्यांह। अभिचार एवास्यैषः। अचिंऋदद्वृषा हरिरित्यांह। वृषा ह्येषः॥९०॥

वृषा हरिः। महान्मित्रो न देर्श्त इत्यांह। स्तौत्येवैनंमेतत्। चिदंसि समुद्रयोनिरित्यांह। स्वामेवैनं योनिं गमयति। नमंस्ते अस्तु मा मां हिश्सीरित्याहाहिश्सायै। विश्वावंसुश् सोम गन्ध्वंमित्यांह। यदेवास्यं क्रियमांण-स्यान्त्यंन्ति। तदेवास्यैतेना प्यांययति। विश्वावंसुर्भि तन्नों गृणात्वित्यांह॥९१॥

पूर्वमेवोदितम्। उत्तरेणाभि गृंणाति। धियों हिन्वानो धिय इन्नों अव्यादित्यांह। ऋतूनेवास्मैं कल्पयति। प्राऽऽसां गन्धर्वो अमृतांनि वोच्दित्यांह। प्राणा वा अमृताः। प्राणानेवास्मैं कल्पयति। पृतत्त्वं देव घर्म देवो देवानुपांगा इत्याह। देवो ह्येष सं देवानुपैतिं। इदमृहं मनुष्यों मनुष्यांनित्यांह॥९२॥

मृनुष्यों हि। एष सन्मंनुष्यांनुपैतिं। ईश्वरो वै प्रंवर्ग्यमुद्वासयन्। प्रजां पृश्नून्थ्योंमपीथमंनूद्वासः सोमं पीथानुमेहिं। सह प्रजयां सह रायस्पोषेणेत्याह। प्रजामेव पृश्नून्थ्योंमपीथमात्मन्थंत्ते। सुमित्रा न आप् ओषंधयः सन्त्वत्यांह। आशिषंमेवैतामा शांस्ते। दुर्मित्रास्तस्मैं

भूयासुर्योऽस्मान्द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्म इत्याह। अभिचार एवास्यैषः। प्र वा एषो ऽस्माल्लोकाच्यंवते। यः प्रंवर्ग्यमुद्वासयितं। उदुत्यं चित्रमितिं सौरीभ्यांमृग्भ्यां पुनरेत्य गार्हंपत्ये जुहोति। अयं वे लोको गार्हंपत्यः। अस्मिन्नेव लोके प्रतितिष्ठति। असौ खलु वा आंदित्यः सुंवर्गो लोकः। यथ्सौरी भवंतः। तेनैव सुंवर्गालोकान्नेति॥९३॥

प्रजापंतिं वै देवाः शुक्रं पयोंऽदुह्नन्। तदेंभ्यो न व्यंभवत्। तद्ग्निर्व्यंकरोत्। तानि शुक्तियाणि सामांन्यभवन्। तेषां यो रसोऽत्यक्षंरत्। तानि शुक्रयज्ञू इष्यंभवन्। शुक्तियाणां वा पुतानि शुक्तियाणि। सामुप्यसं वा पुतयोंर्न्यत्। देवानांमन्यत्पर्यः। यद्गोः पर्यः॥९४॥

तथ्साम्नः पर्यः। यद्जायै पर्यः। तद्देवानां पर्यः। तस्माद्यत्रैतैर्यजुर्भिश्चरंन्ति। तत्पर्यसा चरन्ति। प्रजापंतिमेव तत्पर्यसाऽन्नाद्येन समर्धयन्ति। एष ह त्वै साक्षात्प्रंवर्ग्यं भक्षयति। यस्यैवं विदुषंः प्रवर्ग्यः प्रवृज्यतें। उत्तर्वेद्यामुद्धांस-येत्तेजंस्कामस्य। तेजो वा उत्तरवेदिः॥९५॥

तेजंः प्रवृग्यंः। तेजंसैव तेजः समंध्यति। उत्तर्वेद्यामुद्वांसये-दन्नंकामस्य। शिरो वा एतद्यज्ञस्यं। यत्प्रंवर्ग्यः। मुर्खमुत्तरवेदिः। शीर्ष्णैव मुख्रु सन्देधात्यन्नाद्याय। अन्नाद एव भेवति। यत्र खलु वा एतमुद्वांसितं वयार्श्स पूर्यासेते। परि वै तार समां प्रजा वयार्श्स्यासते॥९६॥

तस्मांदुत्तरवेद्यामेवोद्वांसयेत्। प्रजानां गोपीथायं। पुरो वां पृश्चाद्वोद्वांसयेत्। पुरस्ताद्वा एतज्योतिरुदेति। तत्पृश्चान्निम्नोचित। स्वामेवैनं योनिमनूद्वांसयित। अपां मध्य उद्वांसयेत्। अपां वा एतन्मध्याज्योतिरजायत। ज्योतिः प्रवृग्यः। स्वयैवैनं योनौ प्रतिष्ठापयति॥९७॥

यं द्विष्यात्। यत्रं स स्यात्। तस्यां दिश्युद्वांसयेत्। एष वा अग्निर्वेश्वानरः। यत्प्रंवर्ग्यः। अग्निनैवैनं वैश्वानरेणाभि प्रवंतयित। औदुंम्बर्याष्ट्रं शाखायामुद्वांसयेत्। ऊर्ग्वा उंदुम्बरः। अन्नं प्राणः। शुग्धर्मः॥९८॥

इदमहम्मुष्यांमुष्यायणस्यं शुचा प्राणमपिं दहामीत्यांह। शुचैवास्यं प्राणमपिं दहित। ताजगार्तिमार्च्छति। यत्रं दर्भा उपदीकंसन्तताः स्यः। तदुद्वांसयेद्वृष्टिंकामस्य। एता वा अपामंनूज्झावंर्यो नामं। यद्दर्भाः। असौ खलु वा आंदित्य इतो वृष्टिमुदींरयित। असावेवास्मां आदित्यो वृष्टिं नियंच्छिति। ता आपो नियंता धन्वंना यन्ति॥९९॥

गोः पर्य उत्तरबेदिरांसते स्थापयति घुमीं यन्ति॥————[१०]

प्रजापंतिः सम्भ्रियमाणः। सम्राट्थ्सम्भृतः। घुर्मः प्रवृंक्तः।

महावीर उद्वांसितः। असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स पृतानि नामान्यकुरुत। य पृवं वेदं। विदुरेनं नाम्नां। ब्रह्मवादिनो वदन्ति॥१००॥

यो वै वसीया रसं यथाना ममुप्चरित। पुण्याँ ति वे स तस्में कामयते। पुण्याँ तिमस्मे कामयन्ते। य पृवं वेदं। तस्मादेवं विद्वान्। घर्म इति दिवाऽऽचं क्षीत। सम्माडिति नक्तम्। एते वा पृतस्यं प्रिये तनुवाँ। एते अस्य प्रिये नामंनी। प्रिययैवैनं तनुवाँ॥१०१॥

प्रियेण नाम्ना समंध्यति। कीर्तिरंस्य पूर्वागंच्छति जनतांमायतः। गायत्री देवेभ्योऽपांकामत्। तां देवाः प्रंवर्ग्यंणेवानु व्यंभवन्। प्रवर्ग्यणाऽऽप्रुवन्। यचंतुर्विर्शतिकृत्वंः प्रवर्ग्यं प्रवृणक्तिं। गायत्रीमेव तदनु विभवति। गायत्रीमांप्रोति। पूर्वांऽस्य जनं यतः कीर्तिर्गच्छति। वैश्वदेवः सर्संत्रः॥१०२॥ वसंवः प्रवृक्तः। सोमोऽभिकीर्यमाणः। आश्विनः पर्यस्यानीयमांने। मारुतः क्रथन्। पौष्ण उदंन्तः। सार्स्वतो विष्यन्दंमानः। मैत्रः शरो गृहीतः। तेज उद्यंतः। वायुर्हियमांणः। प्रजापंतिर्ह्यमांनो वाग्युतः॥१०३॥

असौ खलु वावैष आंदित्यः। यत्प्रंवर्ग्यः। स एतानि नामान्यकुरुत। य एवं वेदं। विदुरेनं नाम्नाः। ब्रह्मवादिनो वदन्ति। यन्मृन्मयमाहुंतिं नाश्जुतेऽथं। कस्मादेषौऽश्जुत् इतिं। वागेष इतिं ब्रूयात्। वाच्येंव वाचंं दधाति॥१०४॥

तस्मादश्जुते। प्रजापंतिर्वा एष द्वांदश्धा विहिंतः। यत्प्रंवर्ग्यः। यत्प्रागंवकाशेभ्यः। तेनं प्रजा अंसृजत। अवकाशैर्देवासुरानंसृजत। यदूर्ध्वमंवकाशेभ्यः। तेनान्नंम-सृजत। अन्नं प्रजापंतिः। प्रजापंतिर्वावैषः॥१०५॥

वृद्न्ति तुनुवा सःसंत्रो ह्र्यमानो वाग्धुतो दंधात्येषः॥•••••••ि १]

स्विता भूत्वा प्रथमेऽह्नप्रवृंज्यते। तेन् कामा १ एति। यिद्वितीयेऽहंनप्रवृज्यतें। अग्निर्भूत्वा देवानेति। यत्तृतीयेऽहंनप्र-वृज्यतें। वायुर्भूत्वा प्राणानेति। यचंतुर्थेऽहंनप्रवृज्यतें। आदित्यो भूत्वा र्श्मीनेति। यत्पंश्चमेऽहंनप्रवृज्यतें। चन्द्रमां भूत्वा नक्षंत्राण्येति॥१०६॥

यत्षष्ठेऽहंन्प्रवृज्यतें। ऋतुर्भूत्वा संवथ्सरमेति। यथ्संप्तमेऽहंन्प्रवृज्यतें। धाता भूत्वा शक्कंरीमेति। यदंष्ट्रमेऽहंन्प्रवृज्यतें। बृह्स्पतिंर्भूत्वा गांयत्रीमेति। यत्नंवमेऽहंन्प्रवृज्यतें। मित्रो भूत्वा त्रिवृतं इमाँ श्लोकानेति। यद्दंशमेऽहंन्प्रवृज्यतें। वरुणो भूत्वा विराजंमेति॥१०७॥

यदेकाद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। इन्द्रों भूत्वा त्रिष्टुभंमेति। यद्वांद्शेऽहंन्प्रवृज्यतें। सोमों भूत्वा सुत्यामेति। यत्पुरस्तांदुप्सदांं प्रवृज्यतें। तस्मांदितः परांङ्मूँ छोका ॥ स्तपंत्रेति। यदुपरिष्टादुप्सदां प्रवृज्यतें। तस्मांदुमुतोऽर्वा-ङ्गिँ हो को इस्तपंत्रेति। य एवं वेदे। ऐव तंपति॥१०८॥

नक्षंत्राण्येति विराज्यंमिति तपति॥————[१२]

ॐ शं नुस्तन्नो मा हांसीत्॥ ॐ शान्तिः शान्तिः॥

॥षष्ठः प्रश्नः॥

ॐ सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

प्रेयुवारसं प्रवतीं महीरनं बहुभ्यः पन्थांमनपस्पशानम्। वैवस्वतर सङ्गमंनं जनांनां यमर राजांनर ह्विषां दुवस्यत। इदं त्वा वस्त्रं प्रथमन्वागृत्रपैतदूंह यदिहाबिंभः पुरा। इष्टापूर्तमनु सम्पंश्य दक्षिणां यथां ते दत्तं बंहुधा विबंन्धुष्। इमौ यंनज्मि ते वही असंनीथाय वोढवें। याभ्यां यमस्य सादंनर सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यां यमस्य सादंनर सुकृतां चापि गच्छतात्। पूषा त्वेतश्च्यांवयत् प्रविद्वाननंष्टपशुर्भुवंनस्य गोपाः। स त्वैतेभ्यः परिददात्पितृभ्योऽग्निर्देवभ्यः सुविदत्रेभ्यः। पूषेमा आशा अनुवेद सर्वाः सो अस्मार अभयतमेन नेषत्। स्वस्तिदा अर्घृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन्पुर एतु प्रविद्वान्॥१॥

आयुंर्विश्वायुः परिपासित त्वा पूषा त्वां पातु प्रपंथे पुरस्तांत्। यत्राऽऽसंते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। भुवंनस्य पत इद॰ ह्विः। अग्नयं रियमते स्वाहां। पुरुषस्य सयाव्यंपेद्घानि मृज्महे। यथां नो अत्र नापंरः पुरा जरस् आयंति। पुरुषस्य सयावरि वि ते प्राणमंसि स्रसम्। शरीरेण महीमिहि स्वधयेहि पितृनुपं प्रजयाऽस्मानिहावंह। मैवं माङ् स्ता प्रियेऽहं देवी सती

पितृलोकं यदैषि। विश्ववारा नर्भसा संव्ययन्त्युभौ नो लोकौ पर्यसाऽभ्यावंवृथ्स्व॥२॥

ड्यं नारीं पतिलोकं वृंणाना निपंचत् उपं त्वा मर्त्य् प्रेतम्। विश्वं पुराणमन् पालयंन्ती तस्यै प्रजां द्रविणं चेह धेहि। उदींष्वं नार्यभि जीवलोकमितासुमेतमुपंशेष एहिं। ह्स्तग्राभस्यं दिधिषोस्त्वमेतत्पत्युंर्जनित्वम्भि सम्बंभूव। सुवर्ण् हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये ब्रह्मणे तेजंसे बलांय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयम। धनुरहस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये क्षत्रायौजंसे बलांय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयम। मण्डि हस्तांदाददांना मृतस्यं श्रिये विशे पृष्ट्ये बलांय। अत्रैव त्वमिह वय स्थावा विश्वाः स्पृधीं अभिमांतीर्जयम॥३॥

ड्रममंग्ने चम्सं मा विजींहरः प्रियो देवानांमुत सोम्यानांम्। एष यश्चंमसो देवपान्स्तस्मिन्देवा अमृतां मादयन्ताम्। अग्नेर्वर्म् परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोणुंष्व मेदंसा पीवंसा च। नेत्त्वां धृष्णुरहरंसा जरहंषाणो दधंद्विधक्ष्यन्पर्यङ्खयांते। मैनंमग्ने विदंहो माऽभिशोंचो माऽस्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम्। यदा शृतं क्रवों जातवेदोऽथेंमेनं प्रहिंणुतात्पितृभ्यंः। शृतं यदा क्रसीं जातवेदोऽथेंमेनं परिंदत्तात्पितृभ्यंः। यदा गच्छात्यसुंनीतिमेतामथां देवानां वश्नीर्भवाति। सूर्यं ते चक्षुंर्गच्छतु वातंमात्मा द्यां च् गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ् यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरेः। अजो भागस्तपंसा तं तंपस्व तं ते शोचिस्तंपतु तं ते अर्चिः। यास्ते शिवास्तनुवीं जातवेदस्ताभिविहेम स्पृकृतां यत्रं लोकाः। अयं वै त्वम्स्मादिध त्वमेतद्यं वे तदस्य योनिरिस। वैश्वानरः पुत्रः पित्रे लोक्कुश्चांतवेदो वहंम स्पृकृतां यत्रं लोकाः॥४॥

य एतस्यं पृथो गोप्तार्स्तेभ्यः स्वाह्य य एतस्यं पृथो रिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाह्य य एतस्यं पृथोभिऽरिक्षेतार्स्तेभ्यः स्वाहांऽऽख्यात्रे स्वाहांऽपाख्यात्रे स्वाहांऽभिलालंपते स्वाहांऽपुलालंपते स्वाहाऽग्नयं कर्मकृते स्वाह्य यमत्र नाधीमस्तस्मै स्वाहां। यस्तं इध्मं जुभरिष्सिष्विद्यानो मूर्धानं वात् तपंते त्वाया। दिवो विश्वंस्माथ्सीमघायत उरुष्यः। अस्मात्त्वमधि जातोऽसि त्वद्यं जांयतां पुनः। अग्नयं विश्वान्तरायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥५॥

य पृतस्य त्वत्पर्श्व॥————[२]

प्र केतुनां बृह्ता भाँत्यग्निराविर्विश्वांनि वृष्भो रोरवीति। दिवश्चिदन्तादुप मामुदानंडपामुपस्थे महिषो वंवर्ध। इदं तु एकं पुर ऊतु एकं तृतीयेनु ज्योतिषा संविशस्व। संवेशंनस्तुनु चार्रिशे प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। नाकें सुप्णमुप् यत्पतंन्त हृदा वेनंन्तो अभ्यचंक्षत त्वा। हिरंण्यपक्षं वर्रणस्य दूतं यमस्य योनौं शकुनं भृंरण्युम्। अतिंद्रव सारमेयौ श्वानौं चतुरक्षौ श्वलौं साधुनां पथा। अथां पितृन्थ्सृंविदत्रा अपींहि यमेन ये संधमादं मदन्ति। यौ ते श्वानौं यमरिक्षतारौं चतुरक्षौ पंथिरक्षीं नृचक्षंसा। ताभ्या राजन्यरि देह्येन इस्विस्ति चौस्मा अनमीवं चं धेहि॥६॥

उरुणसावंसुतृपांवुलुम्बलौ यमस्यं दूतौ चंरतो वशा श्रु अनुं। तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दत्ता वसुंमुद्येह भूद्रम्। सोम् एकैंभ्यः पवते घृतमेक उपांसते। येभ्यो मधुं प्रधावंति ता श्रिंदेवापि गच्छतात्। ये युध्यंन्ते प्रधनेषु शूरांसो ये तंनुत्यजः। ये वां सहस्रंदक्षिणास्ता श्रिंदेवापि गच्छतात्। तपसा ये अनाधृष्यास्तपंसा ये सुवंर्गताः। तपो ये चंकिरे महत्ता श्रिंदेवापि गच्छतात्। अश्मन्वती रेवतीः स रंभध्वमुत्तिष्ठत् प्रतंरता सखायः। अत्रां जहाम् ये असन्नशंवाः शिवान् वयमभि वाजानुत्तंरेम॥७॥

यह्रै देवस्यं सिवतुः पवित्र सहस्रंधारं वितंतम्नतिरक्षे। येनापुनादिन्द्रमनौर्तमार्त्ये तेनाहं मा सर्वतंनुं पुनामि। या राष्ट्रात्पन्नादप् यन्ति शाखां अभिमृता नृपतिमिच्छमानाः। धातुस्ताः सर्वाः पर्वनेन पूताः प्रजयास्मान्नय्या वर्चसा स॰सृंजाथ। उद्घयं तमंस्परि पश्यंन्तो ज्योति्रत्तंरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगंन्म ज्योतिंरुत्तमम्। धाता पुंनातु सविता पुंनातु। अग्नेस्तेजंसा सूर्यंस्य वर्चसा॥८॥

थेह्युत्तरिमाष्टौ चं॥———[३]

यन्ते अग्निममंन्थाम वृष्भायेव पक्तेव। इमन्तर शंमयामिस क्षीरेणं चोदकेनं च। यन्त्वमंग्ने समदंहस्त्वमु निर्वापया पुनः। क्याम्बूरत्रं जायतां पाकदूर्वा व्यंत्कशा। शीतिके शीतिकावित ह्लादुंके ह्लादुंकावित। मण्डूक्यां सुसङ्गमयेम स्वंग्निर श्वमयं। शं ते धन्वन्या आपः शमुं ते सन्त्वनूक्याः। शं ते समुद्रिया आपः शमुं ते सन्त् वर्ष्याः। शं ते स्वन्तीस्त्नुवे शमुं ते सन्तु कूप्याः। शन्ते नीहारो वंर्षतु शमु पृष्वाऽवंशीयताम्॥९॥

अवं सृज् पुनंरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुंत्श्चरंति स्वधाभिः। आयुर्वसान् उपं यातु शेषु सङ्गंच्छतां तन्वां जातवेदः। सङ्गंच्छस्व पितृभिः सङ् स्वधाभिः सिमेष्टापूर्तेनं पर्मे व्योमन्। यत्र भूम्यं वृणसे तत्रं गच्छ् तत्रं त्वा देवः संविता दंधातु। यत्तं कृष्णः शंकुन आंतुतोदं पिपीलः सर्प उत वा श्वापंदः। अग्निष्टद्विश्वांदनृणं कृणोतु सोमंश्च यो ब्राह्मणमांविवेशं। उत्तिष्ठातंस्तनुव सम्भंरस्व मेह गात्रमवंहा मा शरीरम्। यत्र भूम्यं वृणसे तत्रं गच्छ् तत्रं

त्वा देवः संविता दंधात्। इदं त एकं प्र ऊंत एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व। संवेशनस्तन्वे चारुरिध प्रियो देवानां पर्मे स्थस्थें। उत्तिष्ठ प्रेहि प्रद्रवौकः कृणुष्व पर्मे व्योमन्। यमेन त्वं यम्यां संविदानोत्तमं नाक्मिधं रोहेमम्। अश्मन्वती रेवतीर्यद्वे देवस्यं सिवतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंस्स्पिरं धाता पुनात्। अस्मात्त्वमिधं जातौंऽस्ययं त्वदिधंजायताम्। अग्नयं वेश्वान्रायं सुवर्गायं लोकाय स्वाहां॥१०॥

अवंशीयता स्थस्थे पश्चं च॥

8

आयांतु देवः सुमनांभिरूतिभिर्यमो हंवेह प्रयंताभिर्क्ता। आसींदता ए सुप्रयतेह ब्रहिष्यूर्जाय जात्यै ममं शत्रुहत्यै। यमे इंव यतमाने यदैतं प्रवाम्भरन्मानुषा देवयन्तः। आसींदत् स्वमुं लोकं विदाने स्वास्स्थे भंवतमिन्दंवे नः। यमाय सोम एसन्त यमायं जुहुता ह्विः। यम हं यज्ञो गंच्छत्यग्निद्तेतो अरंङ्कृतः। यमायं घृतवंद्धविर्जुहोत् प्र चं तिष्ठत। स नो देवेष्वायमदी्र्घमायुः प्र जीवसें। यमाय मध्मत्तम् राज्ञे ह्व्यं जुंहोतन। इदं नम् ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पिथकृद्धः॥११॥

योऽस्य कौष्ठ्य जगंतुः पार्थिवस्यैकं इद्वशी। युमं भंज्ञाश्रवो गांय यो राजांनपुरोध्यः। युमङ्गायं भङ्गाश्रवो यो राजांनप्रोध्यः। येनापो नृद्यो धन्वांनि येन द्यौः पृंथिवी दृढा। हिर्ण्यकक्ष्यान् सुधुरान् हिर्ण्याक्षानंयः शुफान्। अश्वांननश्यंतो दानं यमो राजाभि तिष्ठंति। यमो दाधार पृथिवीं यमो विश्वंमिदं जगंत्। यमाय सर्वमित्रंस्थे यत्प्राणद्वायुरंक्षितम्। यथा पश्च यथा षड्यथा पश्चं दृशर्षंयः। यमं यो विद्याध्स ब्रूंयाद्यथैक ऋषिर्विजान्ते॥१२॥

त्रिकंद्रुकेभिः पर्तित् षडुर्वीरेक्मिद्धृहत्। गायत्री त्रिष्टुप्छन्दार्श्से सर्वा ता यम आहिता। अहंरहुर्नयंमानो गामश्वं पुरुषं जगंत्। वैवंस्वतो न तृंप्यित् पश्चंभिर्मानंवैर्यमः। वैवंस्वते विविंच्यन्ते यमे राजंनि ते जनाः। ये चेह सत्येनेच्छंन्ते य उ चानृंतवादिनः। ते रांजित्रिह विविंच्यन्तेऽथा यंन्ति त्वामुपं। देवाङ्श्च ये नंमस्यन्ति ब्राह्मणाङ्श्चापचित्यंति। यस्मिन्वृक्षे सुंपलाशे देवैः सम्पिबंते यमः। अत्रां नो विश्पितः पिता पुंराणा अनुंवनित॥१३॥

वैश्वानरे ह्विर्दि जुंहोमि साहस्रमुथ्स श्रेतधारमेतम्। तस्मिन्नेष पितरं पितामहं प्रपितामहं बिभर्त्पिन्वंमाने। द्रफ्सश्चेस्कन्द पृथिवीमनु द्यामिमं च योनिमनु यश्च पूर्वः। तृतीयं योनिमनुं स्श्चरंन्तं द्रफ्सं जुंहोम्यनुं सप्त होत्राः। इमश् संमुद्रश् श्वतधारमुथ्संव्यच्यमानुं भुवनस्य मध्ये। घृतं दुहानामदितिं जनायाग्रे मा हिश्सीः पर्मे व्योमन्। अपेत वीत वि चं सर्पतातो येऽत्र स्थ पुराणा ये च नूतंनाः। अहोभिरद्भिरक्तिभिर्व्यक्तं यमो दंदात्ववसानंमस्मै। स्वितेतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिर्युज्यन्तामघ्नियाः॥१४॥

शुनं वाहाः शुनं नाराः शुनं कृषतु लाङ्गंलम्। शुनं वेर्त्रा बेध्यन्ता १ शुनमष्ट्रामुदिङ्गय शुनांसीरा शुनम्स्मासु धत्तम्। शुनांसीराविमां वाचं यद्दिवि चंक्रथः पर्यः। तेनेमामुपं सिश्चतम्। सीते वन्दांमहे त्वाऽर्वाचीं सुभगे भव। यथां नः सुभगा संसि यथां नः सुफला संसि। स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्ये मातुरुपस्थ आदंधे। तेभिरदिते शं भंव। विमुंच्यध्वमिष्ट्रया देवयाना अतांरिष्म तमंसस्पारम्स्य। ज्योतिरापाम सुवंरगन्म॥१५॥

प्र वाता वान्तिं प्तयंन्ति विद्युत् उदोषंधीर्जिहते पिन्वते सुवंः। इरा विश्वंस्मै भुवंनाय जायते यत्पर्जन्यः पृथिवी १ रेत्साऽवंति। यथां यमायं हार्म्यमवंपन्पश्चं मानवाः। एवं वंपामि हार्म्यं यथासाम जीवलोके भूर्रयः। चितः स्थ परिचितं ऊर्ध्वचितः श्रयध्वं पितरो देवतां। प्रजापंतिर्वः सादयतु तयां देवतंया। आप्यांयस्व सन्ते॥१६॥

পুমুিया अंगन्म सप्त चं॥------[६]

उत्ते तभ्नोमि पृथिवीं त्वत्परीमं लोकं निदधन्मो अहर रिषम्। पुताइ स्थूणौं पितरों धारयन्तु तेऽत्रां युमः सार्वनात्ते मिनोतु। उपंसर्प मातर् भूमिमेतामुंरुव्यर्चसं पृथिवी स्मुशेवाम। ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत्येषा त्वां पातु निर्ऋत्या उपस्थे। उष्ट्रंश्चस्व पृथिवि मा विबाधिथाः सूपायनास्में भव सूपवश्चना। माता पुत्रं यथांसिचाभ्येनं भूमि वृण्। उष्ट्रश्चमाना पृथिवी हि तिष्ठंसि सहस्रं मित उप हि श्रयंन्ताम्। ते गृहासो मधुश्चतो विश्वाहाँस्मै शर्णाः सन्त्वत्रं। एणींर्धाना हरिणीर्ज्नीः सन्तु धेनवंः। तिलंबथ्सा ऊर्जमस्मै दुहांना विश्वाहां सन्त्वनपंस्फुरन्तीः॥१७॥

पुषा ते यमसादंने स्वधा निधीयते गृहे। अक्षितिर्नामं ते असौ। इदं पितृभ्यः प्रभेरेम ब्रहिर्देवेभ्यो जीवन्त उत्तरं भरेम। तत्त्वंमारोहासो मेघ्यो भवं यमेन त्वं यम्यां संविदानः। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिष्टां मा माता पृथिवि त्वम्। पितृन् हि यत्र गच्छास्येधांसं यमराज्यें। मा त्वां वृक्षौ सम्बाधिथां मा माता पृथिवी मही। वैवस्वत हि गच्छांसि यमराज्ये विराजिस। नळं प्रवमारोहैतं नळेनं पृथोऽन्विहि। स त्वं नळप्रंवो भूत्वा सन्तर् प्रतरोत्तर॥१८॥

स्वितैतानि शरीराणि पृथिव्यै मातुरुपस्थ आदेधे। तेभ्यंः पृथिवि शं भेव। षड्ढांता सूर्यं ते चक्षुंगंच्छतु वातंमात्मा द्यां च गच्छं पृथिवीं च धर्मणा। अपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषंधीषु प्रतितिष्ठा शरीरैः। परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां

यस्ते स्व इतंरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा रिष्पो मोत वीरान्। शं वातः शर हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषंधीः। कल्पंन्तां मे दिशः शृग्माः। पृथिव्यास्त्वां लोके सांदयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अन्तरिक्षस्य त्वा दिवस्त्वां दिशां त्वा नाकंस्य त्वा पृष्ठे ब्रथ्नस्यं त्वा विष्टपं सादयाम्यमुष्य शर्मासि पितरो देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥१९॥

अपूपवाँन्धृतवा ५ श्रुरुरेह सींदतूत्तभुवन् द्यामुतोपरिं। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत ये देवानां घृतमांगा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। दशांक्षरा ता र रंक्षस्व तां गोपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्यितरों देवतां। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया। अपूपवाँञ्छृतवाँन् क्षीरवान्दिधवान्मधुंमाङ्ब्ररुरेह सींदतूत्तभुवन् पृथिवीं द्यामुतोपरिं। योनिकृतः पथिकृतः सपर्यत् ये देवाना ई श्तमांगाः क्षीरभांगा दिधेभागा मधुंभागा इह स्थ। एषा ते यमसादेने स्वधा निधीयते गृहें उसौ। शुताक्षंरा सहस्रौक्षराऽयुतौक्षराऽच्युंताक्षरा ता १ रक्षस्व तां गोंपायस्व तां ते परिंददामि तस्यां त्वा मा दंभन्पितरों देवता। प्रजापितिस्त्वा सादयतु तयां देवतंया॥२०॥

「り]-

प्तास्तें स्वधा अमृताः करोमि यास्ते धानाः परिकिराम्यत्रं। तास्ते यमः पितृभिः संविदानोऽत्रं धेनः कामदुधाः करोत्। त्वामर्जुनौषधीनां पयो ब्रह्माण् इद्विदः। तासां त्वा मध्यादादेदे चरुभ्यो अपिधातवे। दूर्वाणाः स्तम्बमाहंरैतां प्रियतंमां ममं। इमां दिशं मनुष्याणां भूयिष्ठानु वि रोहतु। काशांनाः स्तम्बमाहंर् रक्षंसामपहत्यै। य पुतस्यै दिशः प्राभंवन्नघायवो यथा तेनाभंवान्युनंः। दर्भाणाः स्तम्बमाहंर पितृणामोषधीं प्रियाम्। अन्वस्यै मूलं जीवादनु काण्डमथो फलम्॥२१॥

लोकं पृंण ता अस्य सूर्द्वोहसः। शं वातः शक् हि ते घृणिः शम् ते सन्त्वोषधीः। कल्पन्तां ते दिशः सर्वाः। इदमेव मेतोऽपंरामार्तिमाराम काश्चन। तथा तदिश्वभ्यां कृतं मित्रेण वर्रणेन च। वर्णो वार्यादिदं देवो वनस्पतिः। आर्त्ये निर्ऋत्ये द्वेषांच वनस्पतिः। विधृतिरिस् विधारयासमद्घा द्वेषा से शम शमयासमद्घा द्वेषा से यव यवयासमद्घा द्वेषा से श्वि पृथिवीं गच्छान्तिरक्षं गच्छ दिवं गच्छ दिशों गच्छ सुवंगच्छ सुवंगच्छ दिशों गच्छ दिवं गच्छान्तिरक्षं गच्छ पृथिवीं गच्छाऽऽपो वां गच्छ यदि तत्रं ते हितमोषधीषु प्रतितिष्ठा शरीरः। अश्मंन्वती रेवतीयद्वे देवस्यं सिवतः प्वित्रं या राष्ट्रात्पन्नादुद्वयं तमंसस्परिं धाता पुनातु॥२२॥

फर्ल पुनातु॥———[८]

आ रोह्ताऽऽयुंर्ज्रसं गृणाना अनुपूर्वं यतंमाना यितृष्ट। इह त्वष्टां सुजिनमा सुरत्नां दीर्घमायुंः करतु जीवसं वः। यथाऽहाँन्यनुपूर्वं भवंन्ति यथ्रतवं ऋतुभिर्यन्तिं क्रुप्ताः। यथा न पूर्वमपंरो जहाँत्येवा धांत्रायू धि कत्पयैषाम्। न हिं ते अग्ने तनुवैं कूरं चकार् मर्त्यः। कृपिर्बभिस्ति तेजंनं पुनंर्ज्रायु गौरिव। अपं नः शोशंचद्घमग्ने शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घं मृत्यवे स्वाहाँ। अनुङ्वाहंमन्वारंभामहे स्वस्तयै। स न इन्द्रं इव देवेभ्यो विह्नंः सम्पारंणो भव॥२३॥

इमे जीवा वि मृतैरावंवर्तिन्नभूँद्भद्रा देवहूंतिं नो अद्या प्राञ्जोगामानृतये हसाय द्राघीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। मृत्योः पदं योपयंन्तो यदैम् द्राघीय आयुंः प्रत्रां दर्धानाः। आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवथ यज्ञियासः। इमं जीवेभ्यः पिरिधं दंधामि मा नोऽनुंगादपंरो अर्धमेतम्। श्वतं जीवन्तु श्ररदेः पुरूचीस्तिरो मृत्युं दंद्महे पर्वतेन। इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सपिषा सम्मृंशन्ताम्। अन्श्रवो अनमीवाः सुशेवा आरोहन्तु जनयो योनिमग्रैं। यदाञ्जनं त्रैककुदं जात्र हिमवंतस्परिं। तेनामृतंस्य मूलेनारातीर्जम्भयामसि। यथा त्वमुद्धिनथ्र्योषधे पृथिव्या अधि। पृविम्म उद्धिन्दन्तु कीत्या यशंसा ब्रह्मवर्चसेन। अजौऽस्यजास्मद्घा द्वेषा सि यवोऽसि यवयास्मद्घा

द्वेषा ५सि॥२४॥

भुव जम्भुयामुसि त्रीणि च॥————[९

अपं नः शोशंचद्घमग्नं शुशुध्या र्यिम्। अपं नः शोशंचद्घम्। सुक्षेत्रिया संगात्या वंसूया चं यजामहे। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्भन्दिष्ठ एषां प्रास्माकांसश्च सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयद्गेः सहंस्वतो विश्वतो यन्तिं सूर्यः। अपं नः शोशंचद्घम्। प्रयत्ते अग्ने सूर्यो जायेमहि प्रते व्यम्। अपं नः शोशंचद्घम्॥२५॥

त्व ह विश्वतोमुख विश्वतः पिर्भूरिसं। अपं नः शोशंचद्घम्। द्विषों नो विश्वतोमुखाऽतिं नावेवं पारय। अपं नः शोशंचद्घम्। स नः सिन्धंिमव नावयातिं पर्षा स्वस्तयें। अपं नः शोशंचद्घम्। आपं प्रवणादिंव यतीरपास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। उद्वनादंदकानीवापास्मथ्स्यंन्दताम्घम्। अपं नः शोशंचद्घम्। अन्वन्दायं प्रमोदाय पुनरागाङ् स्वान्गृहान्। अपं नः शोशंचद्घम्। न व तत्र प्रमीयते गौरश्वः पुरुषः प्रशः। यत्रेदं ब्रह्मं क्रियतें परिधिर्जीवंनायकमपं नः शोशंचद्घम्॥२६॥

अपंश्याम युवृतिमाचरंन्तीं मृतायं जीवां पंरिणीयमांनाम्। अन्थेन या तमसा प्रावृताऽसि प्राचीमवांचीमवयन्नरिष्टौ। मयैतां मा्ड्स्तां भ्रियमाणा देवी स्ती पिंतृलोकं यदैषिं। विश्ववांरा नर्भसा संव्यंयन्त्युमौ नो लोकौ पयसाऽऽवृंणीहि। रियंष्ठामृिग्नं मधुंमन्तमूर्मिणमूर्जः सन्तं त्वा पयसोप् सर्सदेम। सर् र्य्या समु वर्चसा सचंस्वा नः स्वस्तयै। ये जीवा ये चं मृता ये जाता ये च जन्त्याः। तेभ्यो घृतस्यं धारियतुं मधुंधारा व्युन्दती। माता रुद्राणां दृहिता वसूंना्ड् स्वसांऽऽदित्यानांममृतंस्य नाभिः। प्रणुवोचं चिकितुषे जनांय मागामनांगामिदंतिं विधष्ट। पिबंतूदकं तृणांन्यत्त। ओमुथ्मृजत॥२७॥

विधिष्ट हे चं॥————[११

सन्त्वां सिश्चामि यजुषां प्रजामायुर्धनं च॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

सुमङ्गलीरियं वधूरिमा संमेत पश्यंत। सौभाँग्यम्स्यै द्त्त्वायाथास्तं वि परेतन। इमां त्विमिन्द्र मीद्वः सुपुत्रा स्मुभगाँ कुरु। दशाँस्यां पुत्राना धेहि पतिमेकाद्शं कृषि॥ आवहंन्ती वितन्वाना। कुर्वाणा चीरमात्मनंः। वासा सि मम् गावश्च। अन्नपाने चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावह।

ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥सप्तमः प्रश्नः — शीक्षावल्ली॥

शं नो मित्रः शं वर्रणः। शं नो भवत्वर्यमा। शं न इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मं विद्ध्यामि। ऋतं वंदिष्यामि। सृत्यं वंदिष्यामि। तन्मामंवतु। तहुक्तारंमवतु। अवंतु माम्। अवंतु वृक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥१॥

सृत्यं वंदिष्यामि पश्चं च॥==========[१]

शीक्षां व्यांख्यास्यामः। वर्णः स्वरः। मात्रा बलम्। सामे सन्तानः। इत्युक्तः शीक्षाध्यायः॥२॥

शीक्षां पञ्चं॥=______[२]

सह नौ यशः। सह नौ ब्रह्मवर्चसम्। अथातः सर्शतिताया उपनिषदं व्यांख्यास्यामः। पश्चस्वधिकंरणेषु। अधिलोकमधिज्यौतिषमधिविद्यमधिप्रजंमध्यात्मम्। ता महासर्शता इंत्याचृक्षते। अथांधिलोकम्। पृथिवी पूर्वरूपम्। द्यौरुत्तंररूपम्। आकांशः सुन्धिः॥३॥

वार्युः सन्धानम्। इत्यंधिलोकम्। अथांधिज्यौतिषम्। अग्निः पूर्वरूपम्। आदित्य उत्तररूपम्। आपः सन्धिः। वैद्युतंः सन्धानम्। इत्यंधिज्यौतिषम्। अथांधिविद्यम्। आचार्यः पूर्वरूपम्॥४॥

अन्तेवास्युत्तंररूपम्। विंद्या सुन्धिः। प्रवचनर् सन्धानम्। इत्यंधिविद्यम्। अथाधिप्रजम्। माता पूँर्व- रूपम्। पितोत्तंररूपम्। प्रंजा सन्धिः। प्रजननर् सन्धानम्। इत्यधिप्रजम्॥५॥

अथाध्यात्मम्। अधराहनुः पूँर्वरूपम्। उत्तराहनुरुत्तंर-रूपम्। वाख्सन्धिः। जिह्वां सन्धानम्। इत्यध्यात्मम्। इतीमा महास्र्हिताः। य एवमेता महास्रहिता व्याख्यांता वेद। सन्धीयते प्रजंया पृशुभिः। ब्रह्मवर्चसेनान्नाद्येन सुवर्ग्यणं लोकेन॥६॥

सुन्धिराचार्यः पूँर्वरूपमित्यधिप्रजं लोंकेन॥∎

[3]

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपः। छन्दोभ्योऽध्यमृताँध्सम्बभूवं। स मेन्द्रों मेधयाँ स्पृणोतु। अमृतंस्य देव धारंणो भूयासम्। शरीरं मे विचंर्षणम्। जिह्वा मे मधुंमत्तमा। कर्णांभ्यां भूरि विश्रुंवम्। ब्रह्मंणः कोशोंऽसि मेधयाऽपिंहितः। श्रुतं मे गोपाय। आवहंन्ती वितन्वाना॥७॥

कुर्वाणा चीरंमात्मनंः। वासारंसि मम् गावंश्च। अन्नपानं चं सर्वदा। ततों मे श्रियमावंह। लोम्शां पृश्भिः सह स्वाहाँ। आ मां यन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। वि मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। प्र मांऽऽयन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। दमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ। शमायन्तु ब्रह्मचारिणः स्वाहाँ॥८॥

यशो जर्नेऽसानि स्वाहाँ। श्रेयान् वस्यंसोऽसानि स्वाहाँ। तं त्वां भगु प्रविंशानि स्वाहाँ। स मां भगु प्रविंशु स्वाहाँ। तस्मिन्थ्सहस्रंशाखे। निर्भगाहं त्वियं मृजे स्वाहाँ। यथाऽऽपः प्रवंता यन्ति। यथा मासां अहर्जुरम्। एवं मां ब्रह्मचारिणः। धात्रायन्तु सर्वतः स्वाहाँ। प्रतिवेशोऽसि प्र मां भाहि प्र मां पद्यस्व॥९॥

[8]

भूर्भृवः सुवृरिति वा एतास्तिस्रो व्याह्नंतयः। तासांमृहस्मै तां चंतुर्थीम्। माहांचमस्यः प्रवंदयते। मह् इतिं। तद्भक्षां। स आत्मा। अङ्गांन्यन्या देवताः। भूरिति वा अयं लोकः। भुव इत्यन्तरिक्षम्। सुवृरित्यसौ लोकः॥१०॥

मह् इत्यांदित्यः। आदित्येन् वाव सर्वे लोका महीयन्ते। भूरिति वा अग्निः। भुव इतिं वायुः। सुव्रित्यांदित्यः। मह् इतिं चन्द्रमाः। चन्द्रमंसा वाव सर्वाणि ज्योती १षि महीयन्ते। भूरिति वा ऋचः। भुव इति सामानि। सुव्रिति यज्र १षि॥११॥

मह् इति ब्रह्मं। ब्रह्मंणा वाव सर्वे वेदा महीयन्ते। भूरिति वै प्राणः। भुव इत्यंपानः। सुव्रितिं व्यानः। मह् इत्यन्नम्ं। अन्नेन वाव सर्वे प्राणा महीयन्ते। ता वा एताश्चतंस्रश्चतुर्धा। चतंस्रश्चतस्रो व्याहृंतयः। ता यो वेदं। स वेंद् ब्रह्मं। सर्वेंऽस्मै देवा बलिमावंहन्ति॥१२॥ स य एषों उन्तर्हंदय आकाशः। तस्मिन्नयं पुरुषो मनोमयः। अमृंतो हिर्ण्मयः। अन्तरेण तालुंके। य एष स्तनं इवावलम्बंते। सेन्द्रयोनिः। यत्रासौ केशान्तो विवर्तते। व्यपोह्यं शीर्षकपाले। भूरित्युग्नौ प्रतितिष्ठति। भुव इतिं वायौ॥१३॥

सुवरित्यांदित्ये। मह् इति ब्रह्मंणि। आप्नोति स्वारांज्यम्। आप्नोति मनंस्स्पितिम्। वाक्पंतिश्वक्षंष्पितिः। श्रोत्रंपतिर्वि-ज्ञानंपितः। एतत्ततों भवति। आकाशशंरीरं ब्रह्मं। स्त्यात्मंप्राणारांमं मनं आनन्दम्। शान्तिंसमृद्धमृतम्। इतिं प्राचीनयोग्योपांस्व॥१४॥

वायावमृत्मेकं च॥—————[६]

पृथिव्यंन्तिरक्षं द्यौर्दिशोंऽवान्तरिद्याः। अग्निर्वायुरांदित्य-श्चन्द्रमा नक्षंत्राणि। आप ओषंधयो वनस्पतंय आकाश आत्मा। इत्यंधिभूतम्। अथाध्यात्मम्। प्राणो व्यानोंऽपान उंदानः संमानः। चक्षुः श्रोत्रं मनो वाक्कक्। चर्म मार्स्स स्नावास्थिं मुजा। पृतदंधि विधायर्षिरवोंचत्। पाङ्कं वा इदस् सर्वम्। पाङ्केनैव पाङ्कः स्पृणोतीति॥१५॥

सर्वमेकं च॥------[७]

ओमिति ब्रह्मं। ओमितीदः सर्वम्ं। ओमित्येतदंनुकृति ह स्म वा अप्योश्रांवयेत्याश्रांवयन्ति। ओमिति सामानि गायन्ति। ओश्शोमितिं शस्त्राणिं शश्सन्ति। ओमित्यंध्वर्युः प्रंतिग्रं प्रतिंगृणाति। ओमिति ब्रह्मा प्रसौति। ओमित्यंग्निहोत्रमन्जानाति। ओमितिं ब्राह्मणः प्रंवुक्ष्यन्नांह ब्रह्मोपांप्रवानीतिं। ब्रह्मैवोपांप्रोति॥१६॥

ओन्दर्श॥————[८]

ऋतं च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यं च स्वाध्यायप्रवंचने च। तपश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। वमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। शमश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निहोत्रं च स्वाध्यायप्रवंचने च। अग्निश्चश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। अतिथयश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। मानुषं च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजानश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। प्रजातिश्च स्वाध्यायप्रवंचने च। सत्यमिति सत्यवचां राथीतरः। तप इति तपोनित्यः पौरुशिष्टः। स्वाध्यायप्रवचने एवेति नाकों मौद्गल्यः। तिद्धि तपंस्तिद्धि तपः॥१७॥

प्रजा च स्वाध्यायप्रवंचने च पद्गं॥ \blacksquare

अहं वृक्षस्य रेरिवा। कीर्तिः पृष्ठं गिरेरिव। ऊर्ध्वपंवित्रो वाजिनीव स्वमृतंमस्मि। द्रविण् सर्वर्चसम्। सुमेधा अमृतोक्षितः। इति त्रिशङ्कोर्वेदानुवचनम्॥१८॥

<u>अ</u>हर पद॥———[१०]

वेदमनूच्याऽऽचार्योऽन्तेवासिनमंनुशास्ति। सत्यं वद। धर्मं चर। स्वाध्यायानमा प्रमदः। आचार्याय प्रियं धनमाहृत्य प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेथ्सीः। सत्यान्न प्रमंदितव्यम्। धर्मान्न प्रमंदित्व्यम्। कुशलान्न प्रमंदित्व्यम्। भूत्यै न प्रमंदित्व्यम्। स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमंदितव्यम्॥१९॥

देविपतृकार्याभ्यां न प्रमंदित्व्यम्। मातृंदेवो भव। पितृंदेवो भव। आचार्यदेवो भव। अतिथिदेवो भव। यान्यनवद्यानिं कर्माणि। तानि सेवितव्यानि। नो इंतराणि। यान्यस्माक स्मंरितानि। तानि त्वयोपास्यानि॥२०॥

नो इंतराणि। ये के चास्मच्छ्रेया से ब्राह्मणाः। तेषां त्वयाऽऽसनेन प्रश्वंसित्व्यम्। श्रद्धंया देयम्। अश्रद्धंयाऽदेयम्। श्रिया देयम्। हिंया देयम्। भिया देयम्। संविंदा देयम्। अथ यदि ते कर्मविचिकिथ्सा वा वृत्तविचिकिंथ्सा वा स्यात्॥२१॥

ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तत्रं वर्तेरन्। तथा तत्रं वर्तेथाः। अथाभ्यांख्यातेषु। ये तत्र ब्राह्मणाः सम्मर्शिनः। युक्तां आयुक्ताः। अलूक्षां धर्मकामाः स्युः। यथा ते तेषुं वर्तेरन्। तथा तेषुं वर्तेथाः। एषं आदेशः। एष उपदेशः। एषा वेदोपनिषत्। एतदंनुशासनम्। एवमुपांसित्व्यम्। एवमु चैतंदुपास्यम्॥२२॥

स्वाध्यायप्रवचनाभ्यात्र प्रमंदित्व्यं तानि त्वयोपास्यानि स्यात्तेषुं वर्तेरन्थ्सप्त चं॥————[१९]

शं नों मित्रः शं वर्रणः। शं नों भवत्वर्यमा। शं

न् इन्द्रो बृह्स्पतिः। शं नो विष्णुंरुरुक्रमः। नमो ब्रह्मणे। नमंस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांसि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मांति। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्मावादिषम्। ऋतमंवादिषम्। सत्यमंवादिषम्। तन्मामावीत्। तद्वक्तारंमावीत्। आवीन्माम्। आवींद्वक्तारम्। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥२३॥

सत्यमेवादिषं पश्चे च॥

-[१२]

॥अष्टमः प्रश्नः — ब्रह्मानन्दवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

ब्रह्मविदाँप्रोति परम्ं। तदेषाभ्यंक्ता। सृत्यं ज्ञानमंनन्तं ब्रह्मं। यो वेद निहितं गुहांयां पर्मे व्योमन्। सौंऽश्जृते सर्वान्कामांन्थ्सह। ब्रह्मंणा विपश्चितेतिं। तस्माद्वा एतस्मां-दात्मनं आकाशः सम्भूंतः। आकाशाद्वायुः। वायोर्ग्निः। अग्नेरापंः। अन्धः पृंथिवी। पृथिव्या ओषंधयः। ओषंधीभ्योऽन्त्रम्ं। अन्नात्पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरस्मयः। तस्येदंमेव शिरः। अयं दक्षिणः पृक्षः। अयमुत्तंरः पृक्षः। अयमात्मां। इदं पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥१॥

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायंन्ते। याः काश्चं पृथिवीः श्रिताः। अथो अन्नेनैव जीवन्ति। अथैन्दपिं यन्त्यन्तुतः। अन्नुः

हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्मां ध्सर्वीष्धमुंच्यते। सर्वं वै तेऽन्नंमाप्नुवन्ति। येऽन्नं ब्रह्मोपासंते। अन्न हि भूतानां ज्येष्ठम्। तस्माध्सर्वोष्धमुंच्यते। अन्नाद्भूतानि जायंन्ते। जातान्यन्नेन वर्धन्ते। अद्यतेऽत्ति चं भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यंत इति। तस्माद्वा एतस्मादन्नंरसमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां प्राणुमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्राणं एव शिरः। व्यानो दक्षिणः पक्षः। अपान उत्तरः पक्षः। आकांश आत्मा। पृथिवी पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोंको भवति॥२॥ प्राणं देवा अनु प्राणंन्ति। मनुष्याः पृशवंश्च ये। प्राणो हि भूतानामार्युः। तस्माध्मर्वायुषम्चयते। सर्वमेव त् अायुर्यन्ति। ये प्राणं ब्रह्मोपासंते। प्राणो हि भूतांनामायुः। तस्माथ्सर्वायुषमुच्यंत इति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यंः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मौत् प्राणमयात्। अन्योऽन्तर आत्मां मनोमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य यर्जुरेव शिरः। ऋग्दक्षिणः पक्षः। सामोत्तरः पक्षः। आदेश आत्मा। अथर्वाङ्गिरसः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥३॥

यतो वाचो निवंतन्ते। अप्राप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कदांचनेति। तस्यैष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्मान्मनोमयात्।

अन्योऽन्तर आत्मा विज्ञान्मयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य श्रेष्ठैव शिरः। ऋतं दक्षिणः पृक्षः। सत्यमुत्तरः पृक्षः। योग आत्मा। महः पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥४॥

विज्ञानं युज्ञं तंनुते। कर्माणि तनुतेऽपिं च। विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्टमुपांसते। विज्ञानं ब्रह्म चेद्वेदं। तस्माचेन्न प्रमाद्यंति। शरीरं पाप्मंनो हित्वा। सर्वान्कामान्थ्समश्जेत इति। तस्येष एव शारीर आत्मा। यः पूर्वस्य। तस्माद्वा एतस्माद्विज्ञान्मयात्। अन्योऽन्तर आत्मांऽऽनन्दमयः। तेनैष पूर्णः। स वा एष पुरुषविध एव। तस्य पुरुषविधताम्। अन्वयं पुरुषविधः। तस्य प्रियंमेव शिरः। मोदो दक्षिणः पृक्षः। प्रमोद उत्तरः पृक्षः। आनंन्द आत्मा। ब्रह्म पुच्छं प्रतिष्ठा। तदप्येष श्लोको भवति॥५॥

असंत्रेव सं भवति। अस्द्रह्मेति वेद चेत्। अस्ति ब्रह्मेतिं चेद्वेद। सन्तमेनं ततो विंदुरिति। तस्यैष एव शारींर आत्मा। यः पूर्वस्य। अथातोऽनुप्रश्ञाः। उता विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चन गंच्छ्कती(३)॥ आहो विद्वानुमुं लोकं प्रेत्यं। कश्चिम्समंश्जुता(३) उ। सोऽकामयत। बृहु स्यां प्रजांयेयेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तृत्वा। इद १

सर्वमसृजत। यदिदं किं चे। तथ्मृष्ट्वा। तदेवानु प्राविशत्। तदेनुप्रविश्ये। सच् त्यचांभवत्। निरुक्तं चानिरुक्तं च। निलयनं चानिलयनं च। विज्ञानं चाविज्ञानं च। सत्यं चानृतं च संत्यम्भवत्। यदिदं किं च। तथ्सत्यमित्याच्क्षते। तदप्येष श्लोको भवति॥६॥

असृद्वा इदमग्रं आसीत्। ततो वे सदंजायत।
तदात्मानः स्वयंमकुरुत। तस्मात्तथ्सुकृतमुच्यंत इति। यद्वै
तथ्सुकृतम्। रंसो वे सः। रसः ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनंन्दी
भवति। को ह्येवान्यांत्कः प्राण्यात्। यदेष आकाश
आनंन्दो न स्यात्। एष ह्येवानंन्दयाति। यदा ह्यंवैष्
एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां
विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवैष्
एतस्मिन्नदृश्येऽनात्म्येऽनिरुक्तेऽनिलयनेऽभयं प्रतिष्ठां
विन्दते। अथ सोऽभयं गंतो भवति। यदा ह्यंवैष्
एतस्मिन्नदृरमन्तंरं कुरुते। अथ तस्य भयं भवति। तत्त्वेव
भयं विदुषोऽमंन्वानुस्य। तद्येष श्लोंको भवति॥७॥

भीषाऽस्माद्वातंः पवते। भीषोदेति सूर्यः। भीषाऽस्मादिग्ने-श्चेन्द्रश्च। मृत्युर्धावित पश्चेम इति। सैषाऽऽनन्दस्य मीमा १ सा भवति। युवा स्याथ्साधु युवाऽध्यायकः। आशिष्ठो दिढष्ठों बिल्ष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यं पूर्णा स्यात्। स एको मानुषं आन्नदः। ते ये शतं मानुषां आन्नदाः। स एको मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दः। श्लोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं मनुष्यगन्धर्वाणांमानन्दाः। स एको

देवगन्धर्वाणांमानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

ते ये शतं देवगन्धर्वाणांमान्नदाः। स एकः पितृणां चिरलोकलोकानांमानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं पितृणां चिरलोकलोकार्नामान्न्दाः। स एक आजानजानां देवार्नामानन्दः। श्रोत्रियस्य चाकार्महतस्य।

ते ये शतमाजानजानां देवानांमानुन्दाः। स एकः कर्मदेवानां देवानांमानुन्दः। ये कर्मणा देवानंपियन्ति। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं कर्मदेवानां देवानांमानुन्दाः। स एको देवानां-मानुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतुस्य।

ते ये शतं देवानामान्नदाः। स एक इन्द्रंस्याऽऽन्नदः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

ते ये शतमिन्द्रंस्याऽऽन्न्दाः। स एको बृहस्पर्तेरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामंहतस्य।

ते ये शतं बृहस्पतेरान्न्दाः। स एकः प्रजापतेरान्न्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

ते ये शतं प्रजापतेरानुन्दाः। स एको ब्रह्मणे आनुन्दः। श्रोत्रियस्य चाकामहतस्य।

स यश्चायं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कामित। एतं प्राणमयमात्मानमुपंसङ्ग्रामित। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्ग्रामित। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्ग्रामित। एतमानन्द-मयमात्मानमुपंसङ्कामित। तदप्येष श्लोंको भ्वति॥८॥

यतो वाचो निवंतिन्ते। अप्रांप्य मनंसा सह। आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान्। न बिभेति कुतंश्चनेति। एत ह वावं न तपति। किमह साधुं नाक् रवम्। किमहं पापमक रविमिति। स य एवं विद्वानेते आत्मांन इस्पृणुते। उभे ह्यें वैष् एते आत्मांन इस्पृणुते। य एवं वेदं। इत्युंपनिषंत्॥९॥

सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥नवमः प्रश्नः — भृगुवल्ली॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भृगुर्वे वांरुणिः। वर्रणं पितंरुमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। तस्मां पृतत्प्रोवाच। अन्नं प्राणं चक्षुः श्रोत्रं मनो वाचमितिं। तः होवाच। यतो वा इमानि भूतांनि जायंन्ते। येन जातांनि जीवंन्ति। यत्प्रयंन्त्यभि संविंशन्ति। तद्विजिंज्ञासस्व। तद्वह्मेतिं। स तपोंऽतप्यत। स

तपंस्तस्वा॥१॥

अत्रं ब्रह्मेति व्यंजानात्। अन्नाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। अन्नेन जातांनि जीवंन्ति। अन्नं प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तद्विज्ञायं। पुनर्वे वर्रुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥२॥

प्राणो ब्रह्मेति व्यंजानात्। प्राणास्येव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। प्राणेन जातांनि जीवंन्ति। प्राणं प्रयंन्त्यभि संविश्वन्तीतिं। तिद्वज्ञायं। पुनर्वे वर्रुणं पितर्मुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेतिं। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्मे विजिज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेतिं। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तुस्वा॥३॥

मनो ब्रह्मेति व्यंजानात्। मनंसो ह्यंव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। मनंसा जातांनि जीवंन्ति। मनः प्रयंन्त्यभि संविशन्तीति। तिद्वज्ञायं। पुनंरेव वरुणं पितर्मुपंससार। अधींहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥४॥

विज्ञानं ब्रह्मेति व्यंजानात्। विज्ञाना् छोव खिल्वमानि भूतांनि जायंन्ते। विज्ञानंन जातांनि जीवंन्ति। विज्ञानं प्रयंन्त्यभि संविंश्नितीति। तद्विज्ञायं। पुनेरेव वर्रणं पितंरमुपंससार। अधीहि भगवो ब्रह्मेति। त॰ होवाच। तपंसा ब्रह्म विजिंज्ञासस्व। तपो ब्रह्मेति। स तपोऽतप्यत। स तपंस्तस्वा॥५॥

आन्नन्दो ब्रह्मेति व्यंजानात्। आनन्दाद्धेव खिल्वमानि भूतांनि जायन्ते। आन्नन्देन जातांनि जीवंन्ति। आन्नन्दं प्रयंन्त्यिभ संविश्चन्तीति। सैषा भाँग्वी वांरुणी विद्या। प्रमे व्योम्न् प्रतिष्ठिता। य एवं वेद् प्रतितिष्ठति। अन्नवानन्नादो भवति। महान्भवति प्रजयां प्शुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥६॥

अत्रं न निंन्द्यात्। तद्भृतम्। प्राणो वा अत्रम्ं। शरीरमत्रादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदत्रमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अत्रंवानन्नादो भंवति। महान्भवित प्रजयां पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥७॥

अत्रं न परिंचक्षीत। तद्वृतम्। आपो वा अन्नम्ं। ज्योतिरन्नादम्। अपस् ज्योतिः प्रतिष्ठितम्। ज्योतिष्यापः प्रतिष्ठिताः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भवित प्रजयां पृशुभिंब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥८॥

अर्न्न बहु कुंवीत। तद्भृतम्। पृथिवी वा अन्नम्।

आकाशौंऽन्नादः। पृथिव्यामांकाशः प्रतिष्ठितः। आकाशे पृथिवी प्रतिष्ठिता। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठति। अन्नंवानन्नादो भंवति। महान्भंवति प्रजयां पृशुभिर्ब्रह्मवर्चसेनं। महान्कीर्त्या॥९॥

न कश्चन वसतौ प्रत्यांचक्षीत। तद्वृतम्। तस्माद्यया कया च विधया बह्वंत्रं प्राप्नुयात्। अराध्यस्मा अन्नमित्याचक्षते। एतद्वे मुखतौँ ५न्न १ राद्धम्। मुखतो ५ समा अन्न १ राध्यते। एतद्वै मध्यतौँऽन्न राद्धम्। मध्यतोऽस्मा अन्न राध्यते। एतद्वा अन्तर्तो ऽन्न र राद्धम्। अन्तर्तो ऽस्मा अन्न राध्यते। य एवं वेद। क्षेम इति वाचि। योगक्षेम इति प्राणापानयोः। कर्मेति हस्तयोः। गतिरिति पादयोः। विमुक्तिरिति पायौ। इति मानुषीः समाज्ञाः। अथ दैवीः। तृप्तिरिति वृष्टौ। बलमिति विद्युति। यश इति पशुषु। ज्योतिरिति नेक्षत्रेषु। प्रजातिरमृतमानन्द इंत्युपस्थे। सर्वमिंत्याकाशे। तत्प्रतिष्ठेत्युंपासीत। प्रतिष्ठांवान्भवति। तन्मह इत्युंपासीत। मंहान्भवति। तन्मन इत्युंपासीत। मानंवान्भवति। तन्नम इत्यूपासीत। नम्यन्ते उस्मै कामाः। तद्वह्मेत्यूपासीत। ब्रह्मंवान्भवति। तद्भह्मणः परिमर इत्युंपासीत। पर्येणं म्रियन्ते द्विषन्तः सपत्नाः। परि येंऽप्रियां भ्रातृव्याः। स यश्चांयं पुरुषे। यश्चासांवादित्ये। स एकः। स यं एवंवित्। अस्माल्लोकात्प्रेत्य। एतमन्नमयमात्मानमुपंसङ्कम्य।

प्राणमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतं मनोमयमात्मानमुपं-सङ्कम्य। एतं विज्ञानमयमात्मानमुपंसङ्कम्य। एतमानन्दमय-मात्मानमुपंसङ्कम्य। इमाँ ल्लोकान्कामान्नी कामरूप्यंनु-स्थरन्। एतथ्साम गांयत्रास्ते। हा(३) वु हा(३) वु हा(३) वुं। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादो(२)ऽहमन्नादो(२)-ऽहमन्नादः। अहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृदहङ् श्लोककृत्। अहमस्मि प्रथमजा ऋता(३) स्य। पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य ना(३) भाइ। यो मा ददाति स इदेव मा(३) वाः। अहमन्नमन्नम्यन्तमा(३) द्यि। अहं विश्वं भुवंनमभ्यंभ्वाम्। सुवर्न ज्योतीः। य एवं वेदं। इत्यंपनिषंत्॥१०॥

सह नांववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥दशमः प्रश्नः — महानारायणोपनिषत्॥

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेजस्व नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

॥अम्भस्य पारे॥

अम्भेस्य पारे भुवंनस्य मध्ये नाकंस्य पृष्ठे मंहुतो महीयान्। शुक्रेण ज्योती १षि समनुप्रविष्टः प्रजापंतिश्चरित् गर्भे अन्तः॥ यस्मिन्निद्दः सं च विचैति सर्वं यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदः। तदेव भूतं तद् भव्यंमा इदं तदक्षरे पर्मे व्योमन्॥ येनांऽऽवृतं खं च दिवं महीं च येनांऽऽदित्यस्तपंति तेजंसा भ्राजंसा च। यमन्तः समुद्रे क्वयो वयंन्ति यद्क्षरे पर्मे प्रजाः॥ यतः प्रसूता जगतः प्रसूती तोयेन जीवान् व्यसंसर्ज् भूम्याम्। यदोषंधीभिः पुरुषान्प्शू श्च्य विवेश भूतानि चराचराणि॥ अतः परं नान्यदणीयसः हि परात्परं यन्महंतो महान्तम्॥ यदेकम्व्यक्तमनंन्तरूपं विश्वं पुराणं तमंसः परंस्तात्॥१॥

तदेवर्तं तदुं स्त्यमांहुस्तदेव ब्रह्मं पर्मं केवीनाम्। इष्टापूर्तं बंहुधा जातं जायंमानं विश्वं बिंभर्ति भुवंनस्य नाभिः॥ तदेवाग्निस्तद्वायुस्तथ्सूर्यस्तदुं चन्द्रमाः। तदेव शुक्रम्मृतं तद्वह्म तदापः स प्रजापंतिः॥ सर्वे निमेषा ज्ञिरे विद्युतः पुरुषादिधे। कुला मुंहूर्ताः काष्ठांश्वाहोरात्राश्चे सर्वशः॥ अर्धमासा मासां ऋतवेः संवथ्सरश्चे कल्पन्ताम्। स आपेः प्रदुघे उभे इमे अन्तरिक्षमथो सुवेः॥ नैनेमूर्ध्वं न तिर्यश्चं न मध्ये परिजग्रभत्। न तस्येशे कश्चन तस्ये नाम महद्यशः॥२॥

न स्न्हशे तिष्ठति रूपंमस्य न चक्षुंषा पश्यित कश्चनैनम्ं। ह्दा मंनीषा मनंसाऽभिकृष्तो य एनं विदुरमृंतास्ते भवन्ति॥ अद्भः सम्भूंतो हिरण्यग्भं इत्यृष्टौ॥ एष हि देवः प्रदिशोऽनु सर्वाः पूर्वो हि जातः स उ गर्भे अन्तः। स विजायंमानः स जिन्ष्यमाणः प्रत्यङ्गुः खाँस्तिष्ठति विश्वतोमुखः॥ विश्वतंश्वक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोहस्त उत विश्वतंस्पात्। सं बाहुभ्यां नर्मति सं पतंत्रैर्द्यावांपृथिवी जनयंन्देव एकः॥ वेनस्तत्पश्यन्विश्वा भुवनानि विद्वान् यत्र विश्वं भवत्येकंनीळम्। यस्मिन्निद सं च विचैक् स् स ओतः प्रोतंश्व विभुः प्रजासुं। प्र तद्वोचे अमृतं नु विद्वान्गंन्थ्वी नाम निहितं गृहांसु॥३॥

त्रीणि पदा निहिता गुहांसु यस्तद्वेदं सिवतुः पिताऽसंत्। स नो बन्धुंर्जिनिता स विधाता धामानि वेद भुवंनानि विश्वां। यत्रं देवा अमृतंमानशानास्तृतीये धामांन्यभ्यैरंयन्त। परि द्यावांपृथिवी यंन्ति सद्यः परि लोकान् परि दिशः परि सुवंः। ऋतस्य तन्तुं विततं विचृत्य तदंपश्यत्तदंभवत् प्रजासं। प्रीत्यं लोकान्प्रीत्यं भूतानिं प्रीत्य सर्वाः प्रदिशो दिशंश्च। प्रजापंतिः प्रथम्जा ऋतस्याऽऽत्मनाऽऽत्मानमभिसम्बंभूव। सदंसस्पित्मद्भंतं प्रियमिन्द्रंस्य काम्यम्। सिनं मेधामंयासिषम्। उद्दींप्यस्व जातवेदोऽपघ्नित्रर्र्ऋतिं ममं॥४॥

पुश्रृश्च मह्यमावंहु जीवंनं च दिशों दिश। मा नों हिश्सीज्ञातवेदो गामश्वं पुरुषं जगंत्। अविंभ्रदग्न आगंहि श्रिया मा परिपातय।

॥ गायत्रीमन्त्राः॥

पुरुषस्य विद्य सहस्राक्षस्यं महादेवस्यं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें वक्रतुण्डायं धीमहि। तन्नों दन्तिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुषाय विद्यहें चक्रतुण्डायं धीमहि॥५॥

तन्नों नन्दिः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें महासेनायं धीमिह। तन्नेः षण्मुखः प्रचोदयाँत्। तत्पुरुंषाय विद्यहें सुवर्णपक्षायं धीमिह। तन्नों गरुडः प्रचोदयाँत्। वेदात्मनायं विद्यहें हिरण्यगर्भायं धीमिह। तन्नौं ब्रह्मं प्रचोदयाँत्। नारायणायं विद्यहें वासुदेवायं धीमिह। तन्नों विष्णुः प्रचोदयाँत्। वृज्जनुखायं विद्यहें तीक्ष्णदुङ्ष्ट्रायं धीमिह॥६॥

तन्नों नारसि॰हः प्रचोदयाँत्। भास्करायं विद्महें महद्युतिकरायं धीमहि। तन्नों आदित्यः प्रचोदयाँत्। वैश्वानरायं विद्महें लालीलायं धीमहि। तन्नों अग्निः प्रचोदयाँत्। कात्यायनायं विद्महें कन्यकुमारिं धीमहि। तन्नों दुर्गिः प्रचोदयाँत्।

॥ दूर्वासूक्तम्॥

सहस्रपरंमा देवी शतमूंला शताङ्कुरा। सर्वर् हरतुं मे पापं दूर्वा दुःस्वप्ननाशनी। काण्डांत्काण्डात् प्ररोहंन्ती पर्रुषः परुषः परि॥७॥

पुवानों दूर्वे प्रतंनु सहस्रंण श्तेनं च। या श्तेनं प्रत्नोषिं सहस्रंण विरोहंसि। तस्यांस्ते देवीष्टके विधेमं ह्विषां व्यम्। अश्वंक्रान्ते रंथक्रान्ते विष्णुक्रांन्ते वसुन्धंरा। शिरसां धारियष्यामि रक्षस्व मां पदे पदे।

॥ मृत्तिकासूक्तम्॥

भूमिर्धेनुर्धरणी लोकधारिणी। उद्धृतांऽसि वंराहेण कृष्णेन शंतबाहुना। मृत्तिके हनं मे पापं यन्मया दुंष्कृतं कृतम्। मृत्तिके ब्रह्मदत्ताऽसि काश्यपेनाभिमत्रिता। मृत्तिके देहिं मे पुष्टिं त्विय संवं प्रतिष्ठितम्॥८॥

मृत्तिकै प्रतिष्ठिते सुर्वं तुन्मे निर्णुद् मृत्तिके। तयां हुतेनं पापेन गुच्छामि पंरमां गतिम्।

॥ रात्रुजयमन्त्राः ॥

यतं इन्द्र भयांमहे ततों नो अभयं कृषि। मघंवन्छ्गि तव् तन्नं ऊतये विद्विषो विमृधों जिहि। स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अभयङ्करः। स्वस्ति न इन्द्रों वृद्धश्रंवाः स्वस्ति नंः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्ति नस्ताक्ष्यों अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृह्स्पतिर्दधातु। आपान्तमन्युस्तृपलेप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छ्ररुमा स्रजीषी। सोमो विश्वान्यत्सावनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानिदेभुः॥९॥

ब्रह्मंजज्ञानं प्रंथमं पुरस्ताद्विसीमृतः सुरुचो वेन आंवः। सबुध्नियां उपमा अस्य विष्ठाः सृतश्च योनिमसंतश्च विवेः। स्योना पृंथिवि भवांऽनृक्षरा निवेशंनी। यच्छांनः शर्म सप्रथाः। गृन्यद्वारां दुराधर्षां नित्यपृष्टां करीषिणीम्। ईश्वरी स्यम्यतानां तामिहोपंह्वये श्रियम्। श्रीमें भृजतु। अलक्ष्मीमें नृश्यतु। विष्णृमुखा वे देवाश्छन्दोभिरिमाँ श्लोकानंनप-ज्ययम्भ्यंजयन्। मृहा इन्द्रो वज्रबाहुः षोड्शी शर्म यच्छतु॥१०॥

स्वस्ति नों मुघवां करोतु हन्तुं पाप्मानं योंऽस्मान् द्वेष्टिं। सोमान् स्वरंणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते। कुक्षीवन्तं य औशिजम्। शरीरं यज्ञशम्लं कुसीदं तस्मिन्थ्सीदतु योंऽस्मान् द्वेष्टिं। चरंणं पुवित्रं वितंतं पुराणं येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूता अतिं पाप्मान्मरांतिं तरेम। स्जोषां इन्द्र सर्गणो म्रुद्धिः सोमं पिब वृत्रहञ्छूर विद्वान्। ज्रिह शत्रू रप् मृधो नुद्स्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः। सुमित्रा न आप् ओषंधयः सन्तु दुर्मित्रास्तस्में भूयासुर्यों ऽस्मान् द्वेष्ट्रि यं चं व्यं द्विष्मः। आप्रो हि ष्ठा मंयो भुवस्ता नं ऊर्जे दंधातन॥११॥

महेरणांय चक्षंसे। यो वंः शिवतंमो रसस्तस्यं भाजयतेह नंः। उशतीरिव मातरंः। तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयांय जिन्वंथ। आपों जनयंथा च नः।

॥ अघमर्षणसूक्तम्॥

हिरंण्यशृङ्गं वर्रणं प्रपंद्ये तीर्थं में देहि याचितः। यन्मयां भुक्तम्साधूनां पापेभ्यश्च प्रतिग्रंहः। यन्मे मनसा वाचा कर्मणा वा दुष्कृतं कृतम्। तन्न इन्द्रो वर्रुणो बृह्स्पितः सिवता चं पुनन्तु पुनः पुनः। नमोऽग्नयेंऽफ्सुमते नम् इन्द्रांय नमो वर्रुणाय नमो वारुण्यें नमोऽन्न्यः॥१२॥

यद्पां ऋूरं यदेमेध्यं यदेशान्तं तदपेगच्छतात्। अत्याशनादेतीपानाद्यच उग्रात् प्रंतिग्रहाँत्। तन्नो वर्रणो राजा पाणिनां ह्यवमर्शतु। सोऽहमपापो विरजो निर्मुक्तो मुक्तिकिल्बिषः। नाकस्य पृष्ठमारुह्य गच्छेद्वह्मंसलोकताम्। यश्चापसु वर्रणः स पुनात्वघमर्षणः। इमं में गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुंद्रि स्तोम र् सचता परुष्णिया। असिक्रिया मंरुद्वृधे वितस्त्याऽऽर्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ऋतं चं सत्यं चाभीं द्वात्तप्सोऽध्यं जायत। ततो रात्रिरजायत् ततः समुद्रो अर्णवः॥१३॥

समुद्रादेर्ण्वादिधं संवथ्सरो अंजायत। अहोरात्राणि विद्धिक्षंस्य मिष्तो वृशी। सूर्याचन्द्रमसौ धाता यंथापूर्वमंकत्पयत्। दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो सुवं। यत्पृथिव्याः रजः स्वमान्तरिक्षे विरोदंसी। इमाः स्तदापो वंरुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। पुनन्तु वसंवः पुनातु वर्रुणः पुनात्वंघमर्षणः। एष भूतस्यं मध्ये भुवंनस्य गोप्ता। एष पुण्यकृतां लोकानेष मृत्योर्हिर्ण्मयम्। द्यावांपृथिव्योर्हिर्ण्मयः सङ्श्रितः सुवंः॥१४॥

स नः सुवः स॰ शिंशाधि। आर्द्रं ज्वलंति ज्योतिंर्हमंस्मि। ज्योतिर्ज्वलंति ब्रह्माहमंस्मि। योऽहमंस्मि ब्रह्माहमंस्मि। अहमंस्मि ब्रह्महमंस्मि। अहमेवाहं मां जुंहोिम् स्वाहाँ। अकार्यकार्यंवकीणीं स्तेनो भ्रूणहा गुंरुतल्पगः। वर्रुणोऽपामघमर्षणस्तस्मात्पापात् प्रमुंच्यते। रजो भूमिस्त्वमा॰ रोदंयस्व प्रवंदन्ति धीराः। आऋाँ-ध्समुद्रः प्रथमे विधमं जनयंन्प्रजा भुवंनस्य राजाः। वृषां प्रवित्रे अधि सानो अव्ये बृहध्सोमो वावृधे सुवान इन्दुः॥१५॥

॥दुर्गासूक्तम्॥

जातवेदसे सुनवाम सोमंमरातीयतो निजंहाति वेदः। स नंः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वां नावेव सिन्धं दुरिताऽत्यग्निः। तामुग्निवंणां तपंसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफुलेषु जुष्टाम्। दुर्गां देवी र शरणमहं प्रपद्ये सुतर्रसि तरसे नर्मः। अग्ने त्वं पारया नव्यों अस्मान्थ्स्वस्तिभिरतिं दुर्गाणि विश्वां। पूर्श्व पृथ्वी बहुला नं उर्वी भवां तोकाय तनयाय शं योः। विश्वानि नो दुर्गहां जातवेदः सिन्धुं न नावा दुरितातिं पर्षि। अग्ने अत्रिवन्मनंसा गृणानों ऽस्माकं बोध्यविता तनूनांम्। पृतनाजित । सहंमानमग्निमुग्र । हुंवेम परमाथ्सधस्थांत्। स नः पर्षदितं दुर्गाणि विश्वा क्षामंद्देवो अति दुरिताऽत्यग्निः। प्रत्नोषिं कमीड्यों अध्वरेषुं सनाच होता नव्यंश्च सिंग्सं। स्वाश्चौग्ने तनुवं पिप्रयंस्वास्मभ्यं च सौभंगमायंजस्व। गोभिर्जुष्टंमयुँजो निषिंक्तं तवेंन्द्र विष्णोरनुसश्चरेम। नाकस्य पृष्ठमिभ संवसानो वैष्णवीं लोक इह मदियन्ताम्॥१६॥

[२]

॥ व्याहृतिहोमन्त्राः॥

भूरत्रम् ग्रये पृथिव्यै स्वाहा भुवोऽत्त्रं वायवेऽन्तरिक्षाय् स्वाहा सुव्रत्नमादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुव्रत्त्रं चन्द्रमसे दिग्भ्यः स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः

सुवरन्नमोम्॥१७॥

3

भूरग्रये पृथिव्यै स्वाहा भुवो वायवेऽन्तरिक्षाय स्वाहा सुवंरादित्यायं दिवे स्वाहा भूर्भुवः सुवश्चन्द्रमंसे दिग्भ्यः स्वाहा नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवरग्न ओम्॥१८॥

−[૪]

भूरग्रयें च पृथिव्यै चं मह्ते च स्वाहा भुवों वायवें चान्तरिक्षाय च मह्ते च स्वाहा सुवंरादित्यायं च दिवे चं मह्ते च स्वाहा भूर्भुवः सुवश्चन्द्रमंसे च नक्षंत्रेभ्यश्च दिग्भ्यश्चं मह्ते च स्वाहा नमों देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवर्महरोम्॥१९॥

-[५]

॥ ज्ञानप्राप्त्यर्थहोममन्त्राः॥

पाहि नो अग्न एनंसे स्वाहा। पाहि नो विश्ववेदंसे स्वाहा। यज्ञं पाहि विभावंसो स्वाहा। सर्वं पाहि शतर्ऋतो स्वाहा॥२०॥

-[દ્

पाहि नो अग्न एकंया। पाह्यंत द्वितीयंया। पाह्यूर्जं तृतीयंया। पाहि गीर्भिश्चं तुसृभिवसो स्वाहां॥२१॥

「゜]•

॥वेदविस्मरणाय जपमन्त्राः॥

यश्छन्दंसामृष्भो विश्वरूपश्छन्दौभ्यश्छन्दा ईस्याविवेशं। सता १ शिक्यः पुरोवाचोपिन्षिदिन्द्रौ ज्येष्ठ इन्द्रियाय ऋषिभ्यो नमो देवेभ्यः स्वधा पितृभ्यो भूर्भुवः सुवृश्छन्द ओम्॥२२॥

-[ሪ]

नमो ब्रह्मणे धारणं मे अस्त्वनिराकरणं धारयिता भूयासं कर्णयोः श्रुतं मा च्यौंबुं ममामुष्य ओम्॥२३॥

[8]

॥तपः प्रशंसा॥

ऋतं तर्पः सृत्यं तर्पः श्रुतं तर्पः शान्तं तपो दम्स्तपः शम्स्तपो दानं तपो यज्ञं तपो भूर्भुवः सुवुर्ब्रह्मैतदुपौस्यैतत्तर्पः॥२४॥

[68]

॥विहिताचरणप्रशंसा निषिद्धाचरणनिन्दा च॥

यथां वृक्षस्यं सम्पुष्पितस्य दूराद्गन्धो वाँत्येवं पुण्यंस्य कर्मणों दूराद्गन्धो वांति यथांऽसिधारां कर्तेऽवंहितामवृक्तामे यद्युवे युवे ह वां विह्वयिंष्यामि कर्तं पंतिष्यामीत्येवमृनृतांदात्मानं जुगुफ्सेंत्॥२५॥

[88]

॥ दहरविद्या ॥

अणोरणीयान्महृतो महीयानात्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः। तमंक्रतुं पश्यित वीतशोको धातुः प्रसादाँन्महिमानं-मीशम्। सप्त प्राणाः प्रभवंन्ति तस्माँथ्सप्तार्चिषः समिधः सप्त जिह्वाः। सप्त इमे लोका येषु चरंन्ति प्राणा गुहाशंयां निहिताः सप्त सप्त। अतः समुद्रा गिरयंश्च सर्वेऽस्माथ्स्यन्दंन्ते सिन्धंवः सर्वंरूपाः। अतंश्च विश्वा ओषंधयो रसाँच येनैष भूतस्तिष्ठत्यन्तरात्मा। ब्रह्मा देवानां पद्वीः केवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृप्राणाः स्वधितिर्वनानाः सोमः पवित्रमत्येति रेभन्। अजामेकां लोहितशुक्ककृष्णां बह्वीं प्रजां जनयंन्तीः सर्रूपाम्। अजो ह्येको जुषमांणोऽनुशेते जहाँत्येनां भूक्तभौगामजौँऽन्यः॥२६॥

ह्रसः श्रुंचिषद्वसुंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोणसत्।
नृषद्वरसदंतसद्धोमसद्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं
बृहत्। घृतं मिमिक्षिरे घृतमस्य योनिधृते श्रितो घृतम्वस्य
धामं। अनुष्वधमावंह मादयंस्व स्वाहांकृतं वृषभ
विक्षे ह्व्यम्। समुद्रादूर्मिर्मधुंमार् उदारदुपार्शुना
सममृत्त्वमानट्। घृतस्य नाम् गृह्यं यदस्तिं जिह्ना
देवानांममृतंस्य नाभिः। वयं नाम् प्रब्रंवामा घृतेनास्मिन्
यज्ञे धारयामा नमोभिः। उपं ब्रह्मा शृंणवच्छ्रस्यमानं चतुंः

-[१२]

शृङ्गोऽवमीद्गौर एतत्। चृत्वारि शृङ्गा त्रयों अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्त हस्तांसो अस्य। त्रिधां बृद्धो वृष्भो रोरवीति महो देवो मर्त्याप् आविवेश॥२७॥

त्रिधां हितं पणिभिंगुंह्यमानं गविं देवासों घृतमन्वंविन्दन्। इन्द्र एक सूर्य एकं जजान वेनादेक सव्धया निष्टंतक्षुः। यो देवानां प्रथमं पुरस्ताद्विश्वाधियों रुद्रो महर्षिः। हिरण्यगर्भं पंश्यत जार्यमानः स देवः शुभया स्मृत्या संयुनक्तु। यस्मात्परं नापर्मस्त किञ्चिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायों ऽस्ति कश्चित्। वृक्ष इंव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेणु सर्वम्। न कर्मणा न प्रजया धर्नेन त्यार्गेनैके अमृतत्वमानशुः। परेण नाकं निहितं गुहांयां विभाजते यद्यतंयो विशन्ति। वेदान्तविज्ञानसुनिश्चितार्थाः सन्त्र्यांसयोगाद्यतंयः शुद्धसत्त्वाः। ते ब्रह्मलोके तु परौन्तकाले परोमृतात्परिमुच्यन्ति सर्वै। दहं विपापं परमें श्मभूतं यत्पुंण्डरीकं पुरमध्यस इस्थम्। तुत्रापि दहं गुगर्नं विशोकस्तस्मिन् यदन्तस्तदुपंसितव्यम्। यो वेदादौ स्वंरः प्रोक्तो वेदान्ते च प्रतिष्ठितः। तस्यं प्रकृतिंलीनस्य यः परंः स महेश्वंरः॥२८॥

॥ नारायणसूक्तम्॥

सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंम्भुवम्। विश्वं नारायणं देवमृक्षरं पर्मं प्दम्। विश्वतः परंमान्नित्यं विश्वं नारायणः हिरम्। विश्वमेवदं पुरुषस्तद्विश्वमुपंजीवति। पतिं विश्वंस्याऽऽत्मेश्वंर् शाश्वंतः शिवमंच्युतम्। नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मांनं परायणम्। नारायणपंरो ज्योतिरात्मा नारायणः परः। नारायण परं ब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः। नारायण परः। नारायणः परः। यचं किश्विज्ञंगथ्स्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा॥ अन्तंर्बृह्मं तथ्स्वं व्याप्य नारायणः स्थितः॥२९॥

अनंन्तमव्यंयं कृविः संमुद्रेऽन्तं विश्वशंम्भुवम्। पद्मकोश प्रंतीकाशः हृदयं चाप्यधोमंखम्। अधो निष्ठा वितस्त्यान्ते नाभ्यामंपिर् तिष्ठंति। ज्वालमालाकुंलं भाती विश्वस्यांऽऽयत्नं मंहत्। सन्तंतः शिलाभिंस्तु-लम्बंत्याकोश्सित्रंभम्। तस्यान्तं सृषिरः सृक्ष्मं तिस्मिन्थ्यवं प्रतिष्ठितम्। तस्य मध्ये महानंग्निर्विश्वाचिंविश्वतांमुखः। सोऽग्रंभुग्विभंजन्तिष्ठन्नाहांरमज्रः कृविः। तिर्यगूर्ध्वमंधः शायी र्श्मयंस्तस्य सन्तंता। सन्तापयंति स्वं देहमापादतल्मस्तंकः। तस्य मध्ये विहेशिखा अणीयौध्वा व्यवस्थितः। नीलतांयदंमध्यस्थाद्विद्युष्ठंखेव भास्वरा। नीवार्शूकंवत्तन्वी पीता भास्वत्यणूपंमा। तस्याः शिखाया मध्ये प्रमात्मा

व्यवस्थितः। स ब्रह्म स शिवः स हिरः सेन्द्रः सोऽक्षरः परमः स्वराट्॥३०॥

नारायणः स्थितो व्यवस्थितश्चत्वारि च॥

-[१३]

॥ आदित्यमण्डले परब्रह्मोपासनम्॥

आदित्यो वा एष एतन्मण्डलं तपंति तत्र ता ऋचस्तद्दचा मंण्डल्र॰ स ऋचां लोकोऽथ् य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिर्दीप्यते तानि सामानि स साम्नां मण्डल्र॰ स साम्नां लोकोऽथ् य एष एतस्मिन्मण्डलेऽर्चिषि पुरुषस्तानि यजू॰षि स यजुषा मण्डल्र॰ स यजुषां लोकः सेषा त्र्य्येवं विद्या तपिति य एषोंऽन्तरांदित्ये हिर्ण्मयः पुरुषः॥३१॥

-[88]

॥ आदित्यपुरुषस्य सर्वात्मकत्वप्रदर्शनम्॥

आदित्यो वै तेज ओजो बलं यश्श्वक्षुः श्रोत्रंमात्मा मनों मन्युर्मनुंर्मृत्युः सत्यो मित्रो वायुरांकाशः प्राणो लोंकपालः कः किं कं तथ्सत्यमन्नंममृतों जीवो विश्वः कत्मः स्वयम्भु ब्रह्मैतदमृत एष पुरुष एष भूतानामिधंपित्र्व्रह्मणः सायुंज्य सलोकतांमाप्रोत्येतासांमेव देवतांना सायुंज्य समानलोकतांमाप्रोति य एवं वेदैंत्युपनिषत्॥ ३२॥

[१५]

॥ शिवोपासनमन्त्राः॥

निधंनपतये नमः। निधंनपतान्तिकाय नमः। ऊर्ध्वायं नमः। ऊर्ध्वलिङ्गायं नमः। हिरण्यलिङ्गायं नमः। हिरण्यलिङ्गायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्यायं नमः। दिव्याव्यं नमः। दिव्याव्यं नमः। दिव्याव्यं नमः। प्रविलङ्गायं नमः। भवाव्यं नमः। भविलङ्गायं नमः। श्राविलङ्गायं नमः। श्राविलङ्गायं नमः। श्राविलङ्गायं नमः। श्राविलङ्गायं नमः। ज्वलायं नमः। ज्वललिङ्गायं नमः। आत्मायं नमः। आत्मायं नमः। अत्मायं नमः। परमलिङ्गायं नमः। एतथ्सोमस्यं सूर्यस्यं सर्वलिङ्गः स्थाप्यति पाणिमन्नं पवित्रम्॥३३॥

-[१६]

॥ पश्चिमवऋ-प्रतिपाद्क-मन्त्रः॥

सुद्योजातं प्रंपद्यामि सुद्योजाताय वै नमो नर्मः। भवे भवे नाति भवे भवस्व माम्। भवोद्भवाय नर्मः॥३४॥

-[१७]

॥ उत्तरवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

वामदेवाय नमों ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमों रुद्राय नमः कालाय नमः कलंविकरणाय नमो बलंविकरणाय नमो बलाय नमो बलंप्रमथनाय नमः सर्वभूतदमनाय नमो मनोन्मनाय नमः॥३५॥

---[१८]

॥ दक्षिणवऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

अघोरैंभ्योऽथ घोरैंभ्यो घोरघोरंतरेभ्यः। सर्वैभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः॥३६॥

-[१९]

॥ प्राग्वऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

तत्पुरुंषाय विदाहें महादेवायं धीमहि। तन्नों रुद्रः प्रचोदयात्॥३७॥

-[२०]

॥ ऊर्ध्ववऋ-प्रतिपादक-मन्त्रः॥

ईशानः सर्वविद्यानामीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणो-ऽधिपतिर्ब्रह्मां शिवो में अस्तु सदाशिवोम्॥३८॥

-[२१]

॥ नमस्कारमन्त्राः॥

नमो हिरण्यबाहवे हिरण्यवर्णाय हिरण्यरूपाय हिरण्यपतयेऽम्बिकापतय उमापतये पशुपतये नमो नमः॥३९॥

[२२]

ऋत र सत्यं पेरं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिङ्गलम्। ऊर्ध्वरेतं

विंरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः॥४०॥

-[२३]

सर्वो वै रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु। पुरुषो वै रुद्रः सन्महो नमो नमः। विश्वं भूतं भुवंनं चित्रं बहुधा जातं जायमानं च यत्। सर्वो ह्येष रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु॥४१॥

-[२४]

कद्रुद्राय प्रचेतसे मीढुष्टंमाय तव्यंसे। वो चेम शन्तंम १ हृदे। सर्वो ह्यंष रुद्रस्तस्मैं रुद्राय नमों अस्तु॥४२॥

-[२५]

॥ अग्निहोत्रहवण्याः उपयुक्तस्य वृक्षविशेषस्याभिधानम्॥

यस्य वैकंङ्कत्यग्निहोत्रहवंणी भवति प्रत्येवास्याहुंतय-स्तिष्ठन्त्यथो प्रतिष्ठित्यै॥४३॥

———[२६]

कृणुष्व पाज् इति पश्चं॥४४॥

-[२७]

॥ भूदेवताकमन्त्रः॥

अदितिर्देवा गंन्ध्रवा मंनुष्याः पितरोऽसुंरास्तेषाः सर्वभूतानां माता मेदिनी महता मही सांवित्री गांयत्री जगंत्युर्वी पृथ्वी बंहुला विश्वां भूता कंतुमा का या सा

स्त्येत्यमृतेति वसिष्ठः॥४५॥

-[२८]

॥सर्वदेवता आपः॥

आपो वा इदः सर्वं विश्वां भूतान्यापः प्राणा वा आपः पृशव आपोऽन्नमापोऽमृतमापः सम्राडापो विराडापः स्वराडापृश्छन्दाः स्यापो ज्योतीः ध्यापो यजूः ध्यापेः सत्यमापः सर्वा देवता आपो भूर्भुवः सुवराप ओम्॥४६॥

-[२९]

॥सन्ध्यावन्दनमन्त्राः॥

आपंः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातु माम्। पुनन्तु ब्रह्मण्स्पति ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्ट्रमभौज्यं यद्वी दुश्चिरतं ममं। सर्वं पुनन्तु मामापोऽस्तां चे प्रतिग्रह्ड् स्वाहां॥४७॥

-[३०]

अग्निश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यदह्रा पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्मामुदरेण शिश्ञा। अहस्तदंवलुम्पत्। यत्किं चं दुरितं मिये। इदमहं माममृतयोनौ। सत्ये ज्योतिषि जुहोंिम स्वाहा॥४८॥

-[38]

सूर्यश्च मा मन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युंकृतेभ्यः। पापेभ्यों रक्षन्ताम्। यद्रात्रिया पापंमकारिषम्। मनसा वाचां हस्ताभ्याम्। पद्भामुदरेण शि्षञा। रात्रिस्तदंवलुम्पतु। यत्किं चं दुरितं मियं। इदमहं माममृंतयोनौ। सूर्ये ज्योतिषि जुहोंमि स्वाहा॥४९॥

-[३२]

॥प्रणवस्य ऋष्यादिविवरणम्॥

ओमित्येकाक्षेरं ब्रह्म। अग्निर्देवता ब्रह्मं इत्यार्षम्। गायत्रं छन्दं परमात्मं सरूपम्। सायुज्यं विनियोगम्॥५०॥

-[३३]

॥ गायत्र्यावाहनमन्त्राः॥

आयांतु वरंदा देवी अक्षरं ब्रह्मसम्मितम्। गायत्रीं छन्दंसां मातेदं ब्रह्म जुषस्वं मे। यदह्रौत्कुरुते पापं तदह्रौत्प्रतिमुच्यंते। यद्रात्रियौत्कुरुते पापं तद्रात्रियौत्प्रतिमुच्यंते। सर्वं वर्णे मंहादेवि सन्ध्याविंद्ये स्रस्वंति॥५१॥

∙[३४]

ओजोंऽसि सहोंऽसि बलंमसि भ्राजोंऽसि देवानां धाम् नामांसि विश्वंमसि विश्वायुः सर्वमिस सर्वायुरिभभूरों गायत्रीमावांहयामि सावित्रीमावांहयामि सरस्वतीमावांह-यामि छन्दऋषीनावांहयामि श्रियमावांहयामि गायत्रिया गायत्रीच्छन्दो विश्वामित्र ऋषिः सविता देवताऽग्निर्मुखं ब्रह्मा शिरो विष्णुर्हृदय रुद्धः शिखा पृथिवी योनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना सप्राणा श्वेतवर्णा साङ्क्ष्यायनसगोत्रा गायत्री चतुर्वि शत्यक्षरा त्रिपदां षद्भुक्षिः पश्चशीर्षोपनयने विनियोग ओं भूः। ओं भुवः। ओर सुवः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओर सृत्यम्। ओं तथ्मंवितुर्वरेंण्यं भर्गो देवस्यं धीमहि। धियो यो नंः प्रचोदयात्। ओमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५२॥

-[३५]

॥ गायत्री उपस्थानमन्त्राः॥

उत्तमें शिखंरे जाते भूम्यां पर्वतमूर्धनि। ब्राह्मणैभ्योऽभ्यंनु-ज्ञाता गुच्छ देवि यथासुंखम्। स्तुतो मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ती पवनै द्विजाता। आयुः पृथिव्यां द्रविणं ब्रेह्मवर्चसं मह्यं दत्वा प्रजातुं ब्रेह्मलोकम्॥५३॥

-[३६]

॥ आदित्यदेवतामन्त्रः॥

घृणिः सूर्यं आदित्यो न प्रभां वात्यक्षंरम्। मधुं क्षरन्ति तद्रंसम्। सत्यं वै तद्रसमापो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्॥५४॥

[*७*६]-

॥ त्रिसुपर्णमन्त्राः ॥

ब्रह्मंमेतु माम्। मधुंमेतु माम्। ब्रह्मंमेव मधुंमेतु माम्। यास्ते सोम प्रजावृथ्सोभि सो अहम्। दुःस्वंप्रहन्दुंरुष्यह। यास्ते सोम प्राणाः स्तां जुंहोमि। त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। ब्रह्महृत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५५॥

[३८]

ब्रह्मं मेधयाँ। मधुं मेधयाँ। ब्रह्मंमेव मधुं मेधयाँ। अद्या नों देव सिवतः प्रजावंथ्सावीः सौभंगम्। परां दुःष्विप्तंय स्वाविश्वांनि देव सिवतर्दुरितानि परां सुव। यद्भद्रं तन्म आसुंव। मधु वातां ऋतायते मधुं क्षरन्ति सिन्धंवः। माधीर्नः सन्त्वोषंधीः। मधु नक्तंमुतोषिस् मधुंमृत्पार्थिव रज्ञंः। मधु द्यौरंस्तु नः पिता। मधुंमान्नो वनस्पित्मधुंमा अस्तु सूर्यः। मध्वीर्गावो भवन्तु नः। य इमं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। भ्रूणहृत्यां वा एते प्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रिसुंपर्णं पठन्ति। ते सोमं प्राप्नुवन्ति। आसहस्रात्पिङ्कं पुनन्ति। ओम्॥५६॥

[३९]

ब्रह्मं मेधवाँ। मधुं मेधवाँ। ब्रह्ममेव मधुं मेधवाँ। ब्रह्मा देवानां पद्वीः कंवीनामृषिर्विप्रांणां महिषो मृगाणांम्। श्येनो गृध्राणा् स्वधितिर्वनांना् सोमंः प्वित्रमत्येति रेभन्। हु सः श्रुंचिषद्वस्तुंरन्तिरक्षसद्धोतां वेदिषदितिथिर्दुरोण्सत्। नृषद्वंरसद्देत्सद्धोम्सद्बा गोजा ऋत्जा अद्भिजा ऋतं बृहत्। ऋचे त्वां रुचे त्वा सिमथ्यंवन्ति स्रितो न धेनाः। अन्तर्हृदा मनसा पूयमांनाः। घृतस्य धारां अभिचांकशीमि। हिर्ण्ययो वेत्सो मध्यं आसाम्। तस्मिन्ध्रमुप्णो मंधुकृत्कुंलायी भजंन्नास्ते मधुंदेवतांभ्यः। तस्यांसते हर्रयः सप्ततीरं स्वधां दुहांना अमृतंस्य धारांम्। य इदं त्रिसुंपर्णमयांचितं ब्राह्मणायं दद्यात्। वीर्हत्यां वा एते घ्रंन्ति। ये ब्राह्मणास्त्रस्तुंपर्णं पठंन्ति। ते सोमं प्राप्नुंवन्ति। आस्हस्रात्पङ्किं पुनंन्ति। ओम्॥५७॥

[80]

॥ मेधासूक्तम्॥

मेधा देवी जुषमांणा न आगाँ द्विश्वाची भूद्रा सुमन्स्यमाना। त्वया जुष्टां जुषमांणा दुरुक्तांन्बृहद्वंदेम विदथें सुवीराः॥ त्वया जुष्टं ऋषिर्भवति देवि त्वया ब्रह्मांऽऽगृतश्रीरुत त्वयां। त्वया जुष्टंश्चित्रं विन्दते वसु सा नों जुषस्व द्रविणो न मेधे॥५८॥

-[88]•

मेथां म् इन्द्रों ददातु मेथां देवी सरस्वती। मेथां में अश्विनांवुभावार्धत्तां पुष्कंरस्रजा। अफ्सरासुं च या मेथा गंन्ध्वेषुं च यन्मनंः। दैवीं मेधा सरंस्वती सा मां मेधा सुरभिर्जुषता्र् स्वाहां॥५९॥

[४२]

आ माँ मेधा सुरभिर्विश्वरूपा हिरंण्यवर्णा जगंती जगम्या। ऊर्जस्वती पर्यसा पिन्वंमाना सा माँ मेधा सुप्रतींका जुषन्ताम्॥६०॥

[૪૪]

मियं मेथां मियं प्रजां मय्यग्निस्तेजों दधातु मियं मेधां मियं प्रजां मयीन्द्रं इन्द्रियं दंधातु मियं मेधां मियं प्रजां मियं सूर्यो भ्राजों दधातु॥६१॥

[88]

॥ मृत्युनिवारणमन्त्राः॥

अपैतु मृत्युर्मृतंं न आगंन्वैवस्वतो नो अभंयं कृणोतु। पूर्णं वनस्पतेरिवाभिनः शीयता रियः स च तान्नः शचीपतिः॥६२॥

-[૪५]

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानांत्। चक्षुंष्मते शृण्वते तें ब्रवीमि मा नंः प्रजा॰ रीरिषो मोत वीरान्॥६३॥

-[४६]

वार्तं प्राणं मनंसाऽन्वा रंभामहे प्रजापंतिं यो भुवंनस्य गोपाः। स नों मृत्योस्त्रांयतां पात्वश्हंसो ज्योग्जीवा जरामंशीमहि॥६४॥

[とる]

अमुत्र भूयादध् यद्यमस्य बृहंस्पते अभिशंस्तेरम्ंश्चः। प्रत्यौहतामिश्वनां मृत्युमंस्माद्देवानांमग्ने भिषजा शचींभिः॥६५॥

-[86]

हरि १ हरेन्तमनुंयन्ति देवा विश्वस्येशानं वृष्भं मंतीनाम्। ब्रह्म सरूपमनुंमेदमागादयनं मा विवंधीर्विक्रंमस्व॥६६॥

[88]

शल्कैर्ग्निमिन्धान उभौ लोकौ संनेम्हम्। उभयौर्लोकयोर्-ऋध्वाऽति मृत्युं तराम्यहम्॥६७॥

-[५०]

मा छिंदो मृत्यो मा वंधीमां मे बलं विवृही मा प्रमोंषीः। प्रजां मा में रीरिष आयुंरुग्र नृचक्षंसं त्वा हविषां विधेम॥६८॥

-[५१]

मा नों महान्तंमुत मा नों अर्भुकं मा न उक्षंन्तमुत मा नं उक्षितम्। मा नोंऽवधीः पितरं मोत मातरंं प्रिया मा

नंस्तुन्वों रुद्र रीरिषः॥६९॥

•[५२]

मा नंस्तोके तनंये मा न आयुंषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः। वीरान्मा नो रुद्र भामितोऽवंधीर्ह्विष्मंन्तो नर्मसा विधेम ते॥७०॥

·[५३]

॥ प्रजापतिप्रार्थनामन्त्रः॥

प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वां जातानि परिता बंभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नों अस्तु वयङ् स्याम् पर्तयो रयीणाम्॥७१॥

-[५४]

॥ इन्द्रप्रार्थनामन्त्रः॥

स्वस्तिदा विशस्पतिंवृत्रहा विमृधों वृशी। वृषेन्द्रंः पुर एंतु नः स्वस्तिदा अंभयङ्करः॥७२॥

•[*५*५]

॥ मृत्युञ्जयमन्त्राः ॥

त्र्यम्बकं यजामहे सुगृन्धिं पुष्टिवर्धनम्। उर्वारुकिमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्॥७३॥

-[५६]

ये ते सहस्रम्युतं पाशा मृत्यो मर्त्याय हन्तंवे। तान् युज्ञस्यं मायया सर्वानवं यजामहे॥७४॥

-[५७]

मृत्यवे स्वाहां मृत्यवे स्वाहां॥७५॥

-[५८]

॥पापनिवारक-मन्त्राः॥

देवकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। मृनुष्यंकृतस्यैनंसो-ऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। पितृकृंतस्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। आत्मकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-अन्यकृंत्स्यैनंसोऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। अस्मत्कृंत्स्यैनंसो-ऽवयजनंमिस् स्वाहाँ। यिद्वा च नक्तं चैनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्स्वपन्तंश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यथ्सुषुप्तंश्च जाग्रंतश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः सुश्चाविद्वाः सुश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। यिद्वद्वाः सुश्चाविद्वाः सुश्चेनंश्चकृम तस्यांवयजनमिस् स्वाहाँ। एनस एनसोऽवयजनमिस् स्वाहा॥७६॥

-[५९]

॥ वसुप्रार्थनामन्त्रः ॥

यद्वो देवाश्चकृम जिह्नयां गुरुमनंसो वा प्रयुंती देव हेर्डनम्। अरांवा यो नो अभि दुंच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन् स्वाहाँ॥७७॥

-[६०]

॥ कामोऽकार्षीत्-मन्युरकार्षीत् मन्त्रः॥

कामोऽकार्षीं त्रमो नमः। कामोऽकार्षीत्कामः करोति नाहं करोमि कामः कर्ता नाहं कर्ता कामः कार्यिता नाहं कारियता एष ते काम कामाय स्वाहा॥७८॥

-[६१]

मन्युरकार्षीं न्नमो नमः। मन्युरकार्षीन्मन्युः करोति नाहं करोमि मन्युः कर्ता नाहं कर्ता मन्युः कार्यिता नाहं कार्यिता एष ते मन्यो मन्यंवे स्वाहा॥७९॥

-[६२]

॥ विराजहोममन्त्राः॥

तिलाञ्जहोमि सरसा सिपष्टान् गन्धार मम चित्ते रमन्तु स्वाहा। गावो हिरण्यं धनमन्नपान सर्वेषा श्रिये स्वाहा। श्रियं च लक्ष्मीं च पृष्टिं च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रजाः सन्दर्दातु स्वाहा॥८०॥

-[६३]

तिलाः कृष्णास्तिलाः श्वेतास्तिलाः सौम्या वंशानुगाः। तिलाः पुनन्तुं मे पापं यत्किश्चिद्द्रितं मीये स्वाहा। चोर्स्यान्नं नेवश्राद्धं ब्रह्महा गुरुतल्पगः। गोस्तेय सुरापानं भ्रूणहत्या तिला शान्ति । शमयंन्तु स्वाहा। श्रीश्च लक्ष्मीश्च पृष्टीश्च कीर्तिं चानृण्यताम्। ब्रह्मण्यं बंहुपुत्रताम्। श्रद्धामेधे प्रज्ञा तु जातवेदः सन्दर्दातु स्वाहा॥८१॥

-[६४]

प्राणापानव्यानोदानसमाना में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। वाङ्गनश्चक्षःश्रोत्रजिह्वाघ्राणरेतो- बुद्धाकूतिःसङ्कल्पा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। त्वक्रममा स्मरुधिरमेदोमञ्जास्रायवो- उस्थीनि में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शिरःपाणिपादपार्श्वपृष्ठोरूदरजङ्गशिश्ञोपस्थपायवो में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहिताक्षि देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ॥ उत्तिष्ठ पुरुष हरित पिङ्गल लोहितािक्ष देहि देहि ददापियता में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ॥ ८२॥

[६५]

पृथिव्यापस्तेजोवायुराकाशा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। शब्दस्पर्शरूपरसगन्धा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। मनोवाक्कायकर्माणि में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारेज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अव्यक्तभावैरहङ्कारेज्योतिंर्हं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। आत्मा में शुद्धान्तां ज्योतिंर्हं

विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। अन्तरात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। परमात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास् स्वाहाँ। क्षुप्ते स्वाहाँ। क्षुत्पंपासाय स्वाहाँ। विविद्ये स्वाहाँ। ऋग्विधानाय स्वाहाँ। कृषोंत्काय स्वाहाँ। क्षुत्पंपासामेलं ज्येष्ठामुलक्ष्मीर्नाशयाम्यहम्। अभूतिमसंमृद्धिं च सर्वान्निर्णुद मे पाप्मान स्वाहा। अन्नमय-प्राणमय-मनोमय-विज्ञानमय-मानन्दमय-मात्मा में शुद्धान्तां ज्योतिरहं विरजां विपाप्मा भूयास स्वाहा॥८३॥

[६६]

॥ वैश्वदेवमन्त्राः॥

अग्नये स्वाहाँ। विश्वेंभ्यो देवेभ्यः स्वाहाँ। ध्रुवायं भूमाय स्वाहाँ। ध्रुवक्षितंये स्वाहाँ। अच्युतक्षितंये स्वाहाँ। अग्नयें स्विष्टकृते स्वाहाँ॥ धर्माय स्वाहाँ। अधर्माय स्वाहाँ। अज्ञ्रः स्वाहाँ। ओषधिवनस्पतिभ्यः स्वाहाँ॥८४॥

रक्षोदेवजनेभ्यः स्वाहाँ। गृह्याँभ्यः स्वाहाँ। अवसानैंभ्यः स्वाहाँ। अवसानंपितिभ्यः स्वाहाँ। सर्वभूतेभ्यः स्वाहाँ। कामाय स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ। यदेजित् जगिति यच् चेष्टिति नाम्नो भागोऽयं नाम्ने स्वाहाँ। पृथिव्यै स्वाहाँ। अन्तिरक्षाय स्वाहाँ॥८५॥

दिवे स्वाहाँ। सूर्याय स्वाहाँ। चन्द्रमंसे स्वाहाँ। नक्षंत्रेभ्यः स्वाहाँ। इन्द्रांय स्वाहाँ। बृह्स्पतंये स्वाहाँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। ब्रह्मणे स्वाहाँ। स्वधा पितृभ्यः स्वाहाँ। नमो रुद्रायं पशुपतंये स्वाहाँ॥८६॥

देवेभ्यः स्वाहाँ। पितृभ्यः स्वधाऽस्तुं। भूतेभ्यो नर्मः।
मनुष्यँभ्यो हन्ताँ। प्रजापंतये स्वाहाँ। प्रमेष्ठिने स्वाहाँ। यथा
कूपः शतधारः सहस्रंधारो अक्षितः। एवा मे अस्तु धान्यः
सहस्रंधारमक्षितम्। धनंधान्यै स्वाहाँ। ये भूताः प्रचरन्ति
दिवानक्तं बिलिमिच्छन्तों वितुदंस्य प्रेष्याः। तेभ्यो बिलि
पृष्टिकामो हरामि मयि पृष्टिं पृष्टिंपतिर्दधातु स्वाहाँ॥८७॥

[し3]

औं तद्घृह्म। ओं तद्घायुः। ओं तदात्मा। ओं तथ्मत्यम्। ओं तथ्सर्वम्। ओं तत्पुरोर्नमः॥ अन्तश्चरति भूतेषु गुहायां विश्वमूर्तिषु। त्वं यज्ञस्त्वं वषद्कारस्त्वमिन्द्रस्त्व रहस्त्वं विष्णुस्त्वं ब्रह्म त्वं प्रजापितः। त्वं तंदाप आपो ज्योती रसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवस्सुवरोम्॥८८॥

-[६८]

॥ प्राणाहुतिमन्त्राः॥

श्रृद्धायां प्राणे निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रृद्धायांमपाने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रृद्धायां व्याने निविष्टोऽमृतं जुहोमि। श्रद्धायांमुद्दाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। श्रद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। ब्रह्मणि म आत्माऽमृत्तत्वायं॥ अमृतोपस्तरंणमिस॥ श्रद्धायां प्राणे निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। प्राणाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमपाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। अपानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायां व्याने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। व्यानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायांमुद्दाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। उदानाय स्वाहाँ॥ श्रद्धायां समाने निर्विष्टोऽमृतंं जुहोमि। शिवो मां विशाप्रंदाहाय। समानाय स्वाहाँ॥ ब्रह्मणि म आत्माऽमृतत्वायं। अमृतापिधानमंसि॥८९॥

-[६९]

॥ भुक्तान्नाभिमन्त्रणमन्त्राः॥

श्रद्धायां प्राणे निर्विषयामृत हुतम्। प्राणमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां मपाने निर्विषयामृत हुतम्। अपानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां व्याने निर्विषयामृत हुतम्। व्यानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धायां मुदाने निर्विषयामृत हुतम। उदानमन्नेनाप्यायस्व। श्रद्धाया समाने निर्विषयामृत हुतम्। समानमन्नेनाप्या-यस्व॥९०॥

॥भोजनान्ते आत्मानुसन्धानमन्त्राः॥

अङ्गुष्ठमात्रः पुरुषोऽङ्गुष्ठं चं समाश्रितः। ईशः सर्वस्य जगतः प्रभुः प्रीणातिं विश्वभुक्॥॥९१॥

-[७१]

॥ अवयवस्वस्थता-प्रार्थनामन्त्रः॥

वाङ्कं आसन्। नसोः प्राणः। अक्ष्योश्वर्क्षुः। कर्णयोः श्रोत्रम्। बाहुवोर्बलम्। ऊरुवोरोजः। अरिष्टा विश्वान्यङ्गानि तुनूः। तुनुवां मे सह नमस्ते अस्तु मा मां हिश्सीः॥९२॥

-[७२]

॥ इन्द्रसप्तर्षि-संवादमन्त्रः॥

वयंः सुपूर्णा उपं सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधंमानाः। अपं ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुंम्रमुग्ध्यंस्मान्निधयेऽव बुद्धान्।

·[७३]

॥ हृदयालम्भनमन्त्रः॥

प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मां विशान्तकः। तेनान्नेनांप्या-यस्व॥९३॥

-[しょ]

॥ देवताप्राणनिरूपणमन्त्रः॥

नमो रुद्राय विष्णवे मृत्युंर्मे पाहि॥९४॥

·[७५]

॥ अग्निस्तुतिमन्त्रः॥

त्वमंग्रे द्युभिस्त्वमांशुशुक्षणिस्त्वमुद्धस्त्वमश्मंनस्परि। त्वं वनेभ्यस्त्वमोषंधीभ्यस्त्वं नृणां नृपते जायसे शुचिः॥९५॥

•[७६]

॥ अभीष्टयाचनामन्त्राः॥

शिवने मे सन्तिष्ठस्व स्योनेनं मे सन्तिष्ठस्व सुभूतेनं मे सन्तिष्ठस्व ब्रह्मवर्चसेनं मे सन्तिष्ठस्व यज्ञस्यर्धिमनु सन्तिष्ठस्वोपं ते यज्ञ नम् उपं ते नम् उपं ते नमः॥९६॥

[しゅ]

॥ परतत्त्व-निरूपणम्॥

सत्यं परं परं सत्यः सत्येन् न स्वांशिकाच्यंवन्ते कदाचन सताः हि सत्यं तस्मांथ्यत्ये रंमन्ते । तप् इति तपो नानशंनात्परं यिद्ध परं तपस्तद्दर्धर्षं तद्दरांधर्षं तस्मात्तपंसि रमन्ते । दम् इति नियंतं ब्रह्मचारिणस्तस्माद्दमें रमन्ते । शम् इत्यरंण्ये मुनयस्तस्माच्छमें रमन्ते । दानिमिति सर्वाणि भूतानि प्रशःसन्ति दानान्नाति दुष्करं तस्माद्दाने रंमन्ते । धर्म इति धर्मण सर्वमिदं परिगृहीतं धर्मान्नाति दुष्करं तस्माद्द्यमें रमन्ते । प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते तस्माद्द्यिष्ठाः प्रजांयन्ते रमन्तेऽग्नय । इत्याह्

तस्मांद्रग्रय आधांतव्या अग्निहोत्रमित्यांह् तस्मांदग्निहोत्रे रंमन्ते व्यज्ञ इति यज्ञो हि देवास्तस्मांद्यज्ञे रंमन्ते व्यज्ञा हि देवास्तस्मांद्यज्ञे रंमन्ते मान्समिति विद्वाश्सस्तस्मांद्विद्वाश्सं एव मान्से रंमन्ते न्यास इति ब्रह्मा ब्रह्मा हि परः परो हि ब्रह्मा तानि वा एतान्यवंराणि पराश्सि न्यास एवात्यंरेचयुद्य एवं वेदैत्युपनिषत्॥९७॥

[50]

॥ ज्ञानसाधन-निरूपणम्॥

प्राजापत्यो हार्रुणिः सुपर्णेयः प्रजापंतिं पितरमुपंससार किं भंगवन्तः पंरमं वंदन्तीति तस्मै प्रोवाच ॰ सत्येन वायुरावांति सत्येनांऽऽदित्यो रोचते दिवि सत्यं वाचः प्रतिष्ठा सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माध्सत्यं प्रमं वदन्ति । तप्सा देवा देवतामग्रं आयन्तपसर्षयः सुवरन्वंविन्दन् तपंसा सपत्नान् प्रणुंदामारांतीस्तपंसि सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मात्तपंः पर्मं वदंन्ति ॰ दमेन दान्ताः किल्बिषंमवधून्वन्ति दमेन ब्रह्मचारिणः सुवंरगच्छन्दमो भूतानाँ दुराधर्षं दमें सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माद्दमः परमं वदन्ति ॰ शमेन शान्ताः शिवमाचरंन्ति शमेन नाकं मुनयोऽन्वविंन्दञ्छमों भूतानां दुराधर्षञ्छमे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्माच्छमः परमं वदंन्ति 。 दानं यज्ञानां वर्रूथं दक्षिणा लोके दातार ई सर्वभूतान्युंपजीवन्तिं दानेनारांतीरपांनुदन्त दानेनं द्विषन्तो

मित्रा भवन्ति दाने सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्दानं परमं वदंन्ति ॰ धर्मो विश्वंस्य जगंतः प्रतिष्ठा लोके धर्मिष्ठं प्रजा उपसर्पन्ति धर्मेणं पापमंपनुदिति धर्मे सर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौद्धर्मं पेरमं वदेन्ति 🌣 प्रजनेनं वै प्रतिष्ठा लोके साधु प्रजायाँस्तन्तुं तन्वानः पितृणामनृणो भवंति तदेव तस्यानृणं तस्मौत् प्रजनेनं परमं वर्दन्त्यग्नयो वै त्रयीं विद्या 。 देवयानः पन्थां गार्हपत्य ऋक्पृंथिवी रथन्तरमन्वाहार्यपर्चनुं यर्जुरन्तरिक्षं वामदेव्यमाहवनीयः सामं सुवर्गो लोको बृहत्तस्मादग्नीन्पर्मं वदन्त्यग्निहोत्र सायं प्रातर्गृहाणां निष्कृतिः स्विष्टं सुहुतं यज्ञकतूनां प्रायण स्वार्गस्य लोकस्य ज्योतिस्तस्मादिग्निहोत्रं पंरमं वदन्ति ॰ यज्ञ इति यज्ञेन हि देवा दिवंं गृता युज्ञेनासुरानपानुदन्त युज्ञेनं द्विषुन्तो मित्रा भंवन्ति युज्ञे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्माँ द्यज्ञं पेरमं वदंन्ति ॰ मानसं वै प्रांजापत्यं पवित्रं मानसेन मनेसा साधु पंश्यति मानुसा ऋषयः प्रजा अंसृजन्त मानुसे सुर्वं प्रतिष्ठितं तस्मौन्मानुसं पेरमं वदेन्ति ॰ न्यास इत्याहुंर्मनीषिणों ब्रह्माणं ब्रह्मा विश्वः कतमः स्वंयम्भुः प्रजापितः संवथ्सर इति संवथ्सरोऽसावीदित्यो य एष आंदित्ये पुरुषः स पंरमेष्ठी ब्रह्मात्मा ॰ याभिंरादित्यस्तपंति रश्मिभिस्ताभिः पर्जन्यों वर्षित पर्जन्येनौषधिवनस्पतयः प्रजांयन्त ओषधिवनस्पतिभिरन्नं भवत्यन्नेन प्राणाः प्राणैर्बलं

बलेन तपस्तपंसा श्रद्धा श्रद्धयां मेधा मेधयां मनीषा मंनीषया मनो मनसा शान्तिः शान्त्यां चित्तं चित्तेन स्मृति इ स्मृत्या स्मार् स्मारेण विज्ञानं विज्ञानेनाऽऽत्मानं वेदयति तस्मादन्नं ददन्थ्सर्वाण्येतानि ददात्यन्नौत् प्राणा भवन्ति 。 भूतानां प्राणमनो मनस् विज्ञानं विज्ञानांदानन्दो ब्रह्मयोनिः स वा एष पुरुषः पश्चधा पश्चात्मा येन सर्विमिदं प्रोतं पृथिवी चान्तरिक्षं च द्यौश्च दिशंश्चावान्तरदिशाश्च स वै सर्विमिदं जगथ्म च भूत र स भव्यं जिज्ञासकूप्त ऋतजा रियंष्ठा ॰ श्रद्धा सत्यो महंस्वान्तपसो वरिष्ठाद्भात्वां तमेवं मनसा हदा च भूयों न मृत्युमुपंयाहि विद्वान्तस्मौन्यासमेषां तपंसामतिरिक्तमाहुंर्वसुरण्वों विभूरंसि प्राणे त्वमसिं सन्धाता 。 ब्रह्मन् त्वमिसं विश्वधृत्तं जोदास्त्वमंस्यग्निरंसि वर्चोदास्त्वमंसि सूर्यस्य द्युम्नोदास्त्वमंसि चन्द्रमंस उपयामगृंहीतोऽसि ब्रह्मणें त्वा ॰ महस ओमित्यात्मानं यु तते तहै महोपनिषदं देवानां गृह्यं य एवं वेदं ब्रह्मणों महिमानंमाप्नोति तस्माँद्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥ ९८॥

-[99]

॥ ज्ञानयज्ञः॥

तस्यैवं विदुषों यज्ञस्याऽऽत्मा यजंमानः श्रद्धा पत्नी शरीरमिध्ममुरो वेदिलीमानि ब्रहिर्वेदः शिखा हृदंयं यूपः काम् आज्यं मृन्युः पृशुस्तपोऽग्निर्दर्मः शमयिता दक्षिणा वाग्घोतां प्राण उद्गाता चक्षुंरध्वर्युर्मनो श्रोत्रमग्नीद्यावद्धियंते सा दीक्षा यदश्ञांति तद्धविर्यत्पिबंति तदंस्य सोमपानं यद्रमंते तद्ंपसदो यथ्सश्चरंत्युपविशंत्युत्तिष्ठंते च स प्रवग्यों यन्मुखं तदाहवनीयो या व्याहंतिराहुतिर्यदंस्य विज्ञानं तज्जुहोति यथ्सायं प्रातरंत्ति तथ्समिधं यत्प्रातर्मध्यं दिन सायं च तानि सर्वनानि ये अंहोरात्रे ते दंर्शपूर्णमासौ येंऽर्धमासाश्च मासाँश्च ते चांतुर्मास्यानि य ऋतवस्ते पंशुबन्धा ये संवथ्सराश्चं परिवथ्सराश्च तेऽहंगिणाः संववेदसं वा एतथ्सत्रं यन्मरंणं तदंवभृथं एतद्वे जंरामर्यमग्निहोत्र । सत्रं य एवं विद्वानुंदगयंने प्रमीयंते देवानांमेव मंहिमानं गत्वाऽऽदित्यस्य सायुंज्यं गच्छत्यथ ॰ यो दंक्षिणे प्रमीयंते पितृणामेव मंहिमानं गुत्वा चन्द्रमंसः सायुंज्य । सलोकतांमाप्रोत्येतौ वै सूर्याचन्द्रमसौर्मिहिमानौ ब्राह्मणो विद्वानभिजंयति तस्माँ द्वह्मणों महिमानं माप्नोति तस्माँ द्वह्मणों महिमानंमित्युपनिषत्॥ ९९॥

[くo]

ॐ सह नांववत्। सह नौं भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै। तेज्ञस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहैं। ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥



॥ कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीय-काठकम्॥

॥प्रथमः प्रश्नः॥

स्ंज्ञानं विज्ञानं प्रज्ञानं जानदंभिजानत्। सङ्कल्पंमानं प्रकल्पंमानमुप्कल्पंमानमुपंक्कृतं क्रुप्तम्। श्रेयो वसीय आयथसम्भूतं भूतम्। चित्रः केतुः प्रभानाभान्थसम्भान्। ज्योतिष्माङ्क्तेजस्वानातपङ्क्तपंत्रभितपन्। रोचनो रोचंमानः शोभनः शोभमानः कल्याणः। दर्शां दृष्टा दर्शता विश्वरूपा सुदर्शना। आप्यायंमाना प्यायंमाना प्यायं सूनृतेरां। आपूर्यमाणा पूर्यमाणा पूर्यन्ती पूर्णा पौर्णमासी। दाता प्रदाताऽऽनन्दो मोदः प्रमोदः॥१॥

आवेशयंत्रिवेशयंन्थ्संवर्शनः स॰शांन्तः शान्तः। आभवन्य्रभवन्थ्सम्भवन्थ्सम्भूतो भूतः। प्रस्तुतं विष्टुत् ॰ सङ्स्तुतं कृत्याणं विश्वरूपम्। शुक्रम्मृतं तेज्ञस्वि तेजः समिद्धम्। अरुणं भानुमन्मरीचिमदभितप्त्तपंस्वत्। स्विता प्रंसविता दीप्तो दीपयन्दीप्यंमानः। ज्वलंञ्चलिता तपंन्वितपंन्थ्सन्तपन्। रोचनो रोचंमानः शुम्भूः शुम्भंमानो वामः। सुता सुन्वती प्रसुता सूयमानाऽभिषूयमाणा। पीतीं प्रपा सम्पा तृप्तिंस्तुर्पयंन्ती॥२॥

कान्ता काम्या कामजाताऽऽयुंष्मती कामदुघाँ। अभिशास्ताऽनुंमन्ताऽऽनन्दो मोदंः प्रमोदः। आसादयंत्रिषा-दयंन्थ्सर्सादंनः सरसंत्रः सन्नः। आभूर्विभूः प्रभूः शम्भूर्भवंः। प्वित्रं पविययम्पूतो मेध्यंः। यशो यशंस्वानायुर्मृतः। जीवो जीविष्यन्थ्स्वर्गो लोकः। सहंस्वान्थ्सहीयानोजंस्वान्थ्सहंमानः। जयन्नभिजयंन्थ्सु-द्रविणो द्रविणोदाः। आर्द्रपंवित्रो हरिकेशो मोदः प्रमोदः॥३॥

अरुणोऽरुणरंजाः पुण्डरीको विश्वजिदंभिजित्। आर्द्रः पिन्वंमानोऽन्नंवान्नसंवानिरांवान्। सर्वोषधः संम्भरो महंस्वान्। एजत्का जोवत्काः। क्षुष्ठकाः शिपिविष्टकाः। सरिस्रराः सुशेरंवः। अजिरासो गमिष्णवंः। इदानीं तदानीमेतर्हि क्षिप्रमंजिरम्। आशुर्निमेषः फणो द्रवंन्नतिद्रवन्। त्वर्ङ्स्त्वरंमाण आशुराशीयाञ्चवः। अग्निष्टोम उक्थ्योऽतिरात्रो द्विरात्रस्त्रिरात्रश्चंतूरात्रः। अग्निर्ऋतुः सूर्य ऋतुश्चन्द्रमां ऋतुः। प्रजापंतिः संवथ्सरो महान्कः॥४॥

भूरिग्नें चं पृथिवीं च मां चं। त्री इश्वं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। भवों वायुं चान्तरिक्षं च मां चं। त्री इश्वं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। स्वंरादित्यं च दिवं च मां चं। त्री इश्वं लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। प्रजापितस्त्वा सादयत्। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद। भूर्भुवः स्वंश्वन्द्रमंसं च दिशंश्व मां चं। त्री इश्वं

लोकान्थ्संवथ्सरं चं। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥५॥

[२]

त्वमेव त्वां वैत्थ योऽसि सोऽसिं। त्वमेव त्वामंचैषीः। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। यत्ते अग्ने न्यूनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरस-श्चिन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चेतश्चास्यग्ने। पृतावाङ्श्चासि भूयाङ्श्चास्यग्ने। मा ते अग्ने च येन माऽति च येनाऽऽयुरावृक्षि। सर्वेषां ज्योतिषां ज्योतिर्यद्दावुदेति। तपंसो जातमिनभृष्टमोर्जः। तत्ते ज्योतिरिष्टके। तेनं मे तप। तेनं मे ज्वल। तेनं मे दीदिहि। यावंद्वाः। यावदसांति सूर्यः। यावंदुतापि ब्रह्मं॥६॥

[3]

संवथ्सरोऽसि परिवथ्सरोऽसि। इदाव्थ्सरोऽसीद्वथ्सरो-ऽसि। इद्वथ्सरोऽसि वथ्सरोऽसि। तस्यं ते वस्नन्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेम्न्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितंयः। अपुरुपृक्षाः पुरीषम्॥७॥

अहोरात्राणीष्टंकाः। ऋषभोऽसि स्वर्गो लोकः। यस्याँ दिशि महीयंसे। ततो नो मह् आवह। वायुर्भूत्वा सर्वा दिश आवाहि। सर्वा दिशोऽनुविवाहि। सर्वा दिशोऽनुसंवाहि। चित्त्या चितिमापृंण। अचित्त्या चितिमापृंण। चिदंसि समुद्रयोनिः॥८॥

इन्दुर्दक्षः श्येन ऋतावाँ। हिरंण्यपक्षः शकुनो भुंर्ण्युः। महान्थ्स्थस्थैं ध्रुव आनिषंत्तः। नमंस्ते अस्तु मा मां हि॰सीः। एति प्रेति वीति समित्युदितिं। दिवं मे यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। पृथिवीं में यच्छ। अन्तरिक्षं मे यच्छ। दिवं मे यच्छ। अह्य प्रसारय। रात्र्या समेच। रात्र्या प्रसारय। अह्य समेच॥९॥

·[٤]

भूर्भृवः स्वंः। ओजो बलम्ं। ब्रह्मं क्ष्र्त्रम्। यशों महत्। सत्यं तपो नामं। रूपमृमृतम्ं। चक्षुः श्रोत्रम्ं। मन् आयुंः। विश्वं यशों मृहः। समं तपो हरो भाः। जातवेदा यदि वा पावकोऽसिं। वैश्वानरो यदि वा वैद्युतोऽसिं। शं प्रजाभ्यो यजमानाय लोकम्। ऊर्जं पृष्टिं ददंदभ्यावंवृथ्स्व॥१०॥

[५]

राज्ञीं विराज्ञीं। सम्माज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निरिन्द्रो बृह्स्पतिंः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते मा सर्वे यशंसा स॰सृंजन्तु॥११॥

[६]

असंवे स्वाहा वसंवे स्वाहाँ। विभुंवे स्वाहा विवंस्वते

स्वाहाँ। अभिभुवे स्वाहाऽधिपतये स्वाहाँ। दिवां पतंये स्वाहाऽ रहस्पत्याय स्वाहाँ। चाक्षुष्मत्याय स्वाहाँ। ज्योतिष्मत्याय स्वाहाँ। राज्ञे स्वाहां विराज्ञे स्वाहाँ। सम्माज्ञे स्वाहाँ स्वराज्ञे स्वाहाँ। शूषांय स्वाहां सूर्याय स्वाहां। चन्द्रमंसे स्वाहा ज्योतिषे स्वाहां। स्रमपीय स्वाहां कल्याणांय स्वाहां। अर्जुनाय स्वाहां॥१२॥

-[り]

विपश्चिते पर्वमानाय गायत। मही न धाराऽत्यन्धीं अर्षित। अहिंर्ह जीणीमितिंसपिति त्वचमैं। अत्यो न क्रीडंन्नसर्द्वृषा हिरेः। उपयामगृंहीतोऽसि मृत्यवे त्वा जुष्टं गृह्णामि। एष ते योनिंमृंत्यवे त्वा। अपमृत्युमपृक्षुधमैं। अपेतः शपर्थं जिहा अधां नो अग्र आवंह। रायस्पोष सहस्रिणमैं॥१३॥

ये ते सहस्रंम्युतं पाशाः। मृत्यो मर्त्यांय हन्तंवे। तान् यज्ञस्यं माययाः। सर्वानवंयजामहे। भृक्षोःऽस्यमृतभृक्षः। तस्यं ते मृत्युपीतस्यामृतंवतः। स्वगाकृतस्य मधुमतः। उपहूतस्योपहूतो भक्षयामि। मृन्द्राऽभिभूतिः केतुर्यज्ञानां वाक्। असावेहिं॥१४॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आंक्रन्दियतरपान। असावेहिं। अहुस्तोस्त्वा चक्षुंः। असावेहिं। अपादाशो मर्नः। असावेहिं। कवे विप्रंचित्ते श्रोत्रं। असावेहिं॥१५॥

सुह्स्तः सुंवासाः। शूषो नामाँस्यमृतो मर्त्येषु। तं त्वाऽहं तथा वेदे। असावेहिं। अग्निर्मे वाचि श्रितः। वाग्घृदेये। हृदेयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। वायुर्मे प्राणे श्रितः॥१६॥

प्राणो हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। सूर्यो मे चक्षुंषि श्रितः। चक्षुर्ह्दये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। चन्द्रमां मे मनसि श्रितः॥१७॥

मनो हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। दिशों मे श्रोत्रे श्रिताः। श्रोत्र हदंये। हदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। आपों मे रेतिस श्रिताः॥१८॥

रेतो हृदये। हृदयं मिया। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पृथिवी मे शरीरे श्रिता। शरीर्॰ हृदये। हृदयं मिया। अहममृतें। अमृतं ब्रह्मणि। ओष्धिवनस्पतयां मे लोमंसु श्रिताः॥१९॥

लोमांनि हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। इन्द्रों मे बलें श्रितः। बल् १ हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि। पूर्जन्यों मे मूर्प्नि श्रितः॥२०॥

मूर्धा हृदये। हृदयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। ईशानो मे मृन्यौ श्रितः। मृन्युर्ह्दये। हृदयं मिये। अहम्मृते। अमृतं ब्रह्मणि। आत्मा मे आत्मिनि श्रितः॥२१॥

आत्मा हृदंये। हृदंयं मियं। अहम्मृतें। अमृतं ब्रह्मणि।

पुनेर्म आत्मा पुन्रायुरागाँत्। पुनेः प्राणः पुनराकूंतमागाँत्। वैश्वानरो रश्मिभिवविधानः। अन्तस्तिष्ठत्वमृतंस्य गोपाः॥२२॥

[८]

प्रजापंतिर्देवानंसृजत। ते पाप्मना सन्दिता अजायन्त। तान्व्यंद्यत्। यद्यद्यत्। तस्माद्विद्युत्। तमंवृश्चत्। यदवृश्चत्। तस्माद्वृष्टिः। तस्माद्यत्रैते देवते अभिप्राप्नुंतः। वि चं है्वास्य तत्रं पाप्मानं द्यतः॥२३॥

वृश्चतंश्च। सैषा मींमा स्साऽग्निंहोत्र एव संम्पन्ना। अथों आहुः। सर्वेषु यज्ञ ऋतुष्वितिं। होष्यं ऋप उपंस्पृशेत्। विद्युंदिस् विद्यं मे पाप्मान् मितिं। अथं हुत्वोपंस्पृशेत्। वृष्टिंरिस् वृश्चं मे पाप्मान् मितिं। युक्ष्यमांणो वृष्ट्वा वां। वि चं है वास्यैते देवतें पाप्मानं द्यतः॥२४॥

वृश्चतंश्च। अत्युर्हो हाऽऽर्रुणिः। ब्रह्मचारिणे प्रश्नान्प्रोच्यु प्रजिघाय। परेहि। प्रक्षं दय्यौम्पातिं पृच्छ। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। तमागत्यं पप्रच्छ। आचार्यो मा प्राहैषीत्। वेत्थं सावित्रा(३)न्न वेत्था(३) इतिं। सहोवाच वेदेतिं॥२५॥

स कस्मिन्प्रतिष्ठित इति। प्रोरंज्सीति। कस्तद्यत्परोरंजा इति। एष वाव स प्रोरंजा इति होवाच। य एष तपित। एषौंऽर्वाग्रंजा इति। स कस्मिन्त्वेष इति। सत्य इति। किं

तथ्मत्यमितिं। तपु इतिं॥२६॥

कस्मिन्नु तप् इतिं। बलु इतिं। किं तद्वल्मितिं। प्राण इतिं। मा स्मं प्राणमितिपृच्छु इतिं माऽऽचार्यौऽब्रवीदितिं होवाच ब्रह्मचारी। स होवाच प्रक्षो दय्याँम्पातिः। यद्वै ब्रह्मचारिन्प्राणमत्यंप्रक्ष्यः। मूर्धा ते व्यपंतिष्यत्। अहम्तंत आचार्याच्छ्रेयाँ-भविष्यामि। यो मां सावित्रे समवांदिष्टेतिं॥२७॥

तस्माँथ्सावित्रे न संवंदेत। स यो हु वै सांवित्रं विदुषां सावित्रे संवदंते। सहाँस्मिञ्छ्र्यं दधाति। अनुं हु वा अस्मा असौ तप्ञ्छ्र्यं मन्यते। अन्वंस्मै श्रीस्तपों मन्यते। अन्वंस्मै तपो बलं मन्यते। अन्वंस्मै बलं प्राणं मन्यते। स यदाहं। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एष एव तत्॥२८॥

अथ यदाहं। प्रस्तुंतं विष्टुंत र सुता सुंन्वतीतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तान्यहांनि। एष रात्रयः। अथ यदाहं। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसविताऽभिंशास्ताऽनुंमन्तेतिं। एष एव तत्। एष ह्यंव तेऽह्यं मुहूर्ताः। एष रात्रैंः॥२९॥

अथ यदाहं। प्वित्रं पवियष्यन्थ्सहंस्वान्थ्सहीयानरुणीं-ऽरुणरंजा इति। पुष पुव तत्। पुष ह्येव तेंऽर्धमासाः। पुष मासाः। अथ यदाहं। अग्निष्टोम उक्थ्योंऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इतिं। पुष पुव तत्। पुष ह्येव ते यज्ञकृतवेः। पुष

ऋतवेः॥३०॥

पुष संवथ्सरः। अथ यदाहं। इदानीं तदानीमितिं। पुष पुव तत्। पुष ह्यंव ते मुंहूर्तानां मुहूर्ताः। जनको ह वैदेहः। अहोरात्रेः समाजंगाम। त॰ होचुः। यो वा अस्मान् वेदं। विजहत्पाप्मानंमेति॥३१॥

सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होके-ऽन्नं क्षीयत् इति। विजहिद्ध वै पाप्मानेमेति। सर्वमायुरिति। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। नास्यामुष्मिं होकेऽन्नं क्षीयते। य एवं वेदे। अहीना हाऽऽश्वंथ्यः। सावित्रं विदां चंकार॥३२॥

स हं हुर्सो हिंरूण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकिर्मियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। हुर्सो हु वै हिंरूण्मयों भूत्वा। स्वर्गं लोकमेंति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। देवभागो हं श्रौत्रूषः। सावित्रं विदां चंकार। तर हु वागदृश्यमानाऽभ्युंवाच॥३३॥

सर्वं बत गौतमो वेदं। यः सांवित्रं वेदेतिं। स होवाच। कैषा वाग्सीतिं। अयमहरू सांवित्रः। देवानांमुत्तमो लोकः। गृह्यं महो बिभ्रदितिं। एतावंति ह गौतमः। युज्ञोपवीतं कृत्वाऽधो निपंपात। नमो नम इतिं॥३४॥

स होवाच। मा भैषीर्गीतम। जितो वै ते लोक इति। तस्माद्ये के चे सावित्रं विदुः। सर्वे ते जितलोकाः। स यो ह् वै सांवित्रस्याष्टाक्षेरं पृदः श्रियाऽभिषिक्तं वेदे। श्रिया हैवाभिषिच्यते। घृणिरिति द्वे अक्षरें। सूर्य इति त्रीणि। आदित्य इति त्रीणि॥३५॥

पृतद्वे सांवित्रस्याष्टाक्षेरं पृदङ् श्रियाऽभिषिक्तम्। य पृवं वेदं। श्रिया हैवाभिषिच्यते। तदेतदृचाऽभ्यंक्तम्। ऋचो अक्षरें पर्मे व्योमन्। यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः। यस्तं न वेद् किमृचा केरिष्यति। य इत्तद्विदुस्त इमे समांसत् इतिं। न ह वा पृतस्यूर्चा न यजुंषा न साम्राऽर्थोंऽस्ति। यः सांवित्रं वेदं॥३६॥

तदेतत्पंरि यद्देवच्क्रम्। आर्द्रं पिन्वंमानः स्वर्गे लोक एंति। विज्ञहृद्धिश्वां भूतानिं सम्पश्यंत्। आर्द्रो ह वै पिन्वंमानः। स्वर्गे लोक एंति। विज्ञहृन्विश्वां भूतानिं सम्पश्यन्। य एवं वेदं। शूषो ह वै वांष्ण्यः। आदित्येनं समाजंगाम। तः होवाच। एहिं सावित्रं विद्धि। अयं वै स्वर्ग्योंऽग्निः पारियेष्णुरमृताथ्सम्भूत इतिं। एष वाव स सांवित्रः। य एष तपंति। एहि मां विद्धि। इतिं हैवेनं तदुंवाच॥३७॥

·[?]

ड्यं वाव स्रघां। तस्यां अग्निरेव सार्घं मधुं। या एताः पूर्वपक्षापरपक्षयो रात्रयः। ता मधुकृतः। यान्यहांनि। ते मधुवृषाः। स यो हु वा एता मधुकृतंश्च मधुवृषा इश्च वेदं। कुर्वन्तिं हास्यैता अग्नौ मधुं। नास्येष्टापूर्तं धयन्ति। अथु यो

न वेदं॥३८॥

न हाँस्यैता अग्नौ मधुं कुर्वन्ति। धयंन्त्यस्येष्टापूर्तम्। यो ह् वा अंहोरात्राणां नामधेयांनि वेदं। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। संज्ञानं विज्ञानं दर्शां दृष्टेतिं। एतावंनुवाकौ पूर्वपक्षस्यां-होरात्राणां नामधेयांनि। प्रस्तुंतं विष्टंत स्युता सुन्वतीतिं। एतावंनुवाकावंपरपक्षस्यांहोरात्राणां नाम-धेयांनि। नाहोरात्रेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं॥३९॥

यो हु वै मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि वदं। न मुंहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। चित्रः केतुर्दाता प्रंदाता संविता प्रंसिवताऽभिंशास्ताऽनुं-मन्तेतिं। एतंऽनुवाका मुंहूर्तानां नाम्धेयांनि। न मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो हु वा अर्धमासानां च मासानां च नाम्धेयांनि वेदं। नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छंति। प्वित्रं पवियष्यन्थ्सहं-स्वान्थ्सहीयानरुणोऽरुणरंजा इतिं। एतंऽनुवाका अर्धमासानां च मासानां च नामधेयांनि॥४०॥

नार्धमासेषु न मासेष्वार्तिमार्च्छति। य एवं वेदं। यो ह वै यंज्ञऋतूनां चंर्तूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि वेदं। न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छति। अग्निष्टोम उक्थ्यौऽग्निर्ऋतुः प्रजापंतिः संवथ्सर इतिं। एतेऽनुवाका यंज्ञऋतूनां चंतूनां चं संवथ्सरस्यं च नाम्धेयांनि॥४१॥

न यंज्ञऋतुषु नर्तुषु न संवथ्सर आर्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। यो ह वै मुंहूर्तानांं मुहूर्तान् वेदं। न मुंहूर्तानांं मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। इदानीं तदानीमितिं। एते वै मुंहूर्तानांं मुहूर्ताः। न मुंहूर्तानांं मुहूर्तेष्वार्तिमार्च्छंति। य एवं वेदं। अथो यथां क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमत्ति। एवमेवैतान्क्षेत्रज्ञो भूत्वाऽनुंप्रविश्यात्रमत्ति। स एतेषांमेव संलोकता्र सायुंज्यमश्रुते। अपं पुनर्मृत्युं जंयित। य एवं वेदं॥४२॥

[80]

कश्चिंद्ध वा अस्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयम्हम्-स्मीतिं। कश्चिथ्स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अग्निम्ंग्धो हैव धूमतान्तः। स्वं लोकं न प्रतिप्रजानाति। अथ् यो हैवेतमृग्निः सांवित्रं वेदं। स एवास्माल्लोकात्प्रेत्यं। आत्मानं वेद। अयमहमस्मीतिं॥४३॥

स स्वं लोकं प्रतिप्रजानाति। एष उं वेवैनं तथ्सांवित्रः। स्वर्गं लोकम्भिवंहति। अहोरात्रैर्वा इद॰ स्युग्भिः क्रियते। इतिरात्रायांदीक्षिषत। इतिरात्रायं व्रतमुपांगुरिति। तानिहानंवं विदुषंः। अमुष्मिं छोके शेव्धिं धंयन्ति। धीत॰ हैव स शेव्धिमनु परैति। अथु यो हैवैत्मग्नि॰ सांवित्रं

वेदं॥४४॥

तस्यं हैवाहों रात्राणिं। अमुष्मिं छोके शेंवधिं न धंयन्ति। अधींत १ हैव स शेंवधिमनु परैति। भ्रद्धांजो ह त्रिभिरायुं भिं ब्रह्मचर्यमुवास। त १ हु जीणिं १ स्थविं र १ शयां नम्। इन्द्रं उपव्रज्यों वाच। भरंद्वाज। यत्ते चतुर्थमायुं द्वाम्। किमें नेन कुर्या इतिं। ब्रह्मचर्यमे वैनेन चरेयमितिं होवाच॥ ४५॥

त १ ह् त्रीन्गिरिरूपानविज्ञातानिव दर्शयां चंकार। तेषा १ हैकैंकस्मान्मुष्टिनाऽऽदंदे। स होवाच। भरंद्वाजेत्यामन्त्र्यं। वेदा वा एते। अनुन्ता वै वेदौं। एतद्वा एतैस्त्रिभिरायुंर्भिरन्वं-वोचथाः। अर्थ त इतंर्दनंनूक्तमेव। एहीमं विद्धि। अयं वै संविवद्येतिं॥४६॥

तस्मै हैतम्ग्निश्स सांवित्रमुंवाच। तश्स विंदित्वा। अमृतों भूत्वा। स्वर्गं लोकिमियाय। आदित्यस्य सायुंज्यम्। अमृतों हैव भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। य एवं वेदं। एषो एव त्रयी विद्या॥४७॥

यावंन्तर हु वै त्रय्या विद्ययां लोकं जयित। तावंन्तं लोकं जयित। य एवं वेदं। अग्नेर्वा एतानि नाम्धेयांनि। अग्नेरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। वायोर्वा एतानि नाम्धेयांनि। वायोरेव सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। इन्द्रंस्य वा एतानिं नामधेयांनि॥४८॥

इन्द्रंस्यैव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। बृह्स्पतेवा एतानि नाम्धेयांनि। बृह्स्पतेंचेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रजापंतेवा एतानि नाम्धेयांनि। प्रजापंतेचेव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। प्रह्मणो वा एतानि नाम्धेयांनि। ब्रह्मणो वा एतानि नाम्धेयांनि। ब्रह्मण एव सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। य एवं वेदं। स वा एषों ऽग्निरंपक्षपुच्छो वायुरेव। तस्याग्निमुंखम्। असावांदित्यः शिरंः। स यदेते देवते अन्तरेण। तथ्सर्व सीव्यति। तस्मांथ्सावित्रः॥४९॥

[88]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके प्रथमः प्रश्नः समाप्तः॥१॥

॥द्वितीयः प्रश्नः॥

लोकोऽसि स्वर्गोऽसि। अनुन्तौऽस्यपारोऽसि। अक्षितो-ऽस्यक्षय्योऽसि। तपंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१॥

तपोंऽसि लोके श्रितम्। तेजंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूर्तृ विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे कामृदुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतयांऽङ्गिरुस्बद्धुवा सींद॥२॥

तेजोंऽसि तपंसि श्रितम्। समुद्रस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥३॥

स्मुद्रोऽस् तेजंसि श्रितः। अपां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्मूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥४॥

आपंः स्थ समुद्रे श्रिताः। पृथिव्याः प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः स्भूतम्। विश्वंस्य भूर्त्यो विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे काम्दुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयांऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥५॥

पृथिव्यंस्यपस् श्रिता। अग्नेः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामक्षिताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥६॥ अग्निरंसि पृथिव्याः श्रितः। अन्तरिक्षस्य प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥७॥

अन्तरिक्षमस्यग्नौ श्रितम्। वायोः प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्सभूतम्। विश्वंस्य भूतृं विश्वंस्य जनियत्। तत्त्वोपंदधे काम्दुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥८॥

वायुरंस्यन्तिरंक्षे श्रितः। दिवः प्रंतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनियता। तं त्वोपंदधे काम्दुघ्मिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥९॥

द्यौरंसि वायौ श्रिता। आदित्यस्यं प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्म्भूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनियत्री। तां त्वोपंदधे काम्दुघामिश्वंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥१०॥

आदित्योऽसि दिवि श्रितः। चन्द्रमंसः प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयत्। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥११॥

चन्द्रमां अस्यादित्ये श्रितः। नक्षंत्राणां प्रतिष्ठा। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमक्षितम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१२॥

नक्षंत्राणि स्थ चन्द्रमंसि श्रितानिं। संवथ्सरस्यं प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भृतॄंणि विश्वंस्य जनियृतॄणिं। तानिं व उपंदधे काम्दुघान्यक्षितानि। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१३॥

संव्थ्सरोऽसि नक्षेत्रेषु श्रितः। ऋतूनां प्रतिष्ठा। त्वयीदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे कामृदुघमिश्वंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१४॥

ऋतवंः स्थ संवथ्सरे श्रिताः। मासानां प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदमन्तः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे कामृदुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सींद॥१५॥

मासाः स्थतंषुं श्रिताः। अर्धमासानां प्रतिष्ठा युष्मास्। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनियतारंः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१६॥

अर्धमासाः स्थं मासु श्रिताः। अहोरात्रयौः प्रतिष्ठा युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतारो विश्वंस्य जनयितारः। तान् व उपंदधे काम्दुघानक्षितान्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सीद॥१७॥

अहोरात्रे स्थौंऽर्धमासेषुं श्रिते। भूतस्यं प्रतिष्ठे भव्यंस्य प्रतिष्ठे। युवयोरिदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं स्भूतम्। विश्वंस्य भूर्यो विश्वंस्य जनिय्र्यौ। ते वामुपंदधे काम्दुधे अक्षिते। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिरस्वद्भवा सीद॥१८॥

पौर्णमास्यष्टंकाऽमावास्याः। अन्नादाः स्थान्नद्घो युष्मासुं। इदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वरं सुभूतम्। विश्वंस्य भृर्त्यो विश्वंस्य जनियुत्र्यः। ता व उपंदधे कामृदुघा अक्षिताः। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतयाऽङ्गिरुस्वद्भुवा सीद॥१९॥

राडंसि बृह्ती श्रीर्सीन्द्रंपत्नी धर्मपत्नी। विश्वं भूतमनुप्रभूता। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वः सुभूतम्। विश्वंस्य भूत्री विश्वंस्य जनयित्री। तां त्वोपंदधे काम्दुधामिक्षंताम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२०॥

ओजोंऽसि सहोंऽसि। बलंमिस भ्राजोंऽसि। देवानां धामामृतम्। अमेर्त्यस्तपोजाः। त्वयीदम्नतः। विश्वं यक्षं विश्वं भूतं विश्वं सुभूतम्। विश्वंस्य भूतां विश्वंस्य जनयिता। तं त्वोपंदधे काम्दुघमिक्षंतम्। प्रजापंतिस्त्वा सादयतु। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥२१॥

[8]

त्वमंग्ने रुद्रो असुंरो महो दिवः। त्वः शर्धो मार्रतं पृक्ष ईशिषे। त्वं वातैररुणैर्यासि शङ्ग्यः। त्वं पूषा विधतः पासि न त्मनां। देवां देवेषुं श्रयध्वम्। प्रथंमा द्वितीयेषु श्रयध्वम्। द्वितीयास्तृतीयेषु श्रयध्वम्। तृतीयाश्चतुर्थेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्थाः पश्चमेषुं श्रयध्वम्। पश्चमाः षष्ठेषुं श्रयध्वम्॥२२॥

षृष्ठाः संप्तमेषुं श्रयध्वम्। सप्तमा अष्टमेषुं श्रयध्वम्। अष्टमा

नंवमेषुं श्रयध्वम्। न्वमा देशमेषुं श्रयध्वम्। दृश्मा एंकाद्शेषुं श्रयध्वम्। एकाद्शा द्वांदृशेषुं श्रयध्वम्। द्वादृशास्त्रंयोदृशेषुं श्रयध्वम्। त्रयोदृशाश्चंतुर्दृशेषुं श्रयध्वम्। चृतुर्दृशाः पंश्चदृशेषुं श्रयध्वम्। पश्चदशाः षोंडशेषुं श्रयध्वम्॥२३॥

षोड्शाः संप्तद्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तद्शा अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाद्शेषुं श्रयध्वम्। पृकान्नविद्शा विद्शेषुं श्रयध्वम्। पृकान्नविद्शा विद्शेषुं श्रयध्वम्। विद्शा एकविद्शेषुं श्रयध्वम्। पृकविद्शोषुं श्रयध्वम्। पृकविद्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शोषुं श्रयध्वम्। द्वाविद्शोषुं श्रयध्वम्। नृत्विद्शाः पंश्रविद्शोषुं श्रयध्वम्। चृतुर्विद्शाः पंश्रविद्शेषुं श्रयध्वम्। पश्चविद्शाः पंश्विद्शेषुं श्रयध्वम्॥२४॥

ष्ड्रिष्शाः संप्तविष्शेषुं श्रयध्वम्। स्प्तविष्शाः अष्टाविष्शेषुं श्रयध्वम्। अष्टाविष्शाः एकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। एकान्नित्र्शेषुं श्रयध्वम्। त्रिष्शाः एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। एकित्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। द्वात्रिष्शास्त्रेयस्त्रिष्शेषुं श्रयध्वम्। देवास्त्रिरेकादशास्त्रिस्त्रंय-स्त्रिष्शाः। उत्तरे भवत। उत्तरवर्त्मान् उत्तरसत्त्वानः। यत्कांम इदं जुहोमिं। तन्मे समृध्यताम्। वयः स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहा॥२५॥

—[२]

अग्नांविष्णू स्जोषंसा। इमा वंधन्तु वां गिरंः। द्युम्नैर्वाजेंभिरागंतम्। राज्ञीं विराज्ञीं। सम्राज्ञीं स्वराज्ञीं। अर्चिः शोचिः। तपो हरो भाः। अग्निः सोमो बृह्स्पतिः। विश्वें देवा भुवंनस्य गोपाः। ते सर्वे सङ्गत्यं। इदं मे प्रावंता वर्चः। वयः स्याम पत्यो रयीणाम्। भूभृवः स्वंः स्वाहां॥२६॥

3]

अन्नप्तेऽन्नंस्य नो देहि। अनुमीवस्यं शुष्मिणः। प्र प्रंदातारं तारिषः। ऊर्जं नो धेहि द्विपदे चतुंष्पदे। अग्नें पृथिवीपते। सोमं वीरुधां पते। त्वष्टंः समिधां पते। विष्णंवाशानां पते। मित्रं सत्यानां पते। वर्रण धर्मणां पते॥२७॥

मुरुतो गणानां पतयः। रुद्रं पशूनां पते। इन्द्रौंजसां पते। बृहंस्पते ब्रह्मणस्पते। आ रुचा रोंचेऽह इस्वयम्। रुचा रुचे रोचेमानः। अतीत्यादः स्वराभरेह। तस्मिन् योनौं प्रजनौ प्रजायेय। वय इस्याम् पत्रयो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥२८॥

[8]

सप्त तें अग्ने स्मिधंः स्प्त जिह्वाः। स्प्तर्षयः स्प्त धामं प्रियाणि। सप्त होत्रां अनुविद्वान्। स्प्त योनीरापृंणस्वा घृतेनं। प्राची दिक्। अग्निर्देवतां। अग्निः स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यै दिशोंऽभिदासंति। दक्षिणा दिक्। इन्द्रों देवतां॥२९॥

इन्द्र स दिशां देवं देवतानामृच्छत्। यो मैतस्यै

दिशों ऽिमदासंति। प्रतीची दिक्। सोमों देवतां। सोम् स दिशां देवं देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशों ऽिमदासंति। उदीची दिक्। मित्रावर्रुणो देवतां। मित्रावर्रुणो स दिशां देवौ देवतांनामृच्छत्। यो मैतस्यैं दिशों ऽिमदासंति॥३०॥

ऊर्ध्वा दिक्। बृह्स्पतिंदेंवतां। बृह्स्पति स दिशां देवं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। इयं दिक्। अदिंतिर्देवतां। अदिंति स दिशां देवीं देवतांनामृच्छतु। यो मैतस्यें दिशोंऽभिदासंति। पुरुषो दिक्। पुरुषो मे कामान्थ्समंध्यतु॥३१॥

अन्धो जागृंविः प्राण। असावेहिं। बिधिर आँऋन्दियतरपान। असावेहिं। उषसंमुषसमशीय। अहमसो ज्योतिंरशीय। अहमसोऽपोऽशीय। वय स्यांम् पत्यो रयीणाम्। भूर्भुवः स्वः स्वाहां॥३२॥

[५]

यत्तेऽचितं यदं चितं ते अग्ने। यत्तं ऊनं यद् तेऽतिरिक्तम्। आदित्यास्तदिङ्गिरसिश्चन्वन्तु। विश्वे ते देवाश्चितिमापूरयन्तु। चितश्चासि सिश्चितश्चास्यग्ने। एतावाङ्श्चासि भूयांङ्श्चास्यग्ने। लोकं पृण च्छिद्रं पृण। अथो सीद शिवा त्वम्। इन्द्राग्नी त्वा बृहस्पतिः। अस्मिन् योनांवसीषदन्॥३३॥

तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। ता अस्य सूदंदोहसः। सोमई श्रीणन्ति पृश्नंयः। जन्मं देवानां विशंः। त्रिष्वा रोचने दिवः। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अग्ने देवा॰ इहाऽऽवंह। जज्ञानो वृक्तबंर्हिषे। असि होतां न ईड्यः। अगन्म महा मनंसा यविष्ठम्॥३४॥

यो दीदाय सिमंद्ध स्वे दुंरोणे। चित्रभांनू रोदंसी अन्तरुवीं। स्वांहुतं विश्वतंः प्रत्यश्चम्। मेधाकारं विदर्थस्य प्रसाधंनम्। अग्निश् होतांरं परिभूतंमं मृतिम्। त्वामर्भस्य हुविषंः समानमित्। त्वां महो वृंणते नरो नान्यं त्वत्। मृनुष्वत्त्वा निधीमहि। मृनुष्वथ्समिधीमहि। अग्ने मनुष्वदंङ्गिरः॥३५॥

देवान्देवायते यंज। अग्निर्हि वाजिनं विशे। ददांति विश्वचंर्षणिः। अग्नी राये स्वाभुवम्। स प्रीतो यांति वार्यम्। इष स्तोतृभ्य आभंर। पृष्टो दिवि पृष्टो अग्निः पृथिव्याम्। पृष्टो विश्वा ओषंधीराविंवेश। वैश्वानरः सहंसा पृष्टो अग्निः। स नो दिवा स रिषः पांतु नक्तम्॥३६॥

·[٤]

अयं वाव यः पवंते। सौंऽग्निर्नाचिकेतः। स यत्प्राङ् पवंते। तदंस्य शिरंः। अथ् यदंक्षिणा। स दक्षिणः पृक्षः। अथ् यत्प्रत्यक्। तत्पुच्छम्। यदुदङ्ङ्ं। स उत्तरः पृक्षः॥३७॥

अथ यथ्संवाति। तदंस्य समर्श्वनं च प्रसारंणं च। अथों सम्पदेवास्य सा। स॰ हु वा अस्मै स कार्मः पद्यते। यत्कांमो यजते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठां वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्॥३८॥

हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्याऽऽयतंनं प्रतिष्ठा। य एवं वेदं। आयतंनवान्भवति। गच्छंति प्रतिष्ठाम्। यो हु वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरं वेदं। सर्शरीर एव स्वर्गं लोकमेति। हिरंण्यं वा अग्नेर्नाचिकेतस्य शरीरम्। य एवं वेदं। सर्शरीर एव स्वर्गं लोकमेति। अथो यथां रुका उत्तंप्तो भाय्यात्॥३९॥

पुवमेव स तेर्जसा यशंसा। अस्मिङ्श्चं लोकेंऽमुष्मिंङ्श्च भाति। उरवों हु वै नामैते लोकाः। येऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैते वरीया॰सो लोकाः। ये परेणाऽऽदित्यम्। अन्तंवन्त॰ हु वा एष क्ष्रय्यं लोकं जंयति। योऽवरेणाऽऽदित्यम्। अथं हैषोंऽनन्तमंपारमंक्षय्यं लोकं जंयति। यः परेणाऽऽदित्यम्॥४०॥

अनुन्त १ हु वा अपारमेक्षय्यं लोकं जयित। यौँऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उ चैनमेवं वेदे। अथो यथा रथे तिष्ठन्पक्षंसी पर्यावर्तमाने प्रत्यपेक्षते। पुवर्महोरात्रे प्रत्यपेक्षते। नास्याहोरात्रे लोकमाप्तुतः। यौँऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे॥४१॥ उशन् हु वै वांजश्रव्सः संविवेद्सं देदौ। तस्यं हु नचिंकेता नामं पुत्र आंस। त॰ हं कुमार॰ सन्तम्। दक्षिणासु नीयमांनासु श्रृद्धाऽऽविंवेश। स होंवाच। तत् कस्मै मां दांस्यसीति। द्वितीयंं तृतीयम्। त॰ हु परींत उवाच। मृत्यवैं त्वा ददामीति। त॰ हु स्मोत्थितं वागुभिवंदति॥४२॥

गौतंम कुमारमिति। स होवाच। परेहि मृत्योर्गृहान्। मृत्यवे वै त्वांऽदामिति। तं वै प्रवसंन्तं गुन्तासीतिं होवाच। तस्यं स्म तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृहे वंसतात्। स यदिं त्वा पृच्छेत्। कुमांर् कित रात्रीरवाथ्सीरितिं। तिस्र इति प्रतिंब्रूतात्। किं प्रथमा रात्रिमाश्चा इति॥४३॥

प्रजां त इतिं। किं द्वितीयामितिं। पृश्र्स्त इतिं। किं तृतीयामितिं। साधुकृत्यां त इतिं। तं वै प्रवसन्तं जगाम। तस्यं ह तिस्रो रात्रीरनांश्वान्गृह उंवास। तमागत्यं पप्रच्छ। कुमांर कित रात्रीरवाथ्सीरिति। तिस्र इति प्रत्युंवाच॥४४॥

किं प्रथमा रात्रिमाश्रा इति। प्रजां त इति। किं द्वितीयामिति। प्रशू इति। किं तृतीयामिति। साधुकृत्यां त इति। नमस्ते अस्तु भगव इति होवाच। वरं वृणीष्वेति। पितरमेव जीवंत्रयानीति। द्वितीयं वृणीष्वेति॥४५॥

ड्ष्ष्यपूर्तयोर्मेऽक्षिंतिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मैं हैतम्ग्रिं नांचिकेतम्वाच। ततो वै तस्यैष्टापूर्ते ना क्षीयेते। नास्यें ष्टापूर्ते क्षीयते। यों ऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। तृतीयंं वृणीष्वेतिं। पुनुर्मृत्योर्मेऽपंचितिं ब्रूहीतिं होवाच। तस्मै हैतमृग्निं नांचिकेतम्बाच। ततो वै सोऽपं पुनर्मृत्युमंजयत्॥४६॥

अपं पुनर्मृत्युं जंयित। योंऽग्निं नांचिकेतं चिन्ते। य उं चैनमेवं वेदं। प्रजापंतिर्वे प्रजाकांम्स्तपोंऽतप्यत। स हिरण्यमुदांस्यत्। तद्ग्नौ प्रास्यत्। तदंस्मै नाच्छंदयत्। तिद्वितीयं प्रास्यंत्। तदंस्मै नैवाच्छंदयत्। तत्तृतीयं प्रास्यंत्॥४७॥

तदंस्मे नैवाच्छंदयत्। तदात्मन्नेव हंद्य्येंऽग्नो वैंश्वान्रे प्रास्यंत्। तदंस्मा अच्छदयत्। तस्माद्धिरंण्यं किनेष्ठं धनानाम्। भुञ्जत्प्रियतंमम्। हृद्युजः हि। स वै तमेव नाविंन्दत्। यस्मै तां दक्षिणामनेष्यत्। ताः स्वायेव हस्तांय दक्षिणायानयत्। तां प्रत्यंगृह्णात्॥४८॥

दक्षांय त्वा दिक्षंणां प्रतिगृह्णामीति। सोऽदक्षत् दिक्षंणां प्रतिगृह्णं। दक्षेते हु वै दिक्षंणां प्रतिगृह्णं। य एवं वेदं। एतर्द्धं स्म वै तिद्विद्वा एसों वाजश्रवसा गोतंमाः। अप्यंनूदेश्यां दिक्षंणां प्रतिगृह्णन्ति। उभयेन व्यं दिक्षेष्यामह एव दिक्षंणां प्रतिगृह्णेते। तेऽदक्षन्त् दिक्षंणां प्रतिगृह्णे। दक्षेते हु वै दिक्षंणां प्रतिगृह्णे। य एवं वेदं। प्र हान्यं क्षीनाति॥४९॥

तक्ष हैतमेकं पशुबन्ध एवोत्तरवेद्यां चिन्वते। उत्तरवेदिसंग्मित एषों ऽग्निरिति वदंन्तः। तन्न तथां कुर्यात्। एतमृग्निं कामेन् व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यर्धयेत्। स एनं कामेन् व्यर्धयेत्। सौम्ये वावैनंमध्वरे चिन्वीत। यत्रं वा भूयिष्ठा आहुंतयो हूयेरन्। एतमृग्निं कामेन् समर्धयित। स एनं कामेन् समृद्धः॥५०॥

कामेन समर्धयति। अर्थ हैनं पुरर्षयः। उत्तर्वेद्यामेव सन्नियमचिन्वत। ततो वै तेऽविन्दन्त प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकमंजयन्। विन्दतं एव प्रजाम्। अभि स्वर्गं लोकं जयिति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं वायुर्ऋद्धिकामः॥५१॥

यथान्युप्तमेवोपंदधे। ततो वै स एतामृद्धिंमार्भ्रोत्। यामिदं वायुर्ऋदः। एतामृद्धिंमृभ्रोति। यामिदं वायुर्ऋदः। योऽभ्रिं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अर्थ हैनं गोब्लो वार्णः पृशुकांमः। पाङ्कंमेव चिंक्ये। पश्चं पुरस्तांत्॥५२॥

पश्चं दक्षिणतः। पश्चं पृश्चात्। पश्चोंत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वै स सहस्रं पृश्नम्प्राप्नौत्। प्र सहस्रं पृश्नमाप्नोति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनं प्रजापंति ज्येष्ठमंकामो यशंस्कामः प्रजनंनकामः। त्रिवृतं मेव चिक्रो॥५३॥

स्प्त पुरस्तांत्। तिस्रो दक्षिण्तः। स्प्त पृश्चात्। तिस्र उत्तर्तः। एकां मध्यें। ततो वे स प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोत्। एतां प्रजांतिं प्राजांयत। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। त्रिवृद्वे ज्यैष्ठ्यम्। माता पिता पुत्रः॥५४॥

त्रिवृत्प्रजनंनम्। उपस्थो योनिर्मध्यमा। प्र यशो ज्यैष्ठांमाप्नोति। एतां प्रजांतिं प्रजांयते। यामिदं प्रजाः प्रजायंन्ते। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदे। अथं हैन्मिन्द्रो ज्यैष्ठांकामः। ऊर्ध्वा एवोपंदधे। ततो वै स ज्यैष्ठांमगच्छत्॥५५॥

ज्यैष्ठमं गच्छति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। अथं हैनम्सावांदित्यः स्वर्गकांमः। प्राचींरेवोपंदधे। ततो वै सोंऽभि स्वर्गं लोकमंजयत्। अभि स्वर्गं लोकं जयति। योंऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। स यदीच्छेत्॥५६॥

तेज्स्वी यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी स्यामिति। प्राङाहोतुर्धिष्णया-दुथ्संपेत्। येयं प्रागाद्यशंस्वती। सा मा प्रोणीत्। तेजंसा यशंसा ब्रह्मवर्चसेनेति। तेज्रस्येव यंशस्वी ब्रह्मवर्चसी भंवति। अथ् यदीच्छेत्। भूयिष्ठं मे श्रद्दंधीरन्। भूयिष्ठा दक्षिणा नयेयुरिति। दक्षिणासु नीयमानासु प्राच्येहि प्राच्येहीति प्राची जुषाणा वेत्वाऽऽज्यंस्य स्वाहेति स्रुवेणोपहत्यांऽऽहवनीये जुहुयात्॥५७॥ भूयिष्ठमेवास्मै श्रद्दंधते। भूयिष्ठा दक्षिणा नयन्ति। पुरीषमुप्धायं। चितिक्कुप्तिभिर्राभृष्यं। अग्निं प्रणीयोप-समाधायं। चतंस्र एता आहुंतीर्जुहोति। त्वमंग्ने रुद्र इतिं शतरुद्रीयंस्य रूपम्। अग्नांविष्णू इतिं वसोर्धारांयाः। अन्नपत् इत्यंत्रहोमः। सप्त ते अग्ने स्मिधंः सप्त जिह्वा इतिं विश्वप्रीः॥५८॥

·[ʔ]

यां प्रथमामिष्टंकामुप्दधांति। इमं तयां लोकम्भिजंयति। अथो या अस्मिँ छोके देवताः। तासा स् सायुंज्य स् सलोकतांमाप्नोति। यां द्वितीयांमुप्दधांति। अन्तिरक्षिलोकं तयाऽभिजंयति। अथो या अन्तिरक्षिलोके देवताः। तासा स् सायुंज्य सलोकतांमाप्नोति। यां तृतीयांमुप्दधांति। अमुं तयां लोकमभिजंयति॥५९॥

अथो या अमुष्मिं ह्रोके देवताः। तासार् सायुंज्यर सलोकतांमाप्नोति। अथो या अमूरितंरा अष्टादंश। य एवामी उरवंश्च वरीयारसश्च लोकाः। तानेव ताभिर्भिजंयति॥ कामचारो ह् वा अस्योरुषुं च वरीयःसु च लोकेषुं भवति। योऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नांचिकेतः। तस्यं वसन्तः शिरंः॥६०॥

ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षा उत्तरः। श्रारत्पुच्छम्। मासाः कर्मकाराः। अहोरात्रे शंतरुद्रीयम्। पूर्जन्यो वसोर्धाराः। यथा वै पूर्जन्यः सुवृष्टं वृष्ट्वा। प्रजाभ्यः सर्वान्कामाँन्थ्सम्पूरयंति। एवमेव स तस्य सर्वान्कामान्थ्सम्पूरयति। यो ऽग्निं नाचिकेतं चिनुते॥६१॥

य उं चैनमेवं वेदं। संवथ्सरो वा अग्निर्नाचिकेतः। तस्यं वस्तः शिरंः। ग्रीष्मो दक्षिणः पृक्षः। वर्षाः पुच्छम्। श्ररदुत्तंरः पृक्षः। हेमन्तो मध्यम्। पूर्वपृक्षाश्चितयः। अपरपृक्षाः पृरीषम्। अहोरात्राणीष्टंकाः। एष वाव सौऽग्निरंग्निमयंः पुनर्णवः। अग्निमयो ह वै पुनर्णवो भूत्वा। स्वर्गं लोकमेति। आदित्यस्य सायुंज्यम्। यौऽग्निं नांचिकेतं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं॥६२॥

·[१०]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तितरीय काठके द्वितीयः प्रश्नः समाप्तः॥२॥

॥ तृतीयः प्रश्नः॥

तुभ्यं ता अंङ्गिरस्तमाऽश्याम् तं कामंमग्ने। आशांनां त्वा विश्वा आशाः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिरिन्वदंनुमते त्वम्। कामो भूतस्य कामस्तदग्रें। ब्रह्मं जज्ञानं पिता विराजांम्। यज्ञो रायोऽयं यज्ञः। आपों भुद्रा आदित्पंश्यामि। तुभ्यंं भरन्ति यो देह्यः। पूर्वं देवा अपंरेण प्राणापानौ। ह्व्यवाह् इं स्विष्टम्॥१॥ देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेतिं। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तमिष्टिंभिरन्वैच्छत्। तमिष्टिंभिरन्वंविन्दत्। तदिष्टींनामिष्टि-त्वम्। एष्टंयो हु वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥२॥

तमाशाँऽब्रवीत्। प्रजांपत आशया वै श्राँम्यसि। अहमु वा आशाँऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्याऽऽशां भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। आशायै चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सृत्याऽऽशांऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सृत्या हु वा अस्याऽऽशां भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽऽशाये स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगांयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥३॥

तं कामों ऽब्रवीत्। प्रजांपते कामेंन् वै श्रांम्यसि। अहमु वै कामों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्यः कामों भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। कामांय चुरुम्। अनुंमत्यै चुरुम्। ततो वै तस्यं स्त्यः कामों ऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। स्त्यो हु वा अस्य कामो भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहां कामाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥४॥

तं ब्रह्माँऽब्रवीत्। प्रजांपते ब्रह्मंणा वै श्राँम्यसि। अहमु वै ब्रह्माँऽस्मि। मां नु यजंस्व। अथं ते ब्रह्मण्वान् यज्ञो भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। ब्रह्मंणे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं ब्रह्मण्वान् यज्ञोंऽभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। ब्रह्मण्वान् हु वा अस्य यज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यज्ते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा ब्रह्मंणे स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥५॥

तं युज्ञों ऽब्रवीत्। प्रजांपते युज्ञेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै युज्ञों ऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सत्यो युज्ञो भंविष्यति। अर्नु स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामाय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। युज्ञायं चुरुम्। अर्नुमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यो युज्ञों ऽभवत्। अर्नु स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्यो हु वा अस्य युज्ञो भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दित। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामांय स्वाहां यज्ञाय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥६॥

तमापों ऽब्रुवन्। प्रजांपते ऽपसु वे सर्वे कामाः श्रिताः। वयमु वा आपः स्मः। अस्मान्नु यंजस्व। अथ् त्विय् सर्वे कामाः श्रियिष्यन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम् ग्रये कामांय पुरोडाशं मृष्टाकंपालं निरंवपत्। अन्र्यश्चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वे तस्मिन्थ्सर्वे कामां अश्रयन्त। अनुं स्वर्गं लोकमं विन्दत्। सर्वे ह् वा अस्मिन्कामाः श्रयन्ते। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहा ऽग्न्यः स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्वाहाँ स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहा ऽग्नये स्वाहाँ स्वाहाँ।

तम्ग्निर्बिल्मानंब्रवीत्। प्रजांपतेऽग्नये वै बंलिमते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरन्ति। अहमु वा अग्निर्बिल्मानंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सर्वाणि भूतानि बलि॰ हंरिष्यन्ति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतम्ग्नये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अग्नये बलिमते चुरुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वे तस्मै सर्वाणि भूतानि बुलिमंहरन्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सर्वाणि हु वा अस्मै भूतानि बुलिश् हंरन्ति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये कामाय स्वाहाऽग्नये बिल्मते स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥८॥

तमनुंवित्तिरब्रवीत्। प्रजांपते स्वृगं वै लोकमनुंविविथ्मसि। अहमु वा अनुंवित्तिरस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्याऽनुंवित्तिर्भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स् एतम्ग्रये कामांय पुरोडाशंमृष्टाकंपालं निरंवपत्। अनुंवित्त्ये चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्याऽनुंवित्तिरभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्यानुंवित्तिरभवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये कामांय स्वाहाऽनुंवित्त्ये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्रये स्विष्टकृते स्वाहेति॥९॥

ता वा एताः सप्त स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। दिवःश्येनयोऽनुंवित्तयो नामं। आशाँ प्रथमाः रक्षिति। कामौं द्वितीयाँम्। ब्रह्मं तृतीयाँम्। यज्ञश्चंतुर्थीम्। आपंः पश्चमीम्। अग्निर्बलिमान्थ्वष्ठीम्। अनुंवित्तिः सप्तमीम्। अनुं ह् वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भवति। य एताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना एवं वेदे। तास्विन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां देद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियैं चाऽऽभारर समृद्धौ॥१०॥

[२]

तपंसा देवा देवतामग्रं आयन्। तप्सर्षयः स्वंरन्वंविन्दन्। तपंसा सपत्नान्त्रणुंदामारातीः। येनेदं विश्वं परिभूतं यदस्ति। प्रथमजं देव॰ ह्विषां विधेम। स्वयम्भु ब्रह्मं पर्मं तपो यत्। स एव पुत्रः स पिता स माता। तपो ह यक्षं प्रथम॰ सम्बंभूव। श्रद्धया देवो देवत्वमंश्रुते। श्रद्धा प्रंतिष्ठा लोकस्यं देवी॥११॥

सा नों जुषाणोपं यज्ञमागाँत्। कामंवथ्साऽमृतं दुहांना। श्रृद्धा देवी प्रथम्जा ऋतस्यं। विश्वस्य भूत्री जगंतः प्रतिष्ठा। ता श्रृद्धा श्रृह्वा सहिषां यजामहे। सा नों लोकम्मृतं दधातु। ईशांना देवी भुवंनस्याधिपत्नी। आगाँथ्सत्य हिविरिदं जुषाणम्। यस्माँद्देवा जंजिरे भुवंनं च विश्वें। तस्मै विधेम हिविषां घृतेनं॥१२॥

यथां देवैः संधमादं मदेम। यस्यं प्रतिष्ठोर्वन्तरिक्षम्। यस्मौद्देवा जंजिरे भुवनं च सर्वै। तथ्सत्यमर्चदुपं यज्ञं न आगौत्। ब्रह्माऽऽहुंती्रुपमोदंमानम्। मनसो वशे सर्वमिदं बंभूव। नान्यस्य मनो वश्मनिवंयाय। भीष्मो हि देवः सहंसुः सहीयान्। स नो जुषाण उपं यज्ञमागात्। आकूतीनामधिपतिं चेतंसां च॥१३॥

सङ्कल्पर्जूतिं देवं विपश्चिम्। मनो राजानिम्ह वर्धयन्तः। उपह्वेऽस्य सुमृतौ स्याम। चरणं प्वित्रं वितंतं पुराणम्। येनं पूतस्तरंति दुष्कृतानिं। तेनं प्वित्रंण शुद्धेनं पूताः। अति पाप्मान्मरांतिं तरेम। लोकस्य द्वारंमर्चिमत्पवित्रम्। ज्योतिषमुद्भाज्ञंमानं महंस्वत्। अमृतंस्य धारां बहुधा दोहंमानम्। चरणं नो लोके सुधितां दधातु। अग्निर्मूधां भुवंः। अनुं नोऽद्यानुंमित्रिन्वदंनुमते त्वम्। हृव्यवाह्ङ् स्विष्टम्॥१४॥

[3]

देवेभ्यो वै स्वर्गो लोकस्तिरोऽभवत्। ते प्रजापंतिमब्रुवन्। प्रजापते स्वर्गो वै नो लोकस्तिरोऽभूत्। तमन्विच्छेति। तं यंज्ञऋतुभिरन्वैच्छत्। तं यंज्ञऋतुभिर्नान्वंविन्दत्। तिमिष्टिभि-रन्वैच्छत्। तिमिष्टिभिरन्वंविन्दत्। तिदिष्टीनामिष्टित्वम्। एष्टंयो ह् वै नामं। ता इष्टंय इत्याचंक्षते प्रोक्षेण। प्रोक्षंप्रिया इव हि देवाः॥१५॥

तं तपौंऽब्रवीत्। प्रजांपते तपंसा वै श्राम्यसि। अहमु वै तपौंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं तपों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीतिं। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालुं निरंवपत्। तपंसे चुरुम्। अनुमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं स्तयं तपोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। स्तयः हु वा अस्य तपों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा तपंसे स्वाहां। अनुमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥१६॥

तः श्रद्धाऽब्रंवीत्। प्रजापते श्रद्धया वै श्रांम्यसि। अहमु वै श्रद्धाऽस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते सत्या श्रद्धा भंविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। श्रद्धायें चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सत्या श्रद्धाऽभंवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सत्या हु वा अस्य श्रद्धा भंवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेनं हृविषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहाँ श्रद्धाये स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंतये स्वाहाँ। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयें स्वष्टकृते स्वाहेति॥१७॥

तर स्त्यमंब्रवीत्। प्रजापते स्त्येन् वै श्राम्यसि। अहमु वै स्त्यमंस्मि। मां नु यंजस्व। अथं ते स्त्यर स्त्यं भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमांग्रेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। स्त्यायं च्रुम्। अनुंमत्ये च्रुम्। ततो वै तस्यं स्त्यर स्त्यमंभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यर हु वा अस्य सत्यं भवित। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्यर हु वा अस्य सत्यं भवित। अनुं स्वृगं

लोकं विन्दिति। य एतेनं हिविषा यजेते। य उं चैनदेवं वेदे। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहां सत्याय स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नये स्विष्टकृते स्वाहेति॥१८॥

तं मनोंऽब्रवीत्। प्रजांपते मनंसा वै श्रांम्यसि। अहमु वै मनोंऽस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते स्त्यं मनों भविष्यति। अनुं स्वृगं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमांग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। मनंसे चुरुम्। अनुंमत्ये चुरुम्। ततो वै तस्यं सत्यं मनोंऽभवत्। अनुं स्वृगं लोकमंविन्दत्। सत्य ह वा अंस्य मनों भवति। अनुं स्वृगं लोकं विन्दति। य एतेनं ह्विषा यजंते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्रये स्वाहा मनंसे स्वाहां। अनुंमत्ये स्वाहां प्रजापंतये स्वाहां। स्वृगीयं लोकाय स्वाहाऽग्रयें स्विष्टकृते स्वाहेति॥१९॥

तं चरणमब्रवीत्। प्रजांपते चरणेन वै श्रांम्यसि। अहमु वै चरणमस्मि। मां नु यंजस्व। अर्थ ते सृत्यं चरणं भविष्यति। अनुं स्वर्गं लोकं वेथ्स्यसीति। स एतमाँग्नेयमृष्टाकंपालं निरंवपत्। चरणाय चरुम्। अनुंमत्ये चरुम्। ततो वै तस्यं सृत्यं चरणमभवत्। अनुं स्वर्गं लोकमंविन्दत्। सृत्य ह् वा अंस्य चरणं भवति। अनुं स्वर्गं लोकं विन्दति। य एतेन ह्विषा यजते। य उं चैनदेवं वेदं। सोऽत्रं जुहोति। अग्नये स्वाहा चरणाय स्वाहाँ। अनुंमत्ये स्वाहाँ प्रजापंत्ये स्वाहाँ।

स्वर्गायं लोकाय स्वाहाऽग्नयं स्विष्टकृते स्वाहेतिं॥२०॥

ता वा पृताः पश्चं स्वर्गस्यं लोकस्य द्वारंः। अपांघा अनुवित्तयो नामं। तपः प्रथमाः रक्षिति। श्रद्धा द्वितीयाँम्। सत्यं तृतीयाँम्। मनश्चतुर्थीम्। चरणं पश्चमीम्। अनुं हु वै स्वर्गं लोकं विन्दित। कामचारौंऽस्य स्वर्गे लोके भविति। य पृताभिरिष्टिंभिर्यजंते। य उं चैना पृवं वेदं। तास्वंन्विष्टि। पृष्ठौहीवरां दंद्यात्कुर्सं चं। स्त्रियै चाऽऽभारः समृद्धौ॥२१॥

[8]

ब्रह्म वै चतुंर्होतारः। चतुंर्होतृभ्योऽधिंयुज्ञो निर्मितः। नैन १ श्वप्तम्। नाभिचंरित्मागंच्छति। य एवं वेदं। यो ह् वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वं वेदं। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वा हास्मै दिशः कल्पन्ते। वाचस्पतिर्होता दशंहोतॄणाम्। पृथिवी होता चतुंर्होतृणाम्॥२२॥

अग्निर्होता पश्चंहोतॄणाम्। वाग्घोता षड्ढोतॄणाम्। महाहंविर्होतां सप्तहोतॄणाम्। एतद्वै चतुंर्होतृणां चतुर्होतृत्वम्। अथो पश्चंहोतृत्वम्। सर्वां हास्मै दिशंः कल्पन्ते। य एवं वेदं। एषा वै संविवृद्या। एतद्वेषुजम्। एषा पङ्किः स्वर्गस्यं लोकस्यांश्वसाऽयंनिः स्रुतिः॥२३॥

पुतान् योऽध्यैत्यछंदिर्दर्शे यावंत्तरसम्। स्वंरेति। अनुपुब्रवः सर्वमायुंरेति। विन्दतें प्रजाम्। रायस्पोषं गौपत्यम्। ब्रह्मवर्चसी भंवति। एतान् योऽध्यैतिं। स्पृणोत्यात्मानम्। प्रजां पितृन्। एतान् वा अंरुण औपवेशिर्विदां चंकार॥२४॥

पुतैरंधिवादमपांजयत्। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंर्ययौ। पुतान्योऽध्यैतिं। अधिवादं जंयति। अथो विश्वं पाप्मानम्। स्वंरेति। पुतैर्ग्निं चिन्वीत स्वर्गकांमः। पुतैरायुंष्कामः। प्रजापशुकांमो वा॥२५॥

पुरस्ताद्दर्शहोतार्मुदंश्चमुपंदधाति यावत्पदम्। हृदंयं यज्ञंषी पत्न्यौ च। दक्षिणतः प्राश्चं चतुर्होतारम्। पृश्चादुदंश्चं पश्चंहोतारम्। उत्तर्तः प्राश्चं पङ्कांतारम्। उपरिष्टात्प्राश्चं सप्तहोतारम्। हृदंयं यज्ञ्रंषि पत्न्यंश्च। यथावकाशं ग्रहान्। यथावकाशं प्रतिग्रहाँ ह्रोंकं पृणाश्चं। सर्वा हास्यैता देवताः प्रीता अभीष्टां भवन्ति॥२६॥

सदेवम्गिं चिनुते। रथसंम्मितश्चेत्रव्यः। वज्रो वै रथः। वज्रेणैव पाप्मानं भ्रातृंव्यः स्तृणुते। पृक्षः संम्मितश्चेत्व्यः। एतावान् वै रथः। यावंत्पक्षः। रथसंम्मितमेव चिनुते। इममेव लोकं पंशुबन्धेनाभिजंयति। अथो अग्निष्टोमेनं॥२७॥

अन्तरिक्षमुक्थ्येन। स्वरितरात्रेणं। सर्वां ह्योकानंहीनेनं। अथो स्त्रेणं। वरो दक्षिणा। वरेणैव वर स्पृणोति। आत्मा हि वरंः। एकंविस्शतिर्दक्षिणा ददाति। एकविस्शो वा इतः स्वर्गो लोकः। प्र स्वर्गं लोकमाप्रोति॥२८॥

असावांदित्य एंकविश्वाः। अमुमेवाऽऽदित्यमाँप्रोति। शृतं ददांति। शृतायुः पुरुषः शृतेन्द्रियः। आयुंष्येवेन्द्रिये प्रतिंतिष्ठति। सहस्रं ददाति। सहस्रंसम्मितः स्वर्गो लोकः। स्वर्गस्यं लोकस्याभिजित्ये। अन्विष्ट्कं दक्षिणा ददाति। सर्वाणि वयार्ससा२९॥

सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै। यदि न विन्देतं। मन्थानेतावतो दंद्यादोदनान् वाँ। अश्रुते तं कामम्। यस्मै कामायाग्निश्चीयतें। पृष्ठौहीं त्वन्तर्वतीं दद्यात्। सा हि सर्वाणि वया रेसि। सर्वस्याऽऽस्यै। सर्वस्यावंरुद्धै॥३०॥

हिरंण्यं ददाति। हिरंण्यज्योतिरेव स्वर्गं लोकमेंति। वासों ददाति। तेनाऽऽयुः प्रतिरते। वेदितृतीये यंजेत। त्रिषंत्या हि देवाः। स संत्यमृग्निं चिन्ते। तदेतत्पंशुबन्धे ब्राह्मणं ब्रूयात्। नेतरेषु य्ज्ञेषुं। यो ह् वै चतुरहोतॄननुसव्नं तंपियत्व्यान् वेदं॥३१॥

तृप्यंति प्रजयां पृश्भिः। उपैन सोमपीथो नमिति। पृते व चतुरहोतारोऽनुसवनं तर्पयित्व्याः। ये ब्राह्मणा बंहुविदः। तेभ्यो यद्दक्षिणा न नयेत्। दुरिष्ट स्यात्। अग्निमंस्य वृश्जीरन्। तेभ्यो यथाश्रद्धं दंद्यात्। स्विष्टमेवैतित्क्रियते। नास्याग्निं वृंञ्जते॥३२॥

हिर्ण्येष्टको भेवति। यावद्त्तममंङ्गुलिकाण्डं यंज्ञप्रुषा सम्मितम्। तेजो हिर्ण्यम्। यदि हिर्ण्यं न विन्देत्। शर्करा अक्ता उपंदध्यात्। तेजो घृतम्। सर्तेजसमेवाग्निं चिनुते। अग्निं चित्वा सौत्रामण्या यंजेत मैत्रावरुण्या वाँ। वीर्येण् वा एष व्यृध्यते। योंऽग्निं चिनुते॥३३॥

यावंदेव वीर्यम्। तदंस्मिन्दधाति। ब्रह्मणः सायुंज्यश् सलोकतामाप्नोति। एतासामेव देवतानाश् सायुंज्यम्। सार्ष्टिताश् समानलोकतामाप्नोति। य एतम्ग्निं चिनुते। य उं चैनमेवं वेदं। एतदेव सांवित्रे ब्राह्मणम्। अथों नाचिकते॥३४॥

[५]

यचामृतं यच मर्त्यम्। यच प्राणिति यच न। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मंणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। सर्वाः स्त्रियः सर्वांन्पुर्सः। सर्वं न स्त्रीपुमं च यत्। सर्वास्ताः। यावंन्तः पार्सवो भूमैः॥३५॥

सङ्ख्यांता देवमाययां। सर्वास्ताः। यावंन्त ऊषाः पशूनाम्। पृथिव्यां पृष्टिरिह्ताः। सर्वास्ताः। यावंतीः सिकंताः सर्वाः। अपस्वंन्तश्च याः श्रिताः। सर्वास्ताः। यावंतीः शर्करा धृत्यै। अस्यां पृथिव्यामधि॥३६॥

सर्वास्ताः। यावन्तोऽश्मांनोऽस्यां पृंथिव्याम्। प्रतिष्ठासु प्रतिष्ठिताः। सर्वास्ताः। यावंतीर्वीरुधः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः। यावंतीरोषंधीः सर्वाः। विष्ठिंताः पृथिवीमन्। सर्वास्ताः॥३७॥

यावंन्तो वनस्पतंयः। अस्यां पृथिव्यामधि। सर्वास्ताः। यावंन्तो ग्राम्याः पृशवः सर्वे। आरुण्याश्च ये। सर्वास्ताः। ये द्विपादश्चतुंष्पादः। अपादं उदरसपिंणः। सर्वास्ताः। यावदाञ्जनमुच्यते॥३८॥

देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंत्कृष्णायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। यावंश्लोहायंस् सर्वम्ं। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सीस्र सर्वं त्रपुं। देवत्रा यर्च मानुषम्॥३९॥

सर्वास्ताः। सर्वर् हिरंण्यर रज्तम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ताः। सर्वर् सुर्वर्ण्र् हिरंतम्। देवत्रा यर्च मानुषम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं काम्दुघां दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवत्याऽङ्गिर्स्बद्धवा सीद॥४०॥

[६]

सर्वा दिशों दिक्षु। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुर्घा दधे। तेनर्षिणा तेन् ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद। अन्तरिक्षं च केवंलम्। यच्चास्मिन्नंन्त्राहिंतम्। सर्वास्ताः। आन्तरिक्ष्यंश्च याः प्रजाः॥४१॥

गुन्धर्वापस्परसंश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिललान्। अन्तरिक्षे प्रतिष्ठितान्। सर्वास्ताः। सर्वानुदारान्थ्सिल्लान्। स्थावराः प्रोष्याश्च ये। सर्वास्ताः। सर्वां धृनिर् सर्वान्थ्वर्सान्। हिमो यर्च शीयते॥४२॥

सर्वास्ताः। सर्वान्मरीचीन् वितंतान्। नीहारो यर्च शीयतैं। सर्वास्ताः। सर्वा विद्युतः सर्वोन्थ्स्तनियृतून्। ह्रादुनीर्यचे शीयतें। सर्वास्ताः। सर्वाः स्रवंन्तीः स्रितंः। सर्वमपसुच्रं च् यत्। सर्वास्ताः॥४३॥

याश्च कूप्या याश्चं नाद्याः समुद्रियाः। याश्चं वैश्-तीरुत प्रांस्चीर्याः। सर्वास्ताः। ये चोत्तिष्ठंन्ति जीमूताः। याश्च वर्षन्ति वृष्टयः। सर्वास्ताः। तप्स्तेजं आकाशम्। यचांऽऽकाशे प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। वायुं वया रेसि सर्वाणि॥४४॥

अन्तिरिक्षचरं च यत्। सर्वास्ताः। अग्निश् सूर्यं चन्द्रम्। मित्रं वर्रुणं भगम्। सर्वास्ताः। सृत्यः श्रृद्धां तपो दमम्। नामं रूपं चे भूतानाम्। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामृदुघां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भुवा सींद॥४५॥

-[り]

सर्वान्दिव् सर्वान्देवान्दिव। यचान्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ता इष्टेकाः कृत्वा। उपं कामृद्घां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतयाऽङ्गिरस्बद्धुवा सीद। यावंतीस्तारंकाः सर्वाः। वितंता रोचने दिवि। सर्वास्ताः। ऋचो यजूर्षेषि सामानि॥४६॥

अथर्वाङ्गिरसंश्च ये। सर्वास्ताः। इतिहासपुराणं चे। सर्पदेवजनाश्च ये। सर्वास्ताः। ये चे लोका ये चोलोकाः। अन्तर्भूतं प्रतिष्ठितम्। सर्वास्ताः। यच् ब्रह्म यचौब्रह्म। अन्तर्बुह्मन्प्रतिष्ठितम्॥४७॥

सर्वास्ताः। अहोरात्राणि सर्वाणि। अर्धमासाः श्रृ केवंलान्। सर्वास्ताः। सर्वानृतून्थ्सर्वान्मासान्। संवथ्सरं च केवंलम्। सर्वास्ताः। सर्वं भूत्र सर्वं भव्यम्। यचातोऽधिभविष्यति। सर्वास्ता इष्टंकाः कृत्वा। उपं कामदुषां दधे। तेनर्षिणा तेन ब्रह्मणा। तयां देवतंयाऽङ्गिर्स्वद्भवा सीद॥४८॥

[८]

ऋचां प्राचीं मह्ती दिगुंच्यते। दक्षिणामाहुर्यजुंषामपाराम्। अथविणामङ्गिरसां प्रतीचीं। साम्नामुदींची मह्ती दिगुंच्यते। ऋग्भिः पूर्वाह्णे दिवि देव ईयते। युजुर्वेदे तिष्ठिति मध्ये अहं। साम्बेदेनांऽस्तम्ये महीयते। वेदैरशूंन्यस्त्रिभिरेति सूर्यः। ऋग्भ्यो जाता सर्विशो मूर्तिमाहुः। सर्वा गतिर्याजुषी हैव शर्श्वत्॥४९॥

सर्वं तेजः सामरूप्य हं शश्वत्। सर्व हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्। ऋग्भ्यो जातं वैश्यं वर्णमाहुः। युजुर्वेदं क्षंत्रियस्यां ऽऽहुर्योनिम्। सामवेदो ब्राह्मणानां प्रसूतिः। पूर्वे पूर्वेभ्यो वर्च एतदूचुः। आदर्शमृग्निं चिन्वानाः। पूर्वे विश्वसृजोऽमृताः। शृतं वर्रषसहस्राणि। दीक्षिताः सत्रमांसत॥५०॥

तपं आसीद्गृहपंतिः। ब्रह्मं ब्रह्माऽभंवथ्स्वयम्। स्त्य ह् होतैंषामासींत्। यिद्वंश्वसृज् आसंत। अमृतंमेभ्य उदंगायत्। सहस्रं परिवथ्सरान्। भूत हं प्रस्तोतैषामासींत्। भविष्यत्प्रतिं चाहरत्। प्राणो अध्वर्युरंभवत्। इद सर्वेष्ट् सिषांसताम्॥५१॥

अपानो विद्वानावृतंः। प्रतिप्रातिष्ठदध्वरे। आर्तवा उपगातारंः। सदस्यां ऋतवोऽभवन्। अर्धमासाश्च मासाश्च। चमसाध्वर्यवोऽभवन्। अश्ररसद्वह्मणस्तेजाः। अच्छावाकोऽभवद्यशंः। ऋतमेषां प्रशास्ताऽऽसीत्। यद्विश्वसृज् आसंत॥५२॥

ऊर्ग्राजान्मुदंवहत्। ध्रुवृगोपः सहोऽभवत्। ओजोऽभ्यंष्टौ-

द्राव्णणं। यद्विश्वसृज् आसंत। अपंचितिः पोत्रीयांमयजत्। नेष्ट्रीयांमयज्ञित्विषिः। आग्नींद्धाद्विदुषीं सृत्यम्। श्रद्धा हैवायंजथ्स्वयम्। इरा पत्नीं विश्वसृजांम्। आकूंतिरिपन-डुविः॥५३॥

इध्म १ ह क्षुचैंभ्य उग्रे। तृष्णा चाऽऽवंहतामुभे। वागेषा १ सुब्रह्मण्याऽऽसींत्। छुन्दोयोगान् विजान्ती। कुल्पृतृत्राणिं तन्वानाऽहंः। सुङ्स्थाश्चं सर्वशः। अहोरात्रे पंशुपाल्यौ। मुहूर्ताः प्रेष्यां अभवन्। मृत्युस्तदंभवद्धाता। शृमितोग्रो विशां पतिः॥५४॥

विश्वसृजंः प्रथमाः स्त्रमांसत। सहस्रंसम् प्रस्ंतेन् यन्तंः। ततो ह जज्ञे भुवंनस्य गोपाः। हिर्ण्मयः शकुनिर्ब्रह्म नामं। येन सूर्यस्तपंति तेजंसेद्धः। पिता पुत्रेणं पितृमान् योनियोनो। नावंदविन्मनुते तं बृहन्तम्। सूर्वानुभुमात्मान र् सम्पराये। एष नित्यो मंहिमा ब्राह्मणस्यं। न कर्मणा वर्धते नो कनीयान्॥५५॥

तस्यैवाऽऽत्मा पंद्वित्तं विदित्वा। न कर्मणा लिप्यते पापंकेन। पश्चंपश्चाशतिस्त्रवृतः संवथ्यराः। पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशतिः पश्चंपश्चाशति एकविश्वाः। विश्वसृजार्थः सहस्रंसंवथ्यरम्। एतेन् वे विश्वसृजं इदं विश्वंमसृजन्त। यद्विश्वमसृजन्त। तस्माद्विश्वसृजंः। विश्वंमेनानन् प्रजांयते। ब्रह्मणः सायुंज्यश्

सलोकताँ यन्ति। एतासांमेव देवतांनाः सायुंज्यम्। सार्ष्टिताः समानलोकतां यन्ति। य एतदुंप्यन्तिं। ये चैनुत्प्राहुः। येभ्यंश्चेनुत्प्राहुः॥५६॥ ॐ॥

-[3]

॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठके तृतीयः प्रश्नः समाप्तः॥३॥ ॥इति कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयकाठकं समाप्तम्॥ हरिः ॐ॥